RNI-UPBIL/2011/38102

ISSN-2231-5837

Indian Journal of Social Concerns

इण्डियन जर्नल ऑफ सोशल कन्सर्न्स

(कला–मानविकी–समाजविज्ञान–जनसंचार–विधि–वाणिज्य–विज्ञान, वैचारिकी की अन्तर्राष्ट्रीय द्विमासिक शोध पत्रिका)

Volume -12: Issue - 53 May - June 2023 Ghaziabad

A RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND SOCIAL SCIENCES

(An International Peer-Reviewed & Refereed Journal)

Journal Impact Factor No. : 7.01

Editor
Dr. RAJ NARAYAN SHUKHLA

Guest Editor
Mr. Butta Singh Gill

Editor in Chief
Dr. HARI SHARAN VERMA

Asstt. Editor
Dr. MUKTA SONI

Sub Editor
Dr. PUSHPA
Dr. BEENA PANDEY (SHUKLA)

Art Editor
(MS) MANISHA VERMA

Managing Editor
Dr. SANGEETA VERMA

Legal Advisor
Dr. JASWANT SAINI
SHRI BHAGWAN VERMA

Joint Editor
Dr. PRIYANKA SINGH
Dr. SUBHASH SAINI

Office Assistant
JITENDER GIRDHAR

Computer Operator
MS. NEHA VERMA

- The responsibility of the originality of the articles/papers shall be of the author.
- The editor does not owe any kind of responsibility in this regard

Mr. Butta Singh Gill
Guest Editor

Dr. Hari Sharan Verma
D.Litt
Editor in Chief

Dr. Raj Narayan Shukhla
Editor

Dr. Sangeeta Verma
Managing Editor

मानविकी शोध पीठ प्रारम्भ सोसायटी,
गाज़ियाबाद द्वारा संचालित

LIFE MEMBERS OF INDIAN JOURNAL OF SOCIAL CONCERNS

1. **Dr. Praveen Kumar Verma**
   Associate Professor, Hindi Department, GGD Sanatan Dharam Post Graduate College, Palwal.

2. **Smt. Veena Pandey (Shukla)**
   Hindi Teacher, Jawahar Navodya Vidyalya, Dhoom Dadri, Distt. Gautambudhnagar - 203207 (U.P.)

3. **Dr. Suman**
   H.No. 1001, Radha Swami Colony, Rohtak Road, Bhiwani (Haryana)

4. **Principal**
   Sat Jinda Kalyana College, Kalanaur (Rohtak, Haryana) 124113

5. **Dr. Subhash Chand Saini** (Hindi Department, Dyal Singh College, Karnal, Haryana

6. **Dr. Vimla Devi,** Associat Professor (History), Swami Vivekanand Govt. (PG) College, Lohaghat, Champawat (Uttrakhand)

7. **Princepal,** Associat Professor (Hindi), Aggarwal College, Ballabhgarh (Haryana)

8. **Dr. Dinesh Mani Tirpathi (Principal)** L-P=-K Inter College sardar Nagar, Basdila Gorkhpur

9. **Dr. Govind Prakash Acharya** F--63, Chandra Vardai Nagar, UIT, Colony, Shaheed Bhagat Singh Marg, OppositeRamganj Thana, Taragarh Road, Ajmer (Rajasthan) Pincode--305003.

10. **Amardeep Singh** Mcf C -21 Bhagat singh colonyBallabgarh121004, Mob. 9873814066

प्रकाशक : डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक
SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ० प्र०)
दूरभाष : 9910777969
E-mail : *harisharanverma1@gmail.com*
WWW.IJSCJOURNAL.COM

सहयोग राशि (भारत में)

(व्यक्तिगत)	(आजीवन 5100 रुपये)
(संस्थागत)	(आजीवन 7100 रुपये)

कृपया सहयोग राशि बैंक ड्राफ्ट से ही भेजें।

बैंक ड्राफ्ट, संपादक "इण्डियन जर्नल ऑफ सोशन कन्सर्न्स" के पक्ष में देय होगा। आजीवन सदस्यता केवल दस वर्षों के लिए मान्य होगी। यदि किसी कारणवश पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो जाता है तो आजीवन सदस्यता स्वतः ही समाप्त हो जायेगी।

संपादकीय कार्यालय :

1. **डॉ० हरिशरण वर्मा, प्रधान सम्पादक**
F-120, सेक्टर–10, DLF, फरीदाबाद (हरियाणा)
harisharanverma1@gmail.com 09355676460
WWW.IJSCJOURNAL.COM

2. **डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक**
SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ०प्र०)

क्षेत्रीय सम्पादक

1. डॉ० वाई.आर. शर्मा, A-24, रेजिडेंसल कैम्पस, न्यू कैम्पस, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू–180001, फोन : 09419145967
2. डॉ0 सलमा असलम, ओल्ड टाउन बारामुला, कश्मीर पिन– 193101, मौ0 9682162934
3. डॉ0 आरती लोकेश P.o.Box 99846, Dubai, UAE 97150-4270752
4. श्री मोहनलाल, 11 अशोक विहार, संजय नगर, पो. इज्जत नगर बरेली (उ०प्र०) फोन : 09456045552
5. श्री जितेन्द्र गिरधर, कार्यालय सहायक 105/26 जवाहर नगर, कॉपरेटिव बैंक के पीछे, रोहतक 09896126686
6. डॉ0 विमला देवी, सहायक प्रोफेसर (इतिहास) स्वामी विवेकानन्द राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय लोहाघाट चंपावत (उत्तराखण्ड)–262524 – 9411900411
7. डॉ0 प्रिया कपूर, सहायक प्रोफेसर, डी0 ए0 वी शताब्दी कालेज, फरीदाबाद मौ0 9711196954
8. डॉ0 किरण मिश्रा, सहायक प्रोफेसर, हिन्दी, राम गुलाम राय पी0 जी0 कालेज, देवरिया गोरखपुर–273001 मौ0 :7007018819
9. डॉ0 ऊषा रानी, हिन्दी–विभाग हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला–5
10. विमला टोप्पो, एस0 आर0 इंटरप्राइसेस म्युनिसिपल काम्पलेक्स सोप न0 4, डेरी फार्म, पोर्ट बलेयर, पी0 ओ0 जंगली घाट–744103 साउथ अंडमान
11. डॉ0 राजपाल, सहायक प्रो0 राजकिय स्थानकौत्तर महाविद्यालय, हिसार

संरक्षक मण्डल :

1. **प्रो0 डॉ0 चकधार त्रिपाठी कुलपति,** उड़ीसा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कोरोपुट, 763004, चलभाषः 9437568809
2. **डॉ0 दिनेश मणी त्रिपाठी**, प्रधानाचार्य एन0 पी0 के0 आई कालेज, सरदार नगर बसडीला (गोरखपुर) उ0प्र0
3. **डॉ० राजेन्द्र सिंह,** (पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय राहतक
4. **डॉ० रमेशचन्द लवानिया,** (पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद
5. **डॉ० वाई.आर.शर्मा,** (राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू)
6. **डॉ0 सुंधांशु कुमार शुक्ल** चेयर हिन्दी, आई. सी. सी. वार्सा विश्वविद्यालय, वार्सा (पोलैन्ड) मौ0 48579125129
7. **डॉ0 तपन कुमार शण्डिल्य, कुलपति,** डॉ0 श्याम प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय राँची, (झारखण्ड) 9431049871
8. **डॉ0 जंगबहादुर पाण्डेय** (पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) रांची विश्वविद्यालय, रांची – 834008
फोन : 09431595318
9. **सुदेश रावत** प्रांचार्या एस. एन. आर. जयराम महिला कॉलेज, लोहार माजरा, कुरूक्षेत्र हरियाणा 36119 (सेठ नारंग राय लोहिया जय राम महिला कॉलेज)

परामर्शदात्री समिति :

1. **डॉ० नरेश मिश्रा** (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
2. **डॉ० सुधेश** (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली)
3. **डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल** (पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर)
4. **डॉ० राजकुमारी सिंह,** प्रोफेसर एफ.टी.एम. विश्वविद्यालय लोधीपुर राजपूत मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश 9760187147
5. **डॉ० माया मलिक,** पूर्व प्रोफेसर हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
6. **डॉ० ममता सिहल,** (एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा अंग्रेजी विभाग) जे०वी० जैन कॉलेज सहारनपुर
7. **डॉ० विनीत बाला,** सहायक प्रो. भूगोल विभाग, वैश्य पी.जी. कॉलेज, रोहतक

संपादकीय विशेषज्ञ समिति :

हिन्दी विभाग:

1. **डॉ० राजेश पाण्डे** (डी.वी. कॉलेज, उरई, जिला जालौन, उ०प्र०)
2. **डॉ0 अनिता, सहायक प्रोफेसर**, (हिन्दी), श्री अरबिन्दो कालिज दिल्ली (सांध्य) मौ0 :8595718895
3. **डॉ० सुशील कुमार शर्मा** (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय शिलांग, मेघालय)
4. **डॉ० शशि मंगला,** पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
5. **डॉ० के०डी० शर्मा,** एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
7. **मुकेश चन्द्र गुप्ता** (हिन्दी विभाग, एम.एच.पी.जी. कॉलेज, मुरादाबाद)
8. **डॉ० गीता पाण्डेय** (रीडर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, एस.डी.

9. **डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा** (सह प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म महाविद्यालय, पलवल
10. **डॉ0 सुधा चौहान,** अध्यक्षा हिन्दी विभाग, वैश्य कालिज, भिवानी
11. **डॉ० रूबी,** (सीनियर सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग कश्मीर
12. **डॉ0 सुमन राठी,** सहायक प्रो0 हिन्दी विभाग, मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक
13. **डॉ0 सुधा कुमारी** (हिन्दी विभाग) एन0जी0एफ0 डिग्री कालिज, उडदू, अध्ययन केन्द्र मथूरा रोड, पलवल 982719456
14. **डॉ० एम. के. कलशेट्टी,** हिन्दी विभाग, श्री माधवराव पाटिल महाविद्यालय, मुरूम तह० अमरगा, जिला उस्मानाबाद (महाराष्ट्र)–413605
15. **डॉ० मनोज पंड्या,** व्याख्याता हिन्दी विभाग, श्री गोविन्द गुरु, राजस्थान महाविद्यालय, बांसवाड़ा–327001, मो० 09414308404
16. **डॉ. कृष्णा जून,** प्रो० हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
17. **डॉ. विपिन गुप्ता,** सहायक प्रोफेसर, वैश्य कॉलेज भिवानी
18. **डॉ० सीता लक्ष्मी,** पूर्व प्रो० एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आन्ध्र विश्वविद्यालय, विशाखापट्टनम, आन्ध्रप्रदेश
19. **डॉ० जाहिदा जबीन,** (प्रो0 एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर–६)
20. **डॉ० टी०डी० दिनकर,** (एसो० प्रो० एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, अग्रवाल कॉलेज, बल्लभगढ़)
21. **डॉ० सुभाष सैनी,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग दयालसिंह कॉलेज, करनाल, हरियाणा
22. **डॉ० उर्विजा शर्मा,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग शम्भु दयाल स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, गाजियाबाद
23. **डॉ० कामना कौशिक,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग एम.के. स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, सिरसा 09896796006
24. **डॉ० मधुकान्त,** (वरिष्ठ साहित्यकार) 211- L मॉडल टाऊन, रोहतक
25. **डॉ0 कंचन पुरी, विभागध्यक्ष,** रघुनाथ गर्ल्स पी0 जी0 कालेज मेरठ
26. **डॉ0 प्रवेश कुमारी ,** सहायक प्रो0 हिन्दी बाबा मस्तराथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक
27. **डॉ0 राजपाल ,** सहायक प्रो0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हिसार
28. **डॉ0 प्रवेश कुमारी ,** सहायक प्रो0 टिकाराम कन्या कॉलेज, सोनीपत, हरियाणा
29. **प्रो. प्रणव शास्त्री,** प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष–हिन्दी विभाग, उपाधि महाविद्यालय, पीलीभीत – 262 001 उ. प्र. मो.98379 60530 drpranav&pbt23@rediffmail-com
30. **प्रो. राखी उपाध्याय,** प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष – हिन्दी विभाग, डी. ए .वी. कॉलेज, देहरादून – 248 001 (उत्तराखंड) मो. 94111 90099 drrakhi-418@gmail-com
31. **डॉ0 सुनीता जसवाल,** असिस्टेंट प्रोफेसर – हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला (हिमाचल प्रदेश) मो.70186 21542

अंग्रेजी विभाग:

1. **डॉ. ममता सिहल, अध्यक्षा,** अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन कॉलिज, सहारनपुर, उ.प्र.
2. **डॉ. रणदीप राणा, प्रोफेसर,** अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. **डॉ. जयबीर सिंह हुड्डा, प्रोफेसर,** अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
4. **डॉ० रविन्द्र कुमार,** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष अंग्रेजी विभाग, चौ० चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ
5. **डॉ. अनिल वर्मा** (पूर्व रीडर, अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर)
6. **डॉ0 जे. के. शर्मा,** प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक
8. **डॉ. पी.के. शर्मा,** (प्रो., अंग्रेजी–विभाग, राजकीय के.आर.जी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर)
9. **डॉ. गीता रानी शर्मा,** (सहायक प्रोफेसर) गो.ग.दत्त सनातन धर्म कॉलेज, पलवल
10. **डॉ. किरण शर्मा,** (एसोसिएट प्रोफेसर) राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय रोहतक

वाणिज्य विभाग:

1. **डॉ० नवीन कुमार गर्ग** (वाणिज्य विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० ए.के. जैन,** पूर्व रीडर (वाणिज्य विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर)
3. **डॉ० दिनेश जून,** एसोसिएट प्रोफेसर, वाणिज्य विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, फरीदाबाद
4. **डॉ० एम.एल. गुप्ता,** (पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, वाणिज्य एवं व्यवसायिक प्रशासन संकाय, एस.एस.वी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हापुड़ एवं संयोजक–शोध उपाधि समिति एवं संयोजक बोर्ड ऑफ स्टीडिज चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ)
5. **डॉ० वजीर सिंह नेहरा,** प्रोफेसर वाणिज्य विभाग, म.द.वि. रोहतक
6. **डॉ० संजीव कुमार,** प्रोफेसर वाणिज्य विभाग, म.द.वि. रोहतक
7. **डॉ. गीता गुप्ता,** (सहायक प्रोफेसर) वाणिज्य विभाग, वैश्य महिला महाविद्यालय, रोहतक)
7. **डॉ. नरेन्द्रपाल सिंह,** (एसोसिएट प्रोफेसर) वाणिज्य विभाग, साहू जैन कॉलेज, नजीबाबाद, उ.प्र.)

राजनीति शास्त्र विभाग:

1. **साकेत सिसोदिया,** (राजनीति शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
2. **डॉ० रोचना मित्तल** (रीडर एवं अध्यक्षा, राजनीति शास्त्र–विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
3. **डॉ० कौशल गुप्ता,** एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, देशबन्धु महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **Mob.: 09810938437**
4. **डॉ०पी.के. वार्ष्णेय**, पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, जे.वी.जैन कॉलेज, सहारनुपुर
5. **डॉ० सुदीप कुमार,** सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, पेहवा (कुरुक्षेत्र) **Mob.: 9416293686**
6. **डॉ० वाई०आर० शर्मा,** एसो० प्रो०, राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू (कश्मीर)
7. **डॉ. रेनू राणा,** (सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, पं. नेकीराम शर्मा राजकीय महाविद्यालय रोहतक 124001
8. **डॉ. ममता देवी,** (सहायक प्रोफेसर, राजनीतिक शास्त्र विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

इतिहास विभाग:

1. **डॉ० भूकन सिंह** (प्रवक्ता, इतिहास विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० मनीष सिन्हा,** पी.जी. विभाग, इतिहास, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, बिहार–824231
3. **डॉ० राजीव जून,** सहायक प्रो० इतिहास, सी.आर इन्स्टीट्यूट ऑफ ला, रोहतक
4. **डॉ० मीनाक्षी** (सहायक प्रोफेसर इतिहास विभाग) सी.आर. किसान कॉलेज, जीन्द

भूगोल विभाग:

1. **डॉ० पी.के शर्मा,** पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, भूगोल विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर
2. **रश्मि गोयल** (भूगोल विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
3. **डॉ० भूपेन्द्र सिंह,** एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, राजकीय पी.जी. कॉलेज, हिसार
4. **डॉ० विनीत बाला,** सहायक प्रो. भूगोल विभाग, वैश्य पी.जी. कॉलेज, रोहतक
5. **डॉ0 प्रदीप कुमार शर्मा**, एसोसिएट प्रोफेसर, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक

शिक्षा विभाग:

1. **डॉ० उमेन्द्र मलिक,** एसिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, म.द.वि. , रोहतक
2. **डॉ० संदीप कुमार,** सहायक प्रो० शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्लीएसोसिएट
3. **डॉ० तपन कुमार बसन्तिया,** एसोसिएट प्रोफेस, सैंटर फॉर एजुकेशन, सैंट्रल यूनिवर्सिटी ऑफ साउथ विहार, गया कैम्या, विनोभा नगर, वार्ड नं. **29**, **Behind ANMCH** मगध कालोनी, गया–**823001**बिहार**Mob.: 09435724964**
4. **डॉ० (प्रो०) अनामिका शर्मा,** प्राचार्या, एम.आर. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, फरीदाबाद
5. **डॉ० मनोज रानी,** सहायक प्रोफेसर (अंग्रेजी) एम.एल.आर.एस. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, चरखी दादरी (भिवानी)
6. **डॉ० अनीता ढाका,** (प्राचार्या, आर.जी.सी.ई. कॉलेज, ग्रेटर, नोएडा।)
7. **डॉ० ममता देवी,** (सहा. प्रो. बी.आई.एम.टी. कॉलेज कमालपुर गढ़ रोड़, मेरठ)

गृह विज्ञान

1. **डॉ0 श्रीमती पंकज शर्मा,** (सहायक प्राफेसर), गृह विज्ञान (प्रसार शिक्षा) राजकिय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रोहतक

शारीरिक शिक्षा विभाग:

1. **डॉ० सरिता चौधरी,** सहायक प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, आर्य गर्ल्ज कॉलेज, अम्बाला कैंट, हरियाणा
2. **डॉ० वरुण मलिक,** सहायक प्रोफेसर, म.द.वि., रोहतक
3. **डॉ० सुनील डबास,** (पद्मश्री व द्रोणाचार्य अवार्ड) HOD in physical education"DGC Gurugram

समाज शास्त्र विभाग:

1. **प्रवीण कुमार** (समाजशास्त्र विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० कमलेश भारद्वाज,** समाज शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद

मनोविज्ञान विभाग:

1. **डॉ० चन्द्रशेखर,** सहायक प्रोफेसर साईक्लोजी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू
2. **डॉ. रश्मि रावत,** (मनोविज्ञान विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, देहरादून)
3. **अनिल कुमार लाल** (प्रवक्ता, मनोविज्ञान विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)

अर्थशास्त्र विभाग:

1. **डॉ० जसवीर सिंह** (पूर्व रीडर अर्थशास्त्र विभाग, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मवाना)
2. **डॉ० सुशील कुमार** (एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद, उ०प्र०)
3. **डॉ० अखिलेश मिश्रा** (प्राध्यापक, अर्थशास्त्र–विभाग, एस.डी.पी.जी. कॉलेज, गाजियाबाद)
4. **डॉ० सत्यवीर सिंह सैनी,** एसो०प्रो० (अर्थ०वि०, गो०ग० सनातन धर्म पी०जी० कॉलेज, पलवल)

विधि विभाग:

1. **डॉ० नरेश कुमार,** (प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
2. **डॉ० विमल जोशी,** (प्रोफेसर, विधि–विभाग भगत फूलसिंह महिला विश्वविद्यालय खानपुर, सोनीपत)
3. **डॉ० जसवन्त सैनी,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
4. **डॉ० वेदपाल देशवाल,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
5. **डॉ. अशोक कुमार शर्मा,** एसो. प्रोफेसर, विधि विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर
6. **डॉ. राजेश हुड्डा,** सहायक प्रो०, विधि विभाग, बी.पी.एस. महिला विश्वविद्यालय, खानपुर कलां, सोनीपत
7. **डॉ० सत्यपाल सिंह,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
8. **डॉ० सोनू,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
9. **डॉ० अर्चना वशिष्ठ,** (सहायक प्रोफेसर, के०आर० मंगलम विश्वविद्यालय, सोहना रोड, गुरुग्राम)
10. **डॉ० आनन्द सिंह देशवाल,** (सहायक प्रोफेसर, सी०आर० कॉलेज ऑफ लॉ रोहतक)
11. **अनसुईया यादव,** (सहायक प्रोफेसर, विधि विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा)

गणित विभाग:

1 **डॉ० विनोद कुमार,** रीडर एवं अध्यक्ष गणित विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर
2. **डॉ० विरेश शर्मा,** लेक्चरर गणित विभाग, एन.ए.एस. कॉलेज, मेरठ
3. **डॉ0 सलौनी श्रीवास्तव** सहायक प्रो0, गणित विभाग आर0 बी0 एस0 कालेज आगरा

कम्प्यूटर विभाग:

1. **प्रो० एस.एस. भाटिया** (अध्यक्ष, स्कूल ऑफ मैथमेटिक्स एण्ड कम्प्यूटर एप्लीकेशन, थापर विवि, पटियाला)
2. **सर्वजीत सिंह भाटिया** (प्रवक्ता, कम्प्यूटर साईंस, खालसा कॉलेज, पटियाला)
3. **डॉ० बालकिशन सिंहल,** सहायक प्रोफेसर, कम्पयूटर विभाग, म०द०विश्वविद्यालय, रोहतक

संस्कृत विभाग:

1. **डॉ० रामकरण भारद्वाज** पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, लाजपत राय कॉलेज, साहिबाबाद (गाजियाबाद)
2. **डॉ० सुनीता सैनी,** एसो० प्रोफेसर संस्कृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. **डॉ० सुमन,** (सहायक प्रोफेसर, संस्कृत–विभाग, आदर्श महिला महाविद्यालय, भिवानी।)
4. **डॉ0 दिनेश मणि त्रिपाठी {प्रधानाचार्य}** एल ०पी ०के ०इंटर कॉलेज सरदार नगर बसडिला {गोरखपुर}
5. **डॉ0 दानपति तिवारी,** प्रोफेसर, एवं अध्यक्ष, महात्मा गांधी काशी विद्यापिठ, वाराणसी, उत्तर–प्रदेश
6. **डॉ0 दिनेशचन्द्र शुक्ल,** सहायक प्रोफेसर, महात्मा गांधी काशी विद्यापिठ, वाराणसी, उत्तर–प्रदेश

रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग:

1. **डॉ० आर०एस० सिवाच,** प्रो० एवं अध्यक्ष, रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, म०द०वि०, रोहतक

दृश्यकला विभाग:

1. **डॉ० सुषमा सिंह,** एसोसिएट प्रोफेसर, दृश्यकला विभाग, म०द० विश्वविद्यालय, रोहतक

पंजाबी विभाग:

1. **डॉ० सिमरजीत कौर,** सहायक प्रो० (पंजाबी), ईश्वरजोत डिग्री कालेज, पेहवा (कुरूक्षेत्र)

संगीत विभाग:

1. **डॉ० संध्या रानी,** अध्यक्षा, संगीत विभाग, यूआरएलए, राजकीय पीजी कॉलेज, बरेली
2. **डॉ० हुकमचन्द,** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष तथा डीन, संगीत विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
3. **डॉ. अनीता शर्मा,** (संगीत–गायन प्राध्यापिका, जयराम महिला महाविद्यालय लोहारमाजरा (कुरुक्षेत्र)
4. **डॉ. वन्दना जोशी,** (सहायक प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग, एस.एस.जे. परिसर, अल्मोड़ा)

पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग:

1. **डॉ० सरोजनी नंदल,** प्रोफेसर (पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग) महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

उर्दू विभाग:

1. **डॉ० मो. नूरूल हक,** (एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, उर्दू, बरेली कॉलेज, बरेली)

कृषि विभाग

1. **डॉ0 गोविन्द प्रकाश आचार्य** सह–आचार्य (कृषि–प्रसार) श्री गोविन्द गुरू राजकीय महाविद्यालय, बांसवाड़ा राजस्थान मो. 9460545836

An update on UGC - List Journals

The UGC List of Journals is a dynamic list which is revised periodically. Initially the list contained only journals included in Scopus, Web of Science and Indian Citation Index. The list was expanded to include recommendations from the academic community. The UGC portal wasa opended twice in 2017 to universities to upload their recommendations based on filtering criteria available at https://www.ugc.ac.in/journallist/methodology.pdf. The UGC approved list of Journals is considered for recruitment, promotion and career advancement not only in universities and colloges but also other institutions of higher education in India. As such, it is the responsibillity of UGC to curate its list of approved journals and to ensure the it contains only high-quality journals.

To this end, the Standing Committee on Notification on Journals removed many poor quality/predatory/questionable journals from the list between 25th May 2017 and 19th Septemeber 2017. This is an ongoing process and since then the Committee has screened all the journals recommended by universities and also those listed in the ICI, which were re-evaluated and rescored on filtering criteria defined by the Standing Committee. Based on careful and analysis, 4,305 journals were removed from the current UGC-Approved list of Journals on 2nd May, 2018 because of poor quality/incorrect or insufficient information/false claims.

The Standing Committee reiterates that removal/non-inciusion of a journal does not necessarily indicate that it is of poor quality, but it may also be due to non-availability of information such as details of editorial board, indexing information, year of its commencement, frequency and regularity of its publication schedule, etc. It may be noted that a dedicated web site for journals is once of the primary criteria for inclusion of journals. The websites should provide full postal addresses, e-mail addresses of chief editor and editors, and at least some of these addresses ought to be verifiable official addresses. Some of the established journals recommended by universities that did not have didicated websites, or websites that have not been updated, might have bee dropped from the approved list as of now. However, they may be considered for re-inclusion once they fulfil these basic criteria and are re-recommended by universities.

The UGC's Standing Committee on Notification on Journals has also decided that the recommendation portal will be opened once every year for universites to recommend journals. However, from this year onwards, every recommendation submitted by the universities will be reviewed under the supervision of Standing Committee on Notification of Journals to ascertain that only good-quality journals, with correct publication details, are included in the UGC approved list.

The UGC would also like to clarity that 4,305 journals which have been removed on 2nd May, 2018 were UGC-approved journals till that date and, as such, articles published/accepted in them prior to 2nd May 2018 by applicants for recruitment/promotion may be considered and given points accordingly by universities.

The academic community will appreciate that in its endeavour to curate its list of approved journals, UGC will enrich it with high-quality, peer-reviewed journals. Such a dynamic list is to the benefit of all.

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ स.
1.	समकालीन हिन्दी नाटकों में नारी	डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा	11–14
2.	जलवायु परिवर्तन व इसके प्रभाव	Mrs Mukesh Kumari	15–18
3.	Outer Conflict In 'a Portrait of The Artist As A Young Man' Novel	Sahil Patil	18–20
4.	बाज़ारवाद, मीडिया बनाम साहित्य	डॉ0 दिनेश कुमार कौशिक	21–22
5.	स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदी कवियों का योगदान	डॉ0 पुष्पा रानी	23–27
6.	समृद्ध हिंदी भाषा	डॉ0 प्रणव शास्त्री	28–29
7.	कमलेश्वर – कहानियों में मानवीय मूल्यों का चित्रण	डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा	30–32
8.	लोकमंगल की अवधारणा और मध्यकालीन हिंदी संत–साहित्य	पूजा	33–35
9.	'भाव तरंग सतसई' में आदर्शोन्मुखी यथार्थ–स्वर	गीता रानी	36–38
10.	सहकारिता का ग्रामिण विकास में योगदान	डॉ0 राकेश कुमार शर्मा	39–40
11.	अमरेन्द्र कुमार सिंह की कहानियों में बदलता सांस्कृतिक परिवेश	डॉ० अनिशा	41–43
12.	भारत में मानवाधिकारः चुनौतियाँ एंव सुझाव	डॉ0 ममता रानी	44–46
13.	श्री नरेश मेहता के प्रबन्ध काव्यों में राजनीतिक चेतना	पुनीत शर्मा	47–49
14.	इंदिरा दांगी के कथा साहित्य में स्त्री विमर्श	मनीषा देवी	50–51
15.	''वैश्वीकरण और डिजिटल दुनिया में हिंदी की महत्ता''	डॉ0 पूनम धौचक	52–54
16.	ऐतरेय ब्राह्मण में वैदिक निर्वचन	डॉ0 दिनेश चन्द्र, डॉ0 श्वेता अग्रहरि	55–57
17.	संस्कृत साहित्य में हरियाणा की भूमिका	डॉ0 अनीता	58–59
18.	गजानन माधव मुक्तिबोध का जीवन–दर्शन	कंचन गिरि	60–62
19.	1857 के विद्रोह में कुछ जानी एवं कुछ अनजानी महिलाओं का योगदान	डॉ0 अनीता राठी, श्रीमती रेखा	63–65
20.	दारुल उलूम देवबंद एवं सहअस्तित्वँ	वसीम चौधरी	66–68
21.	भारत–पाकिस्तान के मध्य विश्वास निर्णायक उपायँ (Confidence Building Measures between India and Pakistan)	सुनीता रानी	69–70
22.	डॉ० केशवदेव शर्मा की रचनाओं का भाषिक विश्लेषण	प्रो० विष्णु कुमार अग्रवाल, प्रताप सिंह शाक्य	71–75
23.	'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास में विज्ञापन बाजारवाद	आरती	76–77
24.	इक्कीसवीं शताब्दी के आरम्भिक दशकों की हिन्दी कहानियों में नारी चित्रण–बाजार, अर्थव्यवस्था और स्त्री–मुक्ति	रेनू, डॉ राकेश चन्द्र	78–80
25.	भारतीय संस्कृति और सभ्यता	शकिला देवी	81–82
26.	भारत के लिए समाजशास्त्र (Sociology for India).	Takdeer Singh	83–85
27.	Scientific Knowledge of our ancestors (हमारे पूर्वजों का वैज्ञानिक ज्ञान)	डॉ0 प्रखर	86–88
28	कृष्णा सोबती की रचनाओ मे स्त्री चेतना	डॉ0 सुधा कुमारी	89–90
29.	The Scientific Power of Ancient India (प्राचीन भारत की वैज्ञानिक ताकत)	डॉ0 प्रखर	91–92
30.	कबीर चेतना के विविध रूप	डॉ0 अनिल कुमार	93–95
31.	बहुभाषिकता का लाभ	डॉ0 निभा रानी	96–98
32.	भारत में प्रमुख राजकोषीय सुधारों का एक अध्ययन	डॉ0 योगेश	99–103
33.	Role Of Rustic Characters In Thomas Hardy's Novels	Sahil Patil	104–105
34.	संथाल जनजाति का सामान्य परिचय : झारखण्ड के संदर्भ में।	शकुन्तला बेसरा	106–108
35.	भारत की भौगोलिक स्थिति : एक समीक्षा	पूजा	109–112
36.	स्वतंत्रता आंदोलन में सुभाष चंद्र बोस की भूमिकाः एक अध्ययन	डॉ0 रश्मि	113–116
37.	नागार्जुन की सृष्टि और दृष्टि	डॉ0 जंग बहादुर पाण्डेय'तारेश'	117–119
38.	पर्यावरणीय समाजशास्त्र	डॉ० बुद्धप्रिय सिद्धार्थ	120–123
39.	साहित्य में किन्नर विमर्श	डॉ0 प्रशान्त गौरव	124–126
40.	मुण्डाओं का पर्व–त्योहार : सामान्य परिचय	करम सिंह मुण्डा	127–128
41.	''धर्मस्य लक्षणम्''	डॉ0 पुनीत शर्मा	129–130
42.	'अंत्येष्टि संस्कार'	डॉ0 बबलू शर्मा	131–132
43.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020रूस्वरूप, संभावनाएं और चुनौतियां	डॉ0 तपन कुमार शाण्डिल्य कुलपति	133–135
44.	हिंदी नवजागरण के जनक : भारतेंदु हरिश्चंद्र	डॉ0 कुमारी मनीषा	136–138
45.	भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में महिलाओं की भूमिका एक अध्ययन	डॉ0 ममता देवी, अंजू	139–144
46.	ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਦੇ ਦੁਖਾਂਤਕ ਦੌਰ ਦਾ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ	ਡਾ. ਸਤਨਾਮ ਸਿੰਘ ਜੱਸਲ	145–148
47.	भारत पाकिस्तान विभाजनः एक विश्लेषण	सतीश देशवाल	149–152
48.	FARMING A RISKY ENTERPRISE - SOME PROTECTIVE MEASURES	Dr. Meenu Anand	153–156
49.	Urban And Industrial Water Management In South Haryana	Ravinder Kumar	157–160
50.	ਨਾਟਕ 'ਮੁਇਆਂ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ' ਦਾ ਚਿਹਨ ਪ੍ਰਬੰਧ	ਡਾ. ਸਤਪ੍ਰੀਤ ਸਿੰਘ ਜੱਸਲ	161–165

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ स.
51.	Military Psychology War & Its Impact on Martyrs' Families	Capt. (Dr) Sneh Lata, Ankita	166–169
52.	Synopsis Ofresearch Project Entitled	Dr. Santosh Kumar Sharma	170–173
53.	Changing Pattern Of Financing Higher Education In Haryana	Dr. Shalu Sharma	174–178
54.	Empowering the Democracy: An Analytical Study of the Right to Information Act, 2005	Dr. Namita	179–181
55.	Poetics of Symbols and Images in These Hills called Home: Stories from a War Zone by Temsula Ao	Dr Anoopama Yadav	182–186
56.	Environmental Sustainability: limit to Economic Growth	Dr. Shalu Sharma	187–190
57.	Myths in English Literature as a Source of Inspiration	Dr. Poonam Rani	191–193
58.	Constraints In Adoption Of Farm Forestry In Banswara District	Dr. Govind Prakash Acharya	194–195
59.	Feminism in India	Pradip Kumar Singh, Dr. Anita Kumari	196–197
60.	Impact of Schemes on Women Agricultural Entrepreneurship	Dr. Govind Prakash Acharya	198–203
61.	Wheat Production in Haryana (2010-2020): A Changing pattern	Preeti, Ravinder Kumar, Dr. Kiran Bala	204–207
62.	Sustainability of Agriculture	Vivek Kumar	208–210
63.	Dystopia in the Selected Novels of Aldous Huxley and George Orwell: An Analytical Study	Manoj Kumar	211–213
64.	A Study of the Marginalized in Toni Marrison's Novel Beloved	Dr. Nirmal Boora	214–217
65.	Study of The Tragic Hero of Eugene O' Neill's The Hairy Ape from Aristotelian Perspective	Dr. Chitralekha	218–222
66.	Air And Atmospheric Pollution: Causes, Resolutions And Way Forward	Dr. Nirmal Boora	223–228
67.	Poetics of Symbols and Images in These Hills called Home: Stories from a War Zone by Temsula Ao	Dr Anoopama Yadav	229–233
68.	A Critical Evaluation of Cosmic Evolution Theory in Samkhya Philosophy	Dr. Manoj Rani	234–236
69.	Gandhi's critique of industrial modernity and the sustainability discourse	Dr. Pooran Singh Ujjwal	237–240
70.	Recommendations of NEP 2020 to For Teachers and Teacher Education	Dr. Manoj Rani	241–242
71.	Evaluation of Awareness Level Of Consumer Protection Act In The Ncr Delhi	Shaveta Sachdeva, Dr. Inderjit	243–247
72.	A Critical Analysis of the Recommendations of NEP 2020 for Higher Education	Dr. Manoj Rani	248–251
73.	Budget Highlights 2023-2024: Analysis	Dr. Shuchi Goel, Dr. Geeta Gupta	252–254
74.	Traits of Role Model Teaching	Dr. Jai Parkash	255–258
75.	Issues and Challenges in the Implementation of NEP 2020	Dr. Manoj Rani	259–261
76.	Transforming Education: India's New National Education Policy	Dr. Jai Parkash	262–265
77.	Plastic Money	Ms Arti rani	266–268
78.	संत दादूदयाल की लोक सांस्कृतिक चेतना	डॉ0 अनिल कुमार	269–271
79.	'मुर्दहिया' में चित्रित दलित स्त्री और सामाजिक परिवेश	बूटा सिंह	272–274
80.	Positive Youth Development	Poonam Devi	275–276

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय

बूटा सिंह
साहित्यकार
डी0 एस0 पी0, तलवण्डी साबो
(पंजाब)

भारतीय शिक्षण मण्डल के संगठन मंत्री मुकुल कानिटकर ने कहा कि शोध की दिशा, दशा और दृष्टि बदलने की आवश्यकता है। इसके लिए भविष्य को ध्यान में रखकर कार्य करने चाहिए। यदि शोध देश पर केन्द्रित समस्याओं पर आधारित हो तो कई समस्याओं का हल स्वयं ही निकल सकता है। मेरी दृष्टि में शोध का उद्देश्य देश हित में होना चाहिए। यदि शोध का उद्देश्य व्यक्तिगत स्वार्थ होगा, तो उसमें गुणवत्ता की कमी अवश्य होगी। आज शोधार्थियों व पर्यवेक्षकों को शोध का उपयोग समझने की जरूरत है। यदि हम अपने देश को विश्व गुरु बनाना चाहते है तो शोध की गुणवत्ता में सुधार लाना होगा। आज भारतीय शिक्षण पद्धति के पुनरुत्थान पर भी हमें ध्यान देना होगा।

अक्सर यह चिन्ता व्यक्त की जाती है कि हिन्दी में शोध की दशा बहुत खराब है। मेरी दृष्टि में हिन्दी ही नहीं, बल्कि अन्य भारतीय भाषाओं में भी शोध की यही स्थिति है। आज यह आम धारणा बन गई है कि हिन्दी समेत अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं में एम. ए., पीएच. डी. करना बहुत आसान है। यह भी कहा जाता है कि इन विषयों में एम. ए. कर चुके विद्यार्थी अकादमिक रूप से सक्षम नही होते। इनके शोध कार्य की भी कोई मौलिकता नहीं होती।

विश्वविद्यालयों में इन विषयों की और इन विषयों से जुड़े शिक्षको एवम् छात्रों के साथ वैसा ही व्यवहार किया जाता है जैसा पुराने समय में अछूत कही जाने वाली जातियों के साथ किया जाता था।

आधुनिक समय में शिक्षा का उद्देश्य मात्र रोजगार प्राप्त करना रह गया है। इस दृष्टि से जब हम देखते हैं तो विश्वविद्यालयो में हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं के विद्यार्थियों के समक्ष रोजगार के अवसर कम होते है। जो विषय जितने अधिक पैकेज के साथ जल्दी रोजगार देता है, वह विषय समाज और शैक्षणिक जगत में उतनी ही अधिक प्रतिष्ठा पाता है।

शोध का अर्थ किसी नए सत्य या तथ्य की खोज है। नए तथ्यों के उद्घाटन से साहित्य के इतिहास को नयी दिशा मिलती है। हमारे शोध कार्य का उद्देश्य किसी नए सत्य या तथ्य का उद्घाटन होना चाहिए न कि केवल डिग्री हासिल करना। हमें अपने शोध कार्य की मौलिकता पर भी ध्यान देना चाहिए।

Butta Singh gill
PPS Dy Supdt of police.
Talwandi Sabo Bhatinda(Punjab).
MA Hindi,
MA Police Administration,
Diploma in Journalism and Now Doing PHD
Hindi.
Sahityakar.
Regards
Mob.7719777976

1

समकालीन हिन्दी नाटकों में नारी

डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा

सारांश

हिन्दी नाटक के स्वरूप विवेचन में सबसे पहली दृष्टि नाटक की परिभाषा के साथ आबद्ध है। हिन्दी नाट्य चिन्तन का अवगाहन करने से नाटक स्वरूप वैशिष्टय तथा पहचान सम्बन्धी निम्नलिखित मत प्रकाश में आते है– हिन्दी में १८५० ई० तक आधुनिक परम्परा । के नाट्यलेखन तथा चिन्तन का प्राद्धर्भाव न हो पाया भारतेन्दु नाटक का सम्बन्ध अनिवार्यतः नट या अभिनेता से मानते है तभी तो नाटक नट लोगों की क्रिया कही जाती है।

जयशंकर प्रसाद के अनुसार– काव्य एक कला है और ललित सुकुमार कलाओं में सुकुमार कला है.. नाटक का कला से संबंध ही नहीं, अपितु वह कला का विकसित रूप है। हृदय को अनुभूति भी श्य और श्रव्य, दोनों प्रकार से होती है। उपेन्द्रनाथ 'अश्कश के अनुसार श्सफल नाटक के गुण, मेरे विचार में, उसकी वस्तु, उसका आधार भूत लोगों से है। सत्य, उसके कथानक अथवा प्रभावों का संगठन, पात्रों का चरित्र–चित्रण, आन्तरिक एवं बाह्य–संघर्ष, जिन्दगी का यथार्थ चित्रण तथा भाषा का तकसालीपन हैं।

प्रत्येक काव्य रूप अपने आप में एक विशिष्ट विद्या है, परन्तु नाटक का वैशिष्ट्य कुछ और ही है क्योंकि यह एकल कला के बनिस्वत कलाओं, विद्याओं व शास्त्रों का समूह है चूंकि नाटक में जीवन का प्रत्यक्ष अनुकरण एवम् अभिनय होता है, अतः नाटक में सब कर्म, विद्याएँ, शिल्प स्थान पाते है जिनका संबंध जीवन से है। सभी काव्यों में नाटक सर्वाधिक रमणीय क्योंकि इसमें एक साथ ही काव्यकला, संगीतकला संवादकला, अभिनयकला व मूर्तिकला का आस्वादन होता है। ष्नाटक में ऐसी क्षमता होती है कि उसके द्वारा मानवता की विभिन्न पर्ते एक साथ, एक ही समय एक जैसा आनन्द प्राप्त कर सकें।

समकालीन से अभिप्राय समकालीन शब्द सम उपसर्ग में श्कालीन विशेषण के प्रयोग से बनता है, जो काल की अवधारण से जुड़ा हुआ है जिसका अर्थ है– श्जो एक ही समय में हुआ हो। आदर्श हिन्दी–संस्कृत कोश में समकालीन शब्द का अर्थ एककालिक, एककालीन तथा समकाल बताया गया हैश। श्मानक हिन्दी कोष के अनुसार उत्पत्ति, स्थिति आदि के विचार से एक ही समय में उत्पन्न हुए हो या एक ही समय में जीवित रहने वाले समकालीन की सुसंगत व्याख्या करते हुए डॉ नरेन्द्र मोहन लिखते हैरू श्समकालीनताश का अर्थ किस काल खंड या दौर में व्याप्त स्थितियों और समस्या का चित्रण, निरूपण या बयान भर नहीं है, बल्कि उन ऐतिहासिक अर्थ में समझना उनके मूल स्रोत तक पहुँचन और निर्णय ले सकने या विवेक अर्जित करना है स्थितियों–समस्याओं के चित्रण, निरूपण और बयान कहानी तात्कालिक बन सकती है। डॉ० नरेन समकालीनता का सूक्ष्म निरीक्षण करते हुए उसकी अंतरं विशेषताओं पर प्रकाश डालते है–समकालीनता एक ठहरी हुई, गतिहीन और जड़ स्थिति नहीं है, बल्कि ठहराव, गतिहीनता और जड़ता को सख्ती और निर्ममता से तोड़ने वाली गतिमान ऐतिहासिक प्रक्रिया और चेतना है।

समकालीनता का संबंध समय के वर्तमान खंड से अवश्य माना जाता है, किन्तु यह इसकी कोई निश्चित सीमा निर्धारित नहीं करता इसका प्रयोग विविध संदर्भों के विभिन्न अर्थों में किया जाता है, जो इसे बहुव्यापक, बहुआयामी बना देता है। यह सही है कि श्आधुनिकताश समकालीनता से अधिक व्यापक है, फिर भी समकालीनता का क्षेत्र अतिसीमित नहीं है। साहित्य में प्रतिबिंबित कोई विचारधारा, भावना अथवा संवेदना अनेक दशकों तक प्रवाहमान बनी रह सकती है। समाज में उसकी प्रासंगीकता समकालीन बोध को जीवित रखती है।

नारी की स्थिति एवं समस्याएँ नारी समस्त मानवीय सौन्दर्य एवं चेतना की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति है, साथ ही सृष्टि का मूल भी। साहित्य की प्रत्येक विद्या में नारी हृदय की पुलक, उसकी अनुरक्ति एवं जीवन–प्रदायिनी उष्मा सक्रिय रही है। जयशंकर प्रसाद नारी को केवल श्रद्धा स्वरूप मानते है। तो गुप्त जी के लिए वह आँचल में दूध और आँखों में पानी लिए त्याग की साकार प्रतिमा है।

नारी ने मानव जीवन के सभी क्षेत्रों को अपनी दया, माया, ममता, मधुरिमा, अगाध विश्वास और समर्पण से अभिषिक्त किया है इतिहास के किसी भी काल खण्ड में यदि उसने पुरुष की कोमल भावनाओं को उचाए है, तो कभी उसे जीवन संग्राम में जूझने का दृढ़ संकल्प और आत्मोत्सर्ग की प्रेरणा भी दी है। यही कारण है कि भारतीय समाज में नारी की स्थिति युगीन आदर्शों और जीवन–मूल्यों के साथ–साथ परिवर्तित होती रही है।

वैदिक काल में भारतीय समाज में नारी का सशक्त व्यक्तित्व सर्वज्ञ दृष्टिगत होता है, किन्तु, उसकी दशा उत्तरोत्तर हीन होती चली गई है। धार्मिक क्षेत्र में भी उनको पुरुषों के समान ही अधिकार प्राप्त थे किन्तु शनैः शनैः स्त्रियों की शारीरिक दुर्बलताएँ ही उसके लिए अभिशाप बन गयी। पुरुषों ने उनके अधिकारों को अपहृत करना आरम्भ कर दिया। मध्य युग तक पहुँचते–२ स्त्री बिल्कुल पंगु हो गई थी। नारी की इस स्थिति के पीछे एक ओर देश की विषम परिस्थितियाँ थी तो दूसरी ओर पुरुष का भी इस दिशा में कम हाथ नहीं था। आधुनिक काल में नव चेतना का प्रसार हुआ। कुछ धर्म सुधारकों ने स्त्री के जीवन को दुर्दशाग्रस्त बनाने वाली प्रथाओं का उग्र रूप से विरोध किया। ब्रह्म समाज ने स्त्रियों की शिक्षा और स्वाधीनता के प्रश्न

को उठाया और आर्य समाज ने पुरानी रूढ़ियों को मिटाने का प्रयत्न किया।

भारतीय समाज में जो नारी जागरण उन्नीसवी शताब्दी में प्रारम्भ हुआ था, वह बीसवीं शताब्दी में विकसित हुआ और शिक्षा प्राप्त कर नारी सामाजिक–राजनीतिक जीवन में आगे बढ़ी। मध्ययुगीन मानसिकता से निकलकर उसने आधुनिक युग में प्रवेश किया और स्वतन्त्रता की मांग करने लगी। आज भारतीय नारी के समक्ष देश का विस्तृत विकासोन्मुख क्षेत्र है, जीवन के अनेक ज्वलन्त प्रश्न हैं। नारी निरन्तर बढ़ रही है। अपने खोए व्यक्तित्व को नारी ने पुनः प्राप्त कर लिया है।

जितना महत्त्व समाज में पुरुषों का है उतना ही महत्त्व नारी का भी है। आधुनिक युग में तो नारी प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी है। इस सबके पश्चात् भी पुरुष उसका शोषण कदम–कदम पर करता है। उसे केवल भोग्या ही समझा जाता है। इस पीड़ा को नारी बारम्बार सहती आ रही है तभी तो उसका आक्रोश उबल पडता है–श्यह दुनिया कुत्तों से भरी है। बोटी–बोटी नोचने के लिए दुम हिलाते है लार टपकाते कुत्ते। सांपों की लपलपाती जीभें। जहां जाती हूं, जिस पुरुष से मिलती हूं– . पढाई के लिए, नौकरी के लिए, छापने छपवाने के लिए सब सौदा चाहते हैं। इस देश को क्या है गया है ?जिससे कुछ माँगों वो बदले में शरीर मांगता है। स्नेह, श्रम और संघर्ष की त्रिमूर्ति भारतीय नारी समाज के उत्थान में सदैव अग्रसर रही है जीवन की बड़ी से बड़ी समस्या से नारी दो–दो हाथ कराने में कभी पीछे नहीं रही– श्बेटा, तू जाके जिसनूं मरजी बुला लें आ.. .. जान तो ज्यादा ते कुछ नहीं ले सकेगा.. ..जान तै त्वानुं देण नूं तैयार हां।

नारी केवल अबला ही नहीं होती अपितु वक्त पड़ने पर सबला बनकर पुरुष से भी अधिक वीरतापूर्ण कार्य करती देखी जा सकती है। विपत्ति की घड़ी में किसी प्रबल शक्ति से टकराने की हिम्मत रखती है– श्मैं बोलूंगी– मैंने चिपकाया है कागज मैं बोलूंगी अपने मायके से लाई थी कागज मोरगा तो मार खा लूंगी, जा कुछ भी होगा मैं और कल्लू झेल लेंगें. क्या तुम लोग चुप भी नहीं बैठ सकते।

भारतीय नारी त्याग और सहिष्णुता का जीवन्त दस्तावेज है समाज हेतु बलिदान देना उसके लिए कभी भी कठिन नहीं रहा उसने सहर्ष अपना सर्वस्व त्याग कर अपनी महत्ता को बनाए रखा है। नारी युगों युगों से सामाजिक मर्यादा और मान्यताओं की सशक्त संरक्षिका रही है तभी तो वह कह उठती है– तो ठीक है, भाइयों, आप लोग पंचायत का चुनाव करते रहिए, लेकिन मेरा जहाँ तक सवाल है मैं सबसे पहले मरना चाहती हूं। आप लोगों से प्रार्थना है कि सबसे पहले मुझे राक्षस के पास भेजा जाए। मैं अपने से पहले किसी को मरते देख नहीं सकूंगी। मैं इस गाँव की धूल में बनी हुई हूं, यहाँ की हवा में मैंने सांस ली है। इस गाँव के लिए सबसे पहले मुझे ही मरने का अधिकार मिलना चाहिए।श नारी पुरुष संबंधों का आधार दो तरफा ईमानदारी पर आश्रित होता है। लेकिन प्रायः पुरुष नारी का भावात्मक शोषण करने से नहीं चूकना। ऐसी स्थिति में नारी का आहत मन चीत्कार कर उठता है– ष्मैं ली उदास होती हूं, पुरू, और जानती हूं इससे कोई छुटकारा नहीं हैं। एक अजीब सी घुटन ।.....एक अजीब सी उदासी

पुरुष के दोहरे चरित्र ने नारी को आहत ही नही किया है अपितु उसके व्यक्तित्व को धूमिल भी किया है। परिणामस्वरूप नारी को विद्रोह करने के लिए बाहय होना पड़ा है– हम औरतें पुरुष के सामने झोली फैलाए कि दे दाता प्रेम का दान दे– मुझे यह एकदम फ्राड लगता है आज। पुरुष के प्रेम ने आज तक किस औरत को संतोष दिया है ?

आधुनिक युग के झंझावातों से त्रस्त नारी निरन्तर कठोर और सुदृढ होती चली गई है। अब उसे अपने व्यक्तित्व और अस्तित्व की कहीं अधिक चिन्ता है तभी तो वह पुरुष की मनमानी का विरोध करती देखी जा सकती हैकृश्तुम भी मुझे नहीं समझते ? इस घर में मुझे कोई नहीं समझता कोई मेरी नहीं सुनता कोई मुझें । मेरी भी तो अपनी कोई जिन्दगी है, अपनी इच्छाएं है।

नारी अपने प्यार के लिए समस्त विश्व की खुशियों का एक क्षण में परित्याग कर सकने की असीम शक्ति रखती आई है। वह न तो अपने भूतकाल को भूला सकती है न ही वर्तमान को और न ही उसके मन से भविष्य की परिकल्पनाएँ धूमिल हो सकती है– श्दोनों में से कुछ भी इतना आसान नहीं है, पुरु। जिसके साथ जुड़ना चाहती हैं उससे जुड़ने पर जो उपलब्धि होगी– उस भावना में तथा जिसके साथ बंध गई हूं। उससे कटकर जितना खो जाएगा उस यथार्थ में नहीं पुरू । तुम लाख कहो फिर भी उन दोनों में से किसी एक के साथ निर्णय लेना इतना आसान नहीं है।श जीवन की विपरीत परिस्थितियों से सामना करना नारी के चरित्र का एक मूल्यवान हिस्सा होता है। किसी भी समस्या के लिए सहज निर्णय लेने की सूझ नैसर्गिक रूप से प्राप्त है। ऐसा उदाहरण समकालीन नाटक एक और द्रोणाचार्य में मिलता अमब अमब 8 जब घर में आर्थिक अभाव के कारण मां कृपी अपने पुत्र अश्वत्थामा को आटे का घोल दूध के रूप में पिला कर बलिष्ट बनाती है।

कृपी– इस बर्तन में दूध के नाम पर आटे का घोल था। द्रोणाचार्य उस छोटे से बच्चे के साथ कपट करते हुए गया है ?जिससे कुछ माँगों वो बदले में शरीर मांगता है। स्नेह, श्रम और संघर्ष की त्रिमूर्ति भारतीय नारी समाज के उत्थान में सदैव अग्रसर रही है जीवन की बड़ी से बड़ी समस्या से नारी दो–दो हाथ कराने में कभी पीछे नहीं रही– बेटा, तू जाके जिसनूं मरजी बुला लें आ.. .. जान तो ज्यादा ते कुछ नहीं ले सकेगा.. ..जान तै त्वानुं देण नूं तैयार हां।

नारी केवल अबला ही नहीं होती अपितु वक्त पड़ने पर सबला बनकर पुरुष से भी अधिक वीरतापूर्ण कार्य करती देखी जा सकती

है। विपत्ति की घड़ी में किसी प्रबल शक्ति से टकराने की हिम्मत रखती है– मैं बोलूंगी– मैंने चिपकाया है कागज मैं बोलूंगी अपने मायके से लाई थी कागज मोरगा तो मार खा लूंगी, जा कुछ भी होगा मैं और कल्लू झेल लेंगें. क्या तुम लोग चुप भी नहीं बैठ सकते।

भारतीय नारी त्याग और सहिष्णुता का जीवन्त दस्तावेज है समाज हेतु बलिदान देना उसके लिए कभी भी कठिन नहीं रहा उसने सहर्ष अपना सर्वस्व त्याग कर अपनी महत्ता को बनाए रखा है। नारी युगों युगों से सामाजिक मर्यादा और मान्यताओं की सशक्त संरक्षिका रही है तभी तो वह कह उठती है– तो ठीक है, भाइयों, आप लोग पंचायत का चुनाव करते रहिए, लेकिन मेरा जहाँ तक सवाल है मैं सबसे पहले मरना चाहती हूं। आप लोगों से प्रार्थना है कि सबसे पहले मुझे राक्षस के पास भेजा जाए। मैं अपने से पहले किसी को मरते देख नहीं सकूंगी। मैं इस गाँव की धूल में बनी हुई हूं, यहाँ की हवा में मैंने सांस ली है। इस गाँव के लिए सबसे पहले मुझे ही मरने का अधिकार मिलना चाहिए।श नारी पुरुष संबंधों का आधार दो तरफा ईमानदारी पर आश्रित होता है। लेकिन प्रायः पुरुष नारी का भावात्मक शोषण करने से नहीं चूकना। ऐसी स्थिति में नारी का आहत मन चीत्कार कर उठता है– ष्मैं ली उदास होती हूं, पुरू, और जानती हूं इससे कोई छुटकारा नहीं हैं। एक अजीब सी घुटन ।.....एक अजीब सी उदासी।

पुरुष के दोहरे चरित्र ने नारी को आहत ही नही किया है अपितु उसके व्यक्तित्व को धूमिल भी किया है। परिणामस्वरूप नारी को विद्रोह करने के लिए बाहय होना पड़ा है– हम औरतें पुरुष के सामने झोली फैलाए कि दे दाता प्रेम का दान दे– मुझे यह एकदम फ्राड लगता है आज। पुरुष के प्रेम ने आज तक किस औरत को संतोष दिया है ?

आधुनिक युग के झंझावातों से त्रस्त नारी निरन्तर कठोर और सुदृढ होती चली गई है। अब उसे अपने व्यक्तित्व और अस्तित्व की कहीं अधिक चिन्ता है तभी तो वह पुरुष की मनमानी का विरोध करती देखी जा सकती हैकृश्तुम भी मुझे नहीं समझते ? इस घर में मुझे कोई नहीं समझता कोई मेरी नहीं सुनता कोई मुझें । मेरी भी तो अपनी कोई जिन्दगी है, अपनी इच्छाएं है।

नारी अपने प्यार के लिए समस्त विश्व की खुशियों का एक क्षण में परित्याग कर सकने की असीम शक्ति रखती आई है। वह न तो अपने भूतकाल को भूला सकती है न ही वर्तमान को और न ही उसके मन से भविष्य की परिकल्पनाएँ धूमिल हो सकती है– श्दोनों में से कुछ भी इतना आसान नहीं है, पुरु। जिसके साथ जुड़ना चाहती हैं उससे जुड़ने पर जो उपलब्धि होगी– उस भावना में तथा जिसके साथ बंध गई हूं। उससे कटकर जितना खो जाएगा उस यथार्थ में नहीं पुरू । तुम लाख कहो फिर भी उन दोनों में से किसी एक के साथ निर्णय लेना इतना आसान नहीं है।श जीवन की विपरीत परिस्थितियों से सामना करना नारी के चरित्र का एक मूल्यवान हिस्सा होता है। किसी भी समस्या के लिए सहज निर्णय लेने की सूझ नैसर्गिक रूप से प्राप्त है। ऐसा उदाहरण समकालीन नाटक एक और द्रोणाचार्य में मिलता अमब अमब 8 जब घर में आर्थिक अभाव के कारण मां कृपी अपने पुत्र अश्वत्थामा को आटे का घोल दूध के रूप में पिला कर बलिष्ट बनाती है।

कृपी– इस बर्तन में दूध के नाम पर आटे का घोल था। द्रोणाचार्य उस छोटे से बच्चे के साथ कपट करते हुए शर्म नहीं आई तुम्हें ?

कृपी– शर्म करती तो अब तक सर पटक–पटक कर मर गया होता।

द्रोणाचार्य– लेकिन आटे का घोल पी कैसे लिया ?कृपी–पीता नहीं तो कहा जाता ?आंचल छूटने के बाद कभी दूध पिया होगा तो याद रहता दूध का स्वाद ।श किसी भी अभाव की पूर्ति करना नारी को बखूबी आता है।

लज्जा नारी का आभूषण माना जाता है और नारी यथा सम्भव अपने इस अमूल्य आभूषण को बनाए रखने का सद् प्रयास करती है। वह पुरुष जाति का सम्मान करना जानती है तो वह कह उठती है–श्मरदन के बीच हम काव बोलित ?श नारी पुरुष के कन्धे से कन्धा मिलाकर चलती आई है। वह उसके प्रति पूर्ण सम्पूर्ण की भावना रखती है, साथ ही वह समय–समय पर पुरुष को उसके प्रक्रिया में वह पूर्ण निष्ठा एवं नैतिकता को आधार पर अपने दायित्वों को भी नहीं भूलती अपितु विनम्रता पूर्वक अपने उत्तरदायित्व को स्वीकार भी करती है।

कानपूर, कार्यविवरण दूसरा भाग, पृ–१० २ उपेन्द्रनाथ अश्कश, बड़े खिलाड़ी, पृ० १६

३ डॉ० पुष्पा बंसल, काव्य शास्त्र हिन्दी साहित्य चिन्तन पृ०–२०४

४ डॉ० पुष्पा बसल, पृ०–२०५

५ हिन्दी नाटक इतिहास दृष्टि और समकालीन बोध पृ०–२६

६ हिन्दी नाटक पृ०–२६

७ डॉ० नरेन्द्र मोहन, समकालीन कहानी की पहचान, प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली– १६८६

८ डॉ० नरेन्द्र मोहन, समकालीन कहानी की पहचान, पृ०–८

६ जयशंकर प्रसाद कामायनी, पृ० १११

१० मैथिलीशरण गुप्त– – यशोधरा, पृ० ४७

११ डॉ० शैल रस्तोगी, हिन्दी उपन्यासों में नारी, पृ०१०

उत्तरदायित्वों के लिए भी सचेत करती रहती है। इस १२ गोविन्द चातक, अपने–अपने खुटे पृ० ५३ १३ असगर वजाहत, जिस लाहौर नहीं देख्या ओ जम्याहि नहीं पृ० १६

१४ शंकर शेष, पोस्टर, पृ० १४३

इस प्रकार स्पष्ट है कि समकालीन नाटककारों ने १५ शंकर शेष, राक्षस, पृ० ३४ अपने नाटकों में नारी की हर स्थिति और स्तर का १६ किरन चन्द्र शर्मा, सावधान पुरुखा पृ० ६४ चित्रण किया है उनके पात्रों ने समाज के हर वर्ग की नारी, उसकी क्रिया–प्रतिक्रिया और

अनुभवों का सम्यक चित्रण किया है।

१७ गोविन्द चातक, अपने–अपने खूटे, पृ० २८

१८ गोविन्द चातक, अपने–अपने खूटे पृ०६७

१६ किरन चन्द्र शर्मा, सावधान पुरूखा, पृ० ६४ २० शंकर शेष, एक और द्रोणाचार्य, पृ० १६

२१ सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, बकरी, पृ० ३००

संदर्भ सूचीः–

१. जयशंकर प्रसाद, तेरहवाँ हिन्दी साहित्य सम्मेलन,

डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा
सह–प्रोफेसर (हिन्दी–विभाग)
गोस्वामी गणेशदत्य सनातन धर्म महाविद्यालय,
पलवल (हरियाणा)

2

जलवायु परिवर्तन व इसके प्रभाव

Mrs Mukesh Kumari

सारांश

वर्तमान साक्ष्य ये प्रमाणित कर रहे हैं कि मनुष्य पहले से कहीं अधिक पृथ्वी की जलवायु को बदल रहा है। वातावरण और महासागर गर्म हो रहे हैं,जिसके कारण समुद्र के जलस्तर में वृद्धि व आर्कटिक समुद्री बर्फ में कमी जैसे परिवर्तन देखे जा रहे हैं। मानव और प्रकृति पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव तेजी से स्पष्ट होते जा रहे हैं। अभूतपूर्व बाढ़े,गर्मी की लहरें और जंगलों की आग से अरबों का नुकसान हो रहा है।बदलते तापमान और वर्षा प्रतिरूप के कारण आवास तेजी से बदलाव के दौर से गुजर रहे है।

परिचय

जलवायु परिवर्तन का तात्पर्य तापमान और मौसम प्रतिरूप में दीर्घकालीन परिवर्तनों से है,ये परिवर्तन प्राकृतिक हो सकते हैं लेकिन 1880 के दशक से मानव गतिविधियां जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण रही है। मुख्य रूप से जलवायु परिवर्तन का कारण कोयला,तेल और गैस जेसे जीवाश्म ईधन का जलाना रहा है। वैज्ञानिक भी मानते हैं कि वर्तमान जलवायु परिर्वतन का मुख्य कारण मानवीय गतिविधियां है। सामान्य तौर पर जलवायु परिवर्तन वैश्विक तापन का वर्णन करता है।बढ़ती वैश्विक तापमान वृद्धि और पृथ्वी की जलवायु प्रणाली पर इसके प्रभाव देखे जा सकते हैं। वर्तमान में औसत वैश्विक तापमान में वृद्धि पहले से कहीं अधिक हो रही है।यह मुख्य रूप से मानव द्वारा जीवाश्म ईधनो के जलाने,वनों की कटाई,कृषि और औद्योगिक कार्यों से ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि विशेष रूप से कार्बन डाइऑक्साइड और मिथेन के उत्सर्जन से हो रही है।

आईपीसीसी चौथा आकलन 2007: प्रभाव, अनुकूलन और भेद्यता (आईपीसीसी, 2007 (ए)) ने तीन मुख्य मुद्दों को संबोधित किया जलवायु परिवर्तन के प्रभाव जो अब देखे जा सकते हैं; विभिन्न क्षेत्रों और क्षेत्रों पर जलवायु परिवर्तन के भविष्य के प्रभाव; और ऐसे प्रभावों की प्रतिक्रियाएँ आईपीसीसी के अनुसार पिछले 50 वर्षों में वैश्विक तापन में देखी गयी वृद्धि, ग्रीन हाउस गैस सांद्रता में वृद्धि के कारण हुई है।आईपीसीसी के मूल्यांकन के अनुसार आज का अंश पिछले 5 या 10 सालों की तुलना में अधिक है और अभी भी अनिश्चितता बनी हुई है क्योंकि (I) सदियों से जलवायु प्रणाली में प्राकृतिक परिवर्तनशीलता का स्तर (II) लंबे समय से प्राकृतिक परिवर्तनशीलता को सटीक रूप से अनुकरण करने के लिए मॉडलों की संदिग्ध क्षमता । वैश्विक तापन वास्तविक रुप से पिछले 20 वर्षों से यह ज्यादा बढ़ रहा है। क्या यह मानव गतिविधियों के जवाब में अपेक्षित परिवर्तन के अनुरूप है? यह इस बात पर निर्भर करता है कि विशेष रूप से एयरोसोल के वायुमंडलीय सांद्रता के समय के इतिहास के बारे में क्या धारणाए है

वैश्विक तापन

वैश्विक तापन मुख्य रूप से मानव जनित पृथ्वी के औसत तापमान वृद्धि को संदर्भित करता है। वैश्विक तापन तब होता है जब वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड व अन्य ग्रीनहाउस गैसै बढ़ती है। ये गैसै सूर्य के प्रकाश और अन्य विकिरण को अवशोषित कर लेती है,जिससे वैश्विक तापन बढ़ता है। ग्रीन हाउस गैसें है। कार्बन डाईऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरोकार्बन,जलवाष्प,मिथेन,नाइट्रस ऑक्साइड

कारण

जीवाश्म ईंधन

तेल, गैस और कोयले जैसे जीवाश्म ईंधन में कार्बन डाइऑक्साइड होता है जो हजारों वर्षों से जमीन में बंद रहे है । जब हम इन्हें जमीन से बाहर निकालते हैं और जलाते हैं, तो हम संग्रहित कार्बन डाइऑक्साइड को हवा में छोड़ देते हैं।जीवाश्म ईंधन को जलाने से प्राकृतिक कार्बन चक्र में परिवर्तन आता है।जब बिजली बनाने और गाड़ियों को चलाने के लिए हम जीवाश्म ईंधनो का प्रयोग करते हैं,तो वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा बढ़ती है। चीन कार्बन डाइऑक्साइड उत्पादन में विश्व का सबसे बड़ा उत्पादक देश है।सयुक्त राज्य अमेरिका का प्रति व्यक्ति कार्बन डाइऑक्साइड प्रदूषण का स्तर अन्य विकसित देशों के औसत से दोगुना है।

बिजली उत्पादन

बिजली उत्पादन करने के लिए जीवाश्म ईंधन को जलाना वैश्विक तापन वृद्धि का एक बड़ा हिस्सा है। अधिकांश बिजली आज भी कोयला, तेल और गैस के जलाने से उत्पन्न हो रही है,जो कार्बन डाइऑक्साइड और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी ग्रीन हाउस गैसों को उत्पन्न करती है।ऑस्ट्रेलिया में कार्बन प्रदूषण का मुख्य कारण बिजली उत्पादन है।ऑस्ट्रेलिया में 73% बिजली का उत्पादन कोयले से और 13% उत्पादन गैस से होता है।

जंगलों की कटाई

खेत या चरागाह बनाने के लिए या अन्य किसी कारण से वनों को काटा जाता है,तो वो उस कार्बन को छोड़ते हैं जो वो जमा कर रहे होते हैं। प्रत्येक वर्ष लगभग 12 मिलियन हेक्टेयर वन नष्ट हो जाते हैं। वन कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं, वनों को नष्ट करने से कार्बन डाइऑक्साइड को प्रकृति में रखने की क्षमता कम हो जाती है। वनों की कटाई,कृषि और अन्य भूमि उपयोग परिवर्तन वैश्विक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन का एक चौथाई है। जब वनस्पति को हटा दिया जाता है या जला दिया जाता है तो वनों द्वारा संग्रहित कार्बन, कार्बन डाई ऑक्साइड के रूप में वापस वातावरण में छोड़ दी जाती है जिससे वैश्विक तापन बढ़ता है।उन्हें काटने का मतलब है कि कार्बन डाइऑक्साइड तेजी से बनता है क्योंकि इसे अवशोषित करने के लिए

कोई पेड़ नहीं हैं। इतना ही नहीं, जब हम उन्हें जलाते हैं तो पेड़ उस कार्बन को छोड़ते हैं जो वे जमा करते हैं।

परिवहन का उपयोग

अधिकांश यातायात के साधन जीवाश्म ईंधन से चलते हैं। ये यातायात के साधन कार्बन डाइऑक्साइड गैस उत्सर्जन के प्रमुख उत्पादक हैं।परिवहन वैश्विक ऊर्जा से संबंधित कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन का लगभग एक चौथाई हिस्सा है।

भोजन का उत्पादन

भोजन का उत्पादन विभिन्न तरीकों से कार्बन डाइऑक्साइड, मिथेन और अन्य ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन का कारण बनता है। आमतौर पर कृषि उपकरणों या मछली पकड़ने की नाव चलाने के लिए ऊर्जा का उपयोग किया जाता है जो भोजन उत्पादन करने के लिए जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण बनता है। ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन भोजन की पैकिंग और वितरण से भी होता है। पशु और मवेशी मिथेन ग्रीनहाउस गैस का उत्पादन करते हैं। जब पशुपालन बड़े पैमाने पर हो तो उत्पादित मिथेन की मात्रा वैश्विक तापन में बड़ा योगदान करती हैं, जैसे कि ऑस्ट्रेलिया। ऑस्ट्रेलियाई कृषि हमारे कुल ग्रीनहाउस गैस के 16% का उत्सर्जन करती है।

ज्यादा वहन

जरूरत से ज्यादा किसी चीज का सेवन करना ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में योगदान देता है। वैश्विक ग्रीनहाउस उत्सर्जन का एक बड़ा हिस्सा हमारे निजी घरों से जुड़ा है। हमारी जीवन शैली का हमारे पर्यावरण पर गहरा प्रभाव पड़ता है। सबसे अमीर लोग सबसे ज्यादा वहन करते हैं,वैश्विक आबादी के सबसे अमीर 1% सयुक्त रूप से सबसे गरीब 50% की तुलना में अधिक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन करते हैं।

कृषि

फसलें उगाना और जानवरों को पालना हवा में कई अलग–अलग प्रकार की ग्रीनहाउस गैसें छोड़ता है। उदाहरण के लिए, जानवर मीथेन का उत्पादन करते हैं, जो ग्रीनहाउस गैस के रूप में कार्बन डाइऑक्साइड से 30 गुना अधिक शक्तिशाली है। उर्वरकों के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला नाइट्रस ऑक्साइड कार्बन डाइऑक्साइड की तुलना में दस गुना खराब और लगभग 300 गुना अधिक शक्तिशाली है!

सीमेंट

सीमेंट का उत्पादन जलवायु परिवर्तन में एक और योगदानकर्ता है, जो हमारे संपूर्ण कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन का 2: का कारण बनता है।

प्रभाव व परिणाम

पर्यावरणीय प्रभाव

बढ़ता तापमान

जैसे–जैसे पर्यावरण में ग्रीनहाउस गैस बढ़ रही है, वैसे–वैसे वैश्विक तापमान भी बढ़ता जा रहा है। दशक 2011–2020 सबसे गर्म रहा है । 1980 के दशक से,प्रत्येक दशक पिछले दशक की तुलना में अधिक गर्म रहा है। आर्कटिक क्षेत्र में तापमान वैश्विक औसत से दोगुनी गति से बढ़ रहा है। बर्फ से जमी जमीन में कमी आ रही है व ग्लेशियर झीलो की संख्या में वृद्धि हो रही है। परमाफ्रास्ट और पर्वतीय क्षेत्रों की अस्थिरता में वृद्धि हो रही है। बर्फ की सीमा में सबसे बड़ी कमी आर्कटिक क्षेत्र में हुई है। सबसे स्पष्ट कमी उष्णकटिबंधीय पर्वतीय क्षेत्र माउंट किलिमंजारो में देखी जा सकती है । 1970 के दशक के उत्तरार्ध से विशेष रुप से गर्मियों और शरद ऋतु में आर्कटिक क्षेत्र की समुद्री बर्फ में नाटकीय रूप में कमी आई है।आर्कटिक क्षेत्र में हर साल शीत ऋतु में बर्फ का आवरण फैलता है,लेकिन बर्फ की मोटाई पहले की तुलना में पतली होती जा रही है।ग्रीनहाउस गैस सांद्रता 2020 में एक नए वैश्विक स्तर पर पहुंच गई, जब वैश्विक स्तर पर कार्बन डाइऑक्साइड (CO2) की सांद्रता 413.2 इकाई प्रति मिलियन (पीपीएम) तक पहुंच गई, या पूर्व–औद्योगिक स्तर का 149% है। विशेष स्थानों के आकड़ो से संकेत मिलता है कि 2021 और 2022 की शुरुआत में (CO2) का उत्सर्जन बढ़ता रहा है। हवाई में मोना लोआ में मासिक औसत (CO2) अप्रैल 2020 में 416.45 पीपीएम, अप्रैल 2021 में 419.05 पीपीएम और अप्रैल 2022 में 420.23 पीपीएम तक पहुंच गया।

2021 में वैश्विक वार्षिक औसत तापमान 1850–1900 इसवी पूर्व–औद्योगिक औसत से लगभग 1.11±0.13 डिग्री सेल्सियस अधिक था, जो हाल के कुछ वर्षों की तुलना में कम गर्म था। सबसे हाल के सात साल, 2015 से 2021, रिकॉर्ड किए गए सात सबसे गर्म साल हैं

प्रचंड तूफान

कई क्षेत्रों में तूफान अधिक विनाशकारी व अधिक नियमित होते जा रहे हैं। जैसे–जैसे तापमान बढ़ता है,वाष्पीकरण अधिक होता है, जो वर्षा को बढता है,जिससे अधिक विनाशकारी तूफान आते हैं। उष्णकटिबंधीय तूफानों की आवृत्ति भी महासागरों के बढ़े हुए तापन से प्रभावित होती हैं। चक्रवात हरिकेन और टायफून समुद्री सतह की गर्मी से निर्धारित होते हैं। आईपीसीसी चौथा आकलन कि रिपोर्ट के अनुसार 21वीं सदी में तीव्र उष्णकटिबंधीय चक्रवातीय गतिविधियां बढी है। इस प्रकार, तूफान कैटरीना जैसी घटनाओं की अपेक्षा करना उचित है, जो अगस्त 2005 में न्यू ऑरलियन्स से टकराया था और अनुमानित 4000 लोगों की मृत्यु का कारण बना । सितंबर 2022 में संयुक्त राज्य अमेरिका के फ्लोरिडा तट पर सबसे शक्तिशाली तूफान इयान रिकॉर्ड किया गया ।यह दुनिया भर के सबसे विनाशकारी तूफानों में से एक रहा।

बढ़ता सूखा

जलवायु परिवर्तन के कारण पानी की उपलब्धता में कमी आ रही है। वैश्विक तापन के कारण पहले से कमी वाले क्षेत्रों में पानी की ओर कमी होती जा रही है। इसके कारण कृषि क्षेत्रों में सूखे का खतरा बढ़ता जा रहा है। सूखे के कारण विनाशकारी रेत और धूल

के तूफान बनते जा रहे हैं,जो अरबो टन रेत को एक भाग से दूसरे भाग में ले जा रहे हैं।इससे रेगिस्तान का विस्तार बढ़ता जायेगा और कृषि के लिए भूमि में कमी आती जाएगी।

पारिस्थितिकी प्रभाव

प्रजातियों को खतरा

जलवायु परिवर्तन भूमि और जल में प्रजातियों के अस्तित्व के लिए जोखिम की स्थिति पैदा कर रहा है। जलवायु परिवर्तन की वजह से मानव इतिहास में हम वर्तमान समय में सबसे अधिक प्रजातियों को खोते जा रहे हैं। अगले कुछ दशकों में दस लाख प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा है। जलवायु परिवर्तन के कारण जंगलों में आग लगना, तूफान, आक्रामक कीट और बीमारियों का खतरा बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार के खतरे के कारण कुछ ही प्रजातियां होगी जो स्थानांतरित होकर अपने आप को जीवित रखने में सक्षम होगी।किसी भी प्रजाति को अनुकूलन के लिए समय चाहिए होता है और पर्यावरण में अचानक परिवर्तन अनुकूलन की कमी के कारण इसकी मृत्यु का कारण बनेगा।

अपर्याप्त भोजन

वैश्विक स्तर पर बढ़ती भुखमरी और कुपोषण का कारण जलवायु परिवर्तन व चरम मौसमी घटनाओं में वृद्धि का होना है। इन घटनाओं के कारण मत्स्य पालन,फसलें और पशु धन नष्ट हो सकते हैं। महासागरों के अधिक अम्लीय होने के कारण अरबों लोगों का पेट भरने वाले समुद्र संसाधन खतरे में हैं। आर्कटिक क्षेत्र में बर्फ के आवरण में परिवर्तन से पशुपालन,शिकार और मछली पकड़ने से होने वाली खाद्य आपूर्ति बाधित हुई है।

मानवीय प्रभाव

स्वास्थ्य जोखिम

जलवायु परिवर्तन मानव स्वास्थ्य के लिए सबसे बड़ा खतरा है। हर साल पर्यावरणीय कारक लगभग 13 मिलियन लोगों की जान ले लेते हैं। बदलते मौसम के प्रतिरूप से बीमारियां बढ़ रही है और चरम मौसमी घटनाओं से मौतों में वृद्धि हो रही है। जलवायु परिवर्तन गर्मी की लहरों की बढ़ती आवृत्ति और तीव्रता के साथ गंभीर स्वास्थ्य जोखिम पैदा करता है।

गरीबी और विस्थापन

जलवायु परिवर्तन के कारण लोगों में गरीबी और विस्थापन की समस्या बढ़ती जा रही है। जलवायु परिवर्तन के कारण बाढ़ और सूखे की समस्या घरों और आजीविका को नष्ट कर रही है। पिछले एक दशक(2010–2019) में, मौसम संबंधी घटनाओं के कारण हर साल औसतन 23.1 मिलियन लोग विस्थापित हो रहे हैं। जिससे कई लोग गरीबी की चपेट में आये हैं।वर्तमान में अधिकांश शरणार्थी उन देशों से आ रहे हैं जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावो के अनुकूल होने के लिए कम से कम तैयार है। चीन के हेनान प्रांत में बाढ़ से 17.7 बिलियन अमेरिकी डॉलर का आर्थिक नुकसान हुआ, और पश्चिमी यूरोप ने जुलाई के मध्य में सबसे गंभीर बाढ़ का अनुभव किया, जो जर्मनी में 20 बिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक के आर्थिक नुकसान से जुड़ा था। जानमाल का भारी नुकसान हुआ था।

सूखे ने दुनिया के कई हिस्सों को प्रभावित किया, जिसमें हॉर्न ऑफ अफ्रीका, कनाडा, पश्चिमी संयुक्त राज्य अमेरिका, ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान और तुर्की शामिल हैं। उप–उष्णकटिबंधीय दक्षिण अमेरिका में, सूखे के कारण बड़े कृषि नुकसान हुए और ऊर्जा उत्पादन और नदी परिवहन बाधित हुआ। 2022 से अब तक हॉर्न ऑफ़ अफ्रीका में सूखा तेजी से बढ़ रहा है।

वर्तमान जलवायु परिवर्तन सम्मेलन

पेरिस समझौता

पेरिस समझौता जलवायु परिवर्तन पर कानूनी रूप से बाध्यकारी अंतरराष्ट्रीय संधि है । इसे 12 दिसंबर 2015 को पेरिस में COP 21 में 196 देशों द्वारा अपनाया गया और यह 4 नवंबर 2016 को लागू हुआ। इसका लक्ष्य पूर्व–औद्योगिक स्तरों की तुलना में ग्लोबल वार्मिंग को 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे लाना, अधिमानतः 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित करना है। पेरिस समझौता बहुपक्षीय जलवायु परिवर्तन प्रक्रिया में एक मील का पत्थर है क्योंकि, पहली बार, एक बाध्यकारी समझौता सभी देशों को जलवायु परिवर्तन से निपटने और इसके प्रभावों के अनुकूल होने के महत्वाकांक्षी प्रयासों के लिए एक आम कारण में लाता है।

COP-27

जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन, पेरिस समझौते के पक्षकारों का 27वां सम्मेलन 6 से 20 नवंबर 2022 तक शर्म अल–शेख, मिस्र में आयोजित किया गया । 20 नवंबर को, जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (COP27) के पक्षकारों का 27वां सम्मेलन, जो मिस्र के तटीय शहर शर्म अल–शेख में हुआ, एक नुकसान और क्षति को स्थापित करने और संचालित करने के ऐतिहासिक निर्णय के साथ संपन्न हुआ। संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुतारेस ने कहा कि उत्सर्जन में भारी कमी लाने के लिए अभी और प्रयास किए जाने की जरूरत है। "दुनिया को अभी भी जलवायु महत्वाकांक्षा पर एक विशाल छलांग लगाने की जरूरत है"। इस सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन को प्रमुख संकट मानते हुए वैश्विक तापमान को नियंत्रित करने के साथ–साथ क्षति के समाधान को आधिकारिक तौर पर एजेंडे में शामिल किया गया।

निष्कर्ष

विश्व भर में प्राकृतिक प्रणालियों में क्षेत्रीय जलवायु परिवर्तन,तापमान में वृद्धि के कारण हो रहा है और यह वृद्धि ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन का मानव जनित परिणाम है।वैज्ञानिक भी सिद्ध कर चुके हैं कि जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण मानवीय गतिविधियां है। आज के समय में जीवाश्म ईंधनो,परिवहन के साधनों के बढ़ते उपयोग व पेड़ों को काटने के कारण जलवायु परिवर्तन की समस्या बढ़ती जा रही है।इस परिवर्तन के कारण कई पर्यावरणीय, पारिस्थितिकीय व मानवीय प्रभाव देखे जा रहे हैं। पौधे और पेड़

जलवायु को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं,क्योंकि वे हवा से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं और उसमें ऑक्सीजन वापस छोड़ते हैं। वन कार्बन सिंक के रूप में कार्य करते हैं और ग्लोबल वार्मिंग को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक रखने का एक महत्वपूर्ण साधन हैं।

संदर्भ–सूची

आईपीसीसी, 2007(a) क्लाइमेट चेंज 2007% इम्पैक्ट्स, एडाप्टेशन एंड वल्नर एबिलिटी । जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल की चौथी आकलन रिपोर्ट में कार्यकारी समूह II का योगदान। एमएल पैरी, ओएफ कैन्ज़ियानी , जेपी पॉलुटिकोफ , पीजे वैन डेर लिंडेन और सीई हैनसन (एड्स।), कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, यूनाइटेड किंगडम, 976 पीपी।

आईपीसीसी, 2007(b): क्लाइमेट चेंज 2007: द फिजिकल साइंस बेसिस। जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल की चौथी आकलन रिपोर्ट में कार्य समूह का योगदान। एस. सोलोमन, डी. किन, एम. मैनिंग, जेड. चेन, एम. मार्क्विस, केवी एवरी, एम. टिग्नोर और एचएल मिलर (एड्स), कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, यूनाइटेड किंगडम और न्यूयॉर्क, यूएसए, 996 पीपी .

आईपीसीसी, 2007(c): क्लाइमेट चेंज 2007: सिंथेसिस रिपोर्ट। आईपीसीसी, जिनेवा, स्विट्जरलैंड, 102 पीपी।

An overview from the Royal Society and the Us National Academy of Science 2020

Mrs Mukesh Kumari

Assistant professor

Department of Geography

F.G.M.Govt-College, Adampur (Hisar Haryana)

Mob- 9991432035

Pin code- 125052

3

OUTER CONFLICT IN 'A PORTRAIT OF THE ARTIST AS A YOUNG MAN' NOVEL

Sahil Patil

Abstract:

A Portrait of the Artist as a Young Man is a novel by Irish writer James Joyce that was published in 1916 after having appeared in serial form in 1914–1915. The novel draws on many details from Joyce's early life, and its protagonist, Stephen Dedalus is in many ways Joyce's fictional alter ego.(1) Like Joyce himself, Stephen is the son of an impoverished father and a highly devout Catholic mother who struggles with questions of faith and nationality before leaving Ireland to make his own way as an artist. It follows the intellectual, moral and spiritual development of a young Catholic Irishman, Stephen Dedalus, and his struggle against the restrictions his culture imposes. Portrait can be placed in the tradition of the bildungsroman – novels that trace the personal development of the protagonist, usually from childhood through to adulthood.(2) Joyce contrasts the rebellion and the experimentation of adolescence with the sombre influence of Stephen's Catholic education. The name Dedalus links to Ovid's mythological story of Daedalus – the 'old artificer' – and his son Icarus, who flies too close to the sun. We are reminded of this image when Stephen tells his friend Davin: 'When the soul of a man is born in this country there are nets flung at it to hold it back from flight. You talk to me of nationality, language, religion. I shall try to fly by those nets'.

"Once upon a time and a very good time it was there was a moocow coming down along the road and this moocow that was coming down along the road met a nicens little boy named baby tuckoo ...

His father told him that story: his father looked at him through a glass: he had a hairy face.

He was baby tuckoo. The moocow came down the road where Betty Byrne lived: she sold lemon platt."

—James Joyce, Opening to A Portrait of the Artist as a Young Man(3)

Introduction

Conflict is said to be essential element for tragedy but a number of novels of the twentieth century possess conflict. It is necessary to know that a conflict is a struggle of opposing forces.(4)

Stephen's brutal conflict with his environment and circumstances= Even a cursory reading of the novel shows that its hero has to contend with those element of his environment which are opposed to him. From his earliest years, it appears that the forces of his environment are arrayed against him, imposing demands against which he must struggle to survive. As an infant, he must apologize or the "eagles" will punish him. Ecclesiastical authority demands that he submit to an injustice which is acknowledged only when he protests. Civil authority demands he condemn Byron's poetry on "moral grounds". His father wants him to imitate his own success, and his mother wants him to submit to forms of religious observance. All this might seem to imply the so called "naturalistic" concept of the hero as a victim of his environment, in the sense that he reads blindly against it to survive.

Stephen's inner conflict is more important than the outer conflict= It is apparently clear to a discriminating and intellectual reader that plot of the novel is internalized not in Dublin of Ireland but Stephen's consciousness is "the stage on which the dramatic action unfolds. The plot of the book is Stephen's struggle for independence, as a potential artist, against a formidable battery of opponents who demand his allegiance. The constant voices of his father and his master urging him to be a gentleman and a good Catholic above all things. Hugh Kennar has suggested that the portrait opens "aimed elaborate counterprint". The first two pages enact the entire action in microcosm. They are a prelude. And if they do not enact the entire action, at least in them one finds hints of the significant problems that preoccupacy Stephen Dedalus, the artist a young man, as he reaches towards maturity: sin and retribution, paternity and maternity, the tyranny of the social order, the artist, relation to his material. With each the young artist must come to terms before the portrait is concluded. In the section which follows the landscape of the book as Stephen moves from grammar school to secondary school and finally to the university.

White and red roses symbolize the conflict between the forces that both claim his allegiance= The opposing forces

that both claim the allegiance of Stephan have been symbolized by white and red roses. The white rose of spiritual love and red rose representing sensual love are both potentially contained in the undefined rose associated with the dream of Mercedes. It is undefined because the boy's longing for an ideal love is undefined. When his ideal is unfulfilled in reality he turns to red rose of sensual fulfillment.

The conflict between the ideal and the real as a reconciled= The struggle between the opposing forces results in a choice between the ideal and the real. But both are aspects of his environment, which he struggles to reconcile, and cannot until he recognizes that his means of reconciliation is in his vocation as artist. And as the red rose of his dream indicates the reconciliation will be in the creation of ideal beauty from the "moral" beauty of the real world. The conflict then of real and ideal within the protagonist points to the theme of the artist's struggle to realize himself.

Conclusion= The artistic manner in which the novelist has depicted the conflict is an admirable feature of A Portrait of The Artist as A Young Man. There is magnificent gallery of various kind of characters.

References

1. https://www.sparknotes.com/lit/portraitartist/full-text/
2. https://www.bl.uk/works/a-portrait-of-the-artist-as-a-young-man
3. https://en.wikipedia.org/wiki/A_Portrait_of_the_Artist_as_a_Young_Man
4. Arihant UGC net/jrf/set English paper 2 book by Mridula Sharma, Ajeet Singh Jadaun, Tanveen Kaur, Dr. Chakreswari Dixit, Chhavi Kumar, Arihant Publication Limited, Edition 2022, Chapter 18, Fiction in Modern Age(1910-1945),(page no. 453)

Sahil Patil

Arvind Kumar Patil

Vidya Nagar, Mehem Road, Dr. Kajal wali gali near Ravinder Shop, Bhiwani, Haryana

Mob No. 8901027630

Pin Code 127021

4

बाज़ारवाद, मीडिया बनाम साहित्य

डॉ0 दिनेश कुमार कौशिक

सारांश

आज के युग में समाज बड़ी तेजी से बदल रहा है। इस बदलते परिवेश के साथ व्यक्ति सामाजिक संदर्भों के साथ अनुकूलन नही ंकर पा रहा। वर्तमान समय में उसके सामने कई प्रकार की चुनौतियाँ हैं। इस चुनौती भर परिवेश में मनुश्य का मनुश्य के प्रति अनुराग कम होता जा रहा है। उसका वस्तुओं से अनुराग बढ़ रहा है। कारण यह है कि आज के सामाजिक परिवेश में बाज़ारवाद प्रभावी होता जा रहा है। बाज़ारवाद पर मीडिया का काफी प्रभाव दिखाई देता है। आज पूरे संसार में मीडिया ने अपने पाँव जमा लिए हैं। इसका प्रभाव क्षेत्र काफी प्रभावशाली दिखने लगा है।

आज उपभोक्ता के ऊपर बाज़ारवाद हावी हो गया जिससे बाज़ारवाद के चक्कर में पड़कर तुलसीदास का मर्यादित संयुक्त परिवार की अवधारणा टूट गई, बाज़ार में वस्तुओं की वैराइटी बढ़ती जा रही है। नित्य नये–नये प्रयोग बाज़ार में किए जा रहे हैं। वर्तमान साहित्य प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रानिक मीडिया पूरी तरह से बाज़ारवाद के पक्ष में है। व्यक्ति की आय और व्यय का संतुलन बिगड़ गया है। प्राचीन मूल्य संस्कार बाज़ारवाद के चक्कर में बिखर गए हैं। नए सामान की खरीद के चक्कर में व्यक्ति अकेला होता चला गया और अकेला हो गया। अब वह ऐसे दो राहे पर पहुँच गया है कि वहाँ से लौटना भी मुश्किल है। "टी.वी. में रंगीन ढंग के नित्य नई जानकारी दी जा रही है, जिसे खरीदने के लिए व्यक्ति व्याकुल हो रहा है। वस्तु खरीदने के लिए अपने संस्कार नष्ट करता जा रहा है, किसी भी तरह से धन कमा रहा है, थोड़े से पैसे के लिए कत्ल किया जा रहा है।"[1]

मीडिया यानि मीडियम, माध्यम। मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ माना जाता है। इसी से मीडिया के महत्त्व का अंदाजा लगाया जा सकता है। समाज में मीडिया की भूमिका संवाद वहन की होती है। वह समाज के विभिन्न वर्गों सत्ता, केन्द्रों, व्यक्तियों और संस्थानों के बीच पुल का कार्य कराता है। आधुनिक युग में मीडिया का सामान्य अर्थ समाचार–पत्र, पत्रिकाओं, टेलीविजन, रेडियो, इंटरनेट आदि से लिया जाता है। किसी भी देश की उन्नति व प्रगति में मीडिया का बहुत बड़ा योगदान होता है। अगर मैं कहूँ कि मीडिया समाज का निर्माण व पुनर्निर्माण करता है, तो यह गलत नहीं होगा। इतिहास में ऐसे अनगिनत उदाहरण भरे पड़े हैं, जबकि मीडिया की शक्ति को पहचानते हुए लोगों ने उसका उपयोग लोक परिवर्तन के भरोसेमंद हथियार के रूप में किया। अंग्रेजों की दासता से सिसकते भारतीयों में देशभक्ति व उत्साह भरने में मीडिया का बड़ा योगदान था।

"बाज़ार व्यापार के लिए स्थान और अनिवार्य संसाधन प्रदान करता है। इस अर्थ में बाज़ार व्यापार का आधार है। यह उपभोक्ता संरक्षण है। आधुनिकता के विकास के साथ राश्ट्रवाद का भी विकास हुआ। यहीं पर बाज़ार के साथ राश्ट्र का प्रसंग जुड़ा। आधुनिक राश्ट्रों के संघटन और राश्ट्रवाद के उंदय के बाद राजा को भागौलिक प्रसार की आन्तरिक आकांक्षा में एक तरह का निम्नमुखी बदलाव आया। प्रारम्भ में भारत में ईश्ट इण्डिया कम्पनी की मूल आकांक्षा राज्य में कब्जा करने की नहीं थी। वह तो व्यापार पर ही कब्जा करना चाहती थी।"[2]

पहले का साहित्य बाज़ार की सही खबर देता था लेकिन आज साहित्य पर मीडिया का वर्चस्व हो गया। आज मीडिया पर केबल पर देखें, बाबा, बाला, टी.आर.पी. हमें मात्र एक मूर्ख उपभोक्ता बनाने के प्रयास में सब लगे हैं। हम मात्र एक वस्तु बनकर रह गए हैं। आज की दुनिया का सबसे बड़ा सत्य अब महायुद्धों का रूप नहीं रहा है। वह त्रासदी अब नहीं आने वाली है। सब एक–दूसरे से भयभीत हैं। पर सबसे बड़ा भय बाज़ारवाद और उसकी प्रतीकात्मक शक्तियों के बीच छिड़ने वाला प्रतिवाद नहीं रहेगा। "उधर बिहार की बाढ़ में भूखे, नंगे, बिलखते बच्चों के चित्र भी परोस रहे हैं तो साथ ही उस चैनल्स का फूहड़ दृश्य भी माल खरीदो, यह दुःख भी हम बेचने आए हैं। यहाँ भी विज्ञापन है, सबसे पहले यह चित्र दिखाया है, यही तो बाज़ारवाद है। जहाँ हमारे भीतर की अस्मिता ही खो गई है।"[3] बाज़ार में बदलाव की अद्भुत क्षमता होती है। समाज के विकास के विभिन्न चरणों में आए बदलाव के साथ बाज़ार अपने को बदलता रहा है। कुछ लोगों की धारणा ठीक इसके विपरीत है। इस धारणा के लोग यह मानते हैं कि बाज़ार में आए बदलाव को ही विकास कहा जाता है। ऐसे लोग यह नहीं मानते कि समाज के विकास के साथ बाज़ार बदलता है। इनकी नज़र में मुख्य शक्ति बाजार है, समाज नहीं। बहुत ही मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि सभ्यता और संस्कृति या कह लीजिए जीवन समग्र का मुख्य संचालन निकाय समाज को मानना समाजवाद है। जीवन में समाज और बाज़ार दोनों में से किसी के भी निशेध के लिए कोई जगह नहीं होती। लेकिन इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता है कि इसमें से किसी एक के मौलिक और प्राथमिक तत्त्व होने को लेकर जीवन संघर्श आवश्यक है। जीवन संघर्श से विच्छित्र बाज़ारवाद और समाज के संघर्श के एक मनोभाव को यहाँ देखा जा सकता है – "आज की तारीख में दुनिया को एक ध्रुवीय बनाने का निहितार्थ है बाज़ारवाद का पूर्ण वर्चस्व और समाजवाद का पूर्ण निरसन।"[4] यहाँ यह प्रश्न उठता है कि उपभोक्ता और वस्तु में से कौन महत्त्वपूर्ण है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। बाज़ार में वस्तु नही है तो उपभोक्ता का कोई अस्तित्व ही नहीं है और यदि वस्तु है तो उसका कोई न कोई खरीददार भी तो होना चाहिए। यूरोप में वस्तु की मात्रा बहुत अधिक हो गई थी। उपभोक्ता नहीं थे जिसके कारण यूरोप के

व्यापारियों को समुद्र पार करने का जोखिम उठाना पड़ा। तब उन्हें भारत, अमेरिका, इण्डोनेशिया जैसे देशों में उपभोक्ता मिले। इस दृश्टिकोण से उपभोक्ता महत्त्वपूर्ण है, उसे संरक्षण देना चाहिए। मध्ययान के इतिहास पर नज़र डालें तो अलाउद्दीन खिलजी की बाज़ार व्यवस्था में देखा जा सकता है। वहाँ बाज़ारवाद और समाजवाद दोनों का संतुलन देखा जा सकता है। "अमीर खुसरो अपने ग्रंथ 'खुजाये–नुल–फुतूह' में तथा जियाउद्दीन बरनी अपनी पुस्तक 'तारी–ए–फिरोजशाही' में इसकी विधिवत जानकारी देते हैं। उपभोक्ता और वस्तु का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध था। आगे चलकर मुहम्मद तुगलक की बाज़ार व्यवस्था बिगड़ गई थी, वहाँ बाज़ार में उपभोक्ता हावी हो गया था, वस्तु का अस्तित्व ही नहीं रह गया था।"[5]

बाज़ार मात्र यांत्रिक है अर्थात् तक सीमित नहीं है। इन्टरनेट के माध्यम से, मोबाइल के माध्यम से यह हर घर में प्रवेश कर गया है। संस्कृति की आधारभूमि अनुभव जन्य ज्ञान है, साहित्य भी यहीं जन्म लेता है। बाज़ारवाद ने भाशाओं के रचनाकारों को तोड़ा है, मरोड़ा है। हिन्दी भाशा में पत्रिकाएँ बन्द होती चली गई हैं। समाचार–पत्र लेखक के नाम ही छपते हैं, पता नहीं, उसका अपने पाठक से सम्बन्ध टूट गया है। पुस्तकें प्रकाशित नहीं होती, वरन् रुपया देकर प्रकाशित की जाती हैं। कौन खरीदता है, कौन पढ़ता है, किसी को पता नहीं, बाज़ारवाद कब प्रवेश कर गया पता ही नहीं चला।

"आज मीडिया की ताकत भी साहित्य पर अधिक गहरी पड़ गई है। आज बाज़ारवाद का बोलबाला है। इसी बीच मीडिया अपना कार्य कुछ नयेपन के साथ करना अपने आप में स्तम्भ सोचने लगी है।"[6] गिरते हुए पूँजीवाद के पास अचानक उन्नत प्रौद्योगिकी का हथियार आया है। उस विकसित 'टैक्नोलॉजी' से प्राप्त सुख सुविधा ने सोवियत संघ को तोड़ दिया। तकनीक सुख का वाहन है। भूमंडलीकरण ने विश्व को मात्र एक गाँव नहीं बनाया है। कुछ को सूदखोर, महाजन या सामंत शेश को बन्धुवा मजदूर बना दिया है। सरकारी सत्ता धीरे–धीरे सिमटती जा रही है। भारत ने न्यूक्लीयर डील पर मचा विवाद इसका उदाहरण है। अधिक सुख मिलता है, हमारी बात मानो यह भूमंडलीकरण का सबसे बड़ा मज़ाक है। ये परिस्थितियाँ जिस समाज को जन्म दे रही हैं, वह सार्थक नहीं है वहाँ हर चीज़ बिकाऊ है। मूल्यहीनता संक्रमणकालीनता नहीं है, यह तो राजरोग है, जो समाज की देह को लगा गया है। बाज़ारवाद भाशा को प्रमोट भी करता है। अतिरंजन, मनोरंजकता तथा भाशा की तरलता, एक सुंदर रेपर में रखी चॉकलेट की तरह का सा हो लोकप्रिय होने लगा है। पुस्तकों का आवरण व मुद्रण आकर्शित होने लगा है, भले ही भीतर कचरा भरा हो। बाज़ारवाद कहता है, हम तो प्रमोट करते हैं।

आज के समाज में मीडिया पैसा कमाने के लालच में समाज को गुमराह कर रहा है। आज हमारे समाचार–पत्र अपराध की खबरों से भरे रहते हैं। जबकि बाज़ारवाद का यहाँ पर भी अधिक प्रभाव दिखाई तो देता है। "वैसे हमारा मानना है कि बिजनेस और राजनीति को अलग रखना चाहिए। इन दोनों शक्तियों का मिलना हानिकारक है।"[7]

पत्रकारिता पर सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, राजनीतिक और वैज्ञानिक रंग ढंग से बाज़ारवाद का प्रभाव दिखता है। जब इंटरनेट ने भारत में पाँव पसारने शुरू किए तो यह आशंका व्यक्त की गई थी कि कम्प्यूटर के कारण देश में फिर से अंग्रेजी का बोलबाला हो जाएगा। किन्तु यह धारणा निर्मूल साबित हुई है और आज हिन्दी बेवसाइट तथा बलॉग न केवल धड़ल्ले से चल रहे देश के साथ–साथ विदेशों के लोग भी इन पर सूचनाओं का आदान–प्रदान तथा चैटिंग कर रहे हैं, जिसका प्रभाव बाज़ारवाद के सहयोग से दिखाई देता है।

निष्कर्ष:

रूप में कहा जा सकता है कि बाज़ार व्यापार के लिए स्थान और अनिवार्य साधन बन गया है, जिससे मीडिया भी प्रभावशाली बन गई और साहित्य का समय अचानक बदल गया।

संदर्भ –

1. डॉ. रामप्रसाद, बाज़ारवाद और जनतंत्र, पृष्ठ 19
2. वही, पृष्ठ 33
3. हिन्दी अनुशीलन, पृष्ठ 136
4. प्रो. श्यामाचरण खिंदी, समय और संस्कृति, पृष्ठ 126
5. मानव विकास रिपोर्ट, 2002
6. प्रो. सत्येन्द्र, मीडिया का विकास, पृष्ठ 31
7. वही, 39

डॉ0 दिनेश कुमार कौशिक

पुत्र – श्री सुभाष चन्द्र

गांव – कैशवली

पो0 – कालर्स

त0 – धरोण्डा

जिला – करनाल हरियाणा

पिन – 132114

मौ0 98132177707

5

स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदी कवियों का योगदान

डॉ0 पुष्पा रानी

सारांश

भारतीय स्वतंत्रता के लिये आंदोलन उबड़ खाबड़ रास्तों और दिशाओं के सफ़र पर था स यह आंदोलन लगभग सौ सालो से जारी था लेकिन सभी का उद्देश्य भारतीय राजनीति क्षितिज पर एक ऐसा देदीपम्मान नक्षत्र उदित हुआ जिसने राजनितिक जीवन की शुरुआत बिहार के चम्पारण जिले से की थी स महात्मा गाँधी ने आंदोलन के जिन जिन तरीकों का उपयोग चम्पारण सत्यग्राह में किया, उन्हीं के सहारे राष्ट्र का नेतृत्व भी उन्हें मिला स

किसान सभा शुरू में एक सुधारवादी संस्था थी,परन्तु बाद में एक क्रन्तिकारी संगठन में इसका कायाकल्प हो गया। स्वामी सहजानंद सरस्वती हर दौर में इसके नायक थे जो संघर्ष और सत्यग्रह का कार्यक्रम बना उसके अलग अलग क्षेत्रों के नेता थे। उनमें मगध में यदुनंदन शर्मा,भागलपुर में कार्यानंद शर्मा,सारण में राहुल सांस्कृत्यायन,दरभंगा में नागार्जुन,मुजफ्फरपुर में यमुनाकार्यी,रामवृक्ष बेनीपुरी,मुंगेर में डॉ. श्रीकृष्ण सिंह,चम्पारण में प्रजापति मिश्र और हाजीपुर में किशोरी प्रसन्न सिंह किसान जागरण का भी शंखनाद कर रहे थे। किसान सत्याग्रह में किसानों ने हल जोतने का कार्य किया, किसानों को झूठे मुक़दम्मो में फंसाने की घटनाओं के प्रतिकार में किसान सत्यग्रह का नेतृत्व नेताओं के साथ साहित्यकारों ने भी किया उनमे राहुल सांकृत्यायनं,नागार्जुन फणीश्वरनाथ रेणु रामदयाल पाण्डेय,महाश्वेता देवी,अजय प्रभाकर माचवे, मुल्कराज आनंद, पंडित पदम सिंह शर्मा, रामधारी सिंह 'दिनकर' का नाम आदर के साथ लिया जाता है। कलम के साथ हल जोतने का कार्य किसानो को जगाने के लिए किया गया।

यह जगाने का कार्य 'राष्ट्रीयता' की भावना से जुड़ा हुआ है। राष्ट्रीयता स्वानुभूती चेतना है जो विभिन्न तत्वों के संयोग से स्वरूप ग्रहण कर व्यक्ति को अपने राष्ट्र के प्रति

जागरूक और समर्पित रखती है। राष्ट्रीयता का प्रथम उत्थान १८५७ के विद्रोह में मिलता है । अंग्रेज शासक के विरुद्ध हिंदुस्तान की संगठित राष्ट्र भावना का प्रथम आह्वान था और तभी से हमारी राष्ट्रीयता का जयनाद प्रारम्भ हुआ। पहली बार प्रदेश अथवा धर्म सम्प्रदाय के संकुचित दृष्टि से निकलकर राष्ट्रीयता ने सम्रग देश को अंतर्भूत कर लिया। हिंदी काव्य में यह युग भारतेन्दु युग के नाम से प्रसिद्द है। भारतेन्दु के समय तक सन १८५७ का स्वाधीनता संग्राम विफल हो गया था, लेकिन राष्ट्रीयता चेतना को अवश्य छोड़ गया था, जिसका प्रभाव उस युग के विचारवान व्यक्तिओं पर पड़ा था ।

देश में पुनरुत्थान का आंदोलन शुरू हो गया। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द ,रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद आदि लोकनायक इसका नेतृत्व कर रहे थेस शिवाजी और भूषण को जहां हिन्दू राज्य की चिंता थी, वहां स्वामी दयांनंद को प्राचीन हिन्दू आर्य संस्कृति की पुनः स्थापना का आग्रह था। दयानन्द को मातृभूमि से अगाध स्नेह था। वे आर्य ध्वज के नीचे ही समग्र भारत की एकता की कल्पना कर सकते थे। स्वाधीनता संग्राम में राष्ट्रीयता के उत्थान के लिए कांग्रेस ने शक्ति प्रदान कर ली थी और उसका नेतृत्व गाँधी जी के हाथ में आ गया था। राष्ट्र अब प्रादेशिक, प्रांतीय,साम्प्रदायिकता से ऊपर उठकर हिंदुस्तान की एक संगठित इकाई बन गया था। राजनितिक चेतना, सामाजिक तथा सांस्कृतिक चेतना से आगे बढ़ गया था स यह निश्चित हो गया था कि सभी विषमताओं का मूल कारण चाहे वह सामाजिक हो या आर्थिक या नैतिक विदेशी शासन है। गुलामी सबसे बड़ा अभिशाप है, अतरू पूर्ण स्वराज्य के लिए संघर्ष राष्ट्रीयता के लिए पहल बन गया हैस

इस उत्साह का सबसे प्रबल विस्फोट पराधीनता और दमन के विरुद्ध संघर्ष में मिलता है । भारत हमारा देश है वह हमारी जन्मभूमि है स उस पर हमारा स्वत्व है । हमारी जन्मभूमि पर विदेशी आकर शासन करें यह लोह श्रंखला को प्राणों की बलि देकर छिन –भिन करना होगा । भारत की आत्मा मैथिलीशरण गुप्त , माखनलाल चतुर्वेदी , निराला , नवीन , सुभद्रा कुमारी चौहान , दिनकर तथा सोहनलाल द्विवेदी आदि के स्वर में चीत्कार उठती है –

भारत लक्ष्मी पड़ी राक्षसों के बंधन में सिंधु पर वह बिलख रही है व्याकुल मन मेंसस"[1]

राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारतभारती' की रचना करके , राष्ट्रीय चेतना को जागृत करने में इस पुस्तक का विशेष हाथ रहा है । कवि ने भारत के अतीत के गौरव की झांकी प्रस्तुत करते हुए उसकी वर्तमान दीनहीन स्थिति का चित्रण किया है , जिस समय 'भारतभारती' लिखी गयी उस समय इसका इतना अधिक प्रसार हुआ कि लोगो ने इसे पढ़ने के लिए हिंदी सीखी । इस पुस्तक की कविताएं भारतीय नवयुवकों के गले का हार बन गयी थी । इसमें भारत वर्ष के प्राचीन गौरव , वर्तमान अधरूपतन तथा भावी संभावनाओं का आंकन किया गया । भारत में जब स्वतंत्रता संग्राम आधुनिक चरण में आरम्भ हुआ था,उस समय इस प्रकार की नवजागरण का संदेश देने वाली प्रेरणादायक कृति को निश्चय ही महत्वपूर्ण कहा जा सकता है दृ

हम कौन थे क्या हो गए और क्या होंगे अभी
आओ विचारे आज मिलकर यह समस्याएँ सभी सस[2]

बलि होने की परवहा नहीं, में हूँ कष्टों का राज्य रहे ।
मै जीता , जीता –जीता हूँ , माता के हाथ स्वराज्य रहे।

(माखनलाल चतुर्वेदी)

भारतभूमि की मिट्टी से श्रृंगार सजाने वाली।
चढ़ हिमाद्रि पर विश्वशांति का शंख बजाने वाली ससङ

(दिनकर)

मैथिलीशरण गुप्त ने भारत के प्राचीन गौरव को मानकर भारतीयों को उनकी शक्ति से पहचान कराकर जगाने के लिए आह्वाहन किया है । भारतीय ऋषि मुनियों के शौर्य को सामने लाकर वर्तमान के प्रमाद और विकार को छोड़कर भविष्य सँवारने के लिए मुखर स्वर में आमंत्रण दिया है । कवी ने भारतभारती के मंगलाचरण में देश की आराधना करते हुए देशोद्धार की कामना की है । राष्ट्र चेतना भी गुप्त जी का मुख्य उदेश्ये रहा हे,

मानसभवन में आर्यजन जिसकी उतारें आरती ,
भगवान भारतवर्ष में गूंजे हमारी भारतीसस"4

सन 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम की असफलता की आंतरिक पड़ताल करते हुए भारतीय स्वतंत्रता प्रेमियों को जो सबसे बड़ी कमी समझ आयी वह एक उपयुक्त संपर्क भाषा का न होना। डॉ0 देवीकानंद खत्री , पूर्व वरिष्ठ रसायनविद भाभा ऑटोमिक रिसर्च सेंटर , मुंबई ने 30 सितम्बर ,2013 को आयोजित कार्यशाला के पेपर श्री गोपाल प्रसाद व्यास की पुस्तक शबिन हिंदी सब सून' के उद्धरण का जिक्र करते हुए इस प्रकार किया । जब भारत्तेन्दु मात्र 8 –9 वर्ष के थे तब उन्होंने अपने पिता से पूछा ,पिताजी वर्ष १८५७ की जनक्रांति विषफल क्यों हुई इस पर पिता ने कहा, यह मेरठ से शुरू हुई इसके बाद लाखों– लाख भारतीय मंगल पांडे का साथ देने के लिए रणक्षेत्र में उतर पड़े स उनके ह्रदयो में अंग्रेजों के खिलाफ आग तो थी ही, अतरू इन क्रांतिकारियों के बीच संवाद स्थापित कर पाना मुश्किल हो गया, यहाँ दिक्कत यह थी कि कोई सम्पर्क भाषा नहीं थी, यह सुनकर भारतेन्दु बोले, पिताजी मैं सम्पर्क भाषा संवाद का निर्माण करूंगा ताकि हमारा स्वतंत्रता संग्राम कमजोर न पड़े स भारतेन्दु ने २४–२५ वर्ष कि आयु में खड़ी बोली में कविता की जो आज हमारी प्रिय भाषा हैस निज भाषा को लेकर उनकी पंक्तिया आज भी समीचीन लगती हैं

निज भाषा उन्नति अहै,सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा का ज्ञान के मिटत न हिय को सूल स

क्रन्तिकारी कवी सुब्रह्मण्य भारती ने अंग्रेजी राज के विरुद्ध दस वर्षो तक पांडिचेरी (फ्रांसीसी उपनिवेश) में गुजारा और देश कि आजादी के लिए रचनाएँ रचीस वे आज होते तो क्या जीवित रहने दिया जाता ? तमिलनाडु के बच्चों के लिए उनके प्रार्थना गीत की पंक्तिया–

हमारा हिंदुस्तान उदार है,उसकी महानता बारे में सोचो
मानव , मानव एक सामान, एक जाती की हम संतान ,
यही दृष्टि है , करो घोषणा प्रेम राज्य की स९

इसे अंग्रेजो की तरह ही देश की फासिस्टी हुकूमत खतरनाक मानती और उन्हें मार दिया जाता या जेल में बंद कर दिया जाता था। इस प्रेम राज्य के दुश्मन आज सत्ता के शीर्ष पर आरूढ़ हैं । उनके गुर्गे खुनी भेड़ियों की तरह विचर रहे हैंस झूठ, फूट और घृणा के सहारे वह देश को बाँटकर रखने का कार्य कर रहे हैं। इस परिस्तिथि में भारती बनकर आज हमें साहित्य रचने कि आवश्यकता हैं।

अंग्रेजी राज को भागने के लिए सुब्रह्मयम भारती ने उनकी सत्ता को चुनौती दी थी कि वे ९इस देश के स्वामी नहीं हो सकते हैं स ९लिखा था –

९हम सब हैं भारत के भारत के स्वामी स ९
एक मनुज का कोर दूसरा छीने
यह क्या अब सम्भव हैं स ९

ऐसी कविताएं आज भी प्रासंगिक है स एक कविता जिसने मुझे इस अग्निधर्मा कवि के प्रति प्रेम को द्विगुणित कर दिया स

सघन वन में मुझे / किसी दिन कहीं / मिला एक अग्निकण /
जिसे रख दिया पेड़ के खोखले में वहीं / आग की भयंकर
लपटों से / सारा जंगल हो गया राख / एक बार की लपटें
यदि हो जाये क्रुद्ध / तब कौन छोटा ,कौन बड़ा ,कौन युवा,
कौन वृद्ध ?

आज अग्निकण को सुलगाने के लिए हम सबको आगे आना ही होगास ऐसा महान कवि का धार्मिक विश्वास था लेकिन साहित्य में वे घनघोर रूप से आशावादी और प्रतिरोधी विचार को मजबूत बनाते थे, उनके जीवन की अंतिम कविता की प्रथम पंक्ति हैं –

भारतीय एक सम्प्रदाय अमर हो
जय हो भारत जन की जय हो

यह विश्वास के साथ लिखते हैं कि – ९तीस कोटि का धन पर होगा समान अधिकार ष्यह साम्यवादी विचारधारा का उनपर असर था स स्पष्ट है कि उनकी धार्मिक आस्था से तार्किक दृष्टिकोण बाधित नहीं होता था आजादी के प्रबल पक्षधर भारती ने स्वतंत्रता के पक्ष कि चेतना को जागृत किया

बढ़ती हुई राजनितिक चेतना और सांस्कृतिक पुरुस्थान के परिणाम स्वरूप राष्ट्रीयता द्विवेदी युग कि कविता का प्रबल स्वर रहा है स देशभक्ति पूर्ण कविताओं का प्रणयन करने में इस युग के प्रायः सभी कवियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है उन्होंने पराधीनता को सबसे बड़ा अभिशाप बताया तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए क्रांति एवं आत्मोत्सर्ग की प्रेरणा दी

कविवर नाथूराम 'शंकर' ने 'बलिदान गान' में लिखी पंक्तियां –

" देशभक्त वीरों को मरने से नेक नहीं डरना होगा स
प्राणों का बलिदान देश की वेदी पर करना होगा सस"[5]

द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों में नाथूराम 'शंकर', गुप्त , रामनरेश

त्रिपाठी ,रामचरित उपाध्याय, गया प्रसाद शुक्ल स्नेही, महावीर प्रसाद द्विवेदी, अयोध्या सिंह उपाध्याय का नाम प्रमुख रूप से लिया जा सकता है ।

छायावादी युग भीषण संघर्ष का काल रहा स देश विदेशी सत्ता के अधीन था स स्वतंत्रता के लिए आंदोलन अपनी चरम सीमा पर था स सबसे बड़ी बात यह थी कि उस समय देश ऐसे शासन के चंगुल में फंसा हुआ था जिसकी शासन व्यवस्था पहले विदेशियों से मुख्यतः अलग थी स इस समय काव्य के क्षेत्र में दो धाराएं मुखर थी – एक ओर छायावाद के चार स्तंभ जिन्होंने देशभक्तिपूर्ण कविताएं लिखी स इस संदर्भ में जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखित 'चंद्रगुप्त' नाटक का एक गीत प्रयाप्त होगा –

"हिमाद्री तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्जवला स्वतंत्रता पुकारती
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो
प्रशस्त पुण्यपंथ है, बढ़े चलो बढ़े चलो।।"[6]

छायावादी युग में दो धाराएं राष्ट्रीय और सांस्कृतिक धारा प्रवाहित हो रही थी एक ओर तो कवियों ने भारत की आंतरिक विसंगतियों और विषमताओं को दूर करने के लिए देश का आह्वान किया तो दूसरी ओर जनता की विदेशी शासन से मुक्ति दिलाने के लिए स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ने की प्रेरणा दी इन कवियों ने केवल देशप्रेम मुखरित नहीं किया बल्कि स्वयं देश की आजादी की लड़ाई में भाग लिया स फलस्वरूप उनकी देशप्रेम की रचनाओं में अनुभूति की सच्चाई और आवेश दिखाई देता है। माखनलाल चतुर्वेदी ने श कैदी और कोकिला श शीर्षक कविता में अपनी अनुभूति को एक ही उच्चतर और लोकसामान्य भावभूमि के स्तर पर व्यक्त करने का प्रयास किया

क्या देख न सकती जंजीरो का गहना ,
हथकड़ियाँ क्यों ? यह ब्रिटिश राज्य का गहनासस[7]

मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में जन्मभूमि के प्रति अगाध प्रेम एवं श्रद्धा अपने चरम पर है । उन्होंने अपनी कविताओं में जन्मभूमि का मार्मिक चित्रण किया है –

भूलोक का गौरव , प्रकृति का पुण्य लीला स्थल कहाँ ?
फैला मनोहर गिरी हिमालय और गंगाजल जहाँ।
सम्पूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है ?
उसका कि जो ऋषि भूमि है , वह कौन, भारतवर्ष है।[8]

उस समय कितना सुंदर लोकतंत्र था , लोग ड़र के मारे सिर भी नहीं हिला सकते थे। जब ऐसी स्थिति से पूरा देश आक्रान्त था तो भारतेन्दु का साथ देने के लिए अनेक लेखक और कवियों ने संकल्प लिया जिसमें महावीर प्रसाद द्विवेदी , प्रेमचंद आदि लेखकों और मैथिलीशरण गुप्त जैसे राष्ट्रकवि राष्ट्र के लोगो को जागृत करने के लिए आगे आये और गुप्त जी के काव्य में भारतीय राष्ट्र का प्राणत्व मुखर है। गुप्त जी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से देश प्रेमी की भावना को जागृत करने का प्रयास किया । गुप्त जी के काव्य में पददलित तथा परतंत्रता की श्रंखलाओं से अब भारत के पुनर्जागरण की विशुद्ध घोषणा हुई द्य श्साकेतश में सीता भारत लक्ष्मी के रूप में चिंतित है जो विदेशियों के यहाँ बन्दिनी है दृ

ष्रक्षियों से घिरी हमारी देवी सीता
बंदीगृह में बाह जोहती खड़ी हुई है
व्याध जाल से राजहंसिनी पड़ी हुई हैससष्9

ऐतिहासिक दृष्टि से हिंदी का यह नवोत्थान आंदोलन उस समय भारतीय आंदोलन का एक भाग था द्य "अंग्रेजों ने हिंदुस्तानियों को राजभक्ति सिखाई, उनके अंदर फूट की आग सुलगाई, उन्हें एक दूसरे का खून बहाना सिखाया, यहाँ की संस्कृति और भाषाओं को पैरों तले रौंदा, यहाँ से जितना धन लूट कर ले गए, उतना अपने विश्वव्यापी साम्राज्य से न ले गए द्य हिंदुस्तान की राष्ट्रीय चेतना सीधे अंग्रेज डाकुओं के कारनामों का विरोध करके आगे बढ़ी ।" अंग्रेज साम्राज्यवादियों ने भारतीय जनता को गुलामी की शिक्षा दी, इसके बावजूद जनता के समर्थ लेखक देश की संस्कृति की रक्षा और विकास के लिए आगे बढ़े ऐसे लेखकों में भारतेंदु हरिश्चंद्र थे ।भारतेंदु ने अंग्रेजी राज्य की प्रशंसा करते हुए उसके आतंक की ओर संकेत किया –

"कठिन सिपाही द्रोह अनल जाजल बलू नासी ।
जिन भय सिर न हिलाई सकत कहूँ भारतवासी ।[10]

रामधारी सिंह 'दिनकर' का काव्य राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत है ।'कुरुक्षेत्र' में राष्ट्रीय चेतना अपने नए तेवर के साथ मुखरित हुई है। 'कुरुक्षेत्र' भीष्म पिता और युधिष्ठिर का संवाद भारतीय ऋषि परंपरा का घोतक है। 'कुरुक्षेत्र' में युद्ध की समस्या को विश्वव्यापी मानते हुए उसके कारण और निवारण पर प्रकाश डाला गया है द्य युद्ध को निंदनीय कहा गया है, परंतु अनिवार्य स्थिति में युद्ध की अनिवार्यता भी मानी गई है भीष्म युधिष्ठिर को समझाते हुए कारण और निवारण पर प्रकाश डालते कहते हैं–

"रण रोकना है तो उखाड़ विषदंत फैंको ,
वृक – व्याघ्र भीति से महि को मुक्त कर दो स
अथवा अजा के छागलों को भी बनाओ व्याघ्र ,
दांतों में कराल कालकूट – विष भर दो स
वट की विशालता के नीचे, जो अनेक वृक्ष,
ठिठुर रहे हैं, उन्हें फ़ैलाने का वर दो,
रस सोखता है जो महि का भीमकाय वृक्ष
उसकी शिराएं तोड़ो, डालियाँ क़तर दो ।।"[11]

कवि 'दिनकर' ने 'कुरुक्षेत्र' में अपनी राष्ट्रीय चिंतन– मनन को पूरी तरह दार्शनिक की शैली में भी विवेचित किया है स युधिष्ठिर और भीष्म के संवाद में राष्ट्रीयता का प्रतिफलन हुआ हैस यह राष्ट्रीयता केवल भारत की ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व मानवता के लिए अनुकरणीय हैस युद्ध को क्रूर कर्म की संज्ञा दी गई है–

"धन ही परिणाम है युद्ध का अंतिम

तात इसे यदि जानता मैं
वनवास में जो अपने में छिपी
इस वासना को पहचानता मैं,
द्रोपदी की तो बात क्या ? कृष्ण का भी
उपदेश नहीं टूक मानता मैं,
फिर से कहता हूं पितामह तो,
यह युद्ध कभी नहीं ठानता में ।"[12]

कवि 'दिनकर' ने भारत की धार्मिक चेतना को विश्वमानवता से जोड़ते हुए अपने कथन में राष्ट्रीय भंगिमा को विकसित किया है द्य भारतीय संस्कृति चेतना में मनुष्य के लिए अहिंसा,सत्य,असत्य, अपरिग्रह स्थायी मूल्य माने गए हैं । इन्हीं के आधार पर 'दिनकर' ने राष्ट्रीयता को व्यक्त किया है–

"अपहरण शोषण वही, कुत्सित वही अभिमान,
खोजना चढ़ दूसरों के भस्म पर उत्थान,
शील से सुलझता न सकता आपसी व्यवहार,
दौड़ना रह–रह उठा,उन्माद की तलवार,
द्रोह से अब तक भी वही अनुराग
प्राण में अब भी वही फूँकार भरता नाग ।"[13]

'कुरुक्षेत्र' में सांस्कृतिक आयामों की विस्तृत चर्चा हुई है द्य हमारे राष्ट्रीय संस्कारों में जीवन मूल्य के पुनरुत्थान को श्रेयकर माना गया है स धर्मराज को कर्म बोध की प्रेरणा प्रदान करते हुए पितामह भीष्म का निम्न कथन महत्वपूर्ण है –

"पोंछो अश्रु, उठो द्रुत जाओ,वन में नहीं, भुवन मेंद्य
होओ खड़े असंख्य नरों की, आशा बन जीवन में,
बुला रहा निष्काम कर्म वह,बुला रही गीता,
बुला रही है, तुम्हे आर्त हो मही समर दृ संभिता सस"[14]

यह हमें मानना ही पड़ेगा कि भारत में ऐसी आंतरिक एकता विधमान है जो समस्त भारतियों को एकता के सूत्र में बांधकर रखा है भारतीय संस्कृति की एक विशेषता रही है कि वह कभी भी साम्राज्यवादी नहीं रही, वह सदैव मानवतावादी रही है और यही कारण है कि वह आज समस्त विश्व के लिए अनुकरणीय हो रही है द्य यद्यपि आज भी अन्य देशों की संस्कृति की भांति नवीनता की ओर अग्रसर हो रही है, परंतु इसका अर्थ यह बिल्कुल नहीं है कि यह अपने अतीत को छोड़ती जा रही है द्य समय के अनुसार मनुष्य अपने ही पुरातन और नवीनता के साथ सामंजस्य कर लेता हैस यही समाज और राष्ट्र के लिए श्रेष्ठकर है स आज समस्त भूमंडल पर भारतीय संस्कृति अरुणोदय की सतरंगी लालिमा के साथ तप्त होकर शरद पूर्णिमा की रजत चंद्रिका के समान शीतलता प्रदान कर रही है द्य एक समय था जब ब्रिटिश साम्राज्य की राजनीति का सूर्य संपूर्ण विश्व में दिनरात चमकता था, आज वह समय है जब उस सूर्य के अस्तांचल में चले जाने पर उसका स्थान भारतीय संस्कृति लेती चली जा रही है। इस बात का संकेत कविवर सुमित्रानंदन पंत ने स्वप्न और सत्य के द्वारा कर दिया है –

"आज भी सुंदरता के स्वप्न ,हृदय में भरते मधु गुंजार,
वर्ग कवियों ने जिनको गूंथ ,रचा भू स्वर्ग,स्वर्ण संसार।
आज भी आदर्शों के सौंध,मुग्ध करते जन–मन अनजान
देश देशों के कालिदास, गा चुके जिसके गौरव गान द्य
मुहम्मद, ईसा, मूसा, बुद्ध केंद्र संस्कृतियों के श्रीराम,
हृदय में श्रद्धा, संयम, भक्ति, जगाते विकसित व्यक्ति ललाम द्य
• • • • • • • • • •
स्थूल उन आदर्शो की सृष्टि , कर रही नव संस्कृति निर्माण
स्थूल युग को शिव,सुन्दर सत्य,स्थूल की सूक्ष्म आज,जन प्राण ।[15]

मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में भारतीय राष्ट्र का प्राग्रव मुखर हुआ है। आलोचक शांतिप्रिय द्विवेदी का कहना है कि – किसी माला का प्रथम मणि उपवन में प्रथम पुष्प ,गगन में प्रथम नक्षत्र का जो महत्वपूर्ण स्थान हो सकता है

वही वर्तमान कविता में गुप्त जी का है।[16]

निष्कर्ष

अन्ततः निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदी कवियों कि भूमिका काफी महत्वपूर्ण रही है। कवियों ने आधुनिक अधोगति से जहां दुःख और निराशा है वहाँ उसे ऊपर उठाने का अटल विश्वास और उत्साह भी है। इसी उत्साहमय पुनः रुपयान कि भावना से उनकी परवर्ती रचनाओं में आदर्श हिन्दू संस्कृति का परिमार्जन कर उसे विश्व संस्कृति का रूप देने का प्रयास किया है स इन कवियों ने प्राचीनता के खण्डहरों पर आधुनिकता को गढ़कर भविष्य के लिए उस भव्य प्रसाद का निर्माण किया है जो युगों तक आँखों में चमकता रहेगा।

मानव का निरंतर कल्याण राष्ट्रहित के निकष पर इन स्वाधीनता संग्राम के कवियों का कृतित्व और कीर्ति दोनों जनमानस पर प्रभाव डालते है।

वस्तुतः सभी स्वतंत्रता आंदोलन के कवी लोकनायक,युगपुरुष और राष्ट्रकवि के रूप में समाहत रहेगे।

संदर्भ सूची –

1. मैथिली शरण गुप्त रू– साकेत, द्वादश सर्ग पृष्ठ 261
2. मैथिली शरण गुप्त रू– द्वापर पृष्ठ 35
3. दिल्ली और मास्को (दिल्ली 1954) पृष्ठ 13
4. मैथिली शरण गुप्तरू– भारत भारती पृष्ठ 11
5. हिंदी साहित्य का इतिहासरू (संपादक) डॉ नगेंद्र, पृष्ठ 488
6. जयशंकर प्रसाद रूचंद्रगुप्त, पृष्ठ 37
7. हिंदी साहित्य का इतिहासरू (संपादक) डॉ नगेंद्र, पृष्ठ 533
8. मैथिली शरण गुप्त रू भारत भारती, पृष्ठ 112
9. मैथिली शरण गुप्त रू साकेत, द्वादश सर्ग, पृष्ठ 271
10. भारतेंदु हरिश्चंद्र और हिंदी नवजागरण की समस्याएंः रामविलास शर्मा, पृष्ठ 66
11. रामधारी सिंह "दिनकर"रू कुरुक्षेत्र, पृष्ठ 76

12. संचयिता– रामधारी सिंह दिनकर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृष्ठ 61
13. वही ,पृष्ठ 66
14. वही ,पृष्ठ 104
15. स्मारिका, द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन ,28–30 अगस्त 1976 मारीशश पृष्ठ 142
16. आधुनिक हिंदी कविता रू परंपरा और परिवेश : डॉव आदित्यनाथ प्रचंडिया, पृष्ठ 34

डॉ पुष्पा रानी (डीव लिट्व).
प्रोफ़ेसर पूर्व अध्यक्षा, हिंदी विभाग
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र
(हरियाणा)

.

6

समृद्ध हिंदी भाषा

प्रदीप कुमार

सारांश

सार हिंदी विश्व के मुख्य भाषाओं में से एक है। आज हिंदी के बोलने वाले संसार के प्रत्येक कोने में हैं। भारत के राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक विकास ने हिंदी को उन्नत भाषा बनाने में मुख्य भूमिका निभाई है। हिंदी विश्व के लगभग 150 देशों के लोगों द्वारा बोली व समझी जाती है। स्थानीयता की परिधि को पार कर चुकी हिंदी भाषा विश्व में लगभग 100 करोड लोगों द्वारा बोलचाल की भाषा के रूप में प्रयुक्त हो रही हैं ।

हिंदी जो कि भारत में राष्ट्रभाषा, राजभाषा व मातृभाषा के रूप में गौरवान्वित पद पर आसीन है। विश्व के लगभग 150 देशों में करोड़ों की संख्या द्वारा व्यवहार में लाई जा रही है। दर्जनों देशों में जन भाषा के रूप में भी इसे मान्यता प्राप्त है। इन देशों को हम अपने पड़ोसी राष्ट्रों, हिंदू बहुल राष्ट्रों, व अप्रवासी भारतीयों की संख्या जिन देशों में अधिक है, उन देशों को शामिल करते हैं।

हिंदी का जो स्थान आज विश्व में स्थापित हो चुका है, उस स्थान तक पहुंचाने में बहुत से विद्वानों ,संस्थाओं, सम्मेलनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संस्थाओं और सम्मेलनों के अंतर्गत विश्व हिंदी सम्मेलनों ने हिंदी को विश्व पटल पर स्थापित करने में मुख्य भूमिका का निर्वाह किया है। इन सम्मेलनों का आरंभ अगस्त 1976 में मॉरीशस में हुआ और अब तक 11 सम्मेलन हो चुके हैं। इन सम्मेलनों में हिंदी को विश्व में प्रमुख भाषा के रूप में स्थापित करने में सहायक हुआ वह भोपाल भारत में आयोजित दसवां विश्व हिंदी सम्मेलन रहा जिसमें भारत की तत्कालीन विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज ने व्यक्तिगत रूचि दिखाई और हिंदी की स्वीकार्यता को न सिर्फ भारत बल्कि विदेशों में प्रोत्साहन व रुचि के साथ लोग सीखने की ओर प्रवृत्त हुए। दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन में ही श्रीमती सुषमा स्वराज द्वारा इस बात पर विशेष जोर दिया गया कि जीवन के विभिन्न आयामों जैसे विज्ञान, चिकित्सा, तकनीकी आदि क्षेत्रों से संबंधित पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण हिंदी में कर हिंदी को विश्व की अन्य समृद्ध भाषाओं के समकक्ष बनाने का कार्य किया जाना चाहिए। इससे पूर्व भी हिंदी को विश्व का सिरमौर बनाने और अपनी मातृभाषा, राजभाषा को किसी भी आधुनिक भाषा से कमतर न समझने वाले भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेई जी जो कि अंग्रेजी भाषा में भी उसी प्रवाह के साथ बोल सकते थे लेकिन उन्होंने अपनी भाषा में ही पूरे विश्व को संबोधित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी में भाषण दिया और समूचे विश्व को हिंदी को आत्मसात करने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने अपने संभाषण द्वारा पूरे विश्व को दिखा दिया कि भारत किसी भी क्षेत्र में किसी राष्ट्र से कम नहीं है चाहे वह क्षेत्र ज्ञान, विज्ञान, संस्कृति, सभ्यता या फिर भाषा से ही संबंधित क्यों न हो, हिंदी विश्व की वैज्ञानिक भाषाओं में मुख्य स्थान रखती है।

भारत को जानने समझने का मुख्य माध्यम

किसी भी शक्तिशाली राष्ट्र से संबंध स्थापित करने की प्रक्रिया में उस राष्ट्र की सभ्यता, संस्कृति व भाषा को जानना अति आवश्यक हो जाता है। इसी क्रम में भारत के विश्व में बढ़ते हुए प्रभाव से अन्य राष्ट्र भी अनभिज्ञ नहीं है। इसलिए आज बहुत से राष्ट्रों में हिंदी का अध्ययन व अध्यापन कार्य हो रहा है। विश्व स्तर पर बहुत से राष्ट्रों में हिंदी को बोला व समझा जाता है क्योंकि भाषा ही एकमात्र साधन है जिसके कारण विश्व के देश एक –दूसरे के साथ निकट संबंध स्थापित कर सकते हैं। हिंदी भाषा को विश्व पटल पर स्थापित करने के लिए सबसे बड़ी चुनौती संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी भाषा को सातवीं भाषा के रूप में स्थान दिलाना है। इसके लिए भारत के विदेश मंत्रालय द्वारा प्रयास निरंतर जारी है और मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना भी राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविंद द्वारा मार्च, 2018 में इसी उद्देश्य के अंतर्गत की गई थी। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सप्ताह में शुक्रवार के दिन हिंदी भाषा में समाचार प्रसारित करना इस दिशा में सराहनीय प्रयास है। इसके द्वारा विश्व भर में फैले हिंदी भाषियों को सरलता पूर्वक स्वयं की भाषा में विश्व भर की मुख्य सूचनाएं प्राप्त होंगी और विश्व में मुख्य भाषा के रूप में हिंदी का मान सम्मान भी बढ़ेगा।

युवाओं का योगदान

युवक किसी भी राष्ट्र की रीढ़ होते हैं और ऊर्जा का ऐसा प्राकृतिक स्रोत होते हैं जो चाहे किसी कार्य में संलग्न हो जाए उसको लक्ष्य प्राप्ति तक पहुंचा कर रहते हैं। युवा जो समय व्यर्थ के कार्यों को निष्पादन करने में खर्च करते हैं यदि इसी समय का उपयोग हिंदी को इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के जरिए विस्तारित करने में लगाएं तो निश्चय ही हिंदी को एक सहारा मिलेगा और इन्हीं छोटे–छोटे प्रयासों से ही हिंदी संसार भर में अपने गौरव के स्थान को प्राप्त कर सकेगी।

भारत की मजबूत सांस्कृतिक विरासत

भारत की मजबूत सांस्कृतिक विरासत भी हिंदी के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका रखती है क्योंकि भारत की सभ्यता, संस्कृति को जानने के लिए बहुत से विदेशी पर्यटक भारत की ओर आकर्षित होते हैं। जिस समाज, संस्कृति को आप जानना समझना चाहते हैं। उसके लिए वहां की मुख्य भाषा का ज्ञान होना, आपके लिए उस समाज को जानने के लिए अति आवश्यक हो जाता है। ऐसे में लाखों की संख्या में भारत घूमने आने वाले सैलानी हिंदी का अच्छा खासा ज्ञान प्राप्त कर हिंदी को मुख्यधारा में बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

हिंदी की वैज्ञानिकता

किसी भी भाषा को विश्व में स्थान उस भाषा की अपनी प्रकृति देती है। हिंदी समूचे विश्व में बोली जाने वाले आधुनिक भाषाओं में

वैज्ञानिकता की दृष्टि से श्रेष्ठ स्थान रखती है। प्रत्येक ध्वनि के लिए अलग–अलग वर्णों का प्रयोग हिंदी में होता है जबकि अन्य भाषाओं में भिन्न–भिन्न वर्णों के संयोजन से अलग–अलग ध्वनियों का निष्पादन होता है। आज विश्व में अंग्रेजी भाषा जोकि सर्वसम्मति से सबने अपना ली है, में भी वर्णों की कमी के कारण अलग–अलग वर्णों को जोड़कर शब्दों का निर्माण किया जाता है। हिंदी भाषा का शब्द भंडार बहुत बड़ा है। हिंदी से ही उत्पन्न बहुत से शब्दों को विश्व की अन्य अनेक भाषाओं ने अपना लिया है। हिंदी के समान कोई भी भाषा वैज्ञानिक नहीं है। आधुनिक तकनीकों के माध्यम से दुनियाभर में हिंदी का विकास किया जा सकता है। हिंदी की वैश्विक स्थिति पहले से बेहतर होती जा रही है जिसका एक बड़ा कारण विश्व पटल पर बढ़ती भारत की भूमिका है जो देश जितना ताकतवर, जितनी अधिक संभावनाओं से भरा पूरा होगा। उस देश की संस्कृति व साहित्य से समूचे विश्व के लोग जुड़ना चाहेंगे। इसी कारण आज संसार के लगभग सभी देशों के विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा का अध्ययन–अध्यापन हो रहा है ।

निष्कर्ष

भारत के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक विकास ने आज भारत को विश्व के उन्नत देशों की कोटि में ला खड़ा किया है। इसी क्रम में भारत में बोली जाने वाली राष्ट्रभाषा,राजभाषा व मातृभाषा कहीं जाने वाली हिंदी को विश्व में मुख्य स्थान प्राप्त हुआ है। आज कोई भी हिंदी की स्वीकार्यता को किसी भी दृष्टि से नकार नहीं सकता है क्योंकि भाषा वैज्ञानिकों ने हिंदी के गुणों को स्वीकार किया है और स्पष्ट बता दिया है कि हिंदी विश्व की मुख्य भाषाओं में स्थान रखती है और आने वाले समय में हिंदी संपूर्ण विश्व में संपर्क भाषा के रूप में भी स्थापित हो जाने की योग्यता रखती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1 विश्व पटल पर हिंदी सूर्य प्रसाद दीक्षित प्रथम संस्करण प्रकाशन वर्ष 2013

2 विश्व भाषा हिंदी संस्कृति और समाज, हजारी प्रसाद द्विवेदी

3 विश्व हिंदी सम्मेलन अंक केंद्रीय हिंदी निदेशालय

4 डॉ अशोक तिवारी हिंदी प्रतियोगिता साहित्य सीरीज पृष्ठ संख्या 1

प्रदीप कुमार

सहायक प्राध्यापक हिंदी

शहीद दलबीर सिंह राजकीय महाविद्यालय,

खरखौदा, सानीपत

(हरियाणा)

Email id - dpmaan1309@gmail.com

मोबाइल न. ६६५३८४२०१३ (9953842013)

7

कमलेश्वर – कहानियों में मानवीय मूल्यों का चित्रण

डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा

सारांश –

कमलेश्वर की कहानियां मानव के अन्तःस्थल को छूने वाली श्रेष्ठ कहानियां कही जा –सकती है। ये मानवीय संवेदना के सूत्र को बड़ी बारीकी से पकड़ते हैं। वे कुशल गोताखोर की भांति भावनाओं के सैलाब में अनोखे मोती निकालने में सफल होते हैं। भौतिकवादी मानव ने प्रगति के शिखर पर पहुंच कर मानवीय संवेदानाओं को खो दिया है। आज का मानव संवेदनहीन हो गया है। दैनिक गतिविधियों को क्रमबद्धता से जीते हुए मानवता को भुला बैठा है । कथाकार कमलेश्वर की कहानियों में इसी मानव के मर्म को स्पर्श करने का प्रयास किया गया है।

दिल्ली की एक मौत कहानी के नगरीय संस्कृति की स्वार्थपरता का चित्रण हुआ है। जिस व्यक्ति ने अनेक लोगों का जीवन संवार, विपरीत परिस्थितियों में सहारा दिया। उस व्यक्ति की अन्तिम यात्रा में शामिल होने के लिए समय निकालना कठिन प्रतीत हो रहा है। मृत्यु उपरान्त व्यक्ति का अस्तित्व एक क्षण में विलीन हो जाता है। स्वार्थी लोग समाज में दिखावे के लिए अन्तिम यात्रा में गाड़ियों में बैठकर श्मशान घाट तक जाते हैं। वहां भी अपने काम एवं शानो–शौकत की चर्चाएं करते हैं। यथा– जब मैं यहां आया था तो दीवानचन्द जी ने बड़ी मदद की थी मेरी। उन्हीं की वजह से कुछ काम धाम मिल गया था... .. जब अतुल भवानी और सरदार जी का इरादा शवयात्रा में जाने का नहीं है तो मेरा कोई सवाल ही नहीं उठता।

लेखक ने वस्तुस्थिति का अंकन किया है। मृत्यु के कुछ क्षणों बाद ही स्वार्थ में डूबे व्यक्ति इन्सानियत को भी भूल जाते हैं और इसे ही सामाजिक व्यवहारिकता की संज्ञा देते हैं। यथार्थवाद के नाम पर संवेदनहीन हो जाना कहां तक उचित है। मृत्यु की शाश्वतता से इन्कार नहीं किया जा सकता किन्तु निहित स्वार्थों से ऊपर उठकर दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि देकर जीवन की प्रवाहमयता का अहसास किया जा सकता है शवयात्रा में भी दिखावे व आडम्बरों का होना संवेदनहीनता को दर्शाता है। औपचारिकताओं का निर्वाह करने के लिये, सज संवर कर जाना, मरने वाले की आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना करने की अपेक्षा अपनी पोशाकों, गाड़ियों के विषय में चर्चा करना मानवीयता से दूर करता है। यथा– चार आदमी कंध दिए हुए हैं और सात आदमी साथ चल रहे हैं ..... सातवां मैं ही हूं। मैं सोच रहा हूं कि आदमी के मरते ही कितना फर्क पड़ जाता है। पिछले साल ही दीवानचन्द ने अपनी लड़की की शादी की थी तो हजारों की भीड़ थी। कोठी के बाहर कारों की लाइन लगी हुई थी

'सफेद सड़कश नामक कहानी में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान के अत्याचारों का सांकेतिक रूप में चित्रण हुआ है। साथ ही अयोध्या विवाद को भी नाजी शक्तियों के साथ जोड़ कर प्रस्तुत किया है। द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषका हो या फिर भारत के हिन्दू मुस्लिम दंगे, हर स्थिति में मानवतावाद का ह्रास होता है। लेखक ने देश–विदेश, धर्म, जाति से ऊपर उठकर मानवतावाद के महत्त्व को प्रतिपादित किया है। यथा–यह रास्ता, सफेद बजरी वाली यह सड़क बेकसूर मासूम लोगों की हड्डियों के चूरे से बनी है, जिन्हें नाजियों, ने गैस चौम्बर्स में मारा था उन्हीं की हड्डियों की यह बजरी है।

नाजियों की नृशंसता पर रोगटे खड़ा होना स्वाभाविक है। युद्ध में प्राणों पर आघात होता है, कुछ प्राण इधर से कुर्बान होते हैं तो कुछ उधर से बलिदान हो जाते हैं किन्तु निष्प्राण शरीर के साथ इतना बड़ा खिलवाड़ मानव को पशुवत बना देता है। इस प्रकार की अमानवीयता के दुष्परिणाम भावी पीढ़ियों को झेलने पड़ते हैं। आने वाले युग इस नृशंसता का चाहकर भी नहीं भुला पाते हैं। इसी अपराध बोध को लेकर जीते हुए एक व्यक्ति की मानसिक यंत्रणा का मर्मस्पर्शी चित्रण लेखक ने श्अपने देश मेंश नामक कहानी में किया है। जिसमें माइक अपने देश में मानसिक अशान्ति को झेलता है उसे अपने देश में नींद नहीं आती। इस कारण वह जाम्बिया जाकर उन लोगों के लिए काम करता है जिन पर उनके पूर्वजों ने अत्याचार किए थे। यथा–हम अपने इतिहास से क्षमा मांगते हैं और शपथ लेते हैं कि जांबिया जाकर हम उसी पीढ़ी के लिए घर बनायेंगे, उनके खेतों में बीज बोयेंगे उन्हीं बस्तियों में, जहां उनके पूर्वजों को हमारे पूर्वजों ने मारा था। यातनाएं दी थी और वहां से खदेड़ दिया था। ष लेखक ने इन पात्रों में संवेदना, मानवता एवं उत्तरदायित्व की भावना का समावेश किया है जिन्हें पूर्वजों की गलतियों का प्रायश्चित करना है।

देवा की मां कहानी में लेखक ने एक ऐसी नारी का चित्रण किया है जिसने अकेले ही अपने पुत्र का पालन–पोषण किया है। परित्यक्ता का दंश झेलती स्त्री को समाज में उपेक्षा का शिकार होना पड़ता है। ऐसी स्त्री अपनी संतान से अपेक्षा रखती है कि वे उसके जीवन को दिशा देगी और सुख से जीने का सपना संजो लेती है। श्देवा की मांश के माध्यम से लेखक ने स्त्री की सन्तोष वृत्ति, गहनता का स्वाभाविक चित्रण किया है। पति ने दूसरा विवाह रचाकर अपनी गृहस्थी बसा ली और बेटा स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेकर जेल चला गया है परन्तु वह किसी से शिकायत नहीं करती। यथा–ष सूत कातते हुए टूटे तार जोड़ते–जोड़ते अथाह धैर्य और अटूट दृढ़ता उसकी प्रकृति में आ गई थी। प्रत्येक बार टूटने वाले तार ने उसकी खीझ, झुंझलाहट और उसके असंतोष को जीत लिया था। इसी में उसका निस्तार था। यह चरखा ही उसका गूंगा गुरु था।'

लेखक ने नारी मन की पीड़ा को स्वाभाविकता प्रदान की है। नारी हृदय कोमल, दृढ़ एवं निश्चल होता है चाहे वह भरण–पोषण के लिए वेश्यावृत्ति को अपनाने वाली जुगनू का चरित्र हो या फिर सुंदरीबाई, ताराबाई या पुरुष के शिकार चंदा हो। उस पुरुष वर्चस्व का शिकार

होना पड़ता है। भले ही वह अपने वजूद के लिए जीवन भर संघर्ष करती रहे। लेखक ने श्मांस का दरियाश, रातें, राजनिरबंसिया कहानियों में नारी के विभिन्न रूपों का मार्मिकता से चित्रण किया है। कहीं श्तलाशश कहानी में नारी के स्वार्थी रूप को दर्शाया गया है जिसमें माँ अपनी युवा बेटी को अकेला छोड़कर पर–पुरुष से मित्रता कर लेती है। माँ–बेटी का स्नेहिल रिश्ता भी उस मां की अधूरी जिन्दगी को सम्पूर्णता नहीं दे पाया। बेटी बिना कहे ही सब समझ छात्रावास में रहने चली जाती है और अपने ही घर में मेहमानों की भांति अनुभव करती है। लेखक ने स्त्री–पुरुष की मित्रता के दुर्बल पक्ष को स्वाभाविकता प्रदान की है।

कस्बे का आदमी कहाने में छोटे महाराज नामक पात्र पाठकों की सहानुभूति पाने में सफल रहता है। संसार की मोह–माया से मुक्त, घर–गृहस्थ के झंझटों से दूर, सरल ह्रदय छोटे महाराज को छोटे–छोटे काम करने पड़ते हैं। वह अपने विषय में न सोचकर परोपकार के लिए जीता है। जीवन के अन्तिम समय में एक तोता उसका सहारा बनता है। उसके अकेलेपन व बुढ़ापे को बांटता है। जब शरीर की आस छूटने लगती है तो छोटे महाराज को उसकी चिंता सताने लगती है। वह उसी सुरक्षा के लिए चिंतित रहता है। यथा–अब कौन देखे सतू को रात भर बिटली चक्कर काटती रही.....बेटा छिन्न–भर को पलक नहीं लगी।

जीवन भर किसी का मोह नहीं पाला और अन्तिम क्षणों में एक तोते के जीवन का भय उसकी चिन्ता का कारण बन गया। अतः मानव संवदेनाओं से बंध रहता है। भावनात्मक लगाव उसमें मृत्यु से भय उत्पन्न करता है। इसी कारण श्नीली झीलश का महेसा झील के पक्षियों से भावात्मक रूप से जुड़ा हुआ था। अपने एकान्त के पलों में झील किनारे बैठ देश–विदेश से आने वाले पक्षियों के क्रियाकलाप देख शान्ति का अनुभव करता है। वहीं अंग्रेज एवं उच्च वर्ग के लोग उसी झील पर पक्षियों के शिकार करने के लिए हैं। उन्हें पक्षियों का क्रन्दन आनन्दित करता है। दूसरी तरफ महेसा उनके कलरव से व्याकुल हो उठता है। कुछ लोग इतने संवेदनहीन हैं कि अपने कुछ पल के मनोरंजन के लिए दूसरे प्राणी की हत्या कर देते हैं और महेसा उन्हीं पक्षियों की रक्षा के लिए अपनी पत्नी की सारी जमापूंजी तथा चंदे के धन से नीली झील को खरीद लेता है। यथा–सूत कातते हुए टूटे तार जोड़ते–जोड़ते अथाह धैर्य और अटूट दृढ़ता उसकी प्रकृति में आ गई थी। प्रत्येक बार टूटने वाले तार ने उसकी खीझ, झुंझलाहट और उसके असंतोष को जीत लिया था। इसी में उसका निस्तार था। यह चरखा ही उसका गूंगा गुरु था। '

लेखक ने नारी मन की पीड़ा को स्वाभाविकता प्रदान की है। नारी ह्रदय कोमल, दृढ़ एवं निश्चल होता है चाहे वह भरण–पोषण के लिए वेश्यावृत्ति को अपनाने वाली जुगनू का चरित्र हो या फिर सुंदरीबाई, ताराबाई या पुरुष के शिकार चंदा हो। उस पुरुष वर्चस्व का शिकार होना पड़ता है। भले ही वह अपने वजूद के लिए जीवन भर संघर्ष करती रहे। लेखक ने श्मांस का दरियाश, रातें, राजनिरबंसिया कहानियों में नारी के विभिन्न रूपों का मार्मिकता से चित्रण किया है। कहीं श्तलाशश कहानी में नारी के स्वार्थी रूप को दर्शाया गया है जिसमें माँ अपनी युवा बेटी को अकेला छोड़कर पर–पुरुष से मित्रता कर लेती है। माँ–बेटी का स्नेहिल रिश्ता भी उस मां की अधूरी जिन्दगी को सम्पूर्णता नहीं दे पाया। बेटी बिना कहे ही सब समझ छात्रावास में रहने चली जाती है और अपने ही घर में मेहमानों की भांति अनुभव करती है। लेखक ने स्त्री–पुरुष की मित्रता के दुर्बल पक्ष को स्वाभाविकता प्रदान की है।

कस्बे का आदमी कहाने में छोटे महाराज नामक पात्र पाठकों की सहानुभूति पाने में सफल रहता है। संसार की मोह–माया से मुक्त, घर–गृहस्थ के झंझटों से दूर, सरल ह्रदय छोटे महाराज को छोटे–छोटे काम करने पड़ते हैं। वह अपने विषय में न सोचकर परोपकार के लिए जीता है। जीवन के अन्तिम समय में एक तोता उसका सहारा बनता है। उसके अकेलेपन व बुढ़ापे को बांटता है। जब शरीर की आस छूटने लगती है तो छोटे महाराज को उसकी चिंता सताने लगती है। वह उसी सुरक्षा के लिए चिंतित रहता है। यथा–अब कौन देखे सतू को रात भर बिटली चक्कर काटती रही..... बेटा छिन्न–भर को पलक नहीं लगी।

जीवन भर किसी का मोह नहीं पाला और अन्तिम क्षणों में एक तोते के जीवन का भय उसकी चिन्ता का कारण बन गया। अतः मानव संवदेनाओं से बंध रहता है। भावनात्मक लगाव उसमें मृत्यु से भय उत्पन्न करता है। इसी कारण नीली झील का महेसा झील के पक्षियों से भावात्मक रूप से जुड़ा हुआ था। अपने एकान्त के पलों में झील किनारे बैठ देश–विदेश से आने वाले पक्षियों के क्रियाकलाप देख शान्ति का अनुभव करता है। वहीं अंग्रेज एवं उच्च वर्ग के लोग उसी झील पर पक्षियों के शिकार करने के लिए हैं। उन्हें पक्षियों का क्रन्दन आनन्दित करता है। दूसरी तरफ महेसा उनके कलरव से व्याकुल हो उठता है। कुछ लोग इतने संवेदनहीन हैं कि अपने कुछ पल के मनोरंजन के लिए दूसरे प्राणी की हत्या कर देते हैं और महेसा उन्हीं पक्षियों की रक्षा के लिए अपनी पत्नी की सारी जमापूंजी तथा चंदे के धन से नीली झील को खरीद लेता है। यथा–कमलेश्वर ने अपनी कहानियों में पाठक को भावुक होकर विचार करने पर विवश कर दिया है। छोटी–छोटी घटनाएं हमारे अन्तर्मन में टीस उत्पन्न करती हैं जिन्हें हम देखकर भी अनदेखा कर देते हैं। लेखक ने अपनी लेखनी से उन्हीं घटनाओं को संवेदनाओं में पिरोकर पाठक को भावविभोर करने में सक्षम रहे है।

संदर्भ सूचीः

1. कमलेश्वर– कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, दिल्ली की एक मौत, पृ० 118, 119
2. कमलेश्वर– कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, पृ० 122
3. कमलेश्वर – कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, सफेद सड़क, पृ० 166
4. कमलेश्वर– कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, अपने देश में, पृ० 178

5. कमलेश्वर– कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, देवा की मां, पृ० 39
6. कमलेश्वर– कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, कस्बे का आदमी, पृ० 45
7. कमलेश्वर– कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, नीली झील, पृ० 102
8. कमलेश्वर– कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, बयान, पृ० 133
9. कमलेश्वर– कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, चप्पल, पृ० 164
10. कमलेश्वर– कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियां, पृ० 158

डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा
सह–प्रोफेसर (हिन्दी–विभाग)
गोस्वामी गणेशदत्य सनातन धर्म महाविद्यालय,
पलवल (हरियाणा)

8

लोकमंगल की अवधारणा और मध्यकालीन हिंदी संत–साहित्य

पूजा

सारांश

साहित्य, समाज में चेतना जागृत करता है । साहित्यए समाज को प्रतिबिंबित करने के साथ–साथ उसे परिवर्तित भी करता है। एक प्रतिभा संपन्न व्यक्ति साहित्य का प्रणेता होता है जो अपनी रचनाओं में युगीन समाज को प्रतिबिंबित ही नहीं करता बल्कि एक उन्नत दिशा दिखाता है। हिंदी साहित्य के इतिहास लेखकों ने हिंदी साहित्य के इतिहास को आदिकाल, मध्यकाल और आधुनिक काल तीन भागों में विभक्त किया है। मध्यकालीन भक्ति आंदोलन अत्यंत व्यापक, गहन और अद्वितीय था। भक्ति–आंदोलन के अखिल भारतीय प्रसार में संतों की वाणी ने अहम भूमिका निभायी। भक्ति आंदोलन में जिस प्रकार कबीर, गुरुनानक, दादूदयाल, रज्जबदास आदि संतों ने भूमिका निभायी ठीक उसी प्रकार मीराबाई, सहजोबाई, दयाबाई आदि स्त्रियों का भी सक्रिय योगदान रहा। मध्यकालीन हिंदी संत–साहित्य का लोकमंगल से गहरा संबंध है।

शोध–आलेख

आचार्य रामचंद्र शुक्ल मध्यकाल को पूर्व–मध्यकाल (भक्तिकाल) तथा उत्तर–मध्यकाल (रीतिकाल) इन दो भागों में विभाजित करते हैं। मध्यकालीन साहित्य के पहले खंड जो चौदहवीं शती के मध्य से सत्रहवीं शती के मध्य तक जिसमें संतकाव्य, प्रेमाख्यानक काव्य, रामकाव्य, कृष्णकाव्य, नीतिकाव्य तथा वीरकाव्य की धाराएँ प्रवाहित हुई। "आधुनिक अर्थों में साहित्य से हमारा अभिप्राय उस रचनात्मक ललित लेखन से है, जो व्यक्ति के मुक्त अनुभवों एवं प्रेरणाओं को शब्दबद्ध करके उनमें एक उद्देश्यपरकता की प्रतिष्ठा करता है।"[1]

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी 'मध्ययुग' या 'मध्यकाल' शब्द पर विचार करते हुए लिखते हैं कि यह सब भारतीय भाषाओं में नया ही है। आगे वे लिखते हैं कि–

"मध्ययुग शब्द का प्रयोग काल के अर्थ में उतना नहीं होता जितना एक खास प्रकार की पतनोन्मुख और जकड़ी हुई मनोवृत्ति के अर्थ में होता है।"[2] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार, "मध्यकाल का मनुष्य धीरे–धीरे विशाल और असीम ज्ञान के प्रति जिज्ञासा का भाव छोड़ता जाता है। धार्मिक आचारों और स्वतः प्रमाण माने जाने वाले आप्तवाक्यों का अनुयायी होता जाता है और साधारणतः इन्हीं की बाल की खाल निकालने वाली व्याख्याएँ करने में अपनी सारी शक्ति व्यय कर देता है।[3]

भारतीय इतिहास के संदर्भ में 'मध्यकाल' शब्द का प्रयोग पतनोन्मुख मनोवृत्ति के अर्थ न होकर अपेक्षाकृत स्वच्छंद एवं विकासोन्मुख प्रवृत्तियों का काल रहा है। हिंदी साहित्य के इतिहास पर दृष्टि डाली जाए तो इस काल में ही आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का उदय हुआ और अखिल भारतीय स्तर पर भक्ति–आंदोलन का उदय हुआ। ये घटनाएँ निश्चित तौर पर देश के उत्थान की परिचायक हैं। संत शब्द अपनी व्यापक अर्थवत्ता में सहजता, साधुता, कर्तव्यनिष्ठा, वैराग्यता, सत्यता आदि कई अर्थों को समेट लेता है। किंतु परिभाषित रूप में संत से आशय प्रायः निर्गुण कवियों के रूप में किया जाता है। यह बहुत ही मनोरंजक तथ्य है ऋग्वेद से लेकर ईसा की बीसवीं शताब्दी तक संत शब्द निर्विवाद रूप से सदसद्विवेकशील, अराग, अलेप और मायातीत महापुरुष के अर्थ में प्रयुक्त होता आया है, जबकि हिंदी आलोचना में यह शब्द निर्गुण ब्रह्म की उपासना करने वाले कबीर, रैदास, दादू, दरिया आदि के लिए रूढ़ हो गया।[4] आधुनिक आलोचक निर्गुण पंथी को ही संत मानते हैं, जबकि वास्तविकता यह है कि तुलसी, सूर जैसे भक्त कवि भी अपनी ब्रह्म निष्ठता एवं सहजता के कारण संत की कोटि में ही आते हैं। एकता एवं सहायक गाना संत की कोटि में ही आते हैं। मध्यकालीन समाज की स्थिति अत्यंत विषम थी। जहाँ देश की राजनीतिक स्थिति चिंतनीय थी वहीं धार्मिक स्थिति भी बहुत अच्छी नहीं थी। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार जिस समय निर्गुण संत सामने आए सिद्धों और नाथों का बोलबाला था तथा सच्ची धर्म भावना का ह्रास हो गया था। यह स्थिति साधारण जनता की धार्मिक भावना की थी। संत अवतार नहीं बल्कि जनसाधारण के बीच से ही निकलते हैं। वे जन–कल्याण के लिए अपने ज्ञान एवं अनुभव से संदेश देते हैं। वे किसी विशेष विचारधारा में न बँधकर जनकल्याण का मार्ग प्रशस्त करते हैं। मध्यकालीन हिंदी संत–साहित्य ने एक दिशा विहीन समाज को नई दिशा दिखाई तथा नए उत्साह और नवजीवन की प्रेरणा दी। आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मत था कि उस समय भक्ति का एक ऐसा रास्ता निकालने की आवश्यकता थी जो साधारण जन के लिए सुगम और सुलभ हो। मध्यकालीन हिंदी संत–साहित्य का लोकमंगल से गहरा संबंध है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल निर्गुण संतो के योगदान पर चर्चा करते हुए लिखते हैं– "ऐसी स्थिति में कालदर्शी भक्त कवि जनता के हृदय को सँभालने और लीन रखने के लिए दबी हुई भक्ति को जगाने लगे। क्रमशः भक्ति का प्रवाह ऐसा विकसित और प्रबल होता गया कि उसकी लपेट में केवल हिंदू जनता ही नहीं, देश में बसने वाले सहृदय मुसलमानों में भी न जाने कितने आ गए। प्रेमस्वरूप ईश्वर को सामने लाकर भक्त कवियों ने हिंदुओं और मुसलमानों दोनों को मनुष्य के सामान्य रूप में दिखाया और भेदभाव के दृश्य को हटाकर पीछे कर दिया।"[5] नामदेव, कबीर, रैदास, नानक आदि संतों ने भक्ति को लोक–हृदय से जोड़ा तथा लोकमंगल की ओर प्रवृत्त हुए।

'हिंदी शब्द सागर' (आठवां भाग, 1971) के अनुसार 'लोक' का अर्थ संसार, जगत, स्थान, लोग, जन, समाज, मानव जाति आदि है। 'लोक' शब्द के विषय में बताते हुए डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय कहते हैं– "लोक शब्द का अभिप्राय उस समस्त जनसमूह से है जो किसी देश में

निवास करता है।"[6] 'लोक' वास्तव में साधारण जनमानस का सूचक है जिसकी अपनी परंपरा, संस्कार, रीति–रिवाज, रहन–सहन और संस्कृति होती है। 'मंगल' शब्द का अर्थ है– कोई ऐसा कार्य जो सुख सौभाग्य देने वाला हो तथा हर प्रकार से शुभकर हो। अतः 'लोकमंगल' का अर्थ किसी स्थान विशेष में रहने वाले जनसमूह या सर्वसाधारण की भलाई के लिए शुभकामना करना है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मानना है कि–

"लोक की पीड़ा, बाधा, अन्याय, अत्याचार के बीच दबी हुई आनंद ज्योति भीषण शक्ति में परिणत होकर अपना मार्ग निकालती है और फिर लोकमंगल और लोकरंजन के रूप में अपना प्रकाश करती है।"[7] मध्यकालीन हिंदी संत–साहित्य में संतों की वाणी 'स्व' से 'पर' को प्रस्थान करने वाले एक बहुआयामी स्वरूप प्रदान करती है। इन संतों ने स्वयं को शक्ति–संपन्न करके लोकमंगल हेतु उसका प्रयोग किया है । 'लोकमंगल' से तात्पर्य उस साधारण वर्ग के हित से है जो निरीह है, अशिक्षित है, गरीब है तथा किसी भी कारण से हाशिए पर है । आचार्य रामचंद्र शुक्ल का कबीर पर यह मत यहाँ विचारणीय है–

"कबीर ने ठीक मौके पर जनता के उस बड़े भाग को सँभाला जो नाथपंथियों के प्रभाव से प्रेमभाव और भक्तिरस से शून्य और शुष्क पड़ता जा रहा था। उनके द्वारा यह बहुत ही आवश्यक कार्य हुआ। इसके साथ ही मनुष्यत्व की सामान्य भावना को आगे करके निम्न श्रेणी की जनता में उन्होंने आत्मगौरव का भाव जगाया और भक्ति के ऊँचे से ऊँचे सोपान की ओर बढ़ने के लिए बढ़ावा दिया ।"[8]

इस प्रकार संतों के साहित्य में जनसाधारण के कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता है। जब समाज असद्वृत्तियों की अधिकता के कारण दिशाहीन होने लगता है तो ऐसे समय में संतों की वाणी सद्वृत्तियों का मार्ग दिखाकर समाज की रक्षा करती है। वास्तव में समाज में असत् व्यापार को रोकना ही लोकमंगल कहलाता है। लोकमंगल का स्वरूप दो रूपों में देखा जा सकता है– व्यष्टिगत एवं समष्टिगत। मनुष्य व्यक्तिगत समृद्धि के साथ–साथ ही जगत का कल्याण करने का भाव रख सकता है। लोकमंगल की साधनावस्था का यह अटूट नियम है कि 'स्व' को भुलाकर 'पर' की चिंता की जाए। आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मानना है कि 'सच्चा कवि वही होता है जिसे लोक–हृदय की पहचान हो, जो अनेक विशेषताओं और विचित्रताओं के बीच मनुष्य जाति के सामान्य सहृदय को देख सकें।'[9]

संतों की वाणी भले ही स्वांतः सुखाय से मुखरित हुई हो परंतु सर्वजन हिताय का मार्ग ही प्रशस्त करती है। मध्यकालीन हिंदी संत–साहित्य में आदर्श मानव, आदर्श समाज, आदर्श राष्ट्रीय तथा आदर्श विश्व की भावना निहित है। 'स्वांतः सुखाय रघुनाथ गाथा' की रचना करने वाले तुलसीदास अपनी रचना से 'सुरसरि सम सब कहं हित होई' अंततः स्वीकार करते हैं। साहित्य द्वारा लोकमंगल के विभिन्न क्षेत्र हो सकते हैं। लोकमंगल एक व्यापक अवधारणा है। अलग–अलग सोपानों से गुजरते हुए लोकमंगल रूपी मानसरोवर को प्राप्त किया जा सकता है। व्यक्ति कल्याण इसका प्रथम सोपान है। जब तक मनुष्य स्वयं पर ही केंद्रित रहेगा तब तक वह लौकिक सुख ही प्राप्त कर सकता है। अतः अलौकिक गुणों को पाने के लिए सीमित परिधि से बाहर आना अत्यंत आवश्यक है। इस प्रकार लोकमंगल का दूसरा सोपान समाज कल्याण से संबंधित है। समाज कल्याण हेतु विभिन्न धर्मों में समन्वयता, सौहार्द सहिष्णुता के साथ–साथ जातिगत एवं वर्गगत समन्वय अत्यंत आवश्यक है। लोकमंगल की मंजिल को प्राप्त करने का तीसरा सोपान राष्ट्र कल्याण है। जब मनुष्य बिना जातिगत वर्गगत असमानता के राष्टहित के बारे में सोचता हैं, तभी मंगल होता है। राष्ट्रकल्याण के बाद ही विश्वकल्याण की इच्छा बलवती होती है।

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने संतों के बारे में कहा है–

"वे सीधे समाज के सुधार में आत्मसुधार की कल्पना नहीं करते अपितु अपने व्यक्तित्व के निखार में ही समाज का परिष्कार देखते हैं।"[10] अतः इस तथ्य से भलीभांति परिचित है थे कि जहाँ समाज के व्यक्ति आदर्श रूप बन जाएँगे, वहाँ समष्टि का आदर्श बन जाना स्वाभाविक है। मानव का आदर्श व्यक्तित्व उसके चारित्रिक आदर्शों, जीवन मूल्यों एवं नैतिक मूल्यों पर आधारित होता है। एक चरित्रवान व्यक्ति ही समस्त समाज का आलोक बन सकता है। संतों की वाणी में 'अहं' का त्याग, सत्यनिष्ठता तथा कर्तव्यनिष्ठता का भाव मिलता है। वे गृहस्थ जीवन में रहते हुए व्यक्तिगत हित के साथ–साथ परिवार कल्याण की बात करते हैं। कबीर कहते हैं–

"अवधू भूले को घर लावै ।
सो जन हमको भावै ।।
घर में जोग, भोग घर ही में, घर तज बन नहिं जावै ।
घर में जुक्त, मुक्त घर ही में, जो गुरु अलख लखावै ।।"[11]

इस प्रकार वे समाज में रहकर ही मानव उत्थान की बात करते हैं। यही भाव गुरुनानक के काव्य में मिलता है। वे भी गृहस्थ रहते हुए मोक्ष प्राप्त करने के पक्षधर है–

"सतिगुरु की असी वड़ाई, पुत्र–कलत्र विचौ गति पाई ।"[12]

अतः इन संतो ने कभी भी गृहस्थी निरपेक्ष विरक्त जीवन का उपदेश नहीं दिया। संतों ने जीवन और जगत की वास्तविकता को पहचाना था। वे सत्यबोध के कवि है, सत्य ही उनका सौंदर्य है। सत्य स्वरूपी ईश्वर की उपासना के लिए आडंबरों की आवश्यकता नहीं होती। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर के विषय में लिखते हैं–

"धर्म समन्वय के लिए जिस सुदृढ़ आधार की आवश्यकता होती है वह कबीर के पदों में सर्वत्र दिखाई देती है। कबीर की दृष्टि में कुलगत, जातिगत श्रेष्ठता का कोई मूल्य नहीं है। वे प्रत्येक मनुष्य को सामान मर्यादा का अधिकारी मानते हैं। जन्म से ना कोई हिंदू है, न मुसलमान, न ब्राह्मण, न शूद्र।

जौ तूँ वॉमन वमनी जाया । तौ आन बाट हवै क्यों नहिं आया ।।[13]

यही भाव संत कवि गुरुनानक देव के काव्य में दिखाई देता है–

पाखंडि भगति न हो वई, पर ब्रह्म न पाइआ जाई ।[14]

संतों का मत है कि दुराचारों का परित्याग करके मानव अपने साथ–साथ समाज की पावनता एवं शुचिता का साधन बनता है। मनुष्य घर एवं बाहर तभी शांत रह सकता है जब उसका अपने मन पर नियंत्रण होगा। संतो ने भक्ति का सबसे प्रमुख तत्त्व प्रेम को माना है। कबीर प्रेम के ढाई अक्षर को ही प्रधान मानते हैं–

कबीर पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुवा, पंडित भया न कोय ।
ऐकै अच्छर प्रेम का, पढ़ै सु पंडित होय ।।15

प्रेम के आधार पर जाति–पाँति के भेद को मिटाने के लिए इन संतों की वाणी मुखरित हुई है। मलूकदास कहते हैं–

हरि को भजे सो हरि को होई ।
हरि को ऊँच–नीच नहिं कोई ।।16

भक्ति का आधार प्रेम है और प्रेम मानवतावाद का ही दूसरा नाम है। इस मानवतावाद में द्विज और शूद्र, हिंदू और मुसलमान का भेद नहीं रहता। संतों की वाणी मानवतावाद का संदेश देकर लोकमंगल की कामना करती है। संतों की वाणी में मानव जीवन मूल्य सर्वत्र दिखाई देते हैं। उनके पदों में मानवता, परोपकार, सहजता, सत्य, क्षमा, संतोष, अहंकार का दमन तथा वाणी की संयमता जैसे मानव मूल्य समाज का मार्गदर्शन करते हैं। संतों का साहित्य मानव को मानव समझने वाला साहित्य है। संत–साहित्य स्वानुभूति पर लिखा गया साहित्य है। तत्कालीन समाज में पुस्तकीय ज्ञान कुछ लोगों तक ही सीमित था। संत कवियों ने ज्ञान को बंधन–मुक्त करके जन–जन में फैलाना चाहा। उन्होंने जन समाज के कल्याण और जन समाज की उन्नति के लिए जनता के मध्य में ही सत्संग–कीर्तन किए। इन संतों ने हिंदू–मुसलमान के बीच वैमनस्य को दूर करके प्रगतिमय पथ दिखाया। उन्होंने दोनों के मध्य प्रेम और सहनशीलता का क्षेत्र तैयार किया।

निष्कर्ष:

वर्तमान युग में धर्म के जिस विशृंखल रूप के दर्शन होते है वह चिंतनीय है। धर्मों में अगर कट्टरता होगी तो सांप्रदायिक वैमनस्य की भावना बलवती होगी। समाज कल्याण के लिए व्यक्तिगत अहं, धर्म, जाति और संप्रदाय की भावना को गौण बना देना ही श्रेष्ठ होगा। संत–साहित्य में एक जीवन विधायी शक्ति है जो मनुष्य को सद्मार्ग पर चलाने की शक्ति है। मध्यकालीन हिन्दी संत–साहित्य समाज, राष्ट्र एवं विश्व के सभी प्राणियों के लिए कल्याणकारी है।

संदर्भ:

1. डॉ० रवींद्रकुमार सिंह : संतकाव्य की सामाजिक प्रासंगिकता, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं० 1994, पृ० 34 ।
2. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी : मध्यकालीन धर्म–साधना, साहित्य भवन प्र० लि०, इलाहाबाद, चतुर्थ सं० 1970, पृ० 10 ।
3. वही पृ० 10 ।
4. डॉ० राजदेव सिंह : संत–साहित्य पुनर्मूल्यांकन, पृ० 2 ।
5. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास, श्री प्रकाशन, दिल्ली, पृ० 54 ।
6. कृष्णदेव उपाध्याय : लोक संस्कृति की रूपरेखा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सं० 1988, पृ० 8 ।
7. सं० धनंजय वर्मा : लोकमंगल (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की आलोचना), परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं० 1986, पृ० 229।
8. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास, श्री प्रकाशन, दिल्ली, पृ० 56 ।
9. सं० धनंजय वर्मा : लोकमंगल (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की आलोचना), परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं० 1986, पृ० 224 ।
10. डॉ० रवींद्रकुमार सिंह : संतकाव्य की सामाजिक प्रासंगिकता, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं० 1994, पृ० 61 ।
11. हजारीप्रसाद द्विवेदी : कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ० 261 ।
12. सं० डॉ० महीप सिंह एवं डॉ० नरेंद्र मोहन : गुरुनानक और उनका काव्य, नैशनल पब्लिशिंग हाउस, प्रथम सं० 1971, दिल्ली, पृ० 125।
13. सं० माताप्रसाद गुप्त : कबीर ग्रंथावली, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ० 79 ।
14. डॉ० रवींद्रकुमार सिंह : संतकाव्य की सामाजिक प्रासंगिकता, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं० 1994, पृ० 85 ।
15. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' : कबीर वचनावली, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृ० 103 ।
16. रामविलास शर्मा : भारतीय संस्कृति और हिन्दी प्रदेश, किताबघर प्रकाशन, सं० 1999, दिल्ली, पृ० 178।

पूजा
शोधार्थी (पीएच०डी०)
हिन्दी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय
पता : फ्लैट न. 62–डड़
प्लैटिनम एन्क्लैव सेक्टर 18
रोहिणी दिल्ली–110089
मो० 9582140775
ई–मेलः pooja.gehlot1985@gmail.com

9

'भाव तरंग सतसई' में आदर्शोन्मुखी यथार्थ–स्वर

गीता रानी

सारांश

''देखूँ खिलती कलियाँ या प्यासे सूखे अधरों को,
तेरी चिर यौवन सुषमा या जर्जर जीवन देखूँ।''

कवियत्री अपने चतुर्दिक बिखरी मानवीय पीड़ा से पीड़ित है और प्रकृति की सुषमा को भी अनदेखा नहीं कर सकती। 'महादेवी वर्मा' जी द्वारा रचित 'रश्मि' काव्य संग्रह से संकलित पंक्तियाँ हमें युगबोध तथा सामाजिक यथार्थ से परिचित कराती हैं। इस उद्धरण को डॉ० तारकनाथ बाली के निम्न कथन से भी बल मिलता है, ''रचनाकार काव्य देवी से आविष्ट होकर ही रचना करने में समर्थ होता है। काव्यदेवी के प्रभाव से रचनाकार देश और काल की सीमाओं का उल्लघंन कर जाता है और ऐसे तथ्यों का चित्रोपम वर्णन करने में समर्थ होता है, जो उसने कभी नहीं देखे। अनदेखे पात्रों और अनदेखी घटनाओं का ऐसा चित्रण कि वे सजीव और साक्षात् प्रतीत होने लगें, किसी विशिष्ट शक्ति का ही प्रभाव हो सकता है।''[1]

आचार्य प्रवर डॉ० केशवदेव शर्मा तीन दशक से भी अधिक समय से साहित्य साधना में रत रहकर हिन्दी गद्य–पद्य विधा में निरन्तर साहित्य सृजन कर रहे हैं। इस अनवरत् तपस्या का परिणाम 'भाव तरंग सतसई' है, जो विविध भाव अभिव्यक्तियों को समेटे सतसई परम्परा का जीवन्त उदाहरण है। आज जहाँ उत्तेजक व उन्मादक काव्य का बोलबाला है, वहाँ गोवर्धनाचार्य कृत 'आर्या सप्तशती', 'सातवाहन' कृत– 'गाथा सप्तशती', 'कृपाराम' की 'हिततरंगिनी', 'बिहारीलाल' कृत 'बिहारी सतसई' तथा कविवर 'वृंद' की 'वृंद सतसई' आदि 'सतसई' परंपरा को दीपवर्तिका की तरह प्रदीप्त किए आज के कवि केशवदेव शर्मा ने समसामयिक परिस्थितिजन्य चिन्तन को लेकर 'भाव तरंग सतसई' की रचना की है। शिक्षा के क्षेत्र में उनका 34 वर्षों का अनुभव और जीवन का समग्र सार आदर्श और यथार्थ रूप में इस सतसई में विद्यमान है। इसके मूल में मानव, मानवता और मानव हित चिंतन प्रमुख रहा है।

ग्रामीण परिवेश में कृषक घर में जन्मे डॉ० केशवदेव शर्मा की वाणी में स्पष्टता भरी खटास–मिठास अनायास ही आ गई है। हिन्दी में पी–एच्०डी० और डी० लिट्० उच्च शिक्षा प्राप्त रचनाकार ने अपने जीवन को अध्यापन के साथ शोधपरक व मौलिक लेखन के लिए समर्पित किया हुआ है। अब तक प्रकाशित 17 मौलिक व शोधपरक रचना ग्रन्थों द्वारा हिन्दी साहित्य को सम्पन्न व समृद्ध कर रहे हैं। इनकी पहली काव्य कृति– 'बंजारा शतक' में मनुष्य 'तृष्णा व भूख' को लेकर जीवन भर बंजारे की तरह घूमता रहता है; जिसे लेकर मौलिक चिंतन, कल्पना, भाव व अनुभूतियों को शब्द रूप में प्रस्तुत किया गया है।

इसी तरह 'लोकराज पानी भर रहा है' नामक रचना नाम से ही पता चलता है कि राजनीति नेताओं को यह भी भुला देती है कि वे किस ध्येय के लिए राजनीति में आए थे। विपक्ष में उनकी भाषा कुछ होती है और सत्तारूढ़ होने पर कुछ और। आजादी के समय देश का शासन उनके हाथों में इसलिए दिया गया था कि भारतीय समाज में गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा, भेदभाव, मँहगाई, बेरोजगारी का उन्मूलन कर नए राष्ट्र का निर्माण हो सके। परन्तु इतने वर्षों बाद भी हम देखते हैं कि राजनेताओं का उद्योगपतियों व भ्रष्टाचारियों के साथ गठजोड़, सांप्रदायिकता, अपराध, बेरोजगारी, हिंसा, लूट, बलात्कार, आरक्षण जैसी समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं। 'साठ बरस सौ रंग तथा संवाद' जैसी काव्यकृतियाँ भी अपने समय का प्रतिबिम्ब हैं।

'अहसास', 'दरिन्दे और दरिन्दगी' लोक चर्चित उपन्यास तथा 'राक्षस का अन्त' (बाल कहानी संग्रह) के माध्यम से बुराई त्यागने और नैतिक मूल्यों की सीख दी गई है। अपने व्यक्तित्त्व और कृतित्त्व से प्रभावित करने, आमजन की पीड़ा अनुभव करते हुए वर्तमान समस्याओं का समाधान खोजने तथा मानवता का संदेश पहुँचाने की दृष्टि से भी 'भाव तरंग सतसई' महत्त्वपूर्ण काव्यकृति है। दोहा शैली की यह काव्य रचना मानव–दर्शन की समग्र सोच को आत्मसात किए हुए है। कवि के मन में वर्तमान के प्रति चिंता भी है और चिन्तन भी। रचनाकार के शब्दों में, ''हमें भविष्य की चिंता छोड़ वर्तमान को सँवारने की जरूरत है। भविष्य के सपने बुनो, पर वर्तमान की कीमत पर नहीं।''[2]
समाज में धर्म, राजनीति और ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में निरन्तर हो रहे परिवर्तन रचनाकार को लिखने के लिए प्रेरित करते रहे हैं। एक दूसरे को पीछे छोड़ देने की सोच ने इंसान को इतना स्वार्थी बना दिया है कि वह प्रयोगशालाओं में कृत्रिम वायरस बनाकर विश्व मानवता को आघात पहुँचाने में बिल्कुल भी संकोच नहीं करता। कोरोना प्रभाव ने रचनाकारों की सोच को यथार्थवादी मानसिकता के करीब भी ला दिया था। कवि ने लिखा भी है–

परमाणु शक्ति संग्रह अभिमानी, यूरोप एशिया अमरीका ईरान।
सोच न पाए चाल कोरोना, धरे रह गए विश्वविजय अरमान।।[3]

कवि सतसई के माध्यम से संसार की विविध समस्याओं को चित्रित करने के साथ समाधान भी प्रस्तुत करते हैं एवं आध्यात्म जगत का भी चिंतन करते हैं। कवि के जीवन संस्कार उनकी रचनाओं में जीवंत हो उठे हैं–

व्रत, पूजा मर्यादा धर्म, ईश्वर, चिंतन मानवता सेव।
गला रेत बम गोली, इंसानी हत्या दानवता टेव।।[4]

ऐसा लगता है कि वे स्वयं संघर्ष–सागर में गोते लगा रहे हों। मनुष्य जीवन भर स्वयं को भूला–सा भागता रहता है। वह जीवन के वास्तविक सुख को नहीं पहचान पाता। मानव जीवन की आपाधापी को लेकर कवि कहता है –

जीवन आपाधापी उलझा, खुद को खुद ही बिसराया।

मार थपेडों जीवन यादें, सोचो क्या खोया क्या पाया।।[5]

कोरोना महामारी के समय भयभीत इंसान परमतत्त्व (ईश्वर) को याद करने लगे क्योंकि इंसान महामारी के कारण दम तोड़ रहा था। चारों तरफ हाहाकार मच रहा था। दिसंबर 2019 से फैली कोरोना महामारी ने 2020 आते–आते प्रचंड रूप धारण कर लिया। अस्पताल मरीजों से पट गए। इलाज के अभाव में कितने लोग असमय मृत्यु का ग्रास बने। उस समय पता चला कि जिस प्रगति और संसाधनों के विकास का दम हम मीडिया व सोशल मीडिया पर भरते नज़र आते है; वे स्वास्थ्य सेवाएँ 'ऊँट के मुँह में जीरे' के समान हैं, कवि हृदय केशवदेव शर्मा ने लिखा है –

कुदरत खेल कहें कोरोना, चीनी मानव बुद्धि फेर।
मूल समझना विश्व चाहना, बल दानव अशुद्धि हेर।।[6]

विश्व के सभी वैज्ञानिक कोरोना रोधी दवा ढूँढने में लग गए। इस महामारी का और उग्र रूप हमें अप्रैल 2021 में देखने को मिला, जब दूसरी लहर के रूप में यह अनगिनत मानव जिंदगियों को लील गया। सभी कामकाज ठप्प। सभी उत्सव बंद तथा जीवन की रफ्तार थम सी गई। कवि हृदय भी इस एकांतवास में जन–जन की व्यथा को सहेज गया है। अब तक उनके मन में नवीन भारत की कल्पना तथा अराजकता के साथ संघर्ष था, किन्तु इस महामारी ने नई चिंताओं–विमर्शों को जन्म दिया है। 'भाव तरंग सतसई' में इन चिंताओं का निवारण भी प्रस्तुत किया गया है–

कोरोना महामारी विकट समस्या, सामाजिक दूरी समाधान संभव।
ईश्वर, अल्लाह, वाहेगुरू संग, जाति धर्म योग तब जीवन।।[7]

मानव पर स्वार्थपरकता इतनी हावी हो गई कि वह घृणित से घृणित कृत्य करने से भी नहीं घबराता। चारों ओर मनमानी लूट, शिक्षा का व्यवसायीकरण, राजनीतिक, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिक दंगे, अपने–अपने मज़हब को श्रेष्ठ बताने की होड़, गरीबी, बेरोजगारी व अशिक्षा का दानव समाज की जड़ों को खोखला कर रहा है–

अधिकार हनन पग–पग करते, जाति–धर्म विषधर फुंकार।
प्रतिशोधी ज्वाला जल मरते, झूँठी शानो जग हुँकार।।[8]

चुनावी रोटियाँ सेंकने के लिए कुछ नेता शोषित वर्ग विशेषकर किसान और मजदूर से हमदर्दी जताकर चले जाते हैं पर, वही जब कुर्सी तक पहुँचते हैं तो उनके सुर बदले नज़र आते हैं। इस ओर संकेत करते हुए रचनाकार की पीड़ा फूट पड़ी है –

कृषक, श्रमिक शुभचिंतक छदमी, सहानुभूति है छदम आवरण।
मन भाव छिपा वाणी रसभर, हाय! तुम्हारा व्यवहार आचरण।।[9]

रचनाकार केशवदेव शर्मा का स्वभाव सदैव दूसरों को एक सकारात्मक सीख देने का रहा है। बड़े सहज भाव से बड़ी से बड़ी समस्या का समाधान बताना व सदैव दूसरों के हित साधन के लिए तत्पर रहना आपके व्यवहार में समाहित है। व्यवहार में वही आदर्श अच्छा लगता है, जिसमें जीवन का यथार्थ निहित हो। इस व्यवहार कुशलता का प्रभाव उनके लेखन में भी परिलक्षित होता है–

औरों हित मन साध धर, निज हित खुद सध जाय।
तरू निज छाया छायकर, हरित पात लद जाय।।[10]

दूसरों की पीड़ा या स्वयं की भोगी हुई व्यथा कवि को समाज परिष्कार करने के लिए प्रेरित करती है। 'भाव तरंग सतसई' दिखावा और पाखण्ड़ प्रवृत्ति पर भी व्यंग्य करती प्रतीत होती है –

घड़ियाली आँसू सहानुभूत स्वर, अवसर स्थापन खोज रहे।
कौन मरा जिया कौन जग, अफरातफरी मौसम मौज अहे।।[11]

ज्ञान पाकर यदि मनुष्य का व्यवहार कठोर बनता है, तो ऐसे ज्ञान का कोई लाभ नहीं। जिस मानव मन को प्रेम ने नहीं छुआ, वह प्रेम के अभाव में निर्जीव ही माना जाएगा। सबके मन को छूते हुए रचनाकार अपने मन की भी कह गए हैं–

नफरत गांधी बाजार बिक रही, द्वेष घृणा हिंसा व्यभिचार।
प्रेम, अंहिसा बकरी रोए, नेता अफसर जनता लयखार।।[12]

समूचा विश्व बारूद के ढेर पर बैठा भयंकर प्रलय को निमंत्रण दे रहा है। मानव जाति लगातार विनाश की ओर बढ़ रही है। वायरस के प्रभाव ने विश्व की प्रमुख संघीय शक्तियों को भी सोचने पर मज़बूर कर दिया –

अस्त्र–शस्त्र सब धरे रह गए, बेचैन विश्व घायल महामारी मार।
ताकतवर अहं घमण्ड़ ढ़हे, लाचार विवश शोधों मिला न पार।[13]

वाक्देवी का सदैव स्मरण करते हुए सतसई में सरस्वती वंदना की गई है। यदि माँ सरस्वती रूँठ जाए तो अर्थ का अनर्थ कर सकती हैं। शुरु से अंत तक 'वाणी' का अर्चन सर्वोपरि रहा है। संसार में सत् असत् जितने भी कर्म होते हैं, उनका प्रभाव मनुष्य की वाणी में झलकता है। वाणी की सरसता लोगों को अपने वश में करती रही है। भक्त कवि तुलसीदास भी कह गए हैं–

तुलसी मीठे वचन ते, सुख उपजत चहुँ ओर।
बसीकरण इक मंत्र है, परिहरु वचन कठोर।

आदर, प्रेम एवं सम्मान से परिपूर्ण वाणी में समग्र जन को मोहित और आकर्षित करने के साथ नवोत्साह भरने की क्षमता रहती है। समाज में व्याप्त कटुता, ईर्ष्या, घृणा, और हिंसा भावना को मधुर वचनों द्वारा ही शमित किया जा सकता है। इसी भाव का समर्थन करते हुए डॉ० केशवदेव शर्मा ने अपनी काव्यमयी भाषा में लिखा है –

''शब्द मधुर मन झूमता कटु वाणी पथ रोके संसार।
मधुर वचन जग जीतता, कटु वाणी झोंके हैं संहार।।''[14]

काव्य भाषा की बात करें, तो इस काव्य रचना में संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली के साथ–साथ ब्रज भाषा का व्यावहारिक रूप व अपनापन समाहित है। देशज शब्द, जैसे – धेला, ओटों, घटाटोप, बबको आदि। इसी तरह विदेशज शब्द जैसे– लॉकडाउन, कोरोना, ऑक्सीजन आदि के साथ तत्सम, तद्भव शब्दों का भी भरपूर प्रयोग किया है। नई शब्दावली ने भी काव्य में स्वाभाविकता उत्पन्न की है। भाषा संस्कृतनिष्ठ होने के कारण 'भाव तरंग सतसई' के भाव और गहरा गए हैं। मुहावरेदार भाषा शैली के साथ तुकबन्दी व टेक प्रवृत्ति खंडित नहीं हुई है। 'भाव तरंग सतसई' में 'भाव',

'भावना', शब्द का लगभग 134 बार प्रयोग हुआ है। 'भाव' शब्द के प्रयोग से 'भाव सौंदर्य' को और बढावा मिला है। प्रकृति के नाना रूपों को लेकर लेखक ने अपने भावों को उद्दीप्त करने का सार्थक प्रयास किया है। स्थान–स्थान पर अनुप्रास, रूपक व उत्प्रेक्षा अलंकारों के साथ स्वरमैत्री व पदमैत्री अलंकारों का अनूठा संगम है। दोहा शैली को और प्रगाढ़ता के साथ प्रस्तुत किया गया है। कुछ जगहों पर तुकबंदी के कारण यह परम्परा खंडित भी हुई है। वीर रस, अद्भुत रस तथा शांत रस का भी इस काव्यकृति में सुंदर परिपाक मिलता है, जैसे –

''सत चित कर मन चिंतन, फल फूल वृक्ष रसधार।
ध्यान कर्म ईश्वर रत सेवा, आनन्द सृष्टि जगत् करतार।''[15]

निष्कर्षः

सतसई कार ने अपनी कलम के माध्यम से समाज को यथार्थ मिश्रित आदर्श का आइना दिखाकर उसमें सुधार प्रवृत्ति जगाने की कोशिश की है, जिसमें उन्हें पर्याप्त सफलता भी मिलती दिखायी देती है। यथार्थ को समझे और अनुभव किए बिना आदर्श की बातें निरर्थक मानी जाती हैं। भावों के माध्यम से 'रामराज्य' की कल्पना कथनी के साथ करनी अर्थात् अपेक्षाओं के साथ व्यवहार के धरातल पर आज के परिप्रेक्ष्य में की गई है। समरसता के भाव को मानवता का पोषक माना है। राजनीतिक के नाम पर समाज में पनपती मुफ्तखोरी संस्कृति पर कवि ने चिंता व्यक्त की है। कहने का अभिप्राय है कि 'भाव तरंग सतसई' में रचनाकार द्वारा मानव जीवन के आदर्शों को यथार्थ के साथ चित्रित कर पाठक समाज तक पहुँचाने का सफल प्रयास किया गया है।

———

संदर्भ सूची

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र, डॉ० तारकनाथ बाली, पृष्ठ संख्या– 27, 28
2. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ सं० 8 (भाव तरंग सतसई और रचना धर्म)
3. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ सं० 30, छन्द संख्या 62
4. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ सं० 110, छन्द संख्या 693
5. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ सं० 25, छन्द संख्या– 17
6. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ सं० 70, छन्द संख्या 380
7. 'भाव तरंग सतसई', डॉ० केशवदेव शर्मा, छन्द सं० 95, पृष्ठ सं० 34
8. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ सं० 86, छन्द संख्या 508
9. 'भाव तरंग सतसई', डॉ० केशवदेव शर्मा, छन्द संख्या 139, पृष्ठ संख्या 40
10. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ सं० 87, छन्द संख्या–513
11. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ सं० 111, छन्द संख्या 699
12. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ सं० 112, छन्द संख्या 704
13. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, छन्द संख्या 289, पृष्ठ संख्या 59
14. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, छन्द संख्या 367, पृष्ठ संख्या 68
15. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, छन्द संख्या 575, पृष्ठ संख्या 94

गीता रानी
एम० ए० नेट (हिन्दी)
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षिका हिन्दी
रा० क० उ० मा० विद्यालय,
तेहखंड (नई दिल्ली)
मो०नं०– 9813031397

10

सहकारिता का ग्रामिण विकास में योगदान

डॉ0 राकेश कुमार शर्मा

सारांश

विकास आर्थिक विकास के विभिन्न साधनों में सहकारिता की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। साथ मिलकर काम करने की भावना ही सहकारिता होती है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में तो सहकारिता की भावना कूट– कूट कर भरी हुई है यह बात अलग है कि इस भावना में निरंतर कमी होती जा रही है। जिसका प्रभाव सहकारिता पर पड़ रहा है। सहकारिता एक ऐसा संगठन है जिसके अंतगर्त लोग स्वेच्छा से मिलकर एवं संगठित होकर जन कल्याण के लिए कार्य करते है इसकी सदस्यता स्वैच्छिक होती है। किसी व्यक्ति को इच्छा के विरूद्ध इस संगठन का सदस्य बनने के लिए बाध्य नही किया जा सकता। सहकारिता समिति का कार्य संचालन जनतांत्रिक आधार पर होता है। इसमें सबको बराबर समझा जाता है।

सभी को समान अवसर व समान अधिकार प्राप्त होते है। सहकारी समितियां समानता की भावना पर आधारित है। पूंजी धर्म, राजनिति, जाति, सामाजिक स्तर आदि किसी भी आधार पर कोई भी भेदभाव नहीं किया जाता। आज की व्यक्ति वादी अर्थव्यवस्था में सहकारिता का महत्व अधिक बढ़ गया है। आर्थिक विकास की गति को तिव्र करने में इसका महत्व विशेश रूप से रहा है। विगत चार दशकों में सहकारिता में ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। देश के आर्थिक एव सामाजिक विकास के लिए जिन प्रमुख संस्थाओं की आवश्यकता महसूस की गई उसमें सहकारी समितियों की स्थापना का मतलब है कि ग्रामिण निर्बल व्यक्ति भी अपना विकास करने में समर्थ हो जाते है

क्योंकि इन समितियों का सदस्य बनने में धनी व निर्धन के बीच कोई भेदभाव नहीं किया जाता सभी कों समान अवसर अधिकार व उत्तरदायित्व प्राप्त होते है। सहकारी समितियों का समाज में इसलिए अधिक महत्व है ग्रामीण समुदाय में सहकारिता का लाभ विशेष रूप से मिलता है। क्योंकि देश का ग्रामीण क्षेत्र विकास की धारा में पीछे रह जाता है। अतः आर्थिक विकास कों इन क्षेत्रों में तीव्र करने का यह मुख्य साधन है। लेकिन यदि हम सहकारिता के आर्थिक आकड़ो को छोड़कर वास्तविक रूप में उसकी समीक्षा करे तो पाएंगे कि देश के कई भागों में आज भी इसका विस्तार नहीं हो पाया है। लगभग 40 से 50 प्रतिशत ग्रामीण परिवार अभी भी सहकारी समितियों के क्षेत्र से बाहर है।

सहकारिता का विचार हमारे देश में आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व अपनाया गया तथा महसूस किया गया था कि इसके द्वारा अनेक ग्रामीण तथा शहरी समस्याओ को हल किया जा सकेगा देश को स्वतंत्र हुए 76 वर्ष हो चुके है। परन्तु सहकारिता के संबंध में हमारी उपलब्धियां केवल आलोचनाओं एवं बुराइयों तक ही सीमित रह गयी है। जबकि लक्ष्य इसके विपरीत था सन् 1904 में सर्वप्रथम यह विचार अपनाया गया। उस समय देश परतंत्र था। अतः विदेशी शासको ने अपने हितो को ध्यान में रखकर इसे ज्यादा पनपने नहीं दिया। सर्वप्रथम तो यह तय करना होगा कि सहकारिता को वास्तविक रूप में हम ग्रामीण जिवन में उतारना चाहत है या घोशणा पत्रों तथा सरकारी एवं सहकारी दिखावें के रूप में इसे कार्यालयो तक ही सीमित रखना चाहते है। वास्तव में सहकारिता कोई सैद्वांतिक बात नहीं है बल्कि इसका गहरा संबंध तो सामान्य व्यक्ति कि भावना से है। जहां निश्चित रूप से यह अपने उददेष्यों में सफल हो सकती है।

आज भारत कि आर्थिक व्यवस्था कृषि एवं ग्रामीण विकास पर आधारित है भारत कि लगभग 70 प्रतिशत आबादि भारत के लगभग 10 लाख ग्रामों में रहती है। जो कृषि पर आधारित उद्योग पर आश्रित है शेष 30 प्रतिशत जो शहरो में निवास करते है। भारत भौगौलिक क्षेत्रफल में लगभग 10 प्रतिशत भूमि का उपयोग किया जाता है। वन 6.47 करोड़ हेक्टेयर में फैले है। तथा बोई गई भूमि का क्षेत्रफल 13. 94 करोड़ हेक्टेयर है आज भी सम्पूर्ण देश में 7.05 करोड़ कृषि जोते है। खाद्यान फसलो का उत्पादन 80 प्रतिशत तथा अन्य फसले 21 प्रतिशत उत्पादित कि जाती है। राश्ट्रीय आय में कृषि उत्पादन से होने वाला आय लगभग 47 प्रतिशत है। देश कि 70 प्रतिशत जनसंख्या का विकास करने के लिए ग्रामीण क्षेत्र को विकसित करना अनिवार्य ही नहीं वरणा एकमात्र श्रेश्ठतम विकल्प है राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने राजनीतिक आंदोलन के साथ ही ग्रामीण विकास का नारा दिया था "भारत ग्रामों में निवास करता है" ग्राम उनके विकास कार्यक्रम का आधार है। भारत के प्रत्येक व्यक्ति को खाना, कपड़ा, रोजगार उपलब्ध कराना गाँधी का एक मात्र लक्ष्य था गाँधी के विचारानुसार आदर्श ग्राम पूर्णतया स्वावलम्बी होना चाहिए घरो में प्रयाप्त प्रकाश एवं हवा की व्यवस्था होनी चाहिए वे सभी स्थानीय साधन सामाग्री से सम्पन्न होने चाहिए सार्वजनिक चरागाह, दुग्धशाला, शिक्षा संस्थाएँ जिनमें ओद्योगिक शिक्षा उपलब्ध हो तथा अपनी पंचायत प्रत्येक ग्राम में होनी चाहिए रक्षा के लिए ग्राम रक्षक की होनी चाहिए ।

विगत समय में ग्रामीण विकास तथा भारत के ग्रामों के आधुनिकरण का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए विविध कार्यक्रम हाथ में लिए गए नये परिवर्तन किए गए तथा प्रयोगात्मक मार्गदर्शक परियोजना कार्यान्वित की गई जिसमें प्रमुख इस प्रकार है सघन कृषि जिला विकास कार्यक्रम (1960–61) बड़ौदा का ग्रामीण पुननिर्माण कार्य (1932) सामुदायिक विकास कार्यक्रम (1942) मार्तण्ड परियोजना (1921) मद्रास की फीको विकास योजना (1946) सूखा प्रणव क्षेत्र कार्यक्रम, कमान क्षेत्र विकास कार्यक्रम ग्रीन रिवोलियोशण आदि।

राष्ट्रीय सहकारी नीति संकल्प एवं ग्रामीण विकास कार्यक्रम राज्यो के सहकारिता मंत्रियों ने 1947 में हुए सम्मेलन में राश्ट्रीय

डॉ0 राकेश कुमार शर्मा
सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र)
राजकीय महाविद्यालय बानसूर
अलवर (राजस्थान)
पिन –301402
Mob.- 9468866200

आयोजन तथा विकास में सहकारी आन्दोलन की भूमिका और सहकारी आन्दोलन के लोकतंत्री स्वरुप तथा सहकारी संस्थाओ की व्यापार कुशलता को बढ़ावा देने व बनाए रखने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण निम्न संकल्प लिए सहकारी कृषि संसाधनो और औधौगिक इकाइयो का जाल बिछाया जायेगा जिससे उत्पादको तथा उपभोक्ताओं के बीच लगभग आर्थिक सम्बन्ध स्थापित किया जा सके।

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम संकल्पना ग्रामीण विकास को अब राष्ट्रीय उन्नति और सामाजिक कल्याण के लिए एक अनिवार्य शर्त अनुभव किया जाने लगा है। समस्या केवल ग्रामीण क्षेत्र के विकास की ही नहीं बल्कि ग्रामीण समुदायो जिनमें हमारा राश्ट्र समाविश्ट है प्रत्येक ग्रामीण परिवार को समग्र राष्ट्रीय उत्पादन एवं वर्तमान प्रति व्यक्ति आय में न्यायपूर्ण अंश प्राप्त होना चाहिए

निष्कर्ष:

उपसंहार वतर्मान समय में देश के ग्रामीण क्षेत्रो के विकास के लिए सहकारी बैक, भूमि विकास बैंक, औद्यौगिक सहकारी संस्थाएँ, सहकारी कृषि समितियाँ, सहकारी विपणव समितियाँ, सहकारी उपभोक्ता समितियाँ, ग्रामीण विधुत सहकारिताएं आदि अनेको संख्याएँ कार्य कर रही है। परन्तु इनके बारे में अधिक जानकारी नहीं हैं। इन संस्थाओं से उसके द्वारा कार्य करना उसके वश कि बात नहीं है। वास्तव में इन संस्थाओं का अधिकाधिक लाभ ग्रामीण क्षेत्रों के कुछ सम्पन्न वर्ग से सम्बन्धित व्यक्तियों को मिला है। इस कारण सामान्य ग्रामीण व्यक्ति को इन संस्थाओं के कार्य में रुचि नहीं है। इसी तरह कि स्थिति शहरी क्षेत्रों के उपभोक्ता व सहकारिता सप्ताह मनाकर ग्रामीण क्षेत्रों की समस्याओं को हल कर सकते है। आज आवश्यकता इस बात कि है कि सच्चे दिल से जन –कल्याण एवं राष्ट्र कल्याण कि भावना को ध्यान में रखकर इस बात पर विचार किया जाए कि देश में इतनी बढी मशीनरी एवं करोड़ों रुपये के प्रावधान के बावजूद भी सहकारिता का कार्यक्रम सामान्य ग्रामीण व्यक्ति के लिए लाभाप्रद क्यों नहीं हो सका?युवा पीढ़ी क्यों सहकारिता के नाम से आक्रोश में आ जाती है। इसका संक्षप में यही उत्तर है कि सहकारिता विभाग ने अपनी मूल भावना को ध्यान में रखकर कार्य नहीं किया।

संदर्भ

1 कृषि अर्थशास्त्र = पृ. 33
2 ग्रामीण अर्थशास्त्र = पृ. 45
3 औधोगिक अर्थशास्त्र = पृ. 72
4 अर्थशास्त्र की भूमिका = पृ. 25
5 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र = पृ. 115
6 कोटिलीय अर्थशास्त्र =पृ. 121
7 गाँधी जनजाति एवं ग्रामीण विकास = पृ. 148
8 ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज. = पृ. 11

11

अमरेन्द्र कुमार सिंह की कहानियों में बदलता सांस्कृतिक परिवेश

डॉ० अनिशा

सारांश :

भारत को अक्सर सांस्कृतिक बहुलता और विविधता की भूमि के रूप में जाना जाता है, जहाँ दो विपरीत विश्वदृष्टियाँ पारंपरिक और निरंतर, औपचारिक और आधिकाधिक फलती–फूलती हैं। ये विचार आज असुविधाजनक रूप से सह–अस्तित्व में हैं, समकालीन अधिकारों से टकराते हैं और हमारे सांस्कृतिक संसाधनों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहे हैं। भारतीय सांस्कृतिक परिदृश्य को 'बौद्धिक परिदृश्य' कहा जा सकता है, जो धार्मिक, सांस्कृतिक और भौतिक अर्थों का एक संग्रह है। किसी भी देश, समाज, राष्ट्र को संस्कृति ही गरिमापूर्ण बनाती है। भारतीय संस्कृति इस विश्व की सारी संस्कृतियों में विशिष्ट स्थान रखती है। संस्कृति स्थिर नहीं होती है बल्कि मनुष्यों की भौगोलिक व सामाजिक आवश्यकता के अनुसार बदलती रहती है। आधुनिकता, भूमंडलीकरण, विकास की तमाम अवधारणाओं ने हमारे समाज एवं देश में उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया है।

संकेत शब्द : बौद्धिक परिदृष्य, सांस्कृतिक परिदृश्य, भूमंडलीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति।

हिंदी साहित्य में अमरेन्द्र कुमार एक ऐसे कथाकार हैं जिन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज की पूरी तस्वीर खींच ली है। पूँजीवादी व्यवस्था ने जिस तरह से पाश्चात्य संस्कृति और उपभोक्तावादी संस्कृति को हमारे समाज में फैलाया है, उससे न सिर्फ व्यक्ति प्रभावित हुआ है बल्कि व्यक्ति के साथ भारतीय परिवार, समाज, सभ्यता एवं संस्कृति पूरी तरह से प्रभावित हुई है। अमरेन्द्र कुमार की 'बचपन' नामक कहानी में भारतीय संस्कृति के प्रति अटूट आस्था दिखाई गई है–''अर्पिता बचपन गाँव में ही बिताए, वहीं ठीक है। उसे अपने दादा–दादी से जो संस्कार मिल सकते थे, वे दुनिया के किसी भी शहर में नहीं मिल सकते थे। शहर की स्वार्थ भरी संस्कृति अर्पिता के संस्कार बिगाड़ सकती थी। अर्पिता का लालन–पालन भी शहर से अच्छा गाँव में हो सकता था। गाँव में शुद्ध खाना–पीना मिल सकता था जबकि शहर में हर चीज मिलावटी ही मिलती है।''[1] अतः कहानीकार ने शहर और गाँव की संस्कृति को स्पष्ट करते हुए कहा है कि–''गाँव में अगर किसी के घर में कोई विपत्ति आए या कोई बीमार पड़ जाए तो गाँव के दूसरे छोर के लोग भी विपत्ति में शामिल होने या बीमार व्यक्ति को देखने, मिलने आ जाते हैं। शहर में किसी के घर विपत्ति आए तो लोग कन्नी काट लेते हैं।''[2]

वर्तमान युग का यथार्थ दिखाते हुए कहानीकार स्पष्ट करते हैं कि पिछले बीस–तीस सालों में परिवार, समाज आदि कई नामों से जानी जाने वाली संस्थाएँ बेहद प्रभावित हुई है। तार–तार हो गई हैं। एक भ्रम का आवरण इन संस्थानों पर लोगों ने चढ़ा रखा था, ठीक उसी तरह जिस प्रकार घोड़े के आगे सूखी घास डालकर उसे हरी घास का एहसास कराने के लिए उसे हरे रंग का चश्मा पहना दिया जाता है। कोरोना वायरस अन्य प्रभाव डालने के साथ ही भ्रम के इस आवरण को भी चट कर गया जिसे लोगों ने घोड़े के हरे चश्मे की तरह अपनी आँखों पर लगा रखा था। भ्रम का आवरण उतरने के बाद एक साहित्यकार ने फेसबुक पर लिखा–

''हम जिन्दगी भर परिवार व समाज के विभिन्न लोगों से रिश्ता बनाकर रखते हैं कि अंत में चार लोगों का कंधा तो मिलेगा। आज चार लोगों का कंधा भी मरने वाले को नहीं मिल रहा है। फिर जिन्दगी भर के रिश्तों में क्या मायने हैं?''[3]

अतः लेखक कहते हैं कि कोरोना काल में जितने भी बदबूदार रिश्ते सामने आए, वे सड़ तो काफी पहले चुके थे, कोरोना ने आकर उन पर पड़े आवरण को हटा दिया। कोरोना के कारण मृत्यु से हजारों मामले ऐसे सामने आए, जिनमें मृतकों के परिजनों ने मृतकों के मृत–शरीर को लेने से भी मना कर दिया। उनके दिल में मृतक के अंतिम दर्शन करने की इच्छा भी नहीं हुई। आधुनिक युग में संस्कार एवं रीति–रिवाजों का पतन होता जा रहा है जो हमारी संस्कृति पर बहुत बुरा असर डालता है।

प्राचीन संस्कृति को स्पष्ट करते हुए कहानीकार कहते हैं कि हमारी संस्कृति पर हम गर्व करते हैं लेकिन जब लोगों की सोच बदलती है तो इसका प्रभाव संस्कृति पर भी पड़ता है। आजकल रिक्शा से लेकर हवाई जहाज तक सब कुछ उपलब्ध है। हम कुछ ही समय में पूरे विश्व में कहीं भी जा सकते हैं। हमें समय के साथ–साथ अपनी संस्कृति में भी परिवर्तन अवश्य कर लेना चाहिए। हमें अपनी प्राचीन संस्कृति को कभी भी भूलना नहीं चाहिए। हाँ प्राचीन संस्कृति के साथ–साथ नई संस्कृति को भी अपना लेना चाहिए जिससे हमारे समय की बचत हो सके। प्राचीन संस्कृति में कुछ बुराइयाँ भी थी जिनको परम्परा मानकर जबरदस्ती नारियों पर थोपा जाता था। वर्तमान युग में नारी शिक्षित हुई तो समाज में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त करने लगी। नारी अब हर क्षेत्र में पुरुष से कंधा मिलाकर काम करती है। हमारी प्राचीन संस्कृति में जो नकारात्मक विचार थे उनको समाप्त कर नयी विचारधारा के साथ संस्कृति को अपनाए रखना हमारा कर्त्तव्य है। हमारा समाज संस्कारित, स्वस्थ मानसिकता वाला होगा तो एक सुदृढ़ देश का निर्माण करेगा।

'टूटा चश्मा' नामक कहानी के माध्यम से वर्तमान युग को दिखावे की दुनिया कहा है, जैसे–''किसी ज्ञानी के पैर में हवाई चप्पल हो, तो उस हवाई चप्पल के कारण वह ज्ञानी दो कौड़ी का हो जाता है और किसी भ्रष्ट कर्मचारी के पैर में दस हजार के जूते हो, तो उसका भाव बढ़ा रहता है। उसके आगे–पीछे घूमते रहते हैं।''[4]

कहानीकार दिखावे को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि इंसान

विदेशी सामान के प्रति आकर्षित होता जा रहा है। ''नए–नए आकर्षक वस्तुओं की सुनिश्चित प्राप्ति के लिए सुरेन्द्र वाजपेयी ने तस्करों से सीधा संपर्क कर लिया था। वे स्वयं भी विदेशी वस्तुओं को खरीदते और मित्रों को भी खरीददारी के लिए प्रेरित करते हैं।''[5]

सुरेन्द्र वाजपेयी जैसे भ्रष्ट इंसान अपनी संस्कृति की परवाह किए बिना विदेशी संस्कृति, सभ्यता को अपनाते जा रहे हैं जिससे देश पतन की तरफ जा रहा है। वर्तमान समय में हमारी सभ्यता अतीत से थोड़ी अलग दिखती है। पिछले कुछ दशकों में आधुनिक विज्ञान ने तेजी से प्रगति की है और उसका प्रभाव हमारे रहन–सहन पर भी पड़ा है। ''आज के विकासशील दौर में शारीरिक संरचना को छिपाना तो पूरी तरह से गलत है। आज हम शारीरिक संरचना को दिखाकर गौरवान्वित होते हैं क्योंकि हम विकास कर रहे हैं।''[6]

आधुनिक युग में इंसान इतना व्यस्त हो गया है कि विकास के साधन होने के बावजूद भी वह दुःखी दिखाई देता है। इंसान खर्चों एवं बिलों को चुकाता थक चुका है कहीं इंटरनेट, फ्रिज रिपेयरिंग, टी.वी. का बिल, कहीं कम्पयूटर का बिल आदि सुबह से शाम तक छुटकारा ही नहीं मिल पाता। पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण, पोर्नसाइट के मकड़जाल, वेबसीरीज में अश्लील दृश्यों व गंदी गालियों की भरमार ने युवा वर्ग को इस प्रकार अपने जाल में फँसाया है कि वह चाहकर भी इनसे बाहर नहीं निकल पा रहा है। अपसंस्कृति भारत की देशीय संस्कृति के अस्तित्व को खतरे में डालते हुए जीवन को खोखला बना रही है। देश आधुनिकीकरण के ऐसे कुचक्र में फँस गया है कि उसका परिणाम सांस्कृतिक प्रदूषण के रूप में दृष्टिगत हुआ। पाश्चात्य संस्कृति थोपने की साजिश सांस्कृतिक वर्चस्ववाद को जन्म दे रही है। इसमें भारतीय संस्कृति के आर्थिक और सांस्कृतिक पक्ष को कुचला जा रहा है। आधुनिकीकरण के कारण समाज में संस्कारों के साथ–साथ रिश्ते भी खत्म होते जा रहे हैं। सब अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं। कहानीकार 'ये उनके अधिकार हैं' नामक कहानी के माध्यम से दिखाना चाहते हैं कि युवा वर्ग आधुनिकीकरण के कारण अपने माता–पिता के संस्कारों को कैसे ठेस पहुँचाते हैं, जैसे–''इस घर में या तो मैं रहूँगी या तुम्हारे माता–पिता।''[7]

अतः उपभोक्तावादी संस्कृति से हमारी सांस्कृतिक अस्मिता का ह्रास हो रहा है। इसके कारण हमारी सामाजिक नींव खतरे में है। मनुष्य की इच्छाएँ बढ़ती जा रही हैं, मनुष्य आत्मकेंद्रित होता जा रहा है। हम पश्चिमी सभ्यता का अंधानुकरण कर झूठी आधुनिकता में मदहोश है। दिग्भ्रमित होकर अपना उद्देश्य भूल गए हैं। सामाजिक संबंध बिगड़ रहे हैं। आपस में दूरियाँ बढ़ रही हैं। आक्रोश एवं अशान्ति बढ़ रही है। हमारी सांस्कृतिक पहचान नष्ट हो रही है। मनुष्य महत्वकांक्षी एवं उसका जीवन व्यक्ति केन्द्रित हो गया है। 'चार चिट्ठियाँ' नामक कहानी में आधुनिक नारी की उपभोक्तावादी सोच को दिखाया है जैसे–''रचना भौतिकवादी सोच के कारण स्वार्थी हो गई है। उसे गाँव से लाया हुआ सामान पुराना और बेकार लगता है। वह नई कार खरीदना चाहती है जिससे समाज में उसकी प्रतिष्ठा बढ़े।''[8]

अतः हम झूठी प्रतिष्ठा बनाने के लिए अपनों को धोखा दे रहे हैं। विज्ञापन और प्रसार का सम्मोहन हमारी मानसिकता को बदल रहा है। ''मोबाइल कंपनियों ने यह अच्छा काम किया है कि मोबाइल में कैमरा लगा दिया। सेल्फी और वीडिया को सोशल नेटवर्किंग साइट पर डालने के लिए कई कम्पनियाँ इंटरनेट पर भारी–भरकम डाटा मुफ्त में दे रही हैं।''9 अब यह चिंता का विषय बनता जा रहा है कि इस संस्कृति के फैलाव के क्या परिणाम निकलेंगे। उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण हम धीरे–धीरे उपभोगों के दास बनते जा रहे हैं। हम लोग अनावश्यक रूप से अपनी जरूरतों को बढ़ाते जा रहे हैं। कई लोग तो केवल दिखावे के लिए महंगी गाड़ी, घड़ियाँ, कैमरा, कम्प्यूटर आदि खरीद रहे हैं।

सुरेन्द्र वाजपेयी की आधुनिक सोच की बेटी पिंकी रामकाकी के सस्ते पहनावे और बैठने का देहाती ढंग देखकर उसने बुरा–सा मुँह बनाया, पर कुछ बोल न सकी। ''यह गँवारू औरत रोज–रोज क्यों आ जाती है? बड़ी बुजुर्ग बनती है। यहाँ आकर अपना गँवारूपन हमारे घर में भी फैलाती है। पता नहीं, मम्मी–डैडी इसे क्यों नहीं मना करते हैं, आने से।''[10] इस उदाहरण के द्वारा अमरेन्द्र जी ने चिंता व्यक्त की है कि हमारे देश में उपभोक्तावादी बड़ों के प्रति आदर–सम्मान, संस्कार की कोई वेल्यू नहीं रह गई है। वर्तमान समाज में बच्चे बड़ों की इज्जत करने की बजाए बड़ों का अपमान करते हैं।

शिष्टाचार व नैतिकता हमारे जीवन में बहुत अहम चीजें हैं। किसी भी विषय को ले लें, हम अपनी युवा पीढ़ी पर पूरा दोष डालकर अपना पल्ला झाड़ लेते हैं। सवाल यह नहीं है कि आज की युवा पीढ़ी में नैतिकता व शिष्टाचार की कमी हो रही है। सवाल यह भी है कि क्या सिर्फ युवा पीढ़ी पर दोषारोपण से हमारी जिम्मेदारी समाप्त हो जाती है। क्या हम युवा पीढ़ी के लिए अपना कर्त्तव्य निष्ठा से निभा रहे हैं?कहानीकार कहते हैं कि आज की युवा पीढ़ी में अगर संस्कारों की कमी हो रही है तो उसकी वजह सिर्फ और सिर्फ हम ही हैं। क्यों हम उनमें संस्कार, नैतिकता, शिष्टाचार आदि गुणों का समावेश नहीं कर पा रहे हैं। यह एक सोचने का विषय है। बच्चों का अनैतिक होना हमारी कमजोरी है। प्राचीन समय में दादा–दादियों द्वारा हमें अच्छी–अच्छी कहानियाँ सुनाई जाती थी। कहते हैं कि छोटे बच्चे का दिमाग बिल्कुल शुन्य होता है। अतः आप बच्चों को जिस प्रकार के संस्कार व शिक्षा देंगे उसी राह पर वह आगे बढ़ते हैं। छोटी अवस्था में बच्चों को संस्कारित करने में माता–पिता, दादा–दादी व बुजुर्गों का बड़ा योगदान होता था। कहानियाँ भी प्रेरणादायी होती थी।

अनुभव, आदर्श आदि प्रतिमानों के आधार पर सामाजिक स्थितियों को वस्तुनिष्ठ सिद्धान्त प्रदान करना तथा इनसे जुड़े नैतिक मूल्यों को आधार मानकर अच्छे–बुरे का मूल्य निर्णय लेना, मनुष्य के जीवन का अस्तित्व है। इसी से आत्मनिर्भर और सर्वोच्च

नैतिक व्यक्तित्व का विकास संभव है। किन्तु आधुनिकीकरण में इसे अव्यावहारिक और अप्रासंगिक विकास कहा जाने लगा है।

कहानीकार 'मकान' कहानी के माध्यम से बताना चाहते हैं कि बेटा अपने पिता के अंतिम संस्कार से ज्यादा जरूरी अपने बॉस और पैसे को मानते हैं जैसे–''चाचा जी, आप भी कैसी दकियानूसी बातें करते हैं। पापा जी के क्रिया–कर्म के लिए मैं अपने बॉस को नाराज़ करके आऊँ, यह क्या जरूरी है?''[11]

वर्तमान समाज में सभी रिश्ते–नाते पैसे पर आधारित हैं। पैसा है तो रिश्ता है वरना नहीं। वर्तमान समाज में इंसान दिखावा और पैसों के लिए ही अपने संबंध कायम रखता है–''आप मेरी फीस नहीं भर सकते हैं, तो आप मेरे बाप कैसे?''[12] अतः नैतिकता की इस चकाचौंध में निजी स्वार्थों की पूर्ति हेतु लोगों में अशांति, निराशा, मोह, ईर्ष्या आदि बातों का जन्म हुआ है।

अपसंस्कृति और भूमण्डलीकरण के फलस्वरूप सांस्कृतिक मूल्यों का क्षरण देखकर साहित्यकार आतंकित हो उठते हैं जिसके विरोध में कहानियों में अपनी आवाज बुलंद करके सांस्कृतिक मूल्यों के प्रतिरोध में मानवीय संबंधों को प्रश्रय देते हैं तथा पारिवारिक संबंधों की अहमियत को पुरानी पीढ़ी की आँखों से परखने का प्रयास भी करते हैं जिनमें अमरेन्द्र कुमार सिंह का योगदान अप्रतिम बन पड़ा है। जिन्होंने पुरानी पीढ़ी व नई पीढ़ी के अन्तर समाज की अराजकता, मानवीय रिश्तों और मानवीयता की भावना पर कुठाराघात, मानव की अस्मिता और स्वल्प को छीनना, अपसंस्कृति का फैलाव राजनीतिज्ञों के देश–प्रेम पर व्यंग्य करके सांस्कृतिक मूल्यों पर मंडराते खतरे से पाठकों को सजग करने का प्रयास किया है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :

1. अमरेन्द्र कुमार सिंह, 'बचपन' (कहानी), पृ. 69
2. वही, पृ. 70
3. अमरेन्द्र कुमार सिंह, जे.एस.के. ''शिष्ट विनोद'' (हास्य व्यंग्य) पत्रिका, पृ. 2
4. वही, 'टूटा चश्मा' (कहानी), पृ. 42
5. वही, पृ. 43
6. वही, 'लॉटरी लग गई' (कहानी), पृ. 85
7. वही 'ये उनके अधिकार हैं' (कहानी), पृ. 29
8. वही, 'चार चिट्ठियाँ' (कहानी), पृ. 8
9. वही, 'वीडियो बनाइए' (कहानी), पृ. 63
10. वही, 'चश्मा' (कहानी), पृ. 85
11. वही, 'मकान' (कहानी), पृ. 91
12. वही, 'ये उनके अधिकार हैं' (कहानी), पृ. 27

डॉ० अनिशा

सहायक प्रोफेसर

(हिन्दी) एम०डी०यू०–सी०पी०ए०एस०, गुरूग्राम

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,

रोहतक।

12

भारत में मानवाधिकारः चुनौतियाँ एंव सुझाव

डॉ0 ममता रानी

सारांश :

मानव अधिकार व्यक्ति को जन्म से प्राप्त होते है इसकी प्राप्ति में जाति, धर्म, लिंग, भाषा, रंग इत्यादि बाधा नहीं है। अधिकारों के बिना मानव जीवन के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है। मानव अधिकार मानव जीवन की ऐसी परिस्थितियां है, जिनके फलस्वरूप मानव अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास कर सकता है। क्योंकि मानव अधिकारों के माध्यम से मानव का सामाजिक, राजनीतिक, नैतिक, शैक्षिक, आर्थिक, सांस्कृतिक अर्थात् सर्वांगीण विकास संभव होता है। भारतीय संविधान निर्माताओं ने मानवाधिकारों को ध्यान में रखकर संविधान के भाग–3 में मौलिक अधिकारों को शामिल किया है। भारत ने संविधान के माध्यम से मानवाधिकारों के महत्व पर भरपूर जोर दिया है। लेकिन विश्व स्तर पर मानवधिकारों पर विशेष ध्यान 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानवाधिकारों से संबधित सार्वभौमिक घोषणा–पत्र के पश्चात् दिया जाने लगा। तब से 10 दिसम्बर को अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दिवस के रूप में मनाया जाता है।

भारत में मानवता के विरूद्व होने वाले अत्याचार को रोकने के लिए 12 अक्तूबर 1993 को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया है। इसके बावजूद भी भारत में वर्तमान में मानवाधिकारों की स्थिति जटिल रूप ले रही है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से भारत में मानवाधिकारों से संबंधित चुनौतियों एवं सुझावों का वर्णन किया गया है। क्योंकि भारत में पुलिस यातना, गरीब, पिछडे वर्ग के अमानवीय तरीके से कानूनी कार्यवाही, महिलाओं की शारीरिक प्रताड़ना, घेरलू हिंसा, भ्रुण हत्या जैसे उदाहरण देखने को मिलते है। जो मानवाधिकार को शर्मशार कर रहे है। अतः भारत में मानवधिकारों से संबंधित चुनौतियों का अध्ययन करना आज की परिस्थितियों के संदर्भ में जरूरी बन जाता है।

मुख्य शब्द :– मानवाधिकार, भारत, संविधान, मानव, विश्लेषण, चुनौतियां, सुझावों

भूमिका :–

मानवता मानव जीवन का धर्म है। प्रत्येक मानव के साथ मानवता का व्यवहार करना चाहिए। चाहे वह मानव किसी भी जाति, लिंग, धर्म, सम्प्रदाय या वर्ग से संबंधित हो, सभी को सम्मानपूर्वक जीवित रहने का नैतिक अधिकार है। मानवाधिकार का अभिप्राय उन सभी अधिकारों से है जो मानव होने के नाते व्यक्ति के विकास के लिए आवश्यक और अनिवार्य है। वस्तुतः यही मानव अधिकार है। वास्तव में प्रत्येक मानव को चतुर्मुखी विकास के लिए जिन महत्वपूर्ण परिस्थितियों की आवश्यकता होती है उसी की पूर्णता को हम मानवाधिकार कहते है।

मानव अधिकार मनुष्य के जन्म से प्रारम्भ हो जाते है, और उसके जीवन के साथ–साथ चलते रहते है, जिनके बिना न तो व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है और न ही समाज के लिए उपयोगी कार्य कर सकता है। मानवाधिकार का अभिप्राय उन सभी अधिकारों से है जो मानव होने के नाते व्यक्ति के विकास के लिए आवश्यक और अनिवार्य है। अधिकारों के बिना मानव जीवन के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है। राज्य का सर्वोतम उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना है, जिनके लिए राज्य के द्वारा व्यक्ति को प्रदान की जाने वाली इन बाहरी सुविधाओं का नाम ही अधिकार है।

आज विश्व का कोई भी राज्य ऐसा नहीं होगा जिसने किसी न किसी रुप में इन अधिकारों को मान्यता न दी हो अर्थात् विश्व के सम्पूर्ण राज्यों ने इन अधिकारों को मान्यता प्रदान की है। संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अन्तर्गत भी मानव अधिकारों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। जिसके अन्तर्गत 10 दिसम्बर 1948 में मानवाधिकारो की सार्वभौमिक घोषणा की गई।

शोध पत्र के उद्देश्य :

1. इस शोध पत्र का उद्देश्य मानवाधिकारो का अर्थ एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना ।
2. भारत के संदर्भ में मानवाधिकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।
3. भारत के संदर्भ में मानवाधिकारों से संबंधित चुनौतियों एवं सुझावों का वर्णन करना।

शोध साहित्य की समीक्षा :

प्रस्तुत शोध पत्र के लिए मानवाधिकारो के संदर्भ में विभिन्न पुस्तकों, शोध–पत्रों की समीक्षा की गई है। जो इस प्रकार हैः–

चतुवैदी, ललित (2011) ने "मानवधिकार एवं कर्तव्य" पुस्तक में संयुक्त राष्ट्र संघ के 10 दिसम्बर 1948 को मानवाधिकारों की घोषणा से संबंधित एवं अधिकारों का विस्तृत वर्णन किया है। जिससे प्रत्येक अनुच्छेदों का मानवाधिकारों के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।

मल्होत्रा, ममता (2015) में "महिला अधिकार एवं मानव अधिकार" पुस्तक में महिला अधिकारों का वर्णन करते हुए संवैधानिक प्रावधानों का वर्णन किया है। इसके साथ–2 महिला अधिकार एवं मानव अधिकार से संबंधित भारतीय संविधान एवं सरकार द्वारा किए गए संरक्षणो का वर्णन किया है।

सिंह, बृजेन्द्र (2017) ने "भारत में मानवाधिकार की प्रासंगिकता वर्तमान परिप्रेक्ष्य में" शोध पत्र में मानवाधिकारों का अर्थ ,मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, भारत में मानवाधिकारों से संबंधित प्रावधानों एवं वर्तमान में मानवाधिकारों की प्रासंगिकता का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।

मानवाधिकारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :–

•मानवाधिकारों की उत्पति विकास एवं प्रगति में महत्वपूर्ण मील के

पत्थर शामिल है जो इस प्रकार है–:

- मैग्ना कार्टा 1215–

सम्राट जॉन को 15 जून 1215 को शक्तिशाली सामन्तों ने एक चार्टर को स्वीकृति प्रदान करने के लिए विवश कर दिया जिसे ब्रिटिश इतिहास मे मैग्ना कार्टा कहा जाता है। इस चार्टर में यह व्यवस्था थी कि कुछ विषयों के संदर्भ में सम्राट महापरिषद् की सहमति के बिना कुछ नही कर सकता था परन्तु फिर भी इस ऐतिहासिक प्रलेख को ब्रिटिश लोगों की नागरिक स्वतन्त्रता का चार्टर माना जाता है।

- अधिकारों का विधेयक 1689–

मानवाधिकारों की उत्पत्ति के इतिहास में अगला स्त्रोत ब्रिटिश संसद द्वारा पारित 1689 में अधिकारों का विधेयक है। इस ऐतिहासिक विधेयक में संसद की श्रेष्ठता निश्चित रूप में घोषित की गई थी। इसके साथ–2 सम्राट का संसदीय सहमति के बिना किसी भी प्रकार का कर लगाने का निषेध किया गया था। इसके माध्यम से नागरिकों की स्वतंत्रता संबंधित अधिकार को स्पष्ट किया गया।

- बिल ऑफ राइटस 1791–

अमेरिकी मूल संविधान में कुछ परिवर्तन करते हुए एक नए संविधान का निर्माण किया गया था जिसे 4 मार्च 1789 को लागू किया गया था। जिसमें अधिकारों का वर्णन नहीं किया गया था। इसलिए जेम्स मैडिसन ने बारह सामूहिक संशोधन जिसे बिल ऑफ राइटस कहा गया, कांग्रेस में अनुमोदित किए। जिसमें से पहले दस संशोधनो को 17 दिसम्बर 1791 में पारित किया गया था। जिसे बिल ऑफ राइटस का नाम दिया गया।

- नागरिक अधिकारों की फ्रांसीसी घोषणा 1789–

मानवाधिकारों के विकास में एक ओर कड़ी के तौर पर नागरिक अधिकारों की फ्रांसीसी घोषणा 1789 शामिल है। इस घोषणा ने तानाशाही, गुलामी का समूल अन्त कर मनुष्यों को संवैधानिक लेख के माध्यम से 17 अनुच्छेदो में नागरिकों के अधिकारों का प्रावधान किया। फ्रांसीसी घोषणा से न केवल फ्रांस में एक नए युग का प्रारम्भ हुआ बल्कि विश्व स्तर पर अन्य देशों को भी प्रेरणा मिली, अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष करने की ।

- मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा 1948–

संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने मानवाधिकारों के विकास एवं संरक्षण स्वरूप 10 दिसम्बर 1948 को विश्वव्यापी घोषणा की। अतः प्रत्येक 10 दिसम्बर को मानवाधिकार दिवस मनाया जाता है। मानवाधिकारों को पांच वर्गो में बॉटा जा सकता है :

1.नागरिक अधिकार 2. राजनीतिक अधिकार 3. आर्थिक अधिकार 4.सामाजिक अधिकार 5. सांस्कृतिक अधिकार

भारत में मानवाधिकार : चुनौतियॉ एंव सुझाव

भारत में मानवाधिकारों की संस्कृति बहुत पुरानी है। वैदिक कालीन समय से लेकर वर्तमान समय तक भारत एक ऐसा देश रहा है जिसने मानवाधिकार के महत्व को स्वीकार किया है। भारतीय संविधान में भी मौलिक अधिकारों को अनुच्छेद 12 से 35 तक में शामिल किया गया है। जिसमें समानता का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, शोषण के विरूद्वअधिकार, धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार, संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार तथा संवैधानिक उपचारों का अधिकार इत्यादि शामिल है। राज्य के नीति निर्देशक सिद्वान्तों के माध्यम से भी मानवाधिकारों पर बल दिया है। जिसके लिए अनुच्छेद 36 से 51 तक में इन अधिकारों का वर्णन दिया गया है। इसमें सामाजिक सुरक्षा का अधिकार, काम का अधिकार, रोजगार चयन का अधिकार, समान काम तथा समान वेतन का अधिकार, मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार एवं मुफ्त कानूनी सलाह का अधिकार आदि शामिल है।

भारत में मानवाधिकारों की सुरक्षा हेतू 1993 में मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम के तहत 'राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग' का गठन और 'राज्य मानवाधिकार आयोगों' के गठन की व्यवस्था करके मानवधिकारों के उल्लंघनो से निपटने का एक मंच प्रदान किया गया है। भारत में भले ही मानवाधिकारों की सुरक्षा के लिए संवैधानिक और संविधिक प्रावधान किए हुए हो। परन्तु इन सभी प्रावधानों के बावजूद भी आज भारत में मानवाधिकारों से संबंधित अनेक समस्याएं देखने को मिलती है जो कहीं न कहीं मानवाधिकारों की प्रासांगिकता पर भी प्रश्न चिन्हन लगाती है। भारत में मानवाधिकारों को झकझोर देने वाली अनेक घटनाएं आए दिन होती रहती है जिसमें से कुछ का वर्णन इस प्रकार है–:

- कश्मीरी पण्डितों का बड़ी ही बर्बरता से हत्याएं किए जाना घाटी की एक आम बात हो गई है। जिसकी वजह से भारी संख्या में घाटी से पंडितो का पलायन हुआ। इससे बतौर नागरिक उनके अधिकारों का उल्लंघन किया गया।
- बाल मजदूरी एक ऐसा अभिशाप है जो हजारों बच्चो के भविष्य को खराब कर रहा है। मानवाधिकार आयोग के आंकड़ो के मुताबिक 5 में से दो बच्चे अपनी 8वी. तक की पढ़ाई भी पूरी नहीं कर पाते है।
- कई विवादास्पद घटनाएं जैसे 1984 में हुए सिख दंगे, शाहबानो मामले के बाद मौलानाओ में भडकी विरोध की चिंगारी, बावरी मस्जिद धवस्त होने बाद भडके दंगे, इत्यादि में देश के नागरिकों के मानवाधिकारों का हनन किसी से छिपा नहीं है।

भारत में मानवाधिकार पल–पल किसी न किसी तरह की प्रताडना का दशं झेल रहा है। अतः यह जानना जरुरी हो जाता है कि ऐसी कौन–कौन सी चुनौतियॉ है जिनके कारण मानवाधिकारों के संरक्षक, भारतीय संवैधानिक प्रावधान एवं राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग भी खुद को लाचार सा महसूस करता है।

चुनौतियॉ :–

- केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारें मानवाधिकार आयोग की सिफारिशें मानने के लिए बाध्य नहीं है। लिहाजा मानवाधिकारों के मजबूती से प्रभावी नहीं रहने का सबसे बड़ा कारण राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव ही है।
- राज्य मानवाधिकार आयोग केन्द्र से जनाव तलब नहीं कर

सकता है। आयेाग के पास मुआवजा दिलाने के लिए सक्रियता तो है, लेकिन आरोपियों को पकडने की दिशा में एवं जॉच पडताल करने का अधिकार नहीं है।

- मानवाधिकार संरक्षण कानून के तहत आयोग उन शिकायतो की जॉच नहीं कर सकता जो घटना होने के 1 साल बाद दर्ज कराई गई हो।
- संसाधनो की कमी, गरीबी, निरक्षरता, भ्रष्टाचार, मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता की कमी, अत्याधिक शिकायतें प्राप्त होना, नौकरशाही का बेरुरवा व्यवहार इत्यादि अनेक चुनौतियां आज भी भारत में मानवाधिकारो के विकास के रास्ते में बाधा बनकर खड़ी है।

  अतः जरूरत है इन सभी चुनौतियों का सामना करते हुए इन्हें समय रहते समाधान करने की। भारत में मानवाधिकारों से संबंधित समस्याओं एवं चुनौतियों से निपटने से संबंधित कुछ सुझाव इस प्रकार है–:

सुझाव :–

- मानवाधिकार आयोग को हमेशा ही सचेत होने की जरूरत है। न कि किसी बढी घटना के घटने के बाद सचेत होने की।
- मानवाधिकार को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाए।
- निरक्षर जनता को मानवाधिकार के प्रति जागरूक किया जाए।
- मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता बढाने के लिए संचार माध्यमों का उपयोग किया जाए।
- मानवाधिकारों के संरक्षण से संबंधित कार्यरत व्यक्तियों, संस्थानों, स्वैच्छिक संगठनों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- केन्द्र एवं राज्य सरकारों को मानवाधिकारों से संबंधित घटनाओं पर आपसी तालमेल एवं समन्वय से तेजी से कार्य करना चाहिए।
- मानवाधिकारों का हनन करने वालों के खिलाफ तुरन्त कठोर कार्यवाही होनी चाहिए।

निष्कर्ष :–

मानवाधिकार प्रत्येक मानव के सर्वागीण विकास के लिए जरूरी है। बिना मानव अधिकार के व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास संभव नहीं है। इसलिए मानवाधिकार वो परिस्थितियां है जो मानव के विकास के लिए सभी सुविधाएं प्रदान करवाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों से संबंधित सार्वभौमिक घोषणा 10 दिसम्बर 1948 को की थी। तभी से 10 दिसम्बर को मानवाधिकार दिवस के रूप में मनाया जाना लगा। भारत में मानवाधिकारों से सम्बधित सभी प्रावधान संविधान में मौलिक अधिकारों एवं राज्य के नीति निर्देशक सिद्वान्तों में किए गए है। मानवाधिकारों की सुरक्षा हेतू राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया। परन्तु इन सभी प्रावधानों के बावजूद भी मानवाधिकारों से संबधित घटनाएं दिल दहला देती है जैसे जब कभी दहेज प्रथा का नाम लेकर जिदा जला दिया जाता है, कभी गौ रक्षा का नाम लेकर जिंदा जला दिया जाता है, विभिन्न दंगो में अनेक निदोर्षो की हत्या, बलात्कार, पुलिस कारवाही के नाम पर अनेक निदोर्षो की हत्या, बाल मजदूरी इत्यादि।

प्रश्न यह उठता है कि सरकार, आयोग लाचार क्यों खड़ा है, क्यों मानवाधिकार से संबंधित चुनौतियां दिन–प्रतिदिन बढ़ रही है। हालांकि ऐसा नहीं है कि सरकार कानून नहीं बनाती या अयोग कार्यवाही नहीं करता, परन्तु इन सबके बावजूद भी भारत में मानवाधिकारों का हनन विध्वंसक रूप ले रहा है। अतः वर्तमान में जरूरत है मानवाधिकारों के प्रति लोगों को अधिक से अधिक जागरूक होने की, शिक्षित होने की, प्रचार एवं प्रसार की। इसके साथ–साथ सरकार द्वारा मानवाधिकारों की सुरक्षा हेतू ओर अधिक कडे एवं कठोर कानूनों के निर्माण की। ताकि भारत में प्रत्येक नागरिक अपने अधिकारों के लिए सुरक्षित महसूस कर पाएं। वह भारत जो ''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया'' सूत्र वाक्य का धारणकर्ता है।

संदर्भ सूची :–

1. गोपालन, एस.,"भारत और मानव अधिकार", लोकसभा सचिवालय, नई दिल्ली, 1998, पृ॰ 1–12.
2. राठौड, पी.बी., "फौकस ऑन हयूमन राइटस", ए.बी.डी. पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2017, पृ॰–2–4.
3. अहमद, मोहम्मद यशीन, "हैडबुक ऑफ कांस्टीटयूशनल हयूमन राइटस", आस्था पब्लिशसर एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर, नई दिल्ली, 2013, पृ॰–49–48.
4. महरोत्रा, ममता, "महिला अधिकार और मानव अधिकार", ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2015, पृ॰–20–24.
5. सिहँ, सुरेन्द्र, सिहँ, कर्मबीर, "भारत में मानवाधिकार समस्या एवं समाधान", इनोवेशन द रिसर्च कंसैप्ट, वाल्यूम–2, फरवरी–2017, पृ॰–12.
6. https://www.drishiias.com/hind] "भारत में मानवाधिकार" अभिगमन 12 मार्च 2023, समय–17:23
7. https://www.newsnationtv.com/humanright "मानवाधिकार दिवसः भारत में मानव अधिकार उल्लंघन की बड़ी घटनाएं" अभिगमन 12 मार्च 2023, समय–17:27.
8. भाटी, पूजा, "राजस्थान में मानवाधिकार : महिला अधिकारों के विशेष संदर्भ में," शोध प्रबंध, कोटा विश्वविद्यालय कोटा, राजनीति विज्ञान विभाग, 2015, पृ॰–19–22.
9. सिहँ, बृजेन्द्र, "भारत में मानवाधिकार की प्रासंगिकताः वर्तमान परिप्रेक्ष्य में" ,शोध मंथन, 2017, पृ॰–32.
10. कटारिया, सुरेन्द्र, "मानवाधिकार, सभ्य समाज एवं पुलिस", आर.बी.एस.पब्लिकेशन, जयपुर, 2003, पृ॰–57.

डॉ0 ममता रानी

सहायक प्रोफेसर

राजनीति विज्ञान विभाग, भक्त फूल सिंह उच्चतर शैक्षणिक संस्थान, महिला विश्वविद्यालय, खानपुर कलॉ, सोनीपत।

13

श्री नरेश मेहता के प्रबन्ध काव्यों में राजनीतिक चेतना

पुनीत शर्मा

सारांश :

राजनीति में बड़ी शक्ति और बड़ी गति होती है। यह हमारे समग्र जीवन को मनचाहे ढंग से झकझोरती है, मोड़ती है, तोड़ती है, जोड़ती है। राजनीतिक संघर्ष की अवस्था में राजनीति हमारे आचार और विचार, सभ्यता और संस्कृति आदि सबको बड़ी गहराई से प्रभावित करती है। आज के मानव की नियति को शासित करने वाली प्रमुखतः दो शक्तियाँ हैं–राजनीति और विज्ञान। आध्यात्मिक एवं धार्मिक आस्था के लोप होने के कारण आज का मनुष्य एक ओर तर्कशील बना है, तो दूसरी ओर राजनीति उसके दैनिक जीवन को नियमित और परिचालित करने वाली शक्ति के रूप में उभरकर सामने आई है। यही कारण है कि वर्तमान जीवन को रूपायित करने वाली आज की रचनाओं में राजनीति का सीधा चित्रण मिलता है। मानव के प्रति ऐसा सापेक्षित महत्त्व रखने वाली शक्तिमयी राजनीति से अभिभूत–आंदोलित होकर श्री नरेश मेहता ने अपने प्रबन्धकाव्यों में (महाप्रस्थान, संशय की एक रात,शबरी, प्रवाद–पर्व, प्रार्थना पुरूष आदि में) राजनीति के विविध पक्षों– राजनीति का रूप–स्वरूप, राजा का स्वरूप और उसका दायित्व, राज्य और राज्यकृपा, और स्वतंत्रता आदि का गंभीर विमर्श और विवेचन समग्र राष्ट्र के सम्मुख प्रस्तुत किया है। कविवर नरेश मेहता ने राजनीति के विषयों को युगीन संदर्भों–समस्याओं से अनुप्राणित करके अभूतपूर्व गौरव और सार्थकता प्रदान कर दी है।

मुख्य–शब्दः राजनीति, राजनीतिक चेतना, युद्धों के दुष्परिणाम, शांति का आग्रह

आज के युग में राजनीति समाज का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। समाज के निर्माण में, व्यक्ति के उत्थान–पतन में इसका विशेष योगदान रहता है। इसलिए राजनीति से जूझना कवि–कर्म का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। श्री नरेश मेहता कहते हैं कि व्यक्ति, राजनीति और राज्य परस्पर सम्बद्ध हैं। इनकी पृथकता संभव नहीं है। सीता को संबोधित राम का यह कथन इस दृष्टि से विचारणीय है–

'' व्यक्ति राजनीति और राज्य
इन्हें पृथक कर पाना
इतना सरल है सीता ?''

राजनीति सर्वदा नकारात्मक सरोकारों से ही गतिमान नहीं होती है। उसका सकारात्मक और सुंदर पक्ष भी होता है जो लोक में सत्यम्, शिवम् और सुंदरम् की प्रतिष्ठा करता है, लेकिन आज राजनीति के सारे घटक इतने ह्रासोन्मुख हो गये हैं कि उनकी चर्चा से हर विवेकशील व्यक्ति बच निकलना चाहता है। राजनीति खराब चीज नहीं है, लेकिन स्वार्थान्ध राजनेताओं ने इसको दूषित–विकृत कर दिया है। राजनीतिक क्षेत्र में आई ये बुराईयाँ श्री नरेश मेहता को भी व्याकुल करती है और उनके युधिष्ठिर को भी विचलित करती है। दोनों के विचलन का सबसे बड़ा कारक यह है कि राज्य–प्राप्ति और राज्य–आधिपत्य की पृष्ठभूमि में एक जैसी वृत्तियाँ काम करती हैं। संघर्ष, षड्यंत्र और कुचक्रों से ही इसकी प्राप्ति होती है तथा इसी से इसकी सुरक्षा भी होती है। इसीलिए युधिष्ठिर कहते हैं–

''सोचो सव्यसाची!
समाज की अनुकम्पा या कृपा से
राज्याकांक्षी
राज्य या सत्ता नहीं अर्जित किया करता
बल्कि संघर्ष, षड्यंत्र और कुचक्रों से ही
वह सिंहासन पर आरूढ़ होता है।
ऐसी सत्ता पर
आधिपत्य बनाये रखने के लिए
फिर संघर्ष, षड्यंत्र और कुचक्र
अनिवार्य हो जाते हैं।''

ऐसा राजा जो राजनीति को क्रूरता और षड्यंत्रों से चलाता है, वह अहिंसा और करूणा का प्रतिपालक बिल्कुल नहीं हो सकता है। वह मानवीय उदात्तता और करूणा का प्रतीक नहीं बन सकता, क्योंकि वह इसका प्रतिलोम होता है। युधिष्ठिर का यह कथन राजा और राज्य के रूप–स्वरूप की स्पष्ट व्यंजना करता है–

''क्रूरताओं और षड्यंत्रों का प्रतीक
राजा और राज्य
मानवीय उदात्तताओं और करूणा के प्रतीक
धर्म के प्रतिपालक नहीं हो सकते।''

व्यक्ति और राजनीति की पूरकता को स्वीकार करते हुए श्री नरेश मेहता ने न्याय के स्वरूप पर भी विचार किया है। वह मानते हैं कि न्याय को समदर्शी ही नहीं, तत्वदर्शी भी होना चाहिए। नरेश मेहता राज्य, न्याय और राष्ट्र को व्यक्तियों तथा संबंधों से ऊपर स्वीकार करते हैं और न्याय को राष्ट्र के अधीन नहीं मानते हैं–

''राज्य न्याय और राष्ट्र
व्यक्तियों तथा
सम्बन्धों से ऊपर होने ही चाहिए।
कोई भी
राष्ट्र–न्याय और सत्य से बड़ा नहीं है।''

श्री नरेश मेहता कहते हैं कि सत्ताधारी सारा निर्णय और न्याय आसक्ति की भूमि पर खड़ा होकर करता है जबकि न्याय की भूमि आसक्ति की भूमि नहीं है, वह अनासक्ति की भूमि है, निर्वेद की भूमि है और निर्वेद की भूमि से ही न्याय और निर्णय संभव है। 'प्रवाद–पर्व' के श्रीराम से अपनी मान्यता की पुष्टि करवाते हुए श्री नरेश मेहता कहते हैं–

''किसी के भाग्य का निर्णय
आसक्त या पक्षधर बनकर नहीं
बल्कि
निर्वेद की भूमि पर खड़े होकर ही
न्याय
निर्णय
सबका अधिकार प्राप्त किया जा सकता है।''

श्री नरेश मेहता कहते हैं कि राजा मात्र राजा होता है, उसे राज्य या राष्ट्र का पर्याय नहीं मानना चाहिए। यदि ऐसी परम्परा का प्रारम्भ हो गया तो राष्ट्र की अस्मिता गहरे संकट में पड़ जायेगी। वें कहते हैं कि राजतंत्र में अधिपति भले ही राष्ट्र का पर्याय न बन पाया हो, लेकिन भारत के वर्तमान तथाकथित प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली में बहुमत पाते ही कतिपय प्रान्तों–राज्यों के मुखिया–मुख्यमंत्री अपने को बेझिझक प्रान्त–राज्य का पर्याय मानने की भूल कर बैठते हैं और लोगों के दिलो–दिमाग में गहरी दहशत भर देते हैं।

श्री नरेश मेहता का राजनीतिक विमर्श मात्र सिद्धांतों की बात नहीं करता है, वरन् हमारे समय और समाज में राजनीति का जो स्वरूप व्याप्त है, उसकी वह व्याख्या विवेचना करता हे। इस व्याख्या में कवि समाज की अपेक्षाओं की तरफ भी सत्ता और समाज का ध्यान आकृष्ट करता है। कवि कहता है कि व्यवस्था का मुकुट धारण करते ही किसी भी व्यक्ति का मनुष्यत्व नष्ट हो जाता है–

''व्यवस्था का मुकुट धारण करते ही
किसी भी व्यक्ति का
मनुष्यत्व नष्ट हो जाता है।''

श्री नरेश मेहता ने राजनीति के नाना आयामों की विवेचना के क्रम में राज्य–व्यवस्था की सीमाओं का भी खुलासा किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं में यह बताने की भरसक कोशिश की है कि राज्य और राज्य–व्यवस्था की दृष्टि में सभी बराबर होने चाहिए। चाहे कोई राजा हो या रंक, साधारणजन हो या विशिष्टजन।

श्री नरेश मेहता राज्य का यह भी दायित्व निर्धारित करते हैं कि राज्य को चाहिए कि वह मेधावी और स्वतंत्रचेता व्यक्तियों की मेधा और स्वातंत्र्य चेतना की रक्षा करे। उसे किसी व्यवस्था का क्रीतदास न होने दे। यदि कोई राज्य ऐसा करने में असमर्थ होगा तो असीम प्रतिभा और घोर दारिद्रय के प्रतीक द्रोणाचार्यों को जीवन के महाभारत में सर्वत्र कौरवों की तरफ से युद्ध करने के लिए विवश होना पड़ेगा। प्रस्तुत संदर्भ के माध्यम से कवि अपने मन्तव्य को स्पष्ट करते हुए कहता है–

''अभिमन्यु का सामूहिक वध
तथा युद्ध के अनेक अत्याचार
द्रोणाचार्य अपनी आँखों से देखने के लिए
विवश–
क्यों ?
इसलिए कि राज्य उनका भरण–पोषण कर रहा था
कितना बड़ा मूल्य
एक विवेकवान को चुकाना पड़ा सव्यसाची।''

युद्ध आज की मानवता की सबसे बड़ी और सबसे गंभीर समस्या है। युद्ध की भयानकता से संसार का प्रत्येक मनुष्य भयग्रस्त और चिंताग्रस्त है। संवेदनशील व्यक्ति और संवेदनशील रचनाकार युद्ध–निदान के सारे पक्षों पर बड़ी गंभीरता से चिंतारत और चिंतनरत है। श्री नरेश मेहता द्वारा रचित 'संशय की एक रात' तो युद्ध और शांति के सामयिक और ज्वलंत प्रश्नों की टकराहट की ही उपज है और उनकी रचना 'महाप्रस्थान' में भी यत्र–तत्र युद्ध से सम्बद्ध अनेक संदर्भों–संभावनाओं को उठाया गया है।

श्री नरेश मेहता की कृति 'संशय की एक रात' में युद्ध, युद्ध के कारण, युद्ध की प्रेरणा, युद्ध की कालावधि, युद्ध–परिणाम और युद्ध–निदान पर गंभीर विमर्श प्रस्तुत किया गया है। इस रचना में श्री नरेश मेहता ने युद्ध की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए इसके अनेक पात्रों में युद्ध पर गंभीर परिचर्चा का आयोजन किया है। इस परिचर्चा में राम मानते हैं कि युद्ध आवेश नहीं, वरन् एक दायित्व है–

''किन्तु युद्ध, दायित्व है
किसी भी पीढ़ी के लिए दायित्व है
आवेश नहीं।''

श्री नरेश मेहता ने युद्ध की अवधारणा के साथ युद्ध के कारणों पर भी विचार किया है। उन्होंने युद्ध के अनेक कारण–सत्य, न्याय आदि बताये हैं, लेकिन उन्होंने युद्ध का मूल कारण राजनीतिक स्वतंत्रता माना है। 'संशय की एक रात' के हनुमान के माध्यम से उन्होंने स्पष्ट किया है कि जब कोई सत्ताधारी किसी वर्ग विशेष–देश विशेष की सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक अस्मिता को अस्तित्वहीन कर देने का प्रयास करता है तब युद्ध ही समस्या का अंतिम निदान बनता है।

श्री नरेश मेहता ने युद्ध के विविध पक्षों पर विचार करते हुए युद्ध परिणतियों पर भी विचार किया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि युद्ध की अन्तिम परिणति में दोनों ही पक्ष जर्जर होते हैं। चाहे कोई सत्य का पक्षधर हो या असत्य का। युद्ध में ध्वस्त राष्ट्र की कहानी यहीं नहीं रूकती है। युद्ध केवल पदार्थ–वस्तु को ही क्षरित–गलित नहीं करता है, वरन् वह राष्ट्र को विधवाओं और अनाथ बच्चों से भी भर देता है और ये विधवा तथा बच्चे जीवन संघर्ष में दिशाहीन होकर खो जाते हैं–

''प्रत्येक युद्ध
जिसमें से एक राज्य जन्म लेता है,
कितनी स्त्रियों को विधवा
और बच्चों को अनाथ कर जाता है,
और वे जीवन–संघर्ष में
दिशाहीन खो जाने के लिए
बाध्य हो जाते हैं।''

श्री नरेश मेहता कहते हैं कि युद्ध अनवरत चलने वाली एक प्रक्रिया है। एक युद्ध बाहर होता है, दूसरा भीतर चलता है। बाहरी युद्ध समाप्त होने के बाद भीतरी युद्ध का प्रारम्भ होता है। यह युद्ध प्रतिपल हमारी चेतना को जलाता रहता है। युधिष्ठिर ऐसे युद्ध के ज्वलंत प्रमाण हैं। बाहरी युद्ध जीतने के बाद उन्हें भीतरी युद्ध से सामना करना पड़ता है। 'महाप्रस्थान' में उन्होंने स्वीकार किया है–

''युद्ध क्या ऐसे ही होते हैं समाप्त ?
जब शस्त्रों से ये
शेष कर दिये जाते हैं
युद्धस्थल में –
तब अन्तस्थल में
अशेष हो
जीवन भर चलते रहते हैं।''

युद्ध की परिणतियों की ऐसी भयंकरता को लक्षित करके श्री नरेश मेहता ने युद्ध के प्रति अपनी अस्वीकृति व्यक्त की है। इन्हीं उदात्त भावनाओं को कवि ने श्रीराम (संशय की एक रात) और युधिष्ठिर (महाप्रस्थान) के द्वारा व्यंजित करवाया है। श्रीराम और युधिष्ठिर दोनों ही युद्ध से मुक्ति चाहते हैं। इतना ही नहीं राम तो युद्ध से सीता की भी मुक्ति नहीं चाहते हैं। हिंसा और रक्तपात का विरोध करते हुए राम कहते हैं कि–

''धनुष, बाण, खड्ग और शिरस्त्राण!
मुझे ऐसी जय नहीं चाहिए
बाणविद्ध पाखी सा विवश
साम्राज्य नहीं चाहिए
मानव के रक्त पर पग धरती आती
सीता भी नहीं चाहिए
सीता भी नहीं।''

निष्कर्ष: कहा जा सकता है कि कविवर श्री नरेश मेहता का राजनीतिक विमर्श बड़ा गंभीर और बहुआयामी है। कवि ने व्यापक दृष्टि से राजनीति के सारे सोच–संदर्भों को विवृत–विवेचित किया है। युद्ध के प्रत्येक पहलू पर उनके द्वारा की गयी मीमांसा बार–बार विचारणीय है। आज जब हम युद्ध के द्वार पर खड़े हैं, आज जब राजनीति सबको विकृत कर रही है, तब श्री नरेश मेहता द्वारा निर्दिष्ट राजनीति के अनेक अंग–आयाम हमारे चिंतन का मार्जन करने में, स्वच्छ दृष्टि की सृष्टि करने में, सही दिशा का निर्धारण करने में बड़े उपयुक्त और सार्थक हैं।

संदर्भ सूची

1. श्री नरेश मेहता, समिधा (प्रवाद पर्व) : खण्ड–2, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 381–382
2. श्री नरेश मेहता, समिधा (महाप्रस्थान) : खण्ड–2, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 330
3. श्री नरेश मेहता, समिधा (महाप्रस्थान) : खण्ड–2, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 327
4. श्री नरेश मेहता, समिधा (महाप्रस्थान) : खण्ड–2, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 371
5. श्री नरेश मेहता, समिधा (प्रवाद पर्व) : खण्ड–2, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 370
6. श्री नरेश मेहता, समिधा (महाप्रस्थान) : खण्ड–3, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 337
7. श्री नरेश मेहता, समिधा (महाप्रस्थान) : खण्ड–2, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 336
8. श्री नरेश मेहता, समिधा (संशय की एक रात) : खण्ड–2, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 241
9. श्री नरेश मेहता, समिधा (महाप्रस्थान) : खण्ड–2, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 324
10. श्री नरेश मेहता, समिधा (संशय की एक रात) : खण्ड–2, (लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2005) पृ0 212

पुनीत शर्मा
नेट, एम.ए., बी.एड़,
भिवानी (हरियाणा)
मोबाईल नं– 8529439625

14

इंदिरा दांगी के कथा साहित्य में स्त्री विमर्श

मनीषा देवी

सारांश

हिंदी के समकालीन लेखन के परिदृश्य में इंदिरा सशक्त एंव प्रतिभा सम्पन्न लेखिका के रूप में उभर कर सामने आई है। वे पिछले दशकों से सृजनरत है।इनका सृजन विविध आयामी रहा है। इनके कृतिव्व में कहानी उपन्यास लेख, अनुवाद आदि सम्मिलित है। इंदिरा दांगी एक संजीदा लेखिका है। इंदिरा दांगी ने जो जीवन से अनुभूत किया स्वयं भोग उसी की अभि व्यंजना समष्टि की एक इकाई के रूप में किया है। समकालीन साहित्य संसार के केन्द्र में सश्क्त विधा के रूप में कथा साहित्य है। नारी से संबंधी विचार उनके कथा साहित्य में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते है।

सृष्टि के निर्माणकार ने संसार का सृजन तो कर दिया। लेकिन इस संसार सुंदर बनाने के लिए स्त्री को रचा गया जो सर्वगण संपन्न,ममता,करूणा तेजस्वीता से ईश्वर द्वारा प्रदत्त इस संसार को सुंदरता प्रदान करती है। सृष्टि के निर्माण और संचालन में स्त्री का महत्वपूर्ण योगदान है। नारी मानव जाति की सभ्यता और संस्कृति का मूलाधार रही है। इसके साथ वह पुरूष की प्रेरणादायी शक्ति रहीं है। इसको दृष्टि में रखकर आशा रानी व्होरा का कथन है कि पुरूष की प्रकृति ने बल अधिक दिया है तो स्त्री को वृढता और शरीर सौन्दर्य अधिक पुरूष संसार में जारो और साहस भरने के लिए बना है। तो स्त्री धैर्य और चरित्र सिखने के लिए करूणा और प्रेम बरसाने के लिए। दोनों की भिन्न प्रकृति से ही परस्पर पूरक और जीवन की पूर्णता संभव है।

समाज में नारी को प्राचीन काल से ही महत्व पूर्ण स्थान प्राप्त था प्राचीन समय की कुछ विदूसी जैसी गार्गी,मैत्रेयी नारियों ने वेदों के अध्याय आध्याम्कि चर्चा में पुरूष के साथ बराबर सहयोग दिया। पहले के समय में नारी के बिना कोई भी अनष्ठान सम्पूर्ण नहीं माना जाता था। बदलते समय के साथ नारी की स्थिति में भी धीरे–धीरे परिवर्तन आने लगा। उसे अनेक अधिकारों से वंचित किया जाने लगा।परंतु आधुनिक काल के समाज में नारी की स्थिति में परिवर्तन आया है। आधुनिक युग में समा नारी के प्रति क्या दृष्टिकोण रखता है, ऐसा नहीं सोचती बल्कि नारी खुद के प्रति क्यो दृष्टिकोण है यह सम्झती है आज के समय में नारी के अवसर मिले तो वह पुरूष के साथ कदम से कदम मिला कर चल सकती है। आज के युग की नारी पुराने रूदिगत परम्पराओं से विद्रोह करके समाज में अपनी विशेष पहचान बनाना चाहती है। नानी यदि संघर्षशील है तो इस लिए नहीं कि वो आधुनिकता की बहाव में बह रही हैं बल्कि इसलिए कि वह आज के युग में अपने अधिकारों की पहचानने लगी है। घर ग्रहस्थी के पदायित्वों के बीच नारी उलझी हुई है। जिम्मेदारी और कर्त्तव्य को निभती हुई स्त्री स्वयं उपेक्षित रह जाती है स्त्री को व्यक्तिगत संपति माने वाले, उसकी आवश्यकताओं को समझ नहीं पाते फलस्वरूप नारी प्रेम विहीन जीवन जीती रहती है। विपशयना अपन्यास में स्मिता अपने पति बाबू का दुसारी स्त्री से संबंध ही जानते हुए भी अपने परिवारिक दायित्व को निभती है।

रपटीले राजपथ उपन्यास में विधा भी अपने परिवारिक दायत्व को निभते हुए अपने पति को कहती भी है विराट ऐसा कुछ भी मत बोलो मैंने कितने फोन लगाये लेकिन कभी तुमने मॉल कट कर दी कभी बात सुनने से पहले ही डॉट दिया। दछा–बाई ने ही मुझसे कहा था कि मैं उनके लिए गांव में खेत खरीद दूँ, दुकान बनवा दूँ। फर्ज तो ये दरअसल तुम्हारे थे पर जो आदमी अपने प्रेग्नेट पत्नी को छोकर भाग जाये उससे किसी और फर्ज को पूरा करने की क्या उम्मीद की जा सकती है।

मॉ दिन भर घर–परिवार और बच्चे के लिए काम करती रहती है। सारा दिन घर के कार्यों में लगे रहने और रात गए सोना उसमें भी बच्चों की अपने ऑचल में छिपाकर अपने बचपन की बातों को बताना तथा जीवन के लिए उन्हे तैयार करना अपना दायित्य समझती है।

हवेली सनातनपुर उपन्यास की अवम्तिका जो पति के विमुख हो जाने के बाद भी अपने परिवार के प्रति दायित्व को समय दोनो बच्चों को लालन पालन करती है बिना पति की पत्नी अवन्तिका अपने नन्हे बेटे के बचाव में हर सम्भव जगह खडी रहती है उसका वंश चलता तो अपने बच्चे को फिर से उपने गर्भ में छुपा लेती। विशु को वो एक पल के लिए भी ऑखों से ओझल न होने देती।

इंदिरा दांगी ने अपने कहानी सग्रह शुकिया इमरान साहब की एक कहानी हमें मुस्काराना आता है,में अमिता के द्वारा नारी की अपनी अस्तित्व के प्रति चेतना को ऐसे चित्रित किया है कि वे तो जानवर है बेटा, ईश्वर की बनाई निरीह कतिय पर हम जो इंसान है,उनका सर्व श्रेष्ठ सृजन,हम जानवरों से बेहतर इसलिए है क्योकि हम स्वीकारना जानते है। मुस्काराना जानते है। जो कि पशुओं को नहीं आता और सबसे बडी बात हमने ये कबिलियत भी है कि तय कर सके, हम प्शु बने या इन्सान। चलो छोडो इस बात को । नाश्ता करो''.....

आधुनिक नारी स्वतंत्र जीवन जीना पसंद करती है। वह किसी प्रकार परंतत्रता को स्वीकारना पसंद नहीं रकती।वर्तमान की नारी आत्म सम्मान,आत्म गौरव के प्रति विशेश रूप से जागृत है फिर भी नारी अपने अस्तित्व को बनाए रखने में सतत संघर्शशील है शिक्षा ने नारी को जागरूक बनाया है।

इंदिरा दांगी ने शिक्षा के प्रति नी चेतना को अपने कथा साहित्य में अभिव्यक्ति प्रदान की है हवेली सनातनपुर उपन्यास में रानिगी अपनी बेटी दोक्षू को शिक्षा के बारे में कहती है कि परिस्थितियॉ तो हर एक की अलग ही होती है केटा मॉ झाडू से कमरे के कोने कोने का सब कचना बुहारते हुए बोली अपनी जिन्दगी में मैंने भी कौन कम उॅच–नीच

मनीषा देवी
शोधार्थी (हिन्दी)
बाबा मस्तनाथ
विश्वविद्यालय, रोहतक
(हरियाणा)
पिन – 124001

देखी है पर मैं अपने कलंक से उपर नहीं उठ सकी, बाबूली उठ सके पता है क्यो

''क्यो''

''क्योकि उनकी गांठ में उनकी मॉ का दिया एक बीज मन्त्र था। एक ऐसा मन्त्र जिसके जाप से नरक स्वर्ग में बदल जाता है, कलंक वरदान में ''मुझे भी बताओ मम्मी ऐसा कौन वीज मंत्र है जो जीवन बदल देता है।

डस मन्त्र को कहते है–पढाई''

''पढाई''

''हॉ बेटा पढाई एक बार मैंने बाबू को कहते सुना था जे हर दिन पढता है वो जिन्दगी में जरूर कुछ बन जाता है''

रागिनी के द्वारा अपनी बेटी दीक्षू को दिया गया। यह बिज मन्त्र जीवन में उसे उच्च पद पर बैठाता है '' आज दीक्षा कुमारी हाई कोर्ट में जज है।

अदालती हलकों में दीक्षा कुमारी के जजमेंट पर हस कदर यकीन हो चला है लोगो को कि जैस ही केस उनकी एकल बैंच के सामने जाता है मुवक्किलों से वकील कहने लगते है अब केस समझिये– जल्दी से जल्दी सख्त से सख्त न्याय के साथ ।

इंदिरा दांगी के कथा साहित्य में महत्वपूर्ण पहलू है नारी की कामयाबी। अनेक संघर्शे की चार दीवारों को पार कर नारी अपने स्वाभिमान के लिए खडी हुई है। लेकिन हम इस सच को भी नहीं बदल सकते है।कि जो अधिकार उन्हे समाज में मिलना चाहए वह उन्हे समाज में प्राप्त नहीं है। लेकिन दले से तो नारी की स्थिति में सुधार आया है। आज के युग की नारी में इतना आत्मविश्वास और साहस तो है कि वह समाज में अपने वाले इन सघंर्शे से हार जाने वाली नहीं है। लेकिन समाज में नारी को पूर्ण रूप से नारी होने में समय लगेगा।

निष्कर्षः–

उपर्युक्त विवेचन के आलोक में हम कह सकते है कि इंदिरा दांगी के कथा साहित्य में नारी के अनेक रूपों का चिराण किया गया है उनमें अपने अधिकारों के प्रति चेतना की तीव्रता है जिसे आज के आधुनिक कथा साहित्य में स्वीकार किया गया हैं। पहले समाज में औरतों के साथ दुर्व्यवहार होता था लेकिन आज स्थिति बदलती जा रही है। आज की नारी पति के साथ कदम से कदम मिलाकर चलना चाहती है।

संदर्भ सूचीः–

1. इंदिरा दांगी,विपश्यना
2. डॉ0 हजारी प्रसाद, द्विवेदी के साहित्य में सामाजिक चितंन
3. डॉ0 जारी प्रसार, बाणभटट की आत्मकथा।
4. सुरेन्द्र वर्मा, मुझे चॉद चाहिए।
5. इंदिरा दांगी, रपटीले राजपथ।
6. इंदिरा दांगी, हवेली सनातनपुर

15

''वैश्वीकरण और डिजिटल दुनिया में हिंदी की महत्ता''

डॉ0 पूनम धौचक

सरांश :–

वैश्वीकरण और डिजिटल दुनिया में हिंदी का महत्त्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। 21 वीं सदी का दूसरा दशक एक चिप में आकर सिमट गया । वैश्वीकरण के कारण जहां पूरा विश्व एक गांव में तबदील हो चुका है वैश्विक बाजार संस्कृति के लिए हिंदी सबसे अनुकूल भाषा के रुप में अपनाई जा रही है। हिंदी भाषा विश्व विक्रेता और क्रेता के बीच सेतु का कार्य कर रही है। आज कंप्यूटर, मोबाइल, फेसबुक, टवीटर, ब्लॉग इत्यादि पर हिंदी के प्रयोग ने दुनिया को सचमुच मनुष्य की मुटठी में कर दिया है वह दिन दूर नही जब हर जगह हिंदी भाषा का बोलबाला नजर आएगा। भारत की सदियो पुरानी उक्ति, वसुधैव कुटुम्बकम् एक बार फिर से चरितार्थ होती जा रही है।

वैश्वीकरण अंग्रेजी के 'ग्लोबलाइजेशन' शब्द का हिंदी अनुवाद है। ग्लोबलाइजेशन के लिए हिंदी में भूमंडलीकरण शब्द का प्रयोग भी किया जाता है, वस्तु,सेवा विचार, पूंजी आदि के विश्वव्यापी प्रवाह को वैश्वीकरण कहा जाता है। वैश्वीकरण के कारण समूचा विश्व व्यापारिक दृष्टि से एक हो जाता है। कोई एक देश अपनी उन्नति अकेले नही करता है उसे अन्य कई देशों पर निर्भर रहना होता है। इसके अंतर्गत सभी व्यापारियों की क्रियाओं का अंतर्राष्टीयकरण हो जाता है। वैश्वीकरण के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व में बाजार शक्तियां स्वतन्त्र रुप से कार्यरत हो जाती है। एक या कई देश आपस में व्यापार करते है और तकनीकी को साझा करते है।

रोनाल्ड राबॅर्टसनः– ''वैश्वीकरण एक अवधारणा के रुप में दुनिया के सकांलन और पूरे विश्व के रुप में दुनिया की चेतना की गहनता दोनों को सदर्भित करता है दोनों ठोस वैश्विक अन्योन्याश्रय और वैश्विक सपूंर्णता की चेतना।

एंथनी गिडेंसः– ''वैश्वीकरण को दुनिया भर के सामाजिक संबंधों की गहनता के रुप में पारिभाषित किया जा सकता है जो दूर के इलाकों को इस तरह से जोड़ता है कि स्थानीय घटनाओं को कई मील की दूरी पर होने वाली घटनाओं से आकार मिलता है और बदले में दूर की घटनाओं को स्थानीय घटनाओं दुवारा आकर दिया जाता है।''

प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक नोम चामॅस्की ने वैश्वीकरण का अर्थ अंतर्राश्टीय एकीकरण माना है इस एकीकरण में भाषा की अहम भूमिका होगी और जो भाषा व्यापक रुप से प्रयोग में रहेगी, उसी का स्थान विश्व में सुनिश्चित होगा। चॉमस्की के अनुसार जब विश्व एक बडा व्यापार हो जाएगा तो बाजार में व्यापार करने के लिए जिस भाषा का प्रयोग होगा उसे ही प्राथमिकता दी जाएगी और वही को बोलने वाले लोग एक बड़ा बाजार बनाते हैं, उस भाषा का आस्तित्व इस प्रक्रिया में और भी मजबूत होता है। हिन्दी के साथ भी बाजार का वही रवैया है कम्पनियों को अपने उत्पाद बेचने के लिए हिन्दी बाजार में एक व्यापाक क्षेत्र उपलब्ध कराती है। आज बहुराष्टीय और देशी कंपनियों की लगभग सत्तर प्रतिशत से अधिक वस्तुएं हिंदी के माध्यम से जनमानस तक पहुंच रही है। 90 के दशक में हॉलीवुड के एक बडे फिल्म निर्माता स्टीफन स्पिलबर्ग ने जब अपनी बहुचर्चित फिल्म जुरासिक पार्क को हिन्दी में डब किया तो ऐसा लगा किवे एक कॉरपोरेट रणनीति के तहत भाषा के व्यापार के लिए नये दरवाजे खोल रहे है। जुरासिक पार्क हिन्दी में डब होकर देश के छोटे–छोटे कस्बों और गॉवों तक पहुॅच गयी। आजकल साबुन, तेल, क्रीम, और टूथपेस्ट जैसी दैनिक उपयोग की वस्तुओं से आगे चलकर जब कार, टीवी, फ्रिज, मोटर साईकिल, वार्शिंग मशीन, कीमती वस्त्रों बचत और निवेश को योजनाएॅ आदि के विज्ञापन हिंदी में प्रसारित किए जा रहे है।

अनेक बहुराष्टीय कंपनिया अपने मैन्युअल सूचनाएं हिंदी भाषियों त कवे अपने उत्पाद पहुॅचाने की कोशिश करती है। अपने उत्पादों को बेचने के लिए अमेजान अमरिका हिंदी में आ चुक है उसी प्रकार कॉलमार्ट अमेरिका, अलीबाबा–चीन आदि विदेशी ऑनलाईन व्यापार कंपनियो ने अपने व्यापार के लिए हिंदी का उपयोग किया। रुपर्ट मर्डोक ने भी स्टार टीवी के सभी कार्यक्रम हिन्दी में तैयार करवाए। बीबीसी नेशनल जिऑग्राफी डिस्कवरी पोगो, डिजनी कार्टून नेटवर्क आदि चैनलों ने भी अपने कार्यक्रमों को हिन्दी में प्रसारित किया। इस प्रकार हिन्दी के साथ विशेश तौर पर बाहरी सांस्कृतिक सन्देश चोला बदल कर हमारे समाज की अन्दरुनी तहो में उतरने लगी।

हिन्दी के इसी डिजिटल होने पर पत्रकार व मशहूर बलांगर रवीश कुमार कहते है इंटरनेट ने हिन्दी में नयी प्रतिभाओं को सामने लाने में अहम भूमिका अदा की है। हिन्दी का पहला वैब पौर्टल सन् 2000 में अस्तित्व में आया और तभी से इंटरनेट पर हिन्दी का सफर रोमन लिपि से प्रारम्भ होता है और फॉन्ट जैसी समस्याओं को पार करते हुए धीरे–धीरे वह देवनागरी लिपि तक पहुॅच गया। यूनिकोड के कारण हिंदी को सर्वमान्य स्थान मिल चुका है। मंगल, कोकिला, अपराजिता, असर, लैला, खंड अक्षर, लोहित, प्रगति नकुल,सहदेव, निर्मला,साहित्य,सकल जैसे कई यूनिकोड फ्रान्ट के कारण इंटरनेट पर हिंदी छा गई है। इंटरनेट की भाषा के रुप में हिंदी का महत्त्व व प्रचलन पूरे विश्व में देखा जा सकता है। गुगल, याहु, सर्च इंजन से हिंदी में सामग्री ढूढने में मदद मिल रही है।

हिंदी मीडिया को विश्व के बाहर अन्य बहुत से देशों में देखा जाता है। पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, मालदीप आदि कई देशों में हिंदी फिल्में देखने वालों की आबादी बहुत है। हालीवुड की ऑस्कर से सम्मानित फिल्म 'अवतार' हिंदी भाषा का ही शब्द है। युटयूब नैटफिलक्स के कारण सहजता से विश्व का कोई भी व्यक्ति हिंदी कार्यक्रमो या फिल्मों को देख पाता है। अनेक देशों और विदेशी

मोबाईल कंपनियों ने भी विश्व भाषा के रुप में हिंदी को अपनाया है। सैमसंग, रेडमी, वीवो, एपल, वन प्लस, रियल मी, ओ पी आदि अनेक कंपनियों में अपनी डिवाईस में हिंदी भाषा का समावेश किया। इन मोबाईलो में हिंदी भाषा का प्रयोग गुगल इनपुट के रुप में किया गया। हिंदी में विश्व स्तर पर संदेश भेजना हो या पढ़ना सब कुछ आसान हो गया।

आधुनिक हिंदी टाइपिंग टूल का सोशल मीडिया पर, भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। इन टूल्स के माध्यम से सोशल मीडिया पर देवनागरी लिपि में की–पैड आठप और वॉइस टाइपिंग कर सकते है। गूगल वॉइस एन पुट टूल गूगल वाइस लेखन नामक निःशुल्क टूल के जरिये कार्य बखूबी हो रहे है। उपर स`अब हमें वाइस टाइपिंग के लिए ऑनलाईन रहने की भी जरुरत नहीं है। हिन्दी के लिए आफलाइन डैटा डाउनलोड हो जाता है जिससे आप कही भी कभी भी बोलकर हिन्दी देवनागरी में लिख सकते है। यदि हम व्हाटसएप की बात करें तो सोशल मीडिया में सबसे अधिक लोकप्रियता इसी की है यह न केवल चैटिंग के लिए उपयोग किया जाता है बलिक़ इसमे भी कई सारे ऐसे ग्रुप है जैसे –कन्नड़ राष्टीय संगोष्ठी, साहित्य समुदाय, सीबीएसई नेट ज आर एक हिन्दी साहित्य शब्दांकन और हिन्दी रिसर्च फॉर्म आदि। इन सभी ग्रुप में साहित्य से सम्बन्धित विचारों का आदान–प्रदान होता है।

यूटयूब की बात करे तो गेजेटस आदि की समीक्षाए हिन्दी में भी उपलब्ध हैं। यहॉ तक अनेक विषयों के लेक्चर भी हिन्दी में उपलब्ध है जैसे– एटीवी हिन्दी के कार्यक्रम खास मुलाकात में हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक एवं लेखिकाओं से साक्षात्कार लिये जाते है और उनकी रचनाओं का विश्लेषण भी दर्शकों के समक्ष किया जाता है। राज्यसभा टीवी का कलम गवाह है `कार्यक्रम में भी साहित्य की प्रसिद्ध हस्तियों से वार्तालाप किया जाता है। इसी टीवी के और एक कार्यक्रम किताब में प्रसिदध पुस्तकों की चर्चा की जाती है। कुछ विश्व–विद्यालयों से सीधा प्रसारण भी हम देख सकते है, जैसे– वर्धमान महावी ओपन यूनिवर्सिटी और उत्तराखण्ड ओपन यूनिवर्सिटी के चैनलों द्वारा सभी छात्रों को पाठयक्रम अनुसार पढाया जाता है। डिजिटल हिन्दी के कारण हिन्दी भाषा और साहित्य को विश्व में महत्त्वपूर्ण स्थान मिला।

महात्मा गॉधी अन्तर्राष्टीय हिन्दी विश्वविद्यालय वर्धा ने हिन्दी की डिजिटल दुनिया में काफी अहम योगदान दिया है। इसकी वेबसाइट डब्लूडब्लूडब्लू डॉट हिन्दी समय डॉट कॉम पर हिन्दी के लगभग एक हजार रचनाकारों की रचनाएँ उपलब्ध है। श्यामसुन्दर दास हजारी प्रसाद द्विवेदी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि की ग्रन्थावली के साथ–साथ समकालीन रचनाकारों की रचनाओं को भी इसमें स्थान दिया गया है। हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा ने हिन्दी प्रेमियों, शोंधार्थियों ,शिक्षकों को एक चलता–फिरता पुस्तकालय मुहैया कराया है। जिसकी जितनी प्रशंसा की जाये कम है। इस संदर्भ में देखे तो आज सभी आवश्यक वेबसाइटों के हिन्दी संस्करण मौजूद है। पंजाब नेशलन बैक, भारतीय स्टेट बैंक, यूनाइटेड बैंक, बैंक आफ इण्डिया, भारतीय जीवन बीमा निगम, सेबी, बीएसई और एनएसई आदि वेबसाइट हिन्दी में भी उपलब्ध है। भारतीय अर्न्तराष्टीय अनुसंधान संगठन इसरो की वेबसाइट भी हिन्दी में है।

दसवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में प्रधानमंत्री ने अपने उदबोधन में कहा था कि डिजिटल विश्व में तीन भाषाएँ प्रभावी है– अंग्रेजी, चीनी और हिन्दी, इससे हिन्दी की डिजिटल दुनिया को समझा जा सकता है। डिजिटल कंटेट के संदर्भ में इन्डियन एक्सप्रेस में एक खबर प्रकाशित हुई थी जिसमें बताया गया कि इंटरनेट पर हिंदी कंटेट में 94 प्रतिशत की वृद्वि हुई है।

डेनमार्क के एक विश्वविद्यालय में हिन्दी की प्राध्यापिका रजनी बहुत विदेशी बच्चों के द्वारा बड़ी संख्या में हिंदी सीखने के पीछे के तात्पर्य को स्पष्ट करती हुई बताती है कि पहले सीटें भरनी बहुत मुश्किल होती थी लोग सिर्फ चाइनीज व जापानीज सीखने आते थे, मगर जब अंतर्राष्टीय स्तर पर व्यापार बढ़ जाने से लोग हिंदी सीखने लगे है। विश्व का अगर एक छोटा सा क्षेत्र स्केडिनेवियन देशों की बात करे। तो ऑकडे बताते है कि सभी स्केडिनेवियन देशों में हिंदी समितियॉ और हिंदी धार्मिक एवं सांस्कृतिक संस्थाएँ है जो समय–समय पर भारतीय तीज त्यौहार, राष्टीय दिवसो व अन्य अवसरों पर सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करती रहती है। इनके कार्यक्रमों में हिन्दी भाषा का ही उपयोग होता है। कोपेनहेगन में कुछ संस्थाएं व व्यक्ति है जो भारतीय शास्त्रीय नृत्य व हिंदी सिनेमा में गीतो पर नृत्य पाठशाला चलाते रहे है। उदाहरण– के तौर पर डेनिश महिला ऐनेमेटे कार्पन, प्रेसिडेट आफ इंडियन म्यजिक सोसाइटी भारतीय संगीत पर पाठशाला चला रही है। यह हिन्दी भाषा की ताकत ही तो है।

निष्कर्ष :– इस प्रकार हिन्दी न सिर्फ हमारी भाषा है बल्कि भारत और विश्व के लोगों की उपयोगिता भी है। यही कारण है आज समूचे बाजार में हिन्दी सबसे प्रिय भाषा बन गई है।

वैश्वीकरण के इस दौर में अंग्रेजी चाहे जितनी भी ताकतवर हो पर उसका कार्य हिन्दी के बगैर नही चल सकता। यही कारण है मोबाइल के एसएमएस से लेकर सोशल साइट की वाल तक, रोमन से लेकर देवनागरी तक, गूगल, एडायॅड सिस्टम से लेकर नोकिया के विंडोज और आइफोन के आइओएस तक हिन्दी में कार्य करने की सुविधा उपलब्ध है। कुल मिलाकर हिन्दी आज मीडिया, राजनीति, मनोरंजन, व्यापार और विज्ञापनों की प्रमुख भाषा बनी हुई हैं।

संदर्भ सूची:–

1. सुरेंद्र अग्निहोत्री, वैश्वीकरण के दौर में हिंदी की महत्ता nutankahaniya- page, Nov. 30, 2019
2. हिंदी ज्ञान कोश– Hindigyankash.com, Nov. 25, 2021
3. http://www.bbc.com/ hindi/ science/ 2013/09/130913 - digitial-indians-hindi-

technology-tb

4. रविंद्र जाधव, केशव मोरे, मीडिया और हिंदी बदलती प्रवृत्तिया, वाणी प्रकाशन 2016ए पृ सं0 –353
5. रविंद्र जाधव, केशव मोरे, मीडिया और हिंदी बदलती प्रवृत्तिया, वाणी प्रकाशन 2016ए पृ सं0 –351
6. रविंद्र जाधव, केशव मोरे, मीडिया और हिंदी बदलती प्रवृत्तिया, वाणी प्रकाशन 2016ए पृ सं0 –349
7. शिराजोदिन, सोशल मीडिया और हिन्दी' वाणी प्रकाशन, 2016, प्रथम संस्करण, पृ. सं. 347

डॉ0 पूनम धौचक

457–आर, मॉडल टाउन, पानीपन हरियाणा

पिन कोड .132103

मोबाइल न. – 9729302220

ऐतरेय ब्राह्मण में वैदिक निर्वचन

डॉ0 दिनेश चन्द्र, डॉ0 श्वेता अग्रहरि

सरांश :—

संसार के किसी भी धार्मिक साहित्य में ब्राह्मण जैसे ग्रन्थों का नितान्त अभाव है जिसमें कर्मकाण्ड का, विशेषकर यज्ञ—यज्ञादि के विधान का इतना सागेपाग विवेचन किया गया है। भट्टभाश्कर ने तैत्तिरीयसंहिता के भाष्य में लिखा है—ब्राह्मणं नाम कर्मणस्तन्मन्त्राणां च व्याख्यानग्रंथः।[1]

इस प्रकार यदि हम व्युत्पत्ति पर ध्यान दें तो यज्ञ के कर्मकाण्ड की व्याख्या एवं विवरण प्रस्तुत करना ब्राह्मण ग्रन्थों का मुख्य प्रतिपाद्य विशय रहा है।

ऐतरेयब्राह्मण में भी यज्ञ सम्बन्धी क्रिया की व्याख्या करते हुए कहा गया है— 'दूरोहरणं रोहति, तस्योक्तं ब्राह्मणम्'।[2] ब्राह्मण ग्रन्थों में न केवल यज्ञों की व्याख्या अपितु उन यज्ञों में प्रयुक्त होने वाले मन्त्रों के शब्दों के निर्वचन भी प्राप्त होते हैं। स्वंय आचार्य यास्क ने ब्राह्मण के अन्तर्गत निर्वचनों तथा अर्थों को अत्यधिक महत्त्व दिया है।

आचार्य ने प्रायः 'इति ब्राह्मणं, इति विज्ञायते' कहकर उन्हें उद्‌धृत किया है। निर्वचन के सन्दर्भ में आचार्य यास्क ने कहा है कि—'इदमन्तरेण मन्त्रेश्वर्थप्रत्ययो न विद्यते'[3] अर्थात् निर्वचन के आभाव में हम वेदार्थ की कल्पना ही नहीं कर सकते हैं। जैमिनीसूत्र के शबर भाश्य में ब्राह्मण ग्रन्थों के दस प्रतिपाद्य विशय वर्णित कियें गये हैं—

हेतुर्निर्वचनं निन्दा प्रशंसा संशयो विधिः।
परक्रिया पुराकल्पो व्यवधारण—कल्पना।।
उपमानं दशैते तु विधयो ब्राह्मणस्य तु।
एतत् स्यात् सर्ववेदेशु नियतं विधिलक्षणम्।।
(जै0सू0 —2.1.33)

इन विषयों पर दृष्टिपात करें तो हमें यह ज्ञात होगा कि निःसन्देह निर्वचन भी ब्राह्मण ग्रन्थों के एक मुख्य विषय बने रहे हैं।

यदि हम बात ऐतरेयब्राह्मण की करें तो इसमें अनेकानेक शब्दों के निर्वचन प्राप्त होते हैं। ऐतरेयब्राह्मण का प्रारम्भ सोमयाग के निरूपण से होता है। इसमें विशुसूक्त के मन्त्र 'इदं विशुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम्' की व्याख्या करते हुए कहा गया है कि 'त्रिकपालो वैशवः, त्रिर्हीदं विशुर्व्यक्रमत'[4] अर्थात् विष्णु के लिए तीन कपाल, क्यों?क्योंकि 'त्रिर्हीदं— विशुोर्व्यक्रमत' अर्थात् विष्णु ने इस सृष्टि को तीन पदों में नापा।

दीक्षणीया इष्टि के मन्त्रों के विनियोग के सन्दर्भ में कहा है कि होता को 'अग्निर्वृत्राणि जत्रनत्' (ऋ0—6.16.34) तथा 'त्वं सोमासि सत्पतिः' (ऋ0—1.91.5)। इन दोनों मन्त्रों का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि 'वृत्रं वा एश हन्ति यं यज्ञ उपनमति तस्माद् वार्त्रघ्नावेव कर्तव्यौ'[5] अर्थात् इस सोमयाग द्वारा वृत्र अर्थात् पापरूप शत्रु का वध किया जाता है। अतः वृत्र—हत्या सम्बन्धी दो मन्त्रों का ही प्रयोग करना चाहिए।

ऋक्परिशिष्ट के पावमानी ऋचा के मन्त्र 'अयं वेनाोदयत्पृश्निगर्भा'(ऋ0—10.123.1) में वेन की व्याख्या करते हुए कहा गया है कि वेन नाभि के अभिप्रेत के रूप में प्रयुक्त है क्योंकि इस नाभि से चक्षु आदि कुछ प्राण, ऊपर की ओर, कुछ नीचे की ओर होते हैं, इसलिए वेन शब्द का अर्थ नाभि है।[6] सोमयाग में अग्नि—प्रणयन के सन्दर्भ में ऋग्वेद के 10 वें मण्डल के 176 वें सूक्त के दूसरे मन्त्र 'प्र देवं देव्या धिया भरता जातवेदसम्' का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि यजमान ब्राह्मण हो तो इस गायत्री ऋचा का पाठ करें क्योकि ब्राह्मण का सम्बन्ध गायत्री से है तथा गायत्री तेज व ब्रह्मवर्चस से युक्त है, इसलिए यह यजमान को तेजस्वी तथा ब्रह्मवर्चसी बनाता है।[7]

चतुर्थ खण्ड में अग्नि व सोम के प्रणयन के सन्दर्भ में 'प्रैतु ब्रह्मणस्पति' इस ब्रह्मणस्पति देवताक ऋचा का प्रयोग किया गया है, ऐसा क्यों?तो बतलाया गया है कि 'ब्रह्म वै बृहस्पतिर्ब्रह्मैवाऽऽभ्यामेतत् पुरोगवमकर्ण वै ब्रह्मण्वद्रिश्यति'[8] अर्थात् बृहस्पति ही ब्रह्म है और ऋचा का पाठ करके ब्रह्म को इन दोनों का पुरोगन्ता बनाता है, इससे कर्म की हानि नहीं होती है।

ऐतरेयब्राह्मण के द्वितीय पश्चिका के पश्चम् अध्याय में निविद् शब्द का प्रयोग किया गया है। वस्तुतः यह निविद् ऋक्परिशिश्ट का भाग है। खिल के अध्याय 5 को निविद्ध्याय कहा गया है,

इसमें निविद्ध्याय के मंत्र 'अग्निर्देवेद्धः। अग्निर्मन्विद्धः अग्निःसुशमिता होता देववृतः' में अग्निर्मन्विद्धः की व्याख्या ऐतरेय ब्राह्मण में इस प्रकार की गयी है— 'अग्निर्मन्विद्ध इति शंसत्ययं वा अग्निर्मन्विद्ध इमं हि मनुश्या इन्धतेऽग्निमेव तदस्मिँल्लोक आयातयति'। (ऐ0ब्रा0—2.5.2)

निविद् की व्याख्या शतपथब्राह्मण में भी की गयी है।9 ऐतरेयब्राह्मण के चतुर्थ पश्चिका में ताक्ष्र्यसूक्त का वर्णन प्राप्त होता है। यह ताक्ष्र्यसूक्त भी ऋक्परिशिश्ट का ही अंश है, इसे ऋग्वेद के 10वें मण्डल में रखा गया है। दो खिल मन्त्रों में ताक्ष्र्य का निघण्टु में अम्‍ के पर्याय के रूप में कथित है, बाद में इसका तादात्म्य गरुढ़ के साथ हो गया। ऋग्वेद में भी इसे गरुढ़ पक्षी के रूप में वर्णित किया गया है।10 ऐतरेयब्राह्मण में ताक्ष्र्य को प्रथमगामी कहा गया है तथा यह वर्णित है कि अन्तरिक्ष में जो वायु है वह ताक्ष्र्य ही है—'ताक्ष्र्यो ह वा एतं

पूर्वोऽध्वानमैत्, अयं वै ताक्ष्यों योऽयं पवते, एश स्वर्गस्य लोकस्याभिवोजा'। (ऐ0ब्रा0–4.3.6)

ऐतरेयब्राह्मण के तृतीय सवन का वर्णन करते हुए कुन्तापसूक्त के मन्त्रों तथा उनमें प्रयुक्त शब्दों के अर्थों का विवेचन किया गया है। कुन्तापसूक्त ऋक्परिशिश्ट का ही भाग है जो अथर्ववेद के शौनक शाखा के 20वें काण्ड में पाया जाता है।

कुन्तापसूक्त के कुछ विशिश्ट ऋचाओं का विनियोग व निर्वचन, आख्यान के रूप में ऐतरेयब्राह्मण में प्राप्त होता है। इन सूक्तों में सर्वप्रथम नाराशंस ऋचाओं का वर्णन किया गया है। नाराशंस की व्याख्या इस ब्राह्मण में आख्यान के रूप में वर्णित करते हुए कहा गया है कि 'प्रजा वै नरो वाक्शंसः'[11] यहाँ नर शब्द प्रजा विवक्षित है और शंस शब्द वाक् से। आगे रैभ्य ऋचा का वर्णन किया गया है। ऋक्परिशिष्ट के 5.9.1–3 मन्त्र रैभ्य कहे गये हैं, ऐतरेयब्राह्मण में रैभ्य का तात्त्पर्य शब्द के रूप में लिया गया है।

ऐतरेय में इसकी इस प्रकार से व्याख्या की गयी है– 'रेभन्तो वै देवाश्च ऋशयश्च स्वर्गं लोकमायंस्तथैवेतद्यजमाना रेभन्त एव स्वर्गं लोकं यन्ति' (ऐ0ब्रा0–6.5.6)

आगे जनकल्प ऋचा जो कि खिल के 5.13.1–6 के मन्त्रों में वर्णित है उसकी व्याख्या करते हुए कहा गया है कि– जनकल्पाः शंसति, प्रजा वै जनकल्पा,दिश एव तत्कल्पयित्वा तासु प्रजाः प्रतिष्ठापयति[12] अर्थात् जनकल्प ही प्रजा है, इस प्रकार उन दिशाओं में प्रजाओं को प्रतिष्ठित करता है। इसी प्रकार से ऐतशप्रलाप, प्रवह्लिका, देवनीथ इत्यादि खिल के ऋचाओं की व्याख्या ऐतरेयब्राह्मण में उपलब्ध है।

यज्ञों के सम्पादन में इश्टि का विशेष महत्व है। इस इश्टि का निर्वचन करते हुए कहा गया है कि इष्टियों का इष्टित्व इसलिए है क्योंकि इनके द्वारा यज्ञ को खोजने की इच्छा की गयी।[13] आचार्य सायण ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा है कि–'इच्छन्ति–यज्ञमाभिरितिश्टिशब्दव्युत्पत्तिः'। आहूति शब्द का निर्वचन करते हुए कहा है कि इसके द्वारा यजमान देवताओं को बुलाते है, इसलिए इसे आहूति कहा जाता है–'आहूतयो वै नामैता यदाहुतय एताभिर्वै देवान् यजमानो ह्वयति तदाहुतीनामाहूतित्वम्'।[14] होता का निर्वचन करते हुए बतलाया गया है कि आह्ववाहन करने के कारण होता कहा जाता है–'देवता अमुमावहामुमाव– हेत्यावाहयति तदेव होतुर्होतृत्वं होता भवति'।[15] प्रैश मंत्र को प्रैश क्यो कहा जाता है तो कहा है–'यज्ञो वै देवेभ्य उद्क्रामत्,तं प्रैशः प्रैशमच्छन्' यज्ञ को प्रैश मन्त्र से देवों ने बुलाया इसलिए–'यत् प्रैशैः प्रैशैमैच्छंस्तत्प्रैशाणां प्रैशत्वम्'।[16]

पुनः पुरोरुक् शब्द का निर्वचन करते हुए बतलाया गया है कि–'यत्–पुरोरुग्भिः प्रारोचयंस्तत्पुरोरुचां पुरोरुक्त्वम्'। (ऐ0ब्रा03/1/9)। ग्रह शब्द के सन्दर्भ में वर्णित कि 'यद् वित्तं ग्रहैर्व्यगृह्णत तद् ग्रहाणां ग्रहत्वम्'[17] अर्थात् ग्रहण करने के कारण इनको ग्रह कहा जाता है। आचार्य सायण ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा है कि–'तस्माद् ग्रहणस्य स्वीकारस्य हेतुत्वाद् ग्रहनाम् संपन्नम्'। निविद् के विशय में कहा है कि –'तं वित्त्वा निविद्भिर्न्यवेदयन्'[18] यज्ञ को पाकर निविदों से उन्होंने निवेदन किया। अतः निवेदन अर्थ में होने के कारण इसका नाम निविद् पड़ा। इसकी व्याख्या आचार्य सायण ने किया है कि–'तस्मान्निवेदनस्य परबोधनार्थकथनस्य हेतुत्वान्निविन्नाम संपन्नम्'।

उत्तरपूर्व दिशा को अपराजित दिशा क्यों कहा जाता है। इसके सन्दर्भ में भी एक आख्यान वर्णित है– 'उदीच्यां प्राच्यां दिश्ययतन्त, ते ततो न पराजयन्त सैषा दिगपराजिता तस्मादेतस्यां दिशि यतेत वा यातयेद्वेद्वारो हानृणाकर्तोः'।।[19]

इस प्रकार जब हम सम्पूर्ण ऐतरेयब्राह्मण का अध्ययन करते हैं, तो यह ज्ञात होता है कि इसमें अनेकों प्रकार के प्रशंसा, गाथा, निषेधवाक्य, प्रायचित–कर्म, प्रसर्पणविधान, अग्निहोत्र, सोमयाज्ञ, अग्निष्टोमयाग में मन्त्रों का विनियोग, उनकी व्याख्या है और इसी सन्दर्भ में अनेकों शब्दों के निर्वचन भी बहुतया रूप से प्राप्त होते हैं।

सन्दर्भ–

1. भट्टभाश्कर तैत्तिरीयसंहिता भाश्य–1.5.1
2. ऐ0ब्रा0–6.4.9
3. निरुक्त–1.5
4. ऐ0ब्रा0–1.1.1
5. ऐ0ब्रा0–1.1.4
6. वेनोऽमाह्वा ऊर्ध्वा अन्ये प्राणा वेनन्त्यवाíाेऽन्ये तसमाद्वेनः प्राणो वा अयं सन्नाभेरिति तस्मान्नाभिस्तन्नाभेर्नाभित्वं प्राणवार्स्मिस्तद्दधाति। (ऐ0ब्रा0–1.4.3)
7. गायत्रो वै ब्राह्मणस्तेजो वै ब्रह्मवर्चसं गायत्री तेजसैवैनं तद् ब्रह्मवर्चसेन समर्धयति। (ऐ0ब्रा0–1.5.2)
8. ऐ0ब्रा0–1.5.4
9. मैत्रावरुणचमसेन गृह्यति। यत्रं वे देवेभ्यो यज्ञोऽपाक्रामत्तमेतद्देवाः प्रैशैरेव प्रैशमैछन्पुरोरुग्भिः प्रारोचयन्निविद्भर्न्यवेदयं स्त स्मान्मैत्रावरुणचमसेन गृह्यति। (शत0ब्रा0–3.9.3.28)
10. त्यमूशुवाजिनंदेवजूतंसहावानंतरुतारं रथानम्। अरिष्टनेमिंप्रितनाजमाशुंस्वस्तवे ताक्ष्यं मिहा हुवेम।। (ऋ0–10. 178.6)
11. ऐ0ब्रा0–6.5.6
12. ऐ0ब्रा0–6.5.6
13. प्रैशमैच्छंस्तदिष्टीना मिश्टित्वं। (ऐ0ब्रा0–1.2.1)
14. ऐ0ब्रा0–1.1.2
15. ऐ0ब्रा0–1.1.2
16. ऐ0ब्रा0–3.1.9

17. ऐ0ब्रा0–3.1.9
18. ऐ0ब्रा0–3.1.9
19. ऐ0ब्रा0–1.3.3

डॉ0 दिनेश चन्द्र शुक्ल
सहायक आचार्य
संस्कृत विभाग, मानविकी सटाय
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी–221002

डॉ0 श्वेता अग्रहरि
(एस.आर.एफ.)
अतिथि अध्यापिका
संस्कृत विभाग, मानविकी सटाय
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी–221002

17

संस्कृत साहित्य में हरियाणा की भूमिका

डॉ0 अनीता

सरांश :–

संस्कृत साहित्य में हरियाणा की भूमिका विषय का अध्ययन करने से पहले थोड़ा–सा संस्कृत साहित्य के बारे में जानना जरूरी है। संस्कृत शब्द सम्+ङकभ+क्त् धातु से बना है। जिसका शाब्दिक अर्थ है – स्वच्छ, सुन्दर, परिष्कृतम रूप।

''संस्कृत साहित्य के बौद्ध कवियों में अश्वघोष का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अभिजात्य वर्ग (विशेषतया ब्राह्मण वर्ग) का ध्यान बौद्ध सिद्धान्तों की ओर आकृष्ट करने के लिए संस्कृत के माध्यम से उन्हें अभिव्यक्त किया।''[1] उन्होंने अपनी रचनाओं में वाल्मीकि और कालिदास की तरह सख्त बोधगमय भाषा शैली का प्रयोग किया। ''साहित्य शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ–शब्द और अर्थ के यथावत सहभाव की को साहित्य कहते हैं – हितेन सहितः साहित्यम् अर्थात् जिसमें हित का भाव हो, वह साहित्य होता है।''[2] संस्कृत में 'साहित्य' के स्थान पर 'काव्य' शब्द का प्रयोग मिलता है, किन्तु सातवीं–आठवीं शती में साहित्य शब्द का इसी अर्थ में प्रयोग प्रचलित हुआ। साहित्य शब्द काव्य का परवर्ती उत्तराधिकारी माना गया है। ''संस्कृत साहित्य के अखण्ड भण्डार के एक बहुत विस्तृत और महत्त्वपूर्ण अंश की रचना भारतवर्ष के उस भाग में हुई थी जिसने आज से 14 वर्ष पहले एक बार फिर हरियाणा प्रान्त के नाम से अपना सहस्रों वर्ष पुराना स्वरूप प्राप्त किया था।'' संसार के प्राचीनतम आर्य ग्रंथ ऋग्वेद से लेकर विभिन्न समय और स्थानों पर भारतवर्ष के इस प्रान्त का अथवा इसके मुख्य भागों का विभिन्न नामों से वर्णन किया गया है। हरियाणा क्षेत्र की आज की सीमाएँ उत्तर वैदिक साहित्य में प्राप्त कुरुक्षेत्र की सीमाओं से लगभग पूर्ण रूप से मेल खाती हैं।

हरियाणा के उत्तर में जो शिवालिक पर्वतमाला इस समय है, प्राचीन काल में इसे साल्व गिरि कहा जाता था। मोरनी का वर्तमान पहाड़ मयूरगिरि कहलाता था और कसौली की पर्वत श्रृंखला का किंशूलवागिरि था। साहित्य में इस प्रदेश के अनेकों वनों के नाम आते हैं। महाभारत के समय में ये सात नाम अधिक लोकप्रिय थे – 1. काम्यकवन 2. अदितिवन, 3. फलकीवन, 4. व्यासवन, 5. मधुवन, 6. शीतवन, 7. सूर्यवन। इन सात वनों के अतिरिक्त साहित्य में कुरुक्षेत्र प्रदेश के कुछ और वनों का भी वर्णन मिलता है। जैसे द्वैत वन, खाण्डवन वन, भारूण्ड वन आदि। इस प्रदेश की कितनी ही झीलों तथा कमलों से सुशोषित सरोवरों का वर्णन भी साहित्य में आता है।

''ऋग्वेद की शर्यणावत झील कदाचित सिरसा–हिसार के इलाके में थी। सन्निति सोवन का नाम भी साहित्य में बहुत स्थानों पर मिलता है।''[4] यह सरोवर वर्तमान कुरुक्षेत्र के पास ही है। हरियाणा प्रदेश के कितने ही नगरों के पास प्राचीनतम संस्कृत साहित्य में मिलते हैं। स्वयं ऋग्वेद में मानुष तथा इलायास्पद का वर्णन है। बौद्ध साहित्य में युणा–थानेसर स्त्रुघ्न–सुध, रोहीतक–रोहतक, अग्रोदक–अग्रोहा आदि नाम मिलते हैं। सरस्वती तथा दृषदूती का पवित्र दोआब मानो हरियाणा प्रदेश का उदय था। मनुस्मृति आर्य सभ्यता के इस प्रदेश से बाहर विस्तार का अत्यन्त रोचक साक्ष्य प्रस्तुत करती है। मनु ने आर्यजाति के द्वारा क्रमशः इन चार–भूखण्डों की सीमाएँ दी हैं। – 1. ब्रह्मवर्त, 2. ब्रह्मर्षि देश, 3. मध्य देश, 4. आर्यवर्त।

संस्कृत साहित्य में कितने ही आख्यान हैं जो, महाप्रलय से सरस्वती का सम्बन्ध दर्शाते हैं। सरस्वती के द्वारा वडवानल का पश्चिमोदधि को ले जाया जाना। भगवान शिव के द्वारा सरस्वती के मार्ग से जाकर त्रिपुरदाह करना और महर्षि उतथ्य द्वारा समुद्र का सारा जल पी लेना और सरस्वती को मरूस्थल में अन्तर्हित होकर जाने के लिए कहना आदि कथाओं से इस प्रदेश पर उसके दुष्प्रभाव का संकेत मिलता है। भारतीय संस्कृति के आदि स्रोत ऋग्वेद को ही लीजिए। ऋग्वेद के अनेक सूक्तों में सरस्वती नदी का वर्णन है।

श्रीमद्भागवत को विशिष्ट रूप से भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा अर्जुन को उस समय सुनाया गया था। जब कुरुक्षेत्र के समरांगण में वे दोनों सेनाओं के मध्य में उपस्थित थे। महाभारत के वनपर्व तथा शल्यपर्व के तीर्थ–यात्रा से सम्बन्धित अध्याय हरियाणा के असंख्य तीर्थ स्थानों का वर्णन का वर्णन करते हैं और इस प्रदेश के कुरुवंश का इतिहास तो इस महाकाव्य का आधार है। यह कहना अनावश्यक है कि संस्कृत साहित्य के अनेक महाकाव्यों, काव्यों, गद्य–काव्यों, नाटकों आख्यानों और दूसरे ग्रंथों के लिए महाभारत उपजीव्य काव्य रहा है।

महाभारतकार ने स्वयं बड़े गर्वपूर्वक कहा है –

'धर्मचार्ये चकामे च मोक्षे च भारतर्षभ।
यदिहस्ति तदन्यत्र चन्नेहास्ति न तत्क्वचित्।'

कितने ही विद्वानों ने संस्कृत भाषा को अपनी साहित्य सेवा का माध्यम बनाया और काव्य गद्य, निबन्ध और नाट्य की विधाओं में मौलिक कृतियों की रचना की है और आज भी साहित्य सेवा में संलग्न है। ''इनमें से हरियाणा सरकार ने सम्मानित भी किया है। इनमें जिला सरकार करनाल ग्राम कौल के पंडित माधवाचार्य और बुवाना, लाखू गाँव के श्री विष्णुमित्र शास्त्री,जिला जींद ग्राम रटौली के पंडित छज्जूराम तथा जिला कुरुक्षेत्र ग्राम बारणा के पंडित भिक्षाराम उल्लेखनीय है।''[5]

आधुनिक हरियाणा के विद्वानों का यह संस्कृत प्रेम कई रूपों मं निखरा। कुछ ने संस्कृत पठन–पाठ को जीविका के रूप में अपनाया

और अनुपलब्ध प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों का संपादन करके और उनके संशुद्ध संस्करण प्रकाशित करके साहित्य सेवा की। इनमें दिवंगत आचार्य रघुवीर का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ''इन्होंने कई वैदिक ग्रन्थों का संपादन किया। तिब्बती भाष से संस्कृत ग्रन्थों का उद्धार किया और कपिष्ठल कंठ संहिता तथा जैमिनीय ब्राह्मण आदि के समीक्षात्मक संस्करण पहली बार प्रस्तुत किए।''[6] कितने ही कोशों की भी इन्होंने रचना की। इस कार्य से अब इनके सुपुत्र डॉ. लोकेश उसी कर्त्तव्यनिष्ठा से देहली में अपने शोध संस्थान में चला रहे हैं। आचार्य रघुवीर का परिवार हरियाणा के जगाधरी नगर से संबंधित है।

कुछ विद्वानों ने विलुप्त संस्कृत ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ एकत्रत करने का कठिन कार्य संभाला। ''इनमें थानेसार के वयोवृद्ध संस्कृत आचार्य पंडित स्याणुदत्त शर्मा का विशिष्ट स्थान है। पंडित जी संस्कृतभाषा के प्रकाण्ड पंडित तथा कर्मकाण्ड के अनन्य विद्वान माने जाते हैं और इन्होंने देश के कोने–कोने से अमूल्य संस्कृत ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ एकत्रित की हैं जो कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में संगृहीत हैं।''[7] इस कार्य के साथ–साथ इन्होंने व्याकरणशास्त्र में प्रकाशवर्ष की गणपाठनिवृत्ति और दशबल–कारिका, साहित्यशास्त्र में श्रीमदयती शदद्ररू के व्युत्पत्तिसार और हरयशा : उद्धार एवं ज्योतिष शास्त्र में प्रश्नमालिका आदि ग्रन्थों का संपादन किया है। इनके अगाध संस्कृत प्रेम और निःस्वार्थ साहित्य सेवा के उपलक्ष में इन्हें प्रादेशिक तथा केन्द्रीय सरकारों और विभिन्न साहित्यिक और सामाजिक संस्थाओं के द्वारा सम्मानित किया गया है। महाकवि दण्डी ने भी अवन्तिसुन्दी कथा में कहा है –

'यथा रस्वती दृषद्वत्योरन्तरं .....।'

''जिला हिसार गाँव मलकाना के पंडित रामेश्वर दत्त ने सुभाषित चरितम् और कुछ विकीर्ण लेख, और जिला भिवानी ग्राम बरे के पंडित शिवराम शास्त्री ने हरियाणा वैभवम् काव्य लिखे हैं तथा जिला करनाल गाँव सुताना के विद्यानिधि शास्त्री ने व्यवहार भानु मैत्रायणी सूक्ति संग्रह और दयानन्दर्षिचरितम श्री गुरु ब्रह्मानन्द स्तोत्रम् आदि पुस्तकों की रचना है।'' विद्वान लेखकों के अतिरिक्त हरियाणा प्रदेश में निस्संदेह और भी कई विद्वान संस्कृत साहित्य की निस्पृह सेवा में निरत होंगे। यह संक्षिप्त सूची तो केवल एक प्रवृत्ति के अस्तित्व की परिचायक मात्र है।

निष्कर्ष:

संस्कृत साहित्य के आदिकाल से लेकर वर्तमान समय तक भारत के इस भाग में अविच्छिन्न रूप से मन्त्रद्रष्टा ऋषियों, ब्रह्मवेता मनीषियों और सहृदय साहित्यकारों के द्वारा अनन्य प्रकार से साहित्य सेवा की गई है।

सन्दर्भ–सूची

1. योगेश व्यास दक्ष, पृ. 139
2. डॉ. रामचन्द्र वर्मा एवं मीरा जालान, पृ. 239
3. डॉ. जय भगवान गोयल, हरियाणा पुरातत्त्व, इतिहास संस्कृत साहित्य एवं लोकवार्ता, पृ. 75
4. डॉ. जय भगवान गोयल, हरियाणा पुरातत्त्व, इतिहास संस्कृत साहित्य एवं लोकवार्ता, पृ. 77
5. डॉ. जय भगवान गोयल, हरियाणा पुरातत्त्व, इतिहास संस्कृत साहित्य एवं लोकवार्ता, पृ. 85

डॉ0 अनीता

सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग

श्री ऑरबिंदो कॉलेज, (सांध्य)

मालवीय नगर,

दिल्ली

18

गजानन माधव मुक्तिबोध का जीवन–दर्शन

कंचन गिरि

सारांश :–

सर्वप्रथम हम 'दर्शन' शब्द पर विचार करेंगे। दर्शन का अर्थ होता है विधिपूर्वक, तर्कपूर्ण एवं क्रमबद्ध विचार की कला, जिसका जन्म अनुभव एवं परिस्थिति के अनुसार होता है। जीवन–दर्शन का अर्थ होता है स्वयं की शक्तियों को पहचानना। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ आदर्श होते हैं, जिनपर वह चलता है, उसको मानता है और जीवन पर्यंत वह उन आदर्शों का पालन करता है। परिस्थितियाँ चाहे जितनी भी प्रतिकूल क्यों न हो लेकिन वह उस रास्ते पर हमेशा अग्रसर होते रहता है। यह आदर्श किसी व्यक्ति के अन्दर अचानक उत्पन्न नहीं होता, बल्कि किसी के संपर्क में आने से, अपने माता–पिता, परिवार, मित्र या गुरु से प्राप्त होता है, जिसपर मनुष्य चलता है और यही आदर्श आगे चलकर । उसे सत्य मार्ग पर चलने कि प्रेरणा देते हैं। यह आदर्श ही उस व्यक्ति का जीवन–दर्शन होता है।

बीज शब्द – जीवन–दर्शन, दृष्टि, संघर्ष, आदर्श, प्रगतिवाद, उच्चकोटि, मार्क्सवाद।

पूर्व अवधारणा :–

किसी भी रचनाकार के जीवन–दर्शन को समझने के लिए सबसे पहले उसके व्यक्तित्व को जानना बहुत जरूरी है। क्योंकि व्यक्तित्व जितना प्रखर होगा जीवन दृष्टि भी उतनी उच्च कोटि की होगी। व्यक्तित्व निर्माण में बहुत सारे कारक उत्तरदायी होते हैं, जिनमें सबसे महत्वपूर्ण कारक है उसका परिवार, माता–पिता, मित्र और उसका परिवेश। इन सभी कारकों से प्रभावित होकर ही एक व्यक्ति अपने जीवन का सिद्धांत प्रतिपादित करता है, और जीवन–पर्यंत उस सिद्धांत का पालन करता है, यह करते हुए उसे चाहे जितनी भी विपरीत परिस्थितियों का सामना क्यों नहीं करना पड़े।

प्रस्तावना :–

मुक्तिबोध का जीवन भी संघर्षों से भरा रहा और इस संघर्ष के दौरान उन्होंने विपरीत परिस्थितियों से बहुत कुछ सीखा। कभी–कभी हमारे मन में यह विचार उठता है कि एक युग के सभी रचनाकारों की रचनाएँ एक ही विचारधारा से जुड़ी होनी चाहिए, एक ही युग की भिन्न–भिन्न रचनाएँ उनके सोचने का तरीका एक सामान होनी चाहिए। लेकिन मुक्तिबोध ने इन सभी भ्रमों को तोड़ दिया। वैसे तो मुक्तिबोध का प्रयोगवाद के प्रमुख कवियों में महत्वपूर्ण स्थान रहा है लेकिन वे प्रयोगवाद तक ही सीमित नहीं है, उनके काव्य में अस्तित्ववाद, मार्क्सवाद, रहस्यवाद और यथार्थवाद के भी दर्शन होते हैं। साहित्य के माध्यम से उन्होंने जीवन से संबंधित सभी प्रश्नों पर स्वतंत्र रूप से चिंतन किया तथा अपने विचार को अभिव्यक्त किया। मुक्तिबोध के दर्शन को जानने के लिए उनके काव्य पर भी दृष्टि डालना बहुत जरुरी है जो हम आगे करेंगे।

अध्ययन का महत्व :–

मुक्तिबोध का जीवन–दर्शन बहुत उच्चकोटि का है। मुक्तिबोध ने जीवन भर संघर्ष किया। चाहे वह पारिवारिक संस्कारों का संघर्ष हो या संबंधों का, चाहे आर्थिक संघर्ष हो या फिर सिद्धांतों का। यह संघर्ष ही उनके जीवन के आदर्श को उस उच्चता तक ले जाती है जहाँ पहुँचना आम कवियों के वश की बात नहीं है। यह शोध आलेख समाज को सत्य से परिचित कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

अध्ययन का उद्देश्य :–

मुक्तिबोध को प्रगतिशील धारा के कवि के रूप में जाना जाता है, किन्तु प्रगतिशील धारा के जितने भी कवि थे उनमें मुक्तिबोध की विचारधारा सबसे अलग थी। यही कारण था कि उन्हें अपने जीवन में विरोधों का सामना करना पड़ा। वास्तव में मुक्तिबोध ने अपने जीवन में कभी समझौता नहीं किया, जिसके कारण उन्हें जीवन भर संघर्ष करना पड़ा। समाज के सम्मुख उनके जीवन के सत्य और उच्चकोटि के आदर्श को प्रकट करना ही इस शोध–आलेख का मुख्य उद्देश्य है। मैं आशा करती हूँ कि इस शोध आलेख से अन्य साहित्यकार भी लाभान्वित होंगे तथा समाज के सामने सत्य प्रकट करने में निर्भीकता का परिचय देंगे।

परिकल्पना :–

मुक्तिबोध कवि कर्म को सामाजिक सरोकार से जोड़कर देखते हैं। यही कारण है कि सामाजिक समस्याओं को अभिव्यक्त करने के लिए उन्होंने जिस काव्य–पद्धति को चुना वह लोगों के लिए दुरूह थी। इस दुरूहता के कारण ही उनके जीवन–दृष्टि के सम्बन्ध में लोगों की अलग–अलग धारणाएं हैं। उन्हें विश्लेषित करने के क्रम में प्रगतिवादी, भाववादी, मार्क्सवादी अस्तित्ववादी आदि परस्पर विरोधी मान्यताओं के कवि के रूप में सिद्ध करने का प्रयास किया गया है। मुक्तिबोध की कविताओं में सभी तरह के भाव विद्यमान हैं, क्योंकि वे अपने समय के जुझारू और जागरूक कवि थे। एक कवि का समाज, जीवन–जगत व साहित्य के प्रति जो उसके विचार होते हैं, उसे ही हम उसकी जीवन–दृष्टि कहते हैं। यह जीवन–दृष्टि किसी भी कवि को उसके जीवन के विपरीत परिस्थितियों और संघर्षों के परिणामस्वरूप प्राप्त होता है। और इन विपरीत परिस्थितियों से जूझता हुआ कवि अपने काव्य के माध्यम से उन सारे सवालों का हल खोजने का प्रयास करता है। इस क्रम में मुक्तिबोध की जीवन–दृष्टि व्यापक स्तर पर विकसित हुई है। जीवन–दर्शन के सम्बन्ध में उन्होंने स्वयं यह स्वीकार किया है कि– "किसी न किसी रूप में हमारे पास व्यापक जीवन–दर्शन की आवश्यकता है। इसमें अगर कुछ भी न हो तब भी वे बुनियादी बातें तो हो, जिन्हें साधारण जन अपने ह्रदय में धारण करते हैं। जैसे–अन्याय का प्रतिकार, मानव सभ्यता की स्थापना का प्रयत्न, विकृत स्वार्थ और भ्रष्टाचार का विरोध, समझौता परस्ती के खिलाफ लड़ाई और साधारण भारतीय जनमत के प्रति भक्ति और अनुराग। क्या ये बातें किसी व्यापक जीवन–दर्शन के अंतर्गत नहीं आ सकती?क्या जीवन दर्शन के लिए हमें पश्चिमी सूक्ष्मताओं की पच्चीकारियों तक जाना होगा?"[1] मुक्तिबोध

की बौद्धिकता बहुत उच्चकोटि की थी, जो उनके जीवन–दर्शन को भी उच्चकोटि की बनाती है।

प्रासंगिकता :–

मुक्तिबोध ने अपने जीवन की किश्ती को बेतहाशा दौड़ाया किन्तु आर्थिक कठिनाइयों से कभी भी अपना पीछा नहीं छुड़ा पाए। इनके जीवन में आर्थिक कठिनाइयाँ मानो एक अभिशाप बनकर रह गयी थी। उन्होंने अपने जीवन में न जाने कितनी ही नौकरियाँ की किन्तु आर्थिक स्थिति को संतुलित न कर सके। और परिणाम यह हुआ कि जीवन में एक तनाव की स्थिति बनी रही। प्रतिभा और आत्म–सम्मान के द्वंद्वको झेलते रहे किन्तु कोई भी आत्मविरोधी कार्य नहीं किया। इस सम्बन्ध में किशोरी लाल शुक्ल ने लिखा है – "जिस पद पर मुक्तिबोध की नियुक्ति हुई थी उसके लिए मेरे एक रिश्तेदार ने भी अप्लाई किया था। वह पीएच०डी० थी। फिर भी कई कारण थे कि हमने मुक्तिबोध को लेना उचित समझा। नियुक्ति के बाद जब उन्हें यह बात पता चली तो वह अपना त्यागपत्र लेकर मेरे पास आये और भावुक लहजे में कहा कि मेरे वजह से दूसरे उम्मीदवार के साथ अन्याय हुआ है, चूँकि वह मुझसे ज्यादा क्वालीफाईड थी मैंने उन्हें समझाया की चिंता करने की जरूरत नहीं है, आपकी योग्यता हम बखूबी जानते हैं।"[2] आत्मसम्मान व प्रतिभा का द्वंद्वइनसे अधिक शायद ही किसी ने झेला हो, किन्तु फिर भी इन्होंने आर्थिक प्रलोभन को कभी भी नैतिक मूल्यों से ऊपर नहीं उठने दिया। इसका एक उदाहरण यहाँ पर द्रष्टव्य है–"शरद कोठारी को एक बार मुक्तिबोध ने बताया था कि किस प्रकार एक आई०जी० (पुलिस) ने उन्हें पैसे का लालच देकर इन्फार्मर बनाने के लिए फुसलाया था और किस प्रकार उसके सदाशय के प्रति उन्होंने अपनी विवशता प्रकट की थी।"[3] इनका जीवन वह्यानुरोधों के कारण और भी प्रभावकारी होता गया। आम मनुष्य संघर्ष के अलग–अलग रास्तों पर चलकर रुकजाते हैं, किन्तु उन्होंने अपनी विरोधी परिस्थितियों का सामना किया और अपने जीवन मूल्यों को चरमोत्कर्ष दशा में पहुँचाया। उनमें आत्मचिंतन करने की प्रवृत्ति आम कवियों की अपेक्षा अधिक है वे 'चकमक की चिंगारियों' कविता में लिखते हैं–

"मैं अपनी अधूरी दीर्घ कविता में
उमगकर जन्म लेना चाहता फिर से
कि व्याक्तित्वान्तरित होकर
नए सिरे से समझाना और जीना
चाहता हूँ सच।"[4]

सत्य को समझना है तो जीने की इच्छा भी होनी चाहिए। क्योंकि किसी भी समाज का सत्य हमेशा एक सा नहीं होता। सत्य समय के साथ निरंतर परिवर्तित होते रहता है, इसलिए उसके अनुरूप अपने व्यक्तित्व को भी परिवर्तित करते रहने की आवश्यकता होती है। मुक्तिबोध ने समाज की ज्वलंत समस्याओं को उद्घाटित करने में स्वयं के आत्म–विश्लेषण, यथार्थबोध और दायित्व चेतना का प्रखर परिचय दिया हैं।

"भूल–गलती,
आज बैठी है जिरह तक्ख, बक्खत पहनकर
तख्त पर दिल के,
चमकते हैं खड़े उसके हथियार दूर तक,
आँखे चिलकती हैं नुकीली तेज पत्थर–सी
खड़ी है सिर झुकाए
सब कतारें,
बेजुबान बेबस सलाम में,
अनगिनत खम्भों व मेहराबों–थमे
दरबार आम में।"[5]

इस कविता में सच्चाई का साथ देने वाला कोई नहीं है मुगल दरबार के समक्ष न्याय बुरी तरह से घायल बंदी बना हुआ खड़ा है। मुक्तिबोध किसी तरह का अन्याय या शोषण नहीं सह सकते थे। उनपर मार्क्सवाद का गहरा प्रभाव था फिर भी कहीं न कहीं मार्क्सवाद की संकीर्ण विचारधाराओं से उन्हें चिढ़ थी। जिसका परिणाम यह हुआ कि जितना संघर्ष उन्हें प्रतिक्रियावादियों से झेलना पड़ा उससे ज्यादा प्रगतिवादियों से। शैलेन्द्र कुमार के शब्दों में–"प्रगतिवादी कहलाने वालों का विरोध भी मुक्तिबोध को सहन करना पड़ा। वस्तुतः वे सब प्रगतिशील नहीं थे, बस समझे जाते थे। उनकी चाल–ढाल, रहन–सहन, व्यवहार आदि सब अवसरवादी था और उनकी प्रगति का स्वरुप एक ढर्रे के सहारे निहित स्वार्थों का पोषक था। मुक्तिबोध ने प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष इस ढोल की पोल को उघारने का प्रयास किया, खोखलेपन को उजागर किया। तथाकथित साधन–संपन्न्स साहित्यकारों की दुनिया के मुकाबले मुक्तिबोध ने अपने मंडल को प्रभाहीन नहीं होने दिया।"[6] उन्हें अपने जीवन में सदैव विरोधों का सामना करना पड़ा। प्रगतिवादी लेखकों के विरोध को झेलने के बाद उन्होंने साहित्य के क्षेत्र में स्वयं को शून्य में विचरण करते पाया। हिन्दी के नए समीक्षकों ने जब कलात्मक अनुभूति एवं जीवनानुभूति को अलग–अलग दृष्टि से देखने की बात कही, तब मुक्तिबोध को इस बात से समाज और कवि के बीच एक गहरी खाई दिखलाई पड़ी। तब उन्होंने कला से संबंधित प्रश्नों को जीवन के साथ जोड़ने का कार्य किया। मुक्तिबोध यह मानते हैं कि यदि जीवन है तभी कला है। वे कहते हैं कि–"जीवन प्रधान है। जीवन न रहा तो कला कैसी? साहित्य कैसा?लेकिन सोचो तो कि जिस अनुभव संवेदन को तुम प्रकट नहीं करोगे, तुम न बताओगे तो किसको क्या पड़ी है कि वह बताये। अपने अनुभवों का तुम महत्व पहचानो। सामाजिक दृष्टि से तुम्हारा स्थान कुछ नहीं इसलिए तुम अपने को हेठा या छोटा मत समझो। तुम मात्र एक संवेदनशील माध्यम हो। अपने जाने या अनजाने हेठा या छोटा समझकर इस माध्यम से विकृत मत करो अपने ही ईमानदार अनुभव संवेदन को स्थाई भावों के फेयर पर्स प्रेक्टिव (सही परिप्रेक्ष्य) में पहचानो।"[7]

मुक्तिबोध ने साहित्य को व्यक्ति एवं समाज का सच्चा प्रतिनिधि माना है। उनके अनुसार एक साहित्यकार को किसी एक प्रवृत्ति या वाद के घेरे से परे मानव संवेदनाओं, स्व की अनुभूतियों का ईमानदारी पूर्वक अभिव्यक्ति करना चाहिए ताकि हमारे समाज की मूल संवेदनाएं साहित्य के माध्यम से प्रकट हो सके। जैसा कि उन्होंने स्वयं भी किया है वे 'मेरे लोग' कविता में कहते हैं

कि–"तुम्हारे शब्द मेरे शब्द, मानव देह धारण कर
असंख्य स्त्री पुरुष बालक,
बने, जग, में भटकते हैं
कहीं जनमें, नए इस्पात को पाने।
झुलसते जा रहे आग में
या मूँद रहे हैं धुल–धक्कड़ में,
किसी की खोज है उनको,
किसी नेतृत्व की"8

इस कविता में मुक्तिबोध ने गरीबी में जीने वालों उन मैले–कुचौले बच्चों के कष्ट को सहने की क्षमता का वर्णन किया है। वास्तव में इन्होंने व्यक्ति समस्या को मानव समस्या बनाकर व्यापक स्तर पर उसे उभारने का प्रयास किया है। इनकी कविता अद्‌भुत संकेतों से भरी जिज्ञासाओं से अस्थिर कभी दूर से ही शोर मचाती कभी कानों में चुप–चाप राज की बातें कहती चलती हैं। कुछ कविताओं को पढ़कर ऐसा लगता है जैसे हमारे ऊपर बीती हुई बातों को हमसे ही कह रही है। वास्तव में मुक्तिबोध ने अंग्रेजी शासन, युद्धकाल, सामंती साम्प्रदायिकता प्रकाशकों की क्रिया–प्रतिक्रिया सब कुछ झेला था। उन्होंने जीवन–विवेक, जीवन–मर्मज्ञता, जीवन यथार्थ और मानवीय संघर्ष की यथार्थता को मात्र तटस्थ होकर देखा ही नहीं, बल्कि उसे व्यावहारिक स्तर पर झेला भी। मुक्तिबोध वर्तमान समाज में परिवर्तन करना चाहते थे। इनकी कविता साफ–साफ जिंदगी को प्रतिबिंबित करने वाली हैं। उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही काव्य था। इनकी कविता 'मेरे सहचर मित्र' में उनके व्यक्तित्व के अन्तर्वाह्य संघर्ष का चित्र साफ झलकता है–

"मैं स्याहचन्द्र का फ्यूज–बल्व
जल्दी निकाल
पावन प्रकाश का प्राण बल्व
वह लगा सकूँ
जो बल्व तुम्ही ने श्रम पूर्वक तैयार किया
विक्षुब्ध जिंदगी की अपनी
वैज्ञानिक प्रयोगशाला में
उस शाला का मैं एक अल्पमति विद्यार्थी"9

मुक्तिबोध ने आँखे खोली तो संघर्ष देखा और आँखे बंद की तो भी संघर्ष के घनघोर अँधेरे में। किन्तु उन्होंने कभी अपने सिद्धांत को नहीं छोड़ा यही उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि है जो उन्हें अन्य कवियों से श्रेष्ठ बनाती है।

निष्कर्ष :–

अंततः हम कह सकते हैं कि मुक्तिबोध एक प्रगतिशील धारा के कवि थे। उनका व्यक्तित्व वैचारिक था। उन्होंने हिंदी जगत में आने वाली अगली पीढ़ी का मार्ग प्रशस्त किया। वे युवा पीढ़ी के आक्रोश के जनक थे। उन्होंने परंपरा को आधुनिक भाव–भूमि से जोड़कर विकसित करने में अपनी अहम भूमिका का निर्वाह किया। उनकी सबसे बड़ी विलक्षणता यह थी कि वे कभी भी भारतीय चिंतन से विमुख नहीं हुए।

सन्दर्भ–सूची :–

1. IAS book-com/hindi /muktibodh–ka jeewan darshan & kavy drishti के अनुसार।
2. पुष्पलता, मुक्तिबोध के आलोचना सिद्धांत, पंचशील प्रकाशन फिल्म कालोनी जयपुर 1976 पृष्ठ संख्या–12
3. –वही–, पृष्ठ संख्या–11
4. IAS book-com/hindi /muktibodh –ka jeewan darshan & kavy drishti के अनुसार।
5. डॉ० जटाशंकर द्विवेदी, डॉ ०प्रभुनाथ सिंह, स्वातंर्त्योत्तर हिंदी काव्य संग्रह, ग्रीन वर्ल्ड पब्लिकेशन 2004, पृष्ठ संख्या–45
6. पुष्पलता, मुक्तिबोध के आलोचना सिद्धांत, पंचशील प्रकाशन फिल्म कालोनी, जयपुर, 1976, पृष्ठ संख्या–24
7. –वही–, पृष्ठ संख्या–54
8. डॉ० जटाशंकर द्विवेदी, डॉ० प्रभुनाथ सिंह, स्वातंर्त्योत्तर हिंदी काव्य संग्रह, ग्रीन वर्ल्ड पब्लिकेशन, 2004, पृष्ठ संख्या–47
9. गजानन माधव मुक्तिबोध, 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', भारतीय ज्ञानपीठ संस्करण, 2015, पृष्ठ संख्या–110

कंचन गिरि
सहायक प्राध्यापिका, हिंदी–विभाग
जमशेदपुर वर्कर्स कालेज, मानगो
ईमेल : kgiri 5920@gmail -com
फोन नं० : 7488819300,9142659658

19

1857 के विद्रोह में कुछ जानी एवं कुछ अनजानी महिलाओं का योगदान

डॉ0 अनीता राठी, श्रीमती रेखा

प्रस्तावना :–

आज 1857 के विद्रोह की दास्तान वैसे तो अत्यधिक महत्वपूर्ण है। जिसमें अनेकों लोगों ने अपना योगदान दिया, ऐसे महापुरुषों की अनेकों दास्तान हमारे देश में हैं लेकिन हमारे देश की महिलाओं की भूमिका या उनका योगदान भी कम नहीं रहा हें बेगम हजरत महल और रानी लक्ष्मीबाई जिन्होनें देश के लिए खुद को कुर्बान कर दिया, सौभाग्य से इनके विषय में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त है लेकिन हमारे देश की ऐसी बहुत सी वीरागंना है जिन्होनें अंग्रेजो से लोहा लिया और अपना सम्पूर्ण जीवन देश को समर्पित कर दिया लेकिन ऐसी महिलाओं की कहानी शायद ही कहीं दर्ज है। मैनें अपने शोध पत्र में ऐसी ही कुछ महिलाओं के विषय में जानकारी देने का प्रयास किया है।

सारांश –

प्रस्तुत शोध पत्र 1857 में हुये विद्रोह में महिलाओं की भूमिका पर आधारित है, जो कि हमारे समाज में ऐतिहासिक दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रखती है, किसी भी देश का विकास या प्रगति में उस देश की महिलाओं की अहम् भूमिका होती है। आज हम 1857 के विद्रोह को याद करते हैं, तभी हमें उन वीर शहीदों की याद आ जाती है जिन्होनें अपनी जान देश के लिए कुर्बान कर दी, परन्तु इन वीरों के साथ देश की कुछ बहादुर महिलायें भी है जिन्होनें देश के लिए हँसते हुए अपनी जान दे दी और शहीद हो गईं।

अतः बड़े दुख के साथ यह कहना पड़ रहा है कि इन वीरांगनाओं को कहीं न कहीं इतिहासकारों ने अनदेखा किया है, कुछ महिलाओं के विषय में विवरण अवश्य मिलता है लेकिन वह सभी शाही परिवार से तालुकात रखती है। मध्यम, पिछड़े या निम्न वर्ग की महिलाओं के योगदान के विषय में विवरण कुछ एक लाइन या फिर बहुत ही संक्षेप में मिलता है।

अतः मेरा यह शोध पत्र 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में इन महिलाओं के बलिदान का विवरण प्रस्तुत करने के कारण महत्वपूर्ण है, जो कि उत्तर–प्रदेश की महिलाओं के त्याग एवं बलिदान को दर्शाता है।

उद्देश्य – इस शोधपत्र का उद्देश्य भारत में 1857 के विद्रोह में महिलाओं की भूमिका को दर्शाते हुए उत्तर प्रदेश की महिलाओं का 1857 के विद्रोह में महत्व एवं योगदान का विश्लेषण करना है।

शोध विधि – प्रस्तुत शोधपत्र में विभिन्न द्वितीयक स्त्रोतों जैसे पुस्तकों, रिपोर्टों, सरकारी रिपोर्टों व इन्टरनेट आदि से तथ्यों को एकत्र कर विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

शोध अध्ययन – 1857 के विद्रोह में उत्तर प्रदेश की महिलाओं का योगदान

आज 1857 के विद्रोह की दास्तान वैसे तो अत्यधिक महत्वपूर्ण है। जिसमें अनेकों लागों ने अपना योगदान दिया एवं भारत के लिए कुर्बान हो गये ऐसे महापुरुषों की अनेकों दास्तान हमारे देश में हैं, परन्तु देश की महिला की भूमिका या उनका योगदान भी कम नही रहा है। बेगम हजरत महल और रानी लक्ष्मीबाई जिन्होनें देश के लिए खुद को कुर्बान कर दिया सौभाग्य से इनके विषय में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त है लेकिन हमारे देश की ऐसी बहुत सी वीरांगनायें है जिन्होनें अंग्रेजों से लोहा लिया और अपना समस्त जीवन देश को समर्पित कर दिया। लेकिन ऐसी महिलाओं की कहानी शायद ही कहीं दर्ज है या फिर बहुत ही संक्षिप्त है।

बेगम हजरत महल – इतिहास में हजरत महल का नाम 1857 के भारत के पहले स्वतन्त्रता संग्राम में अपनी बहादुरी का अंग्रेजों को लोहा मनवाने एवं टक्कर लेने के कारण प्रसिद्ध हैं बेगम एक बहादुर और वीरांगना महिला होने के कारण बहुत लोकप्रिय रही है। अंग्रेजों ने बेगम के पास तीन समझौते प्रस्ताव भी भेजे यहाँ तक कि यह पेशकश भी रखी कि ब्रिटिश अधीनता में उनके पति का राजपाट लौटा देगें, लेकिन बेगम को ये मन्जूर न था, वे एकछत्र अधिकार से कम कुछ भी नहीं चाहती थीं, वे या तो सब कुछ चाहती थी या फिर कुछ भी नहीं। बेगम हजरत महल ने राज प्रतिनिधि के तौर पर दस महीनें तक शासन किया। 1857 में अंग्रेजों से लड़ने वाले सभी विद्रोहियों में उनके पास अत्यधिक सेना थी, जनता ने उन्हें स्वेच्छा से कर दिया, जबकि अंग्रेजों को मजबूरी में कर चुकाते थे। 1857 में जब वजिद अली शाह कलकत्ता के लिए रवाना हो रहे थे। तभी उन्होनें बेगम के अन्दर लड़ने के जज्बे और शौर्य का पूर्वानुमान लगा लिया था।

घरों पर तबाही पड़ी सहर में,
खुदे मेरे बाजार, हजरत महल
तू ही बाइस–ए–ऐशो आराम है
गरीबों की गमख्वार, हजरत महल
(गम में डूबे हुए घरों पर तबाही बरपा हुई है,
मेरे बाजारों को लूटा गया, हजरत महल
तू ही बस राहत की एक मात्र वजह है
गरीबों के दुखों को दूर करने वाली है हजरत महल।)

वे जब तक मुमकिन हुआ और उनकी सांस में सांस रही, तब तक अंग्रेजों से लड़ती रही और अन्त में उन्होनें नेपाल में शरण ली, जहाँ 1879 में उनकी मृत्यु हो गई।

मख्मूर जालंधरी के शब्दों में–
लिखा होगा हजरत महल की लहद पर
नसीबों की जली थी, फलक की सताई
(हजरत महल की कब्र पर यह लिखा
होगा–सितारों ने (भाग्य ने) उसे जलाया
और आसमान ने भी उस पर जुल्म ढाए)

झांसी की रानी – लक्ष्मीबाई की वीरता एवं साहस बुंदेलखण्ड की कहानियों लोकगीतों में मिलता है,
राही मासूम रजा के शब्दों में –

नागाह चुप हुए सब, आ गई बाहर रानी
फौज थी एक सदु उसमें गौहर रानी
मतला–ए–जहाद पे है गैरत–ए–अख्तर रानी
अज्म–ए–पैकर में मर्दों के बराबर रानी

रानी लक्ष्मीबाई का जन्म वाराणसी के एक परोहित के घर हुआ था, उन्हें बचपन में मणिकर्णिका नाम से पुकारा जाता था, इनके पिता ने इन्हें एक पुत्र की भाँति सभी विधाओं का ज्ञान प्राप्त कराया था, 1842 में झांसी के महाराज गंगाधर राव के साथ इनका विवाह हुआ था, विवाह के उपरान्त इन्हें रानी लक्ष्मीबाई के नाम से जाना जाने लगा। 1853 में इनके पति की मृत्यु हो गई, इनके स्वयं का कोई पुत्र न होने के कारण अंग्रेजों ने इनके गोद लिये पुत्र दामोदर राव को गद्दी का उत्तराधिकारी मानने से इन्कार कर दिया। अंग्रेजों ने डलहौजी की हड़पनीति के सहारे झांसी का विलय कर लिया। रानी लक्ष्मीबाई को झांसी किले से बाहर कर पेंशन प्राप्तकर्ता होकर रहने के लिए मजबूर किया गया, परन्तु वह अपनी बात पर अड़ी रहीं कि मैं अपनी झांसी नहीं दूंगी। उन्होनें इस विलय पर पुर्नविचार करने के लिए इग्लैंड से कई बार दरख्वास की मगर उनकी अपील हर बार खारिज कर दी गई।

1857 में पड़ोसी रियासतों और झांसी की गद्दी के एक–दूसरे के दावेदार के हमललों के कारण रानी लक्ष्मीबाई ने एक सेना बनाई और शहर की सुरक्षा मजबूत की।

मख्मूर जालधरी के शब्दों में –

लक्ष्मीबाई तेरे हाथों में तंग ओ–सिपार
हुस्न की सारी रिवायत की थी लिल्क–ए–गौहर

अंग्रेजों द्वारा जब मार्च 1858 को हमला किया तब रानी ने उनका मुकाबल पूरे जोरो–शोरों से किया, परन्तु जब अंग्रेजों की सेना बढ़ती रही और रानी की सेना परास्त होती रही तब भी पूरी वीरता दिखाते हुए रानी लक्ष्मीबाई अपने बेटे के साथ किले से बच निकलीं और वहाँ से कल्पी पहुँची, जहाँ वे तात्या टोपे के साथ हो गई। दोनों ने मिलकर ग्वालियर के बाहरी हिस्से में होती रही और अंग्रेजों की शक्ति बढ़ती रही।

17 जून, 1858 को ग्वालियर से पाँच मीर पूरब कोटाका सराय में हुई लड़ाई में अपनी आखिरी सांस तक लड़ते–लड़ते रानी को गोली लग गई और वे अपने घोड़े से गिर पड़ीं वह हमेशा पुरूषों के लिबास में रहती थीं। इस वक्त भी वह पुरूषों के लिबास में थीं।

झलकारी बाई और झांसी का दुर्गा दल – झलकारी बाई के दुर्गा दल या महिला दस्ते की सदस्य थी। इनके पति झांसी की सेना में सैनिक थे। झलकारी बाई स्वयं तलवारबाजी एवं तीरंदाजी में प्रशिक्षित साहसी महिला थी। लक्ष्मीबाई से उनका समाननता की जाती थी।

लक्ष्मीबाई से इनकी समानता का फायदा तब उठाया गया जब अंग्रेजों को चकमा देना था, इसी के तहत सैन्य रणनीति बनाने में किया गया, अंग्रेजों को धोख देने के लिए यह झांसी की सेना की सेनापति बन गई। इससे रानी लक्ष्मीबाई किसी बिना शक हुए बाहर निकल सकी। जब झलकारी बई को पकड़ लिया गया तब अंग्रेज हैरान रह गये। जब अंग्रेजों को यह पता चला कि रानी लक्ष्मीबाई के धोखे में उनका वेश धारण किये हुए किसी और को पकड़ लिया गया है, तब उन्हें रिहा कर दिया गया। झलकारी बाई के विषय में जानकारी प्राप्त होती है कि वो 1890 तक जीवित रही एवं अपने साहस का लगातार प्रदर्शन करती रहीं।

झांसी में दुर्गा दल के माध्यम से कई औरतें रानी के साथ लड़ी और अपनी रियासत के लिये अपने प्राणों की चिन्ता किए बिना रानी के साथ अंग्रेजों से लोहा लेती रहीं और अपने प्राणों को बलिदान कर दिया।

इनके नाम का संक्षेप में उल्लेख मिलता है, उनमें मंदर, सुन्दर बाई, मुंदरी बाई ओर मोती बाई आदि के नाम शामिल हैं।

लखनऊ की वीरांगना ऊदा देवी – लखनऊ में नवम्बर में बहुत भयानक लड़ाइयों में से एक 1857 में सिकन्दर बाग में हुई। यहाँ विद्रोहियों ने डेरा डाल रखा था। यह बाग रेजीडेन्सी में फंसे हुए यूरोपियों को बचाने निकले कमांडर कोलिन के रास्ते में पड़ता था। यहाँ पर एक खूनी संघर्ष हुआ जिसमें हजारों भारतीय सैनिक शहीद हुए। एक कथा के अनुसार अंग्रेजों को आवाज से यह पता चला कि कोई पेड़ पर चढ़कर लगातार गोलियों की बौछार कर रहा है तब अंग्रेजों ने उस पेड़ को कटवा दिया, पेड़ कट कर गिरा तब पता चला कि गोलियों को वर्षा कोई आदमी नहीं बल्कि एक महिला कर रही थी। जिनकी पहचान ऊदा देवी के नाम से की गई। ऊदा देवी 'पासी समुदाय' से ताल्लुक रखती थीं, उनकी मूर्ति वहीं सिंकदर बाग में स्थित है। फोर्ब्स–मिशेल ने 'रेमिनिसेंसेज ऑफ द ग्रेट म्यूटिनी' में ऊदा देवी के विषय में लिखा कि, ''वह पुराने पैटर्न की दो भारी कैवलरी पिस्तौल से लैस थी, इनमें से एक अन्त तक उनकी बेल्ट में ही थी, जिसमें गोलियाँ भरी हुई थी, उनकी थैली अब भी गोली–बारूद से आधी भरी हुई थी, हमसे पहले पेड़ पर सावधानी से बनाए गये अपने मचान पर से उन्होनें दर्जनों से ज्यादा विरोधियों को मौत के घाट उतार दिया था।''

इतना ही नहीं अवध के नवाबों के दरबारों में कई अफ्रीकी महिलाएं भी काम किया करती थी इनका काम हरम की रखवाली करना था। ये सभी वीरांगनायें भी 1857 में लखनऊ में हुए संघर्ष में शहीद हुई थी। नवम्बर 1857 के विद्रोह की एक विशेषता यह भी है कि इसमें केवल शाही या कुलीन वर्ग की महिलाओं का ही योगदान या हिस्सेदारी नहीं रही अपितु छोटे या दलित वर्ग की महिलाओं की भी इसमें हिस्सेदारी रही है, ऐसी ही एक दलित महिला मुजफ्फरनगर जिले के मुंदभर गाँव की महाबीरी देवी, महावीरी ने 22 औरतों का एक दस्ता बनाया, 1857 में इस दस्ते ने कई अंग्रेज सैनिकों पर हमला कर उन्हें मार गिराया। इसी दौरान यह सभी महिलायें पकड़ी गई एवं शहीद हुई। ये ऐसी वीरांगनायें रही है जिनके विषय में इतिहास में नाममात्र की ही जानकारी प्राप्त होती है।

अज़ीजन बाई– कानपुर की तवायफ आजीवन बाई की कहानी भी कम संघर्ष से भरी हुई नहीं थी। कानपुर नाना साहेब और तात्या टोपे की सेना का अंग्रेजों के साथ हुए संघर्ष का गवाह बना।

मख्मूर जालंधरी –

''तेरे यलगार में तामीर थी तादीब न
थी तखरीब न थी
तेरे ईसार में तसीब थी तादीब न थी।''

उपनिवेशी और भारतीय इतिहासकारों ने कानपुर में 1857 में हुए विद्रोह के समय की अजीजन बाई की भूमिका का वर्णन किया है, दूसरी कई स्त्रियों के विपरीत जो इस विद्रोह में शामिल हुई थी, अजीजन को इस लड़ाई से कोई निजी लाभ नहीं होना था, न ही उनकी कोई निजी शिकायतें थी, वे तो बस नाना साहेब से प्रेरित थी, कानुपर के लोग आज भी उनकी बहादुरी को याद करते हैं, वे रानी लक्ष्मीबाई की तरह पुरूष के लिबास पहनती थी, एक जोड़ी बंदूक रखती थी और सैनिकों के साथ घोड़े की सवारी किया करती थी। नाना साहेब की जब शुरूआती जीत हुई तब अजीजन बाई झंडा फहराने वाले जुलूस में पूरे जोश के साथ सम्मिलित हुई थी।

लेखिका लता ने अपने लेख ''मेकिंग द 'मर्जिन' बिजिबल'' में लिखा है कि, अजीजन कानपुर में तैनात दूसरी घुड़सवार सेना की बहुत चहेती थी, वे खासतौर पर शमसुद्दीन नाम के एक सैनिक को बहुत मानती थी उनका घर सैनिकों के आपस में मिलने और योजनायें बनाने का एक ढंग था। उन्होनें औरतों का एक दस्ता भी बनाया, जो निडरतापूर्वक सशस्त्र जवानों को हौसला बढ़ाता था। उनके जख्मों पर मरहम पट्टी करता था, इतना ही नहीं बल्कि हथियार और गोला–बारूद मुहैया कराता था। उन्होनें एक गन बैटरी (दुश्मन पर बंदूक चलाने के लिये विशेष तौर पर बनाई गई जगह) को इस काम का मुख्यालय बना दिया जब कानपुर की घेराबन्दी का समय था, तब अजीजन बाई पूरे समय सैनिकों के साथ थी एवं खुद भी हमेशा पिस्तौल रखा करती थी।

रूडयार्ड ''किपलिंग की 'ऑन द सिटी वाल' में 1857 के स्वतन्त्र संग्राम में तवायफों द्वारा किये गये संघर्ष एवं उनके बलिदान और अंग्रेजी हुकूमत विरोधी गतिविधियों की कुछ चर्चा प्राप्त होती है। कई तवायफों के कोठे विद्रोहियों के लिए मिलने और योजनायें बनाने की जगह बन गये थे, जहाँ उनकी सभी सूचनायें गुप्त रखी जाती थी।

1857 के बाद अंग्रेजी सरकार ने इन कोठों पर अपनी पूरी ताकत से प्रहार किया और वे तवायफें, जो पुरानी तहजीब और ललित कलाओं के संरक्षक हुआ करती थी, उनके घरों को तबाह कर उनकी औलाद पर भी कब्जा कर लिया गया।

कुछ अन्य औरतें – उत्तर प्रदेश का मुजफ्फरनगर इलाका स्त्रियों की सक्रिय भागीदारी का प्रत्यक्ष उदाहरण है। कुछ विद्रोहियों के नाम है, आशा देवी, बख्तावरी देवी, भगवती देवी त्यागी, इंद्र कोर, जमीला खान, मनकौर, रहीमी, राजकौर, शोभना देवी और उम्दा इन सबने लड़ते हुये अपने प्राणों की कुर्बानी दे दी।

दस्तावेजों में विवरण मिलता है कि असगरी बेगम को छोड़कर अन्य सारी महिलायें अपनी उम्र के तीसरे दशक में थी इन्हें फांसी हुई और कुछ मामलों में तो इन्हें जिन्दा जला दिया गया।

अन्य दो रानियों की रियासत भी हड़पनीति के तहत हड़प ली गई, इन्होनें अंग्रेजों के खिलाफ बगावत की थी इनमें रायगढ़ की अंवतीबाई एवं धार की रानी द्रौपदी का नाम प्रमुख है।

निष्कर्ष :– बहुत ही दुख की बात है कि पुरूषों से कंधे से कंधा मिलाकर राष्ट्र आन्दोलनों में अपनी जान गंवाने वाली इन महिलाओं के विषय में कुछ खास जानकारी प्राप्त नहीं होती है। लेखक शम्सुल इस्लाम के लेख 'हिन्दू–मुस्लिम यूनिटी : पार्टिसिपेशन ऑफ कॉमन पीपुल एंड वुमन इन इंडियाज फर्स्ट वॉर ऑर इंडिपेडेंस' में ऐसी कई महिलाओं का जिक्र है जिनके नाम बस 1857 के विद्रोह के दस्तावेजों में बन्द होकर रहे गये।

निष्कर्षः

अतः महिलाओं की इस हिस्सेदारी को भी उतना ही महत्व दिया जाना चाहिए जितना कि पुरूषों के बलिदान के याद किया जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. स्वतन्त्रता संग्राम और महिलाएं, लेखक विश्वप्रकाश गुप्त मोहिनी गुप्त।
2. औरत इतिहास रचा है तुमने लेखक कुसुम त्रिपाठी।
3. औरत कल, आज और कल लेखक आशा रानी व्होरा।
4. उत्तर प्रदेश में क्रांतिकारी आन्दोलन का इतिहास।
5. 1857 की अनकही हैरतंगेज दस्ताने लेखक – डॉ0 शम्सुल इस्लाम।
6. यूटूब के चैनल अम्बेडकरनामा पर सुनी/डॉ0 शम्सुल इस्लाम की खास बातचीत कार्यक्रम का टॉपिक/1857 का विद्रोह : महिलाओं की भूमिका की अनसुनी कहानियाँ।

शोध निर्देशिका
डॉ0 अनीता राठी
प्रोफेसर इतिहास विभाग
रघुनाथ गर्ल्स (पी0जी0) कॉलेज
मेरठ

शोध छात्रा
श्रीमती रेखा
एम0ए0 इतिहास

20

दारुल उलूम देवबंद एवं सहअस्तित्व

वसीम चौधरी

सारांश

भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के काल में ब्रिटिश शासकों द्वारा भारत में 'अपने शासन को बनाये रखने के लिए' हिन्दू–मुस्लिमों के मध्य 'साम्प्रदायिक विद्वेश' एवं सामाजिक दूरी उत्पन्न करने के विशेष रूप से प्रयाय किये गये थे। 1870 ई0 में विलियम हन्टर द्वारा विद्वानों के एक समूह का नेतृत्व करते हुए, अंग्रेजों को मुसलमानों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बंध बनाने और इसमें राजसमर्थक मुस्लिम वर्ग का निर्माण करने का सुझाव दिया।[1] इसमें सर सैय्यद अहमद खां एवं अलीगढ कालेज उनका सहयोगी बना।[2] दारुल उलूम देवबंद ने इसका विरोध करते हुए हिन्दू–मुस्लिम सह अस्तित्व की मान्यता का समर्थन किया।

शब्दः– दारुल उलूम, कांग्रेस, संयुक्त राष्ट्रीयता, कैबिनेट मिशन

1905 ई0 में ब्रिटिश शासन द्वारा अपने इस तर्क को आगे बढाते हुए इन प्रयासों को संस्थागत रूप प्रदान करते हुए, बंगाल विभाजन के उपरांत मुस्लिम हितों को आगे बढाने हेतु, सर आगा खां के नेतृत्व में प्रमुख मुस्लिमों का एक प्रतिनिधि मण्डल को शिमला में आमंत्रित किया। शिमला प्रतिनिधि मंडल की वार्ता के बाद मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचन क्षेत्र को मान्यता प्रदान की गयी। यहाँ यह रेखांकित करना भी महत्वपूर्ण तथा आवश्यक होगा कि ब्रिटिश सरकार द्वारा हिन्दू–मुस्लिमों के बीच दूरियों का आधार धार्मिक बताया गया था।[3] दारूल उ़लूम देवबन्द जो यद्यपि धार्मिक आधार पर संगठित संस्था थी। इसने ब्रिटिश सरकार की इस व्याख्या को अस्वीकार किया और भारत में संयुक्त राष्ट्रीयता का अपना तर्क प्रस्तुत किया।

दारूल उ़लूम देवबन्द के उस समय के एक प्रमुख व्यक्तित्व मौलाना रशीद अहमद गंगोही का मत था कि सांसारिक मामलों में और राश्ट्रीय उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शरीयत के अनुसार मुसलमानों हिन्दुओं के साथ सहयोग कर सकते हैं। इसलिए उन्होंने कहा कि मुसलमानों द्वारा कांग्रेस की गतिविधियों में हिन्दू राश्ट्रवादियों के साथ सहयोग किया जाए।[4] दारूल उ़लूम देवबन्द के संचालकों का निर्णय बिल्कुल स्पश्ट रूप से यह था कि सब सम्प्रदायों की एकता पर स्थापित राष्ट्रीयता की धारणा किसी भी प्रकार इस्लामी सिद्धांतो के विरूद्ध नहीं है।

दारूल उ़लूम देवबन्द ने भारत की संयुक्त राष्ट्रीयता की बात की। संयुक्त राष्ट्रीयता के समर्थन में सदैव कांग्रेस का समर्थन किया। दारूल उ़लूम देवबन्द के प्रधानाध्यापक़ मौलाना हुसैन अहमद का विचार था कि भारत के लोगों को धार्मिक मतभेदों के बावजूद एक राष्ट्र के रूप में गठित हो जाना चाहिए। जिससे वे आजादी हासिल कर सकें और सबके कल्याण की नीतियों को अपना सकें। एक भाषण में उन्होंने कहा था कि आधुनिक राष्ट्रों का गठन जाति या धर्म के आधार पर नहीं बल्कि प्रादेशिकता के सिद्धांत के आधार पर हुआ है।

इस वक्तव्य को इकबाल ने अपने इस सिद्धांत पर प्रहार के रूप में लिया कि राष्ट्रीयता या कौम का एकमात्र आधार धर्म है, और जाति, भाशा या प्रदेश पर आधारित राश्ट्रीयता एक अभिशाप है। उनके विचार में प्रादेशिक राष्ट्रीयता इस्लाम विरूद्ध धारणा की। उन्होनें एक लेख प्रकाशित किया जिसमें दलील दी गई थी कि मदनी की धारणा का समर्थन, न तो अरबी भाषा विज्ञान करता है, न इस्लामी साहित्य। उन्होंने मदनी की विद्वता पर छींटाकशी की और उन पर शायरी में व्यंग्य किया।

हुसैन अहमद मदनी को इसका प्रत्युत्तर लिखना पड़ा क्योंकि इकबाल के विचारों से राष्ट्रवादी पक्ष को बहुत हानि पहुंचने की आशंका थी। इस प्रत्युत्तर उनके 'मुतहद्दा कौमियत और इस्लाम' शीर्शक प्रबंध के रूप में है।[5]

इसमें समस्या के दो पहलुओं पर बडे विद्वतापूर्ण ढंग से प्रकाश डाला गया है :

'कौम' शब्द का अर्थ और परिभाशा तथा उसकी 'मिल्लत' से भिन्नता। इस समस्या पर कुरान, हदीस तथा इस्लामी इतिहास का अभिमत।

वह प्राचीन, मध्य तथा वर्तमान युग के अरबी शब्दकोशों की चर्चा करते हैं और उनके आधार पर यह सिद्ध करते हैं कि कौम का अन्य अर्थों के साथ–साथ तात्पर्य ऐसे स्त्री–पुरूशों की कोई भी जमात है जो किसी भी समान उद्देश्य से अनिवार्यतः धार्मिक ही नहीं, बंधी हुई हो।

'मिल्लत' शब्द का दूसरा ही सम्पृक्तार्थ हैं। वह उसी समुदाय के लिए प्रयुक्त होता है जो आस्था या इमाम और धार्मिक नियम या शरियत पर आधारित है। उसे केवल मुस्लिम समुदाय के लिए नहीं बल्कि किसी भी धार्मिक समुदाय के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

इसका यह परिणाम निकलता है कि इस्लाम को न केवल गैर–मुस्लिमों के साथ राश्ट्रीयता के सूत्र में आबद्ध होने पर कोई आपत्ति नहीं है, बल्कि वह ऐसे बंधनों को प्रोत्साहित करता है। अन्य विचार इसकी दृढता से पुष्टि करते हैं। हिन्दू और मुसलमान मुख्यतः एक ही मूल जाति के हैं। उनके एक ही देश में शताब्दियों तक साथ–साथ रहने से उनके विचारों और जीवन पद्धति में समानता आ गई है। उनकी बोली समान है और उनकी एक जैसी ऐतिहासिक परम्पराएं हैं। उन्होंने मिलजुलकर एक समान संस्कृति का साहित्य, कला, संगीत का निर्माण किया और साथ ही वे अपनी वैयक्तिक आस्था तथा नैतिक धार्मिक नियम बनाए रहे। गांवों और कस्बों में आर्थिक गतिविधियों में, स्कूलों और कालेजों में, जिला बोर्डों, म्यूनिसिपल्टियों और विधान सभाओं में प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में वे आपस में सहयोग करते हैं।[6]

इकबाल की ओलाचनात्मक शायरी का जवाब उन्होंने इस प्रकार दिया।

तरसम न रसी काबा तू ऐ आराबी।
कीं राह कि तू भी रवी इंग्लिस्तान अस्त।।

ओ अरब के रेगिस्तान में भटकने वाले, मुझे गम है कि तू पवित्र काबे में नहीं पहुंच पाएगा क्योंकि तू जिस राह पर चल रहा है वह इंग्लैंड को

जाती है।

जहां तक अबुलआला मौदूदी का सम्बंध है, हुसैन अहमद ने उनके धार्मिक विचारों कतई अस्वीकार किया। क्योंकि उन्होंने कटटर सुन्नी सिद्धांतों के विरूद्ध तथा खराजियों और अन्य लोगों के धर्म विरूद्ध विचारों के समकक्ष माना। मौदूदी की यह धारणा कि मुसलमान केवल अपने पृथक समाज में ही रह सकते हैं और गैर मुस्लिमों के साथ राजनैतिक सत्ता में भागीदार नहीं हो सकते, एकदम गलत और नितांत अमान्य थी।

हुसैन अहमद का स्वतंत्र और अविभाजित भारत के संविधान के बारे में उनके निश्चित विचार थे।

(1) भारतीय राज्य एक गणराज्य होगा जिसका निर्वाचित राष्ट्रपति होगा। वहीं सर्वोच्च कार्यचालक सत्ता का प्रयोग करेगा।

(2) केन्द्रीय सरकार में मुसलमान अल्पमत में होगें, लेकिन उनके धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक हितों को संरक्षण प्राप्त होगा। केन्द्र सीमित विशयों को निबटाएगा यथा रक्षा, वैदेशिक मामले, संचार, परिवहन और वित्त। शेश विशय प्रांतीय अधिकार क्षेत्र में होगें। धार्मिक मामलों का उत्तरदायित्व प्रांतीय सरकारों के पास होगा।

(3) शिक्षा प्रांतीय विषय होगा।

(4) मुस्लिम शरीयत या दंड विधान लागू नहीं किया जाएगा।

(5) सरकार का गठन विभिन्न समुदायों में साझेदारी के आधार पर होगा।[7]

हुसैन अहमद मानतें थे कि इस साझेदारी और समझौते से मुस्लिम समुदाय पर कुछ जिम्मेदारियां आती है जिनके सम्बंध में उन्होंने लिखाः

मुसलमानों पर यह फर्ज आयद होगा कि वह गैर मुस्लिमों से किए गए समझौते की शर्तों का पालन करें, जिनके अंतर्गत यह आवश्यकता भी हो सकती है कि वह किसी भी मामले में सार्वभौम मुस्लिम भ्रातृत्व का समर्थन न करें और उसे सहायता न दे। अगर समझौते की शर्तों में उल्लिखित है, तो वह भ्रातृत्व को अपनी सहायता न देने के लिए बाध्य होगें।[8]

देवबन्द दारूल उ़लूम अपने विचारों पर आरम्भ से अंत तक अडिग रहा। मौलाना हुसैन मदनी भारत के विभाजन को रोकने के लिए राश्ट्रवादी मुसलमानों की ओर से 1946 ई0 में भारत आये कैबिनेट मिशन से भी मिले। मौलाना मदनी ने कैबिनेट मिशन के सामने एक प्रस्ताव में केन्द्रीय विधानसभा में हिन्दू मुस्लिम समानता, राज्यों की स्वायतता और पृथक निर्वाचन मंडल की समाप्ति को प्रस्तुत किया। मदनी के अनुसार यह योजना एक तरह से भारत के विभाजन को रोकने के लिए अन्तिम विकल्प के रूप में वर्णित की गई थी।[9] दुर्भाग्यवश पूर्णतया सफल नहीं हो पायी। भारत में ब्रिटिश शासन की समाप्ति सर रेड क्लिफ आयोग द्वारा धार्मिक आधार पर भारत पाकिस्तान विभाजन के रूप में हुई। यह विभाजन 20वीं सदी में एशिया की सबसे बडी त्रासदी में से एक थी। इसमें भारतीय जनसंख्या का अत्यन्त अनियोजित त्रासदीपूर्ण पलायन व नर संहार हुआ स्त्रियों के साथ बलात्कार तथा सम्पत्ति का व्यापक विनाश हुआ। डिवाइड एण्ड क्विट पुस्तक के लेखक पेडेरलमून ने एक लाख अस्सी हजार व्यक्तियों के मारे जाने का अनुमान लगाया। लगभग 1. 45 करोड व्यक्ति बेघर हो गए। भारतीय संविधान में एक सीमा तक देवबन्द के दृश्टिकोण को स्वीकृति मिली। स्वतंत्रता के पश्चात भारत को धर्मनिरपेक्ष राश्ट्र घोशित किया गया। परंतु नव स्वतंत्र भारत के मुसलमानों की स्थिति में दो परिवर्तन आये। प्रथम मुसलमानों का विशेश निर्वाचन क्षेत्र समाप्त कर दिया गया। दूसरा विभाजन के पश्चात हिन्दु मुसलमानों के बीच परस्पर अविश्वास की परिस्थिति, संदेह और साम्प्रदायिक तनाव। इस तनाव के वातारण में भारत में लोकतंत्र स्थापित हुआ। जिससे भारत में शासन व्यवस्था में हिन्दु मत प्रभावशाली हो गया था। विभाजन के पश्चात कई मुसलमान आंशका व भय से भारत छोडकर पाकिस्तान में जा रहे थे। इन परिस्थितियों में दारूल उ़लूम देवबन्द ने मुसलमानों के सलाहकारी संरक्षक की भूमिका के रूप आगे आया और वैचारिक समर्थन द्वारा भारतीय लोकतंत्र को समर्थन प्रदान किया। दारूल उ़लूम ने मुसलमानों को भारत छोडकर न जाने और भारत में ही बने रहने की अपील की थी।[10] दारूल उ़लूम देवबन्द ने मुसलमानों को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि मुसलमानो की धार्मिक स्वतंत्रता, व्यक्तिगत हित और धार्मिक विश्वास भारत में सुरक्षित होगें। इससे आशंकित मुसलमानों को मनौवैज्ञानिक सम्बल मिला।[11]

निष्कर्ष

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात दारूल उ़लूम देवबन्द ने भारत को कभी भी दारूल हरब घोषित नहीं किया। वरन् राश्ट्रीय तथा सामाजिक एकता को एक मात्र आशा की किरण बताते हुए, साम्प्रदायिकता के विरूद्ध अपनी प्रतिबद्धता पर निरन्तर बल देता रहा। देवबन्द ने भारतीय मुसलमानों से कहा यदि वे भारत में अपने भविष्य को उज्जवल देखना चाहते हैं, तो भारत के मुसलमानों का कर्तव्य है कि वह अपने कार्यों और चरित्र से अपने महत्व और उपयोगिता को प्रमाणित करें। वे जिस सीमा तक भारतीय संघ के लिए उपयोगी होगें। उन्हें उतना ही अधिक सम्मान व महत्व मिलेगा।[12]

एक लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था की सफलता जाति, धर्म या परिवार पर निर्भर नहीं करती, बल्कि सेवा और क्षमता ही इसका मानक (पैमाना) होता है। मुसलमान देश और समुदाय की सेवा के लिए एकाग्र भाव से (जिम्मेदारी) स्वीकार करें। मुसलमानों को आज केवल जिहाद शब्द याद है। लेकिन उन्हें यह ज्ञान होना चाहिए कि इस्लाम के विरूद्ध विद्रोहियों और समुदाय के शत्रुओं के प्रति धैर्य, सहनशीलता और उच्च नैतिकता को बडा जिहाद कहा जाता है। इस बडे जिहाद में तलवार या खंजर की नहीं बल्कि चारित्रिक बल, संकल्प और कर्म की आवश्यकता है।[13] इसी सन्दर्भ में उन्होंने इस बात पर भी बल दिया कि मुसलमानों की भारतीय लोकतान्त्रिक प्रणाली में सरकार के चुनाव हेतु आयोजित चुनावओं और देश के आर्थिक विकास में भागीदारी करनी चाहिए। देश की राश्ट्रभाशा हिन्दी सीखने का भी मुसलमानों से आग्रह किया गया। स्वयं इस परामर्श को अपनाते हुए दारूल उ़लूम देवबन्द में भी हिन्दी शिक्षक नियुक्त किया गया। इस प्रकार दारूल उ़लूम देवबन्द ने भारत के मुसलमानों में व्याप्त आशंका तथा भय को निर्मूल करने सह

अस्तित्वकी मान्यता को सैद्धांतिक स्वीकृति प्रदान करते हुए एक महत्वपूर्ण सेवा भारतीय समाज तथा राष्ट्र की गयी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ताराचन्द (अनु–मन्मथनाथ गुप्त), भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, भाग–2, सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2007, पृ0 344
2. ए0आर0 देसाई (अनु–कमल नयन चौबे), भारतीय राश्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, सेज पब्लिकेशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, 2008, पृ0 250
3. ए0आर0 देसाई (अनु–कमल नयन चौबे), भारतीय राश्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, सेज पब्लिकेशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, 2008, पृ0 265
4. रतन लाल बंसल, रेशमी पत्रो का शडयंत्र, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1947, पृ0 117–119
5. हुसैन अहमद मदनी, मुतहदा कौमियत और इस्लाम, नाजिमी मजलिसी, कासिम अल शरीफ, देवबन्द पृ0 50–53
6. हुसैन अहमद मदनी, मुतहदा कौमियत और इस्लाम, नाजिमी मजलिसी, कासिम अल शरीफ, देवबन्द पृ0 50–53
7. हुसैन अहमद मदनी, मकतूबात, प्रथम खण्ड, पत्र संख्या 132, पृ0 115
8. हुसैन अहमद मदनी, मुतहदा कौमियत और इस्लाम, नाजिमी मजलिसी, कासिम अल शरीफ, देवबन्द पृ0 50–53
9. फखरूद्दीन वहीद कासमी, द रोल आफ दारूल उ़लूम देवबन्द इन पॉलिटिक्स इफा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2015, पृ0 142–144
10. ज्ञानेन्द्र पाण्डेय, रेमेब्वेरिग पार्टीशन, वायलेंस नेशनलिज्म एण्ड हिस्ट्री इन इण्डिया, पब्लिकेशन कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी, 2001, पृ0 124
11. मुहम्मद जकरिया, आप–बीती, नं0 5, पब्लिकेशन कुतुबखाना, देवबन्द, पृ0 71
12. रजी अहमद कमल, जमीयत उलेमा–ए–हिंद, दस्तावेज मरकजी, इजलास–ए–आम (1948–2003) पब्लिकेशन, जमीयत उलेमा–ए–हिंद दिल्ली, 2004, पृ0 30–32
13. रजी अहमद कमल, जमीयत उलेमा–ए–हिंद, दस्तावेज मरकजी, इजलास–ए–आम (1948–2003) पब्लिकेशन, जमीयत उलेमा–ए–हिंद दिल्ली, 2004, पृ0 30–32

वसीम चौधरी

S.R.F , N.E.T (UGC)

पता ग्राम + डाक खन्द्रावली, जिला शामली, 247775

मो. 9557395775

ईमेल vaseemc25@gmail.com

21

भारत–पाकिस्तान के मध्य विश्वास निर्णायक उपाय
(Confidence Building Measures between India and Pakistan)

सुनीता रानी

सारांश

भारत एवं पाकिस्तान दोनों राष्ट्र सन् 1947 से ही एक दूसरे के साथ युद्धरत रहे है और दोनों राष्ट्रों के बीच सम्बन्ध भी इसी कारण तनावपूर्ण रहे है। दोनों देश सन् 1947–48, 1965, 1971 तथा 1999 के युद्ध लड़ चुके हैं। दोनों राष्ट्रों के मध्य कश्मीर, सिन्धु नदी जल विवाद, आर्थिक सम्बन्धों एवं आतंकवाद जैसे मुद्दों पर एक– दूसरे पर आरोप प्रत्यारोप करते रहते हैं। सन् 1999 में भारत–पाकिस्तान के मध्य दिल्ली–लाहौर बस सेवा दोनों राष्ट्रों के बीच सम्बन्धों में तनाव की स्थिति को कम करने के लिए ही शुरू की गई थी जिसमें स्वयं भारत के प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी दिल्ली से लाहौर गए थे। लेकिन कारगिल के संघर्ष के पश्चात् दोनों राश्ट्रों में एक बार फिर तनाव बढ़ गया। भारतीय संसद पर आतंकी हमला, ताज हमला, पठानकोट और उड़ी जैसे आतंकी हमलों के कारण इन दोनों देशों के बीच विश्वास निर्माण उपायों का उपयोग नगण्य ही रहा।

कुंजी शब्द : भारत, पाकिस्तान, कश्मीर, आतंकवाद, ब्ठडे, कराकोरम, ताशकन्द, शिमला समझौता, लाहौर घोषणा पत्र इत्यादि।

शोध पत्र के उद्देश्य

भारत–पाकिस्तान के सम्बन्धों पर हजारों पुस्तकें एवं शोध पत्र प्रकाशित हो चुके हैं। वर्तमान में भी अनेक विश्वविद्यालयों में इन दोनों राष्ट्रों के तनावपूर्ण सम्बन्धों पर शोध कार्य जारी है। फिर भी इन दोनों देशों के सम्बन्धों को समझना एक दुरुह कार्य है। किसी भी विशय वस्तु को देखने व समझने का अपना–अपना दृष्टिकोण होता है। इन दोनों देशों के बीच भी अविश्वास की एक बहुत बड़ी खाई है जिसे पाटने के लिए विश्वास निर्माण उपायों की आवश्यकता है। दोनों में ये उपाय अपनाये भी गए हैं और अधिकतर उनकी अनदेखी भी की गई है। दोनों देशों के बीच विश्वास निर्माण उपायों की पालना एवं अनदेखी का समावेश इस शोध–पत्र में किया गया है।

शोध–प्रविधि

इस शोध–पत्र में शोध की विश्लेषणात्मक विधि का उपयोग किया गया है।

शोध–परिकल्पना

वर्तमान में दोनों राष्ट्रों के हालातों को देखकर कहा जा सकता है कि दोनों देशों में तनावपूर्ण सम्बन्धों से भारत को अधिक फर्क नहीं पड़ेगा लेकिन पाकिस्तान ने आर्थिक सम्बन्ध विच्छेद कर स्वयं महंगाई को बुलावा दिया है। पाकिस्तान में परिस्थितियाँ बिगड़ती जा रही है। भविष्य में पाकिस्तान भारत के साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने के लिए बाध्य होगा।

परिचय

युद्ध एवं शान्ति दोनों के अध्ययन में विश्वास निर्माण अधिक पुराना दृष्टिकोण नहीं है। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् संयुक्त राज्य अमेरिका एवं पूर्व सोवियत संघ के मध्य चले शीतयुद्ध के दौरान इस नई विचारधारा का उदय हुआ। शीतयुद्ध की प्रकृति ही एकमात्र ऐसा कारण था जिससे किसी भी क्षेत्र में किसी भी प्रकार के सहयोग या सहमति का विकास नहीं हो पा रहा था। दूसरी ओर परमाणु शस्त्रों के विकास से पूरी दुनिया के बुद्धिजीवी चिन्तित थे। राजनीतिक, सामरिक एवं मानवतावादी विशेषज्ञों ने परमाणु शस्त्रों की विभीषिका से बचने के उपायों पर गम्भीरता से सोचना शुरू किया। परिणामस्वरूप ''परमाणु प्रतिरोधकता'' एवं ''पारस्परिक सुनिश्चित विश्वास'' की अवधारणा अस्तित्व में आई। इन्हीं अवधारणाओं के कारण ही विश्व के प्रमुख शक्तियों को यह समझ में आया कि यदि परमाणु शस्त्रों का उपयोग किया तो सम्पूर्ण मानवता का विनाश सुनिश्चित है। फलस्वरूप इन शक्तियों को विश्वास निर्माण उपायों की ओर अपने कदम बढ़ाने पड़े। विश्वास निर्माण उपायों में उन गतिविधियों को सम्मिलित किया जाता है जो संघर्ष रोकने में और सकारात्मक एवं सहयोगपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने में मदद करता हैं। विश्वास निर्माण उपाय सरकार, गैर–राज्य अभिकर्ता या तीसरे पक्ष की पहल पर भी शुरू किए जा सकते हैं।

भारत–पाकिस्तान में विश्वास निर्माण उपाय

भारत और पाकिस्तान में विश्वास निर्माण उपायों की समीक्षा करने से पूर्व इन दोनों देशों के बीच सात दशकों से चले आ रहे संघर्ष के स्वरूप को समझना पड़ेगा। इन सात दशकों में भारत–पाकिस्तान में चार बार संघर्ष हुए लेकिन इनके साथ–साथ विश्वास निर्माण के उपाय भी अपनाऐ गऐ। भारत–पाकिस्तान संघर्ष की शुरूआत भारत विभाजन से ही हो गई थी। भारत–पाक विश्वास निर्माण उपायों की समीक्षा करते समय ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि भारत के विभाजन की ऐतिहासिक धरोहर और सन् 1971 में पाकिस्तान का विखण्डन और भारत के सक्रिय सहयोग से नए राश्ट्र बांग्ला देश का निर्माण है। बांग्ला देश के उदय ने दक्षिण एशिया के कूटनीतिक समीकरणों में पूर्णतया बदलाव कर दिया।

भारत–पाकिस्तान के बीच विश्वास निर्माण उपायों की शुरूआत सन् 1947–48 युद्ध के पश्चात् लाहौर घोशणा–पत्र के रूप में हुई। इस सन्दर्भ में इन दोनों देशों के मध्य समय–समय पर नए–नए समझौतें हुए। सन् 1965 के युद्ध के पश्चात् 10 जनवरी, 1966 की ''ताशकन्द समझौता'' और सन् 1971 के भारत–पाकिस्तान युद्ध के पश्चात् जुलाई 1972 में हुआ ''शिमला समझौता'' प्रमुख है। सन् 1980 के दशक के उतरार्द्ध में दोनों देशों के बीच विश्वास निर्माण उपायों को प्रोत्साहन मिला जिनमें ट्रैक– टू–डिप्लोमेसी और विदेशी मंत्री स्तर की वार्ताऐं शामिल थी। लेकिन पंजाब और कश्मीर में पाकिस्तान का

निरन्तर हस्तक्षेप इनमें बाधा भी बना। इसी दौरान भारत के ब्रासटेक और पाकिस्तान के जर्ब–ए–मोमिन जैसे विशालकाय सैन्य अभ्यास भी हुए। जो सैन्य शक्ति–प्रदर्शन की अद्भुत अभिव्यक्ति थी। 1990 के दशक की शुरूआत में ट्रैंक–टू–कूटनीति ने संघर्षरत देशों के बीच संचार के नए साधन प्रदान किए।

11 व 13 मई, 1998 को भारत ने अपना दूसरा परमाणु परीक्षण किया। प्रतिक्रिया स्वरूप आनन–फानन में पाकिस्तान ने भी चीन के सहयोग से 28 व 30 मई, 1998 को एक के बाद एक कई परीक्षण किए। इन परिस्थितियों में इन दोनों राष्ट्रों के बीच अविश्वास इतना बढ़ गया कि पाकिस्तान ने भारत को परमाणु हमले की धमकी देने लगा। सन् 1999 के फरवरी में एक बार फिर भारत ने दिल्ली से लाहौर बस सेवा की शुरूआत कर विश्वास निर्माण उपायों की ओर एक कदम बढ़ाया। परन्तु मई 1999 में भारत–पाकिस्तान के बीच कारगिल संघर्श लड़ा गया। इस युद्ध की समाप्ति के पश्चात् पाकिस्तान में सैन्य शासन लागू हो गया। सन् 2001 में (16 जुलाई) को भारत –पाकिस्तान के बीच शान्ति एवं द्विपक्षीय सम्बन्धों तथा दक्षिण एशियाई क्षेत्र में स्थिरता लाने के लिए आगरा में शिखर सम्मेलन आयोजित किया गया। परन्तु बिना किसी परिणाम के यह शिखर सम्मेलन समाप्त हो गया।

भारतीय संसद और ताज होटल (2008) पर आतंकी हमलों के पश्चात् कुछ समय के लिए भारत–पाकिस्तान के मध्य सम्बन्धों में कड़वाहट एक बार फिर बढ़ गई। सन् 2014 में श्री नरेन्द्र मोदी भारत के प्रधानमंत्री बने। उनके शपथ समारोह में सभी दक्षिण एशियाई राष्ट्रों के शासनाध्यक्षों को आमंत्रित किया गया था, जिनमें पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ भी शामिल थे। 25 दिसम्बर, 2015 को काबुल से भारत वापिस आते समय भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी अचानक नवाज शरीफ के पारिवारिक समारोह में पाकिस्तान पहुँच गए। यह किसी भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा 11 वर्ष के पश्चात् की गई पाकिस्तान यात्रा थी। कुछ समय के लिय यह लगने लगा था कि भारत एवं पाकिस्तान के सम्बन्धों पर जमी हुई बर्फ अब पिघल जाऐगी। लेकिन पठानकोट और उरी में हुए आतंकी हमलों ने इस उम्मीद पर पानी फेर दिया। सन् 2020 में सम्पूर्ण विश्व में कोरोना महामारी फैली। इस संक्रमण काल के दौरान भारत ने पाकिस्तान को दवाइयों की आपूर्ति की। पाकिस्तान आज भी कश्मीर से धारा 370 हटाऐं जाने (अगस्त 2019) के विरोध में भारत से व्यापार व राजनीतिक सम्बन्धों को समाप्त किए हुए है। जून 2023 तक दोनों देशों के बीच राजनीतिक सम्बन्धों एवं आर्थिक सम्बन्धों में ठहराव बना हुआ है।

निष्कर्ष

भारत–पाकिस्तान सम्बन्धों में तनाव एवं विश्वास निर्माण उपायों का मूल्यांकन करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि दोनों राष्ट्रों में अधिकतर भारत ने ही विश्वास निर्माण उपायों को परिपादित किया और उनका पालन भी किया है। विश्वास निर्माण उपाय तभी सफल सिद्ध होते हैं जब दोनों पक्ष समान रुप से उनका पालन करें और ऐसी किसी भी प्रकार की गतिविधि से बचे जिससे दोनों पक्षों के बीच अविश्वास बढ़े। पाकिस्तान को हठधर्मिता छोड़कर अपने एवं दक्षिण एशियाई क्षेत्र के विकास पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

संदर्भ

1. egyankosh.com
2. JN Dixit, India Pak Relations.
3. Virender Singh Baghel, Foreign Policy of India under Modi.
4. Shameem Ryen, India Pakistan Relations in 21st Century.
5. Ashutosh Dvivedi, Indo Pak Relations and Kashmir Problem
6. Rajesh Jain, Changing Relations Between India And Pakistan.

सुनीता रानी

सहायक प्राध्यापक

राजनीति विज्ञान विभाग

राजकीय महाविद्यालय,

सिहमा

महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

22

डॉ० केशवदेव शर्मा की रचनाओं का भाषिक विश्लेषण

प्रो० विष्णु कुमार अग्रवाल, प्रताप सिंह शाक्य

सारांशतः कहा जा सकता है कि रचनाकार डॉ० केशवदेव शर्मा की रचनाओं में भाषा के विविध रूप प्रयुक्त हुए हैं। अपने मन के भावों को समय और परिस्थिति के अनुसार अभिव्यक्त करने के लिए कहीं–कहीं आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है तो कहीं विद्वतापूर्ण गूढ भाषा का प्रयोग किया है। उनकी भाषा सहज–सरल और स्वाभाविक रही है, जिसमें लाक्षणिकता, व्यंग्य प्रयोग, लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग, समकालीन नवीन शब्दावली के साथ–साथ तत्सम–तद्भव, देशज–विदेशज, उर्दू, अरबी, फारसी एवं अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग पर्याप्त रूप में मिलता है। लोक–प्रचलित शब्दावली ने भी उनकी रचनाओं को पठनीय रूप प्रदान किया है।

भाषिक विश्लेषण से अभिप्राय उन भाषा गुण–तत्त्वों के विवेचन से है, जिनसे रचना में वाणी शक्ति–चमत्कार एवं सम्प्रेषणीयता गुण उत्पन्न होता है। भाषा की लघुतम इकाई वर्ण से लेकर शब्द और पद तक सहजता, सरलता और स्वाभाविकता पाठक मन चित्त को अपनी ओर आकर्षित करती है, अपनापन जगाती है और कंठ में विराजमान होकर रचना और रचनाकार की पहचान बन जाती है। भाषा के संदर्भ में डॉ० रामचन्द्र वर्मा ने लिखा है, ''भाषा वह साधन है, जिससे हम अपने मन के भाव दूसरों पर प्रकट करते हैं। वस्तुतः यह मन के भाव प्रकट करने का ढंग या प्रकार मात्र है।''[1]

वस्तुतः मनुष्य के मन और हृदय में जब भाव संवेदनाएं जागृत या उद्वेलित होती हैं, तो वे रचना रूप में अभिव्यक्ति पाने के लिए भाषा का सहारा लेती हैं। यही कारण है कि भाषायी शब्दों में सार्थकता का होना अनिवार्य है क्योंकि निरर्थक शब्दों की भाषा में कोई भाव स्थिति या महत्त्व नहीं होता। भाषा में रूचि और चमत्मकार लाने के लिए प्रयोक्ता या रचनाकार को समय, स्थान और परिवेश की समझ होना आवश्यक माना गया है। केवल इतना ही नहीं, सत्य बोलते समय भी अप्रिय सत्य से बचने की सलाह दी गई है– ,

'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्'।
प्रियं च नानृतम् ब्रूयात्, एष धर्मः सनातनः।।[2]

आम बोलचाल की भाषा और साहित्यिक भाषा में बहुत अधिक अंतर तो नहीं होता लेकिन रचनात्मकता साहित्यिक भाषा को आम बोलचाल की भाषा से पृथक पहचान रूप प्रदान कर देती है। ठीक वैसे ही जैसे जलतरंग जल में ही उत्पन्न होते हुए जल से पृथक् जान पड़ती है। रचनाकार भाषा के बल पर अपने अमूर्त भावों को मूर्तरूप देता है। दूसरों शब्दों में कहें, तो भाषा काव्य का शरीर है और उसमें निहित अर्थ–संवेदना व भाव संवेदना–आत्मा। कवि या रचनाकार अपनी भाषा में समसामयिक शब्द गुण और अर्थवत्ताओं को लेकर चलता है। इसी के बल पर रचित साहित्य और साहित्यिक भाषा खास पहचान पाती है। सूर ब्रज भाषा का, तुलसीदास अवधी भाषा, तो आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेद्वी खड़ी बोली की पहचान बन गए हैं।

भाषा और संवेदना के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी ने लिखा है, ''जितनी विकसित हमारी भाषा होगी, जितना ही सन्दर्भों के अनुरूप हमारा भाषा–प्रयोग होगा, उतनी स्पष्टता और संपूर्णता के साथ हम संवेदना को समझ सकेंगे? यही कारण– भूमि है, जो प्रत्येक संवदेनशील रचनाकार को गहरे स्तरों पर भाषा से संघर्ष और अंसतोष का अनुभव बराबर कराता है।''[3]

भाषा को पुष्ट करने में तीनों शब्द शक्तियों– अभिधा, लक्षणा और व्यंजना की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है और रचनाकार डॉ० केशवदेव शर्मा ने तीनों ही शब्द शक्तियों का अपनी रचनाओं में यथार्थ और कल्पना आधारित अभिव्यक्तियों के लिए खुलकर प्रयोग किया है, जैसे–

सवालों की दुनिया में, सवालों के कहकहे हैं।
सवालों तलाशते उत्तर, पर सवाल रह रहे हैं।।[4]

लक्षणा और व्यंजना के प्रयोग द्वारा उन्होंने अपनी संवेदना अनुभूति को व्यापक और विशिष्ट रूप प्रदान करने का सफल प्रयास किया है। वैसे भी साहित्यकार अपने भाषायी गुणों के माध्यम से सामान्य कथन को विशिष्ट रूप प्रदान करते हुए समाज में जागृति भाव और चेतना का संचार करना चाहता है। अपनी भावानुभूतियों को सोच के धरातल पर शब्द रंग देकर मूर्त्त रूप में साकार करता जान पड़ता है। रचनाओं की सजगता तभी सफल होती है, जब उसकी भाषा पाठक मन को जिज्ञासा, कौतूहल और रोमांच से प्रेरित करने में सक्षम होती है, प्रेरणा देने का काम करती है। गलत–सही का बोध कराने का प्रयास करती है। मुहावरे और लोकोक्तियों के प्रयोग द्वारा भी डॉ० केशवदेव शर्मा ने अपनी भाषा में जीवंतता लाने की सफल कोशिश की है। वे लिखते हैं–

कब तक ऐसा चक्र चलेगा लोकतंत्र के नाम,
जनता घुट–घुट पिस रही, चुनाव रहा एक काम।
भूखा प्यासा रहा न कोई, कथन हुए अन्दाज़,
ये सब बढ़िया ही हुआ, अफसर तीरंदाज।।[5]

डॉ० केशवदेव शर्मा की भाषा में अर्थ गूढता और अर्थ श्लिष्टता है। वे समाज से प्रश्न भी करते हैं और उत्तर के माध्यम से उनका समाधान भी प्रस्तुत करते हैं। शब्द अपने प्रयोग के अनुसार अर्थ संकेत देते जाते हैं–

व्याख्या अर्थ अनर्थ कर रहे, समय देश भूले संस्कृति परिवेश।
एक देश राग धुन अर्थ महत्ता, भाव अनर्थ शब्द गहे परदेश।
अर्थ तलाशा अर्थ मिल गया, समझ भटकता चाहत अर्थ।
अर्थ तलाशा चमचम माया, समझ अर्थ जग आहत व्यर्थ।।[6]

गद्य–लेखन में भी तर्कसंगत ढंग से अपने विचारों की व्याख्या विवेचना

करना और उसे पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत करना वे अच्छी तरह जानते हैं। इस संदर्भ में 'अहसास' उपन्यास की निम्न पंक्तियों से रचनाकार की भाषा समझ सकते हैं, ''दद्दू! मैं जानता हूँ, तुम्हारे अंदर मुझसे भी ज्यादा तूफान है, उबाल है, आक्रोश है, लेकिन तुम समझदार हो, समय की नजाकत को समझते हो। इसीलिए ऐसा कह रहे हो, नहीं तुम तो मुझसे भी ज्यादा बेचैन हो। अभी सुमति ने जन–जागृति के लिए रात–दिन एक कर रखी है। करेगी क्या, जनता सो गयी है, सो भरपेट खाती है, चैन से सोती है। सभी अपनी–अपनी ढपली अपना–अपना राग अलाप रहे हैं।''[7]

लाक्षणिकता

लाक्षणिकता से अभिप्राय लक्षण सम्बन्धी या लक्षणा शक्ति पर आश्रित[8] माना गया है। हिन्दी–अंग्रेजी मानक कोश में इसे अंग्रेजी शब्द Symptomatical का हिन्दी रूपान्तर माना गया है।[9]

कवि या रचनाकार अपनी भावनाभूतियों को सीधे–सीधे न कहकर लक्ष्यार्थ द्वारा अपनी अभिव्यक्ति को भावपूर्ण बनाते रहे हैं। रचनाकार डॉ० केशवदेव शर्मा की पद्य रचनाएँ ही नहीं; गद्य रचनाएँ भी लाक्षणिकता के प्रभाव से युक्त रही हैं। सामान्य विषय को प्रभावपूर्ण बनाने में उनकी लाक्षणिकता मर्मस्पर्शी और भावोत्तेजक रही हैं। उन्होंने वर्तमान परिवेश में व्याप्त, चिंता, व्यथा, दुःख, कुंठा और स्वार्थपरता आदि को अभिव्यक्ति रूप देते समय आँखों के गीलेपन के साथ अभिव्यक्त किया है–

समय की सरसराहट, नम होती आँखें,
कुछ भी नहीं कहती, पर रहती गीली पाँखें।[10]

इसी तरह 'खेल–खिलाड़ी' कविता में भी लाक्षणिकता का स्वाभाविक प्रयोग देखा जा सकता है, जहाँ कवि ने दुनिया को सर्कस और उसमें उलझे हुए मानव को पिंजड़े में बन्द शेर बताते हुए लिखा है–

चलता चाबुक सर्कस देखा, दुनिया कहती जंगल का राजा
हँसता रोता पिंजड़ा राजा देखा, पिंजड़े उसका बजता बाजा।[11]

किसानों की हरी–भरी लहलहाती फसलों पर जब ओलों की मार के साथ तेज हवाएँ चलती हैं तो कवि मन कहता है कि वह फसल बर्बाद नहीं हुई, अपितु उसके माध्यम से किसानों के अरमान नष्ट हो जाते हैं और जमीन पर लेटी हुई फसल शव की तरह जान पड़ती है। सारी खुशियाँ धूमिल नजर आती हैं। सहानुभूति का भाव बस भाव बनकर रह जाता है। दुख भरे जीवन का यथार्थ कवि के शब्दों में–

ओला आतप असमय धड़ धड़, प्रलयकाल सुधि–बुधि रह खोता
धोरी चादर फैली भू पर सारी, अरमानों का शव अब कह सोता।[12]

रचनाकार डॉ० केशवदेव शर्मा ने अपनी रचनाओं के माध्यम से मानव मन की सुषुप्त मानवीय संवेदना भावनाओं को जगाने का प्रयास किया है। लाक्षणिक शैली में अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए दिखाई पड़ते हैं। कथनी और करनी में जिस तरह का विषमतापूर्ण व्यवहार समाज के विभिन्न स्तरों पर दिखाई दे रहा है। उसे लेकर भी लक्षणपरक भाषा के अनेक रूप रचनाओं में विद्यमान हैं।

उनकी गद्यात्मक भाषा में भी लाक्षणिकता के दर्शन होते हैं, जैसे ''अन्तिम क्रिया या रस्म के समय जिस तरह से सभी जाति–धर्म क्षेत्र के लोग–राजनेता और अधिकारी पहुँच रहे हैं, उसे देख व सुनकर इन दरिन्दों को अपने आकाओं की काली करतूतों को समझना होगा। जो मरने वालों के नहीं हुए, दो बूँद आँसू तक नहीं बहाए, स्वार्थी घड़ियाल हैं, यह सब इनकी आँख खोलने के लिए काफी नहीं है क्या?फिर भी मरते हैं तो मरें।''[13]

रचनाकार अपनी कविताओं के लक्ष्यार्थ के माध्यम से मानव समाज में व्याप्त नकारात्मक प्रवृत्तियों से सावधान करने का प्रयास करते हुए दिखाई देता है। सकारात्मक मानव–मूल्यों की पुनः प्रतिष्ठा करने के लिए सजग जान पड़ते हैं। लक्षणपरक अभिव्यक्तियों के लिए प्रकृति के नाना रूप, दृश्य–प्रभावों का खुलकर सहारा लिया गया है। उनकी रचनाओं में धैर्य, संयम, त्याग, सेवा, करुणा, सहानुभूति, सहिष्णुता, परोपकार, दया जैसे गुणों को लेकर भी लाक्षणिक कथन प्रमुखता से दृष्टिगोचर होते हैं। इस सम्बन्ध में निम्न काव्य पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं–

मिथ्या भ्रम सुखकर लगें, सब जग कह हितकारी बोल।
चक्षु लिए बन अंधा फिरै, ज्ञानहू नयना नहिं कारी खोल।।
साँच बुराई पग पग मिलै, झूँठ बड़ाई यशहू संग देय।
तपन ताप जल अग्नि, लौह बुराई कसहू जंग लेय।।[14]

व्यंग्योक्तिपरक प्रयोग

व्यंग्योक्तिपरक प्रयोग रचना में चमत्कार तो पैदा करता ही है, साथ ही रचनाकार की अभिव्यक्ति को प्रभावशाली भी बनाता है। जब रचनाकार किसी व्यक्ति, वस्तु, घटना, दृश्य, वर्णन या क्रिया–प्रतिक्रिया को शब्द–रूप में घुमा–फिराकर बात करता है अथवा अन्य रूप में शब्द–रूप गढता है; तब वह व्यंग्य कहलाता है।

सामान्यतः घुमा–फिराकर भाव–अभिव्यक्ति करना और प्रकारान्तर के साथ पाठक के मन में दर्द संवेदनाएँ झंकृत करना ही व्यंग्यपरक उक्तियों की श्रेणी में आता है। केशवदेव शर्मा की गद्य–पद्य रचनाओं में समसामायिक परिवेश और मानव चतुराई, चालाकी, धोखा, अविश्वास, संघर्ष, घुटन, पीड़ा, आक्रोश को लेकर व्यंग्य रूप प्रमुखता से देखने को मिलता है। स्वार्थ पूर्ति की भावना और सत्ता लोलुपता पर करारा व्यंग्य उनकी रचनाओं की प्रमुख विशेषता है। उनकी लेखनी उस समय और भी तीखी हो जाती है, जब समाज के विभिन्न पहलुओं पर एक–दूसरे को मूर्ख या नासमझ समझने की कोशिश दिखाई देती है। ऐसा नहीं है कि केवल समाज और राजनीति ही उनकी रचनाओं में प्रमुखता से व्यंग्य का केन्द्र बिन्दु रहे हैं, अपितु धर्म, शिक्षा, संस्कृति और ज्ञान–विज्ञान के नाम पर छल–कपट को लेकर भी उनकी भाव–अभिव्यक्ति व्यंग्य के माध्यम से सजग दिखाई देती है। एकतरफ वर्तमान राजनीति, मानव स्वार्थपरता, मनमानीपन और अवसरवादिता को लेकर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं–

मैं तो सेवक सदा तुम्हारा, कुर्ता घुटनों लप–लप करता है।

भूले–भटके जुबाँ जो बोली, पला मलाई थप–थप करता है।।[15]

तो वहीं 'कुर्सी–धर्म' कविता में वह कहते हैं कि पद के लालच में मानव अपनी मानवता भुला बैठा है और ऐसा लगता है जैसे कुर्सी के मोह में उसने अपने सभी सिद्धान्तों को त्याग दिया है। कवि के शब्दों में –

मंदिर मस्जिद देख महक मन उठता
धर्म धारणा जय जयकार गूंजती नारों में
बाइबिल कुरान गीता सब आज बिक रही
अस्तित्त्व बचाने भीख मांगती कुर्सी मारों में।[16]

युगीन सच्चाई को लेकर डॉ० केशवदेव शर्मा की रचनाओं में व्यंग्य न केवल मनुष्य को सोचने–विचारने के लिए विवश करते हैं, अपितु मन में प्रश्न उठाते हैं कि आखिर आदमी विवशता और लाचारी के नाम पर कब तक आँख बन्द किए दुनिया में तमाशा देखता रहेगा और 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की कहावत चरितार्थ होती रहेगी। 'हित–अनहित' शीर्षक कविता में उनके आक्रोश भरे व्यंग्य अवलोकनीय हैं –

शाख–शाख उल्लू सज बैठा
खुद मियाँ मिट्ठू धुन गाता
सहज साधना लगती मन भावन
तूफान बवंडर मुख ध्वनि आता।[17]

इसी तरह 'दरिन्दे और दरिन्दगी' उपन्यास के श्याम और रहीम के संवादों में वर्तमान परिदृश्य के प्रति विश्वास, अविश्वास, आक्रोश, आशा–निराशा भरी संवेदनाओं का व्यंग्य रूप देखा जा सकता है– ''मौके बेमौके प्रशिक्षित आतंकवादी भेजकर अमन चैन छीन लेता है। बेचारे गरीब लोग न केवल बेघर हो जाते हैं अपितु उनको रोटियाँ भी नसीब नहीं होती। भला तुम्हीं बताओं अचानक कोई तुम्हारे ऊपर गोली चला दे, तुम्हारी जवान बहू–बेटियों की इज्जत लूट ले तुम्हारे पसीने की कमाई छीन ले, कैसा लगेगा तुम्हें? इस पर भी तुम्हारे हितैषी होने का ढोंग करे। यही सब हो रहा है। सभी मौन हैं। सभी जगह राजनीति के दाँव खेले जा रहे हैं।''[18]

लोकिक्त व मुहावरों का प्रयोग

लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग दीर्घकाल से पठन–पाठन और लेखन में भी मिलता है। सूत्र शैली में इस प्रकार के प्रयोग प्रमुखता से मिलते हैं। यही कारण है कि उनका प्रयोग कब से प्रारम्भ हुआ है? यह निश्चित कर पाना कठिन है। लोकोक्ति और मुहावरों को श्रवण परम्परा से ही जोड़ा जाता है। तरह–तरह के भाषायी परिवर्तन और बदलावों के बाद भी लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग रचनाओं में प्रभाव और चमत्कार भरते रहे हैं। साथ ही कथन की गूढ़ता और सरलता का भी प्रतिपादन करते हैं। इसी के साथ भाषा की सम्प्रेषणीयता में भी लोकोक्ति और मुहावरों का प्रसंगानुकूल महत्त्व रहता है।

साहित्यकार केशवदेव शर्मा लोक जीवन और लोक–संस्कृति के साथ गहराई और संजीदगी से जुडे रहे हैं। कृषक पुत्र होने के नाते ग्राम्य जीवन संस्कृति के प्रति गहरा प्रेम उनकी रचनाओं में कूट–कूट कर भरा हुआ है। उनकी रचनाओं के पात्र ही नहीं, विषयवस्तु पर भी इसका गहरा प्रभाव झलकता है। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में कथ्य विषय को पुष्ट करने के लिए लोकोक्ति और मुहावरों का खुलकर प्रयोग मिलता है। उनकी काव्य रचनाओं, उपन्यासों, कहानियों और निबन्धों; सभी में लोक प्रचलित लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग कथ्य को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध हुआ है।

डॉ० केशवदेव शर्मा के शब्द–विधान पर समकालीन भाषायी प्रभाव भी दृष्टिगोचर होते हैं। उन्होंने अपने कथ्य के लिए समसामायिक परिवेश से जो भाव–विचार ग्रहण किये हैं, उनके लिए वैसे ही शब्द गढ़ने का सफल प्रयास किया है। समाज में व्याप्त भय घुटन, पलायन, शंका, अविश्वास, छीना–झपटी जैसे मनोविकारों को लेकर भी उनकी सजगता देखने को मिलती है। ऐसी स्थिति में उनका लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग सहज और स्वाभाविक बन पड़ा है, जो उनके गम्भीर विचारों को पाठक के मानस पर सहजता के साथ झंकृत करता चला जाता है।

'बंजारा शतक' कविता–संग्रह की निम्न पंक्तियों में लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग हुआ है। 'हिन्दुस्तानी सावधान' शीर्षक कविता में लिखा है –

मौका जैसे सुख का आया, मुक्त हस्त से दान दिया,
भूले हम अपना–पराया, सिद्धमस्त हो मान किया।।[19]

डॉ० केशवदेव शर्मा की काव्य भाषा की तरह गद्य भाषा भी लोकोक्ति और मुहावरों के प्रयोग से ओत–प्रोत रही है। भाव–कथन को स्पष्ट और प्रभावशाली बनाने के लिए उनके द्वारा प्रयोग किए गए लोकोक्ति और मुहावरे सहज ही पाठक मन को अपनी ओर आकर्षित करते दिखायी पड़ते हैं।

नवीन शब्दावली का प्रयोग

नवीन शब्दावली से अभिप्राय उन शब्द रूपों से है, जो प्रचलन में तो रहे हैं लेकिन उनका बदला हुआ रूप कविताओं में लयात्मकता, तुकान्तता और शब्द मैत्री में सहायक रहता है, वहीं कविता उपन्यास और कहानियों में नएपन के साथ विशिष्टता की छाप छोडता है। प्रबुद्ध साहित्यकार डॉ० केशवदेव शर्मा शब्दों के नए रूप गढने, उनका सम्यक् प्रयोग करने में कुशल माने जाते हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त नए शब्द भले ही शब्द कोशों में मिलें या ना मिलें, लेकिन प्रयोग के साथ अपना भाव या आशय स्पष्ट करने में समर्थ रहे हैं। ऐसे अनेक शब्दों के प्रयोग मिलते हैं, जो काव्य में रमणीयता और पठनीयता का भाव पैदा करते हैं। इस प्रकार के शब्दों में बबको, चौकस, विषमति, रागना, मरमार, ऊहापोह, भै, खार, सोचन, खटा, सन, समै, खता, बतावन, लहे, नकारा, दह, आख्या, भा, भैमान, तह, चैट, पसराई, माइक्रोस्कोप, सोखता, सीम आदि प्रमुख हैं। इनके अलावा भी अनगिनत शब्दों का प्रयोग मिलता है, जिनमें स्थानीय भाषायी बोध का भाव भी विद्यमान है।

तत्सम–तदभव शब्दों का प्रयोग

साहित्यकार डॉ० केशवदेव शर्मा की पृष्ठभूमि संस्कृत भाषा से भी जुड़ी रही है। इस कारण उनकी भाषा पर संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली का प्रभाव झलकता है। कविता लेखन हो या गद्य लेखन, संस्कृत के शब्द ज्यों की त्यों उनके लेखन में मिलते हैं। तत्सम शब्दों ने उनकी भाषा को शुद्ध भी बनाया है, भाषायी ज्ञान और समझ को दर्शाया है और काव्य की शोभा भी बढाई है, जैसे –

कर्म साधना जीव जगत में,

यहाँ पर 'कर्म' शब्द तत्सम शब्द है।

सुन्दर बंगले देकर कीमत लेते हैं।

यहाँ पर सुन्दर शब्द तत्सम शब्द है।

''सरकार का नाम रोष नहीं।''[20]

यहाँ पर 'रोष' शब्द तत्सम शब्द के रूप में प्रयुक्त हुआ है। वैसे तो साहित्यकार केशवदेव शर्मा की गद्य–पद्य भाषा तत्सम–तद्भव शब्दों के प्रयोग से परिपूर्ण है। इस प्रकार के प्रयोगों के उनकी रचनाओं में अनेक उदाहरण मिलते हैं। तत्सम–तद्भव शब्द मिश्रित उनकी गद्य भाषा भी सहज, सरल और स्वाभाविक रही है। अस्तु, तत्सम शब्दों के प्रयोग ने केशवदेव शर्मा की भाषा को विद्वता की भाषा में परिवर्तित सा कर दिया है। कभी–कभी तो उनकी लेखकीय भाषा चिन्तक की भाषा रूप में सामने उपस्थित होती है।

देशज शब्द प्रयोग

रचनाकार केशवदेव शर्मा का बचपन और विद्यार्थी काल जिस गाँव परिवेश में बीता; वहाँ की शब्दावली ने उनके लेखकीय मन पर गहरा प्रभाव छोड़ा है। जब भी वह कुछ लिखते हैं, तो उस शब्दावली की झलक स्वभावतः (अपने आप) आ जाती है। ऐसे शब्दों में रैन, रैना, जगती, उमस, हाट, गलियार, रुख, रूख, रिता, होड़ा–होड़ी, खौंसता, भभक, बबक, खावै, भया, दारू, मनुआ, पनियल जैसे अनगिनत शब्दों का प्रयोग उनकी भाषायी समझ को दर्शाता है और पता चलता है कि उन पर न केवल संस्कृतनिष्ठ खडी बोली का प्रभाव है अपितु, ब्रज भाषा का भी उतना ही प्रभाव है।

विदेशज शब्द प्रयोग

विदेशज वे शब्द होते हैं, जो दूसरे देश की भाषाओं से ग्रहण किए जाते हैं। ऐसे शब्द केवल पठन–पाठन से ही नहीं आते अपितु, परिवेश से भी बोली भाषा में शामिल हो जाते हैं। साहित्यकार जिस समाज परिवेश में जीता है, उससे शब्दों को ग्रहण करना सहज ही हो जाता या रहता है। वह चाहे–अनचाहे ऐसे शब्दों का प्रयोग करता है, जो विषय–वस्तु और पात्रों के अनुसार कथन उद्देश्य के लिए आवश्यक होते हैं। डॉ० केशवदेव शर्मा की रचनाओं में विदेशी भाषाओं उर्दू, अरबी, फारसी, अंग्रेजी के प्रचलित और नवागत शब्दों का भरपूर प्रयोग हुआ है। अनेक प्रचलित शब्द हैं, कुछ अप्रचलित होते हुए रूढ हो गए हैं। अंग्रेजी शब्दों का हिन्दीकरण भी हो गया है, जो लेखन में यत्र–तत्र–सर्वत्र पढ़ने सुनने को मिलते हैं।

उर्दू–अरबी–फारसी शब्दों का प्रयोग

भले ही डॉ० केशवदेवशर्मा की पृष्ठभूमि संस्कृत और ब्रज भाषा की रही है लेकिन समाज में प्रचलित अनेक ऐसे शब्द हैं जो उनकी गद्य–पद्य रचनाओं में प्रयुक्त हुए है। इनमें प्रमुख हैं– मजहब, फरियाद, दरिया, माफिक, शामत, जोश, जिहादी, रुह, नापाक, गाहे–बेगाहे, पैगाम, रोब, खौफ़, बेशक, खाक, मज़ाक, मजार, सिसायत, कयामत, नाचीज, जबरदस्ती, मिन्नत, तनख्वाह, बौखलाहट, खास, खबर, गौर, तकल्लुफ, तौबा, सरअंजाम, कठमुल्ला, इजाजत, खुदा, खैर, रब आदी, राहगिरी, अलविदा, तबाही, हिफाजत जैसे अनेक शब्द हैं, जो रचनाकार के भाषा वैविध्य ज्ञान को प्रकट करते हैं। उनकी इस प्रकार की शब्दावली में समग्र समाज की भावनाएँ विद्यमान रही हैं। उनकी शब्दावली इंसानी भावों को जगाना चाहती हैं। सोचने के लिए प्रेरित करती है।

अंग्रेजी शब्दावली का प्रयोग

समय के प्रभाव का ही फल है कि वे एक हिन्दी प्राध्यापक होते हुए भी परिवेश में निरन्तर प्रयोग होने वाले अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग की स्वाभाविकता उनके गद्य–पद्य लेखन में खूब मिलती है। कुछ तो ऐसे शब्द हैं, जो प्रयोग होते–होते हिन्दी भाषा के ही शब्द लगने लगे हैं, अगर उनकी हिन्दी तलाशते हैं या प्रयोग करने का प्रयास करते हैं, तो बौद्धिक मंथन करना पड़ता है। इसके विपरीत वे अपना भाव स्पष्ट करने में सक्षम रहते हैं, जैसे मीडिया, लॉबीइंग, लॉबी, वॉलमार्ट, माइक, लाऊडस्पीकर, शॉप, मेडिकल स्टोर, कोरोना, कॉन्वैंट, कमेटी, प्रेसीडैंट, स्टुडैंट, यूनिवर्सिटी, कॉलेज, कम्पनी, इम्पोर्टिड आदि शब्द प्रमुख रहे हैं। इस प्रकार के शब्द प्रयोग उनकी रचनाओं में भरे पड़े हैं। इन शब्द प्रयोगों के आधार पर पता चलता है कि रचनाकार की भाषा पर समसामयिक शिक्षा परिवेश का भी पर्याप्त प्रभाव रहा है। आम भाषा में भी इस प्रकार के अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग मिलता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भाषा–प्रयोग की दृष्टि से डॉ० केशवदेव शर्मा की रचना अपने ध्येय में सहायक रही हैं। एक तरफ लोकभाषा का प्रयोग मिलता है, तो दूसरी तरफ विषय अनुकूल तत्सम–तद्भव शब्दों से भरपूर शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली का उत्कृष्ट रूप। लक्षणपरकता, व्यंग्य उक्तियाँ, देशज–विदेशज शब्द प्रयोग भी रचनाकार की भाषा–सम्बन्धी सक्षमता की परिचायक हैं।

संदर्भ–सूची।

1. अच्छी हिन्दी, श्री राम चन्द वर्मा, पृष्ठ संख्या 17
2. नीतिश्लोक
3. रूप भाषा और संवेदना, श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृष्ठ संख्या 103
4. समय बोलता है, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 37
5. लोकराज पानी भर रहा है, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 126
6. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, छन्द संख्या 201, 215
7. अहसास, उपन्यास, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 47

8. हिन्दी शब्दकोश डॉ० हरदेव बाहरी, पृष्ण संख्या 719
9. मानक हिन्दी–अंग्रेजी कोश, डॉ० राममूर्ति सिंह, पृष्ठ संख्या 272
10. लोकराज पानी भर रहा है, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 147
11. समय बोलता है, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 39
12. साठ बरस सौ रंग, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 113
13. दरिन्दे और दरिन्दगी, उपन्यास, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 82
14. भाव तरंग सतसई, डॉ० केशवदेव शर्मा, छन्द संख्या 641, 642
15. लोकराज पानी भर रहा है, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 178
16. साठ बरस सौं रंग, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 96
17. संवाद, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 59
18. दरिन्दे और दरिन्दगी, उपन्यास, डॉ० केशवदेव शर्मा पृष्ठ संख्या 18
19. बंजारा शतक, डॉ० केशवदेव शर्मा पृष्ठ संख्या 15
20. लोकराज पानी भर रहा है, डॉ० केशवदेव शर्मा पृष्ठ संख्या 22, 33, 34

प्रो० विष्णु कुमार अग्रवाल
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष–हिन्दी विभाग,
शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय,
मुरैना (जीवाजी विश्वविद्यालय,ग्वालियर)
प्रताप सिंह शाक्य
सहायक प्राध्यापक एवं शोध छात्र–हिन्दी विभाग,
शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय,
मुरैना (जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर)

23

'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास में विज्ञापन बाजारवाद

आरती

सारांश

जब उत्पादक व उपभोक्ता के मध्य पदार्थों वस्तुओं व उत्पादों के क्रय–विक्रय की पूर्ति होती है तो उसे बाजारवाद कहते है। पुरातन काल में मुद्दा का चलन न होने के कारण वस्तु विनिमय प्रणाली का उपयोग होता था अर्थात वस्तुओं के आदान–प्रदान करने की प्रक्रिया। विश्व के समूचित प्राणियों को जीवन निर्वाह करने के लिए पारस्परिक सहयोग व अनिवार्य पदार्थों की आवश्यकता होती है। इन्हीं पदार्थों की पूर्ति व जीवनशैली को संतुलित करने के लिए बाजारवाद का उदय हुआ। समय के साथ समाज की आवश्यकताओं को देखते हुए मुद्रा का चलन आरंभ हुआ। मुद्रा का एक निश्चित मापदंड निर्धारित करके वस्तुओं को खरीदने के लिए इसका प्रयोग किया जाने लगा।

मनुष्य की इच्छा व सुविधाओं के अनुसार पदार्थों का उत्पादन बढ़ने लगा। बढ़ते औद्योगीकरण के साथ–साथ कंपनियों की स्थापना होने लगी। इसके फलस्वरूप उपभोक्ता उपभोग करने योग्य वस्तुओं से परिचित हुआ। उत्पादक का प्रमुख उद्देश्य ग्राहक को अपने निर्मित सामान की तरफ आकर्षित करना व संबंध स्थापित करना ताकि उनके सामान की मांग दुनिया में बनी रहे। उत्पादों को समाज के प्रत्येक वर्ग से परिचित कराने के लिए विज्ञापनों का आश्रय लिया जाने लगा। वर्तमान युग में शिक्षा व्यापार सरकारी काम–काज के प्रति लोगों को जागरूक करना,चिकित्सा, नौकरी, फिल्म जगत, पर्यटक स्थल, घरेलू पदार्थ, वस्त्र, स्त्री सौंदर्य पदार्थ व भोजन आदि सभी लघुकाय से लेकर विशालकाय कार्यो के लिए विज्ञापन कराए जाते हैं।

पहले विज्ञापन ज्यादातर रेडियो टी०वी० व अखबार आदि में कराए जाते थे। टेक्नोलॉजी के युग में यूट्यूब, फेसबुक, इंस्टाग्राम, व स्नैपचैट आदि पर विज्ञापन कराए जाते हैं। यूट्यूब पर तो सभी चैनलों पर अनिवार्य रूप से एडवर्टाइजमेंट आती हैं।

विज्ञापन बनाना एक कठिन कार्य है क्योंकि इसमें हम लोगों की आदतों, भावनाओं विश्वास को बदलने की कोशिश करते हैं, उन आदतों को नया रूप देते हैं। विज्ञापन के महत्व को देखते हुए प्रमुख विज्ञापन कंपनियाँ भी स्थापित हो गई हैं जिनका कार्य उत्पादक के लिए अच्छे विज्ञापन बनाना और लोगों को प्रभावित करना है। ये सभी प्रकार के विज्ञापन बनाती है। 'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास में लेखक के कथन से यह बात स्पष्ट है–''आखिर भट्ट लोगों को पढ़ने की इसी काबिलियत के चलते मद्रास की उस एडवरटाइजिंग एजेंसी में इतने कम समय में इतना ऊंचा उठा था। एजेंसी के पास मरने की फुरसत नहीं थी। घरेलू सामान बनानेवाली ब्रेड और साबुन की कंपनी हो या गाड़ी, स्कूटर बनानेवाली कंपनी का हीरे–मोती के गहनेवाली हो या बेहतरीन साड़ी की दुकानें–सबको अपने लिए 'मिरैकल एडवरटाइजिंग कम्पनी'' की सेवाएँ चाहिए थीं।

विज्ञापनों में भावनात्मक पहलू पर विशेष ध्यान दिया जाता है। ताकि ग्राहकों को अपनी तरफ आकर्षित कर सके, क्योंकि वे भावना से जल्दी प्रभावित होकर वस्तुओं को खरीदते हैं। विज्ञापन बनाने के लिए व्यक्तियों से अभिनय कराया जाता है। ज्यादातर अभिनय उन व्यक्तियों के द्वारा कराया जाता है जिन्हें वैश्विक स्तर पर विलक्षण पहचान मिली होती है। जैसे – अक्षय कुमार जी द्वारा सेनेटरी पैड व हार्पिक का विज्ञापन, अमिताभ बच्चन जी द्वारा घड़ी डिटर्जेंट पाउडर व नवरत्न का विज्ञापन तथा विराट जी व अनुष्का जी द्वारा लक्स साबुन व शैंपू का विज्ञापन आदि। व्यक्ति इनके अभिनय से प्रभावित होते हैं। के० वी० शंकर अयर जी व उनकी पत्नी की वार्ता यह स्पष्ट है के० वी० अपनी पत्नी से कहता है ''अच्छा देखो, तुमने टी०वी० पर देखा की हारपिक गंदे से गंदे कमोड के सारे दाग छुड़ा देता है। तुम उसे सच नहीं मानती तो क्या तुम बरसों से चले आ रहे फिनाइल को छोड़कर हारपिक खरीदती?इसलिए तो वह बेचारा टी०वी० का एक्टर अमन वर्मा हारपिक की बोतल लिए घर–घर घूमकर गंदे कमोड साफ करता दिख रहा है।''

विज्ञापन में दिखाए गए अभिनय से मनुष्य के मस्तिष्क पर विशेष प्रभाव पड़ता है। उसे लगभग पूर्ण रूप से सत्य मानने लगता है और बिना गुण–दोष देखे उसे खरीद लेता है क्योंकि कई बार व्यक्ति उन व्यक्तियों से प्रभावित है जो विज्ञापन में अभिनय करते हैं। ''एक ब्रेक के बाद'' उपन्यास में के०वी० की बात से यह सिद्ध होता है कि विज्ञापन में दिखाई गई हर वस्तु अच्छी नहीं होती है। ''तो तुमने नौकरों के क्वार्टर वाले इंडियन कमोड के दाग छुड़ाने के लिए हारपिक दिया, तो तुम्हें क्या पता चला कि अमन वर्मा झूठ बोल रहा था। उस कमोड के बरसों पुराने दाग किसी तरह नहीं छूटे। लेकिन...'' – के०वी० की पत्नी उसकी बात काट कर कहती हैं –''टी०वी० पर रामदेव बाबा कह रहा था कि कोकाकोला से कमोड साफ करो। हारपिक से सस्ता और ज्यादा कारगर है। ऊपर से फायदा यह बच्चे कोकाकोला पीना छोड़ देंगे।''

अनेक लोगों को शॉपिंग करने का शौक होता है। वे लगभग हर दिन किसी न किसी वस्तु की शॉपिंग करते ही रहते है जब उन्हें विज्ञापन के द्वारा किसी नई चीज का पता लगता है तो वे उसे ही खरीदने चले जाते है। कुछ ऐसे भी मनुश्य है जो दूसरों को दिखाने के लिए अपने पैसे से शॉपिंग करने में खर्च कर देते है। स्त्रियों को सौंदर्य पदार्थों, कपड़े व आभूशणों का अधिक शौक होता है। आज के समय में घर बैठे ही ऑनलाइन शॉपिंग करते है क्योंकि वर्तमान समय में लोगों की जिन्दगी बहुत ही व्यस्त है। ऐसे में वे अपने समय की बचत करने के लिए ऑनलाइन शॉपिंग करते है जिससे बाजार को और अधिक विस्तार मिला। ''एक ब्रेक के बाद'' उपन्यास से हमें पता चलता है कि

आरंभिक दौर में ऑनलाइन शॉपिंग को कम पसंद किया गया है। क्योंकि भारत में मनुश्य सामान खरीदने से पहले उसे अपने हाथ में लेकर अच्छे से देखता है, परन्तु ऑनलाइन में उन्हें केवल चित्र देखकर ही समान को पसंद करना होता था। ऐसे में उनके मन के अंदर समान के अच्छे होने की दुविधा रहती थी। उदाहरण के लिए उपन्यास में के० वी० के विचार में पता लगता है। ''लोग टी. वी. पर समान देखकर उसे खरीदने के लिए ड्राफट और चेक भेज दें और वह भी भारतवर्ष में ?यहाँ तो लोगों को आलू भी खरीदना हो, तो हर आलू को घूमा–फिराकर देखकर खरीदते हैं। ऐसे लोग खाली टी० वी० पर भरोसा कर समान ऑर्डर करेंगे, इसमें सबको शक था।''

बाजार में कंपनियों द्वारा अपना आधिपत्य स्थापित करने की प्रतिस्पर्धा चल पड़ी है। देश के अंदर विदेश की कंपनियां भी स्थापित हो गई है। ये विज्ञापनों व ऑफर के द्वारा ग्राहक को आकर्षित करना चाहती हैं। प्रत्येक की यह कोशिश रहती है कि उनका उत्पादक अन्य की तुलना में गुणवत्ता में अधिक व लागत में कम हो। ये किसी भी हालत में अपनी लागत को कम रखना चाहती हैं ताकि उन्हें लाभ ज्यादा प्राप्त हो। अन्य देशों की कंपनी भारत में सस्ते दामों पर माल तैयार करा कर उन्हें मंहगें दामों पर बेच देती हैं। जैसे उपन्यास में के० वी० कहता है ''एक तरफ पश्चिम के बड़े–बड़े ब्रॉड–गैप, पोलो, टॉमी हिलफिगर, मार्क्स एंड स्पेंसर अपना सारा माल इंडिया की फैक्ट्रियों में सस्ते में बनवा रहे हैं, तो दूसरी तरफ लेकर आइसक्रीम तक महानगरों के बड़े–बड़े शॉपिंग मॉलों से बेच रहे हैं।''

जहां एक तरफ विज्ञापनों का प्रभाव सकारात्मकत होता है वहीं पर इनका प्रभाव कई बार नकारात्मक भी हो सकता है। विज्ञापनों के द्वारा हम जिन खाद्य पदार्थों से हम परिचित होते हैं कई बार यह हमारी सेहत के लिए हानिकारक सिद्ध होते हैं जिनके चलते हमारा पैसा व स्वास्थ्य दोनों ही खराब दिशा की ओर जाते हैं। उदाहरण के लिए ''एक ब्रेक के बाद'' उपन्यास में के०वी० वे गुरुचरण की वार्ता से हमें पता चलता है ''अरे यार, तुम्हारी मल्टीनेशनल कंपनी इंडिया में क्या बेचती है?अरे क्या नाम है , भूल गया मैं– क्या नाम है तुम्हारे प्रोडक्ट का ?'' गुरुचरण ने धीरे से कहा – ''पावरिक्स''। ''कितना भेजते हो एक साल में?दो सौ करोड़ का?चार सौ करोड़ का ?और उसमें है क्या ?थोड़ी सी चीनी, थोड़ा आटा, थोड़ा दूध, घोड़ लेवर यही तो ?उसे पिला–पिलाकर तुम इस देश का क्या भला कर लोगे?बेचारा गरीब मर–मरकर खरीदेगा कि 'पावरिक्स' उसे 'पावरफुल' बना देगा।''

विज्ञापनों से हमें नए उत्पादों को पहचानने में सुविधा भी मिली है। दूध स्वास्थ्य के लिए जरूरी है परंतु यह महंगा व जल्दी खराब हो जाता है। गरीब आदमी को इसे खरीदने में कठिन होती है। इसके लिए सूखे दूध का पाउडर बनाया गया जो सस्ता व लंबे समय तक स्टोर रखने की क्षमता रखता है। इसमें लगभग दूध के समान गुण पाए जाते हैं उपन्यास में भट्ट सूखे दूध का व्यापार करना चाहता है। पहले इसका व्यापार सफल नहीं हो रहा था अर्थात् सूखे दूध की बाजार में मांग कम थी। इसके बाजार को बढ़ाने के लिए भट्ट ने विज्ञापन का सहारा लिया जो उपन्यास में आए कथन में स्पष्ट है। ''भट्ट को रास्ता दिखा पढ़ा याने कि उसने कंपनी का एडवरटाइजिंग का बजट सीधे दुगुणा किया और ऐसी मार्केटिंग कि व्यवस्था की कि दूर–दराज के गांव–गांव में हर परचून की दुकान पर 'मां यशोदा डेयरीज' के नीले पैकेट दिखाई पड़ने लगे।

''एक ब्रेक के बाद'' उपन्यास में विज्ञावन व बाजारवाद का रूप अभरकर सामने आया हैं। आधुनिक समय में व्यापार बुद्धि से किया जाने वाला कार्य है। लेकिन इसके लिए बाजार का होना जरूरी है और उसे जन–जन तक पहुँचाने के लिए विज्ञापर का होना जरूरी है। समय के जरूरतों के अनुसार विज्ञापन के साधान बदल जाते हैं। टेक्नोलॉजी के युग में विज्ञापन का एक नया रूप सामने आया हैं। पहले इन्हें कम्पनी द्वारा बनाया जाता और इसके बाद जनता के सामने प्रसारित किया जाता था। आज भी ऐसा होता है परन्तु इसके बाद आज ब्रांड का प्रमोशन व विज्ञापन दोनों साथ में हो जाते हैं। जैसे – यूटयूब पर अनेक व्यक्तियों द्वारा अपने द्वारा अपने चैनल बनाए जाते है वे अपना व्लॉग बनाते है ये अपने व्लॉग के अंदर ही ब्रांड का प्रमोशन कर देते है। व्लॉगर को इससे पैसा मिलता है। इससे कम्पनी का विज्ञापन बनाने का खर्चा कम हो जाता है और मार्केटिंग भी हो जाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन, 2008 पृ० सं० 59
2. अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन, 2008 पृ० सं० 15
3. अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन, 2008 पृ० सं० 15, 16
4. अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन, 2008 पृ० सं० 117
5. अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन, 2008 पृ० सं० 52, 52
6. अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन, 2008 पृ० सं० 92
7. अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन, 2008 पृ० सं० 81

आरती (विद्यार्थी)
महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय
मेल – kadianaarti541@gmail.com
मोबाइल न. – 8607683398, 97281510129
पिन कोड – 124412
गाँव – चिमनी, तहसील – बेरी
जिला – झज्जर (हरियाणा)

24

इक्कीसवीं शताब्दी के आरम्भिक दशकों की हिन्दी कहानियों में नारी चित्रण–बाजार, अर्थव्यवस्था और स्त्री–मुक्ति

रेनू, डॉ राकेश चन्द्र

सारांश

अर्थव्यवस्था में सदैव से स्त्रियों का योगदान रहा हैं। घर की जिम्मेदारी हो, नौकरी हो या व्यापार सभी रूपों में नारियों ने परिवार की समृद्धि और सुख में योगदान दिया है। आज भी कई जगह मातृसतात्मक परिवार हैं, जिनकी बागड़ोर पूर्णतया महिलाओं के हाथ में है। ऐसे परिवारों की अर्थव्यवस्था में महिलाओं की निर्णायक भागीदारी है। घर में रहकर परिवार सम्भालने वाली तमाम महिलाएँ घर के खर्चों को मितव्ययिता के साथ चलाते हुए परिवार की आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाती हैं, जिससे परिवार की जीवन शैली में सुधार आता है। बहुत से काम घर में रहने वाली महिलाएं ऐसे भी करती हैं, जिन्हें अगर किसी विशेषज्ञ से भी कराया जाये तो अच्छे–खासे परिवारों की आर्थिक स्थिति गड़बड़ा सकती है। फिर भी अधिकतर समाज में महिलाओं की गिनती पुरूषों के बाद ही होती है, क्योंकि समाज में आर्थिक भागीदारी का मतलब उन कार्यों से लगाया जाता है, जिनसे आय में बढ़ोत्तरी होती है।

हमारा समाज अब लैंगिक समानता की ओर बढ़ रहा है, जिससे राजनीति, उद्योग, नौकरी आदि क्षेत्रों को लेकर महिलाओं में जागरूकता भी बढ़ी है, जबकि महिलाओं के लिए शिक्षा के साथ रोजगार के नये–नये क्षेत्र भी खुल रहे हैं, फिर भी महिलाओं का प्रत्यक्ष आय में कम योगदान चिन्तनीय है। आधी आबादी महिलाओं की हैं और इसमें भी व्यवसायिक दक्षता प्राप्त महिलाएँ काफी बड़ी संख्या में हैं। अगर ये सभी प्रत्यक्ष आय की अवधारणा से जुड़ जाये तो निश्चित तौर पर इनके श्रम के योगदान से अर्थव्यवस्था में सुधार आयेगा। साथ ही वे अपने परिवार की आय में बढ़ोत्तरी के साथ, अपने तरीकों से अपनी आय को खर्च भी करेगी और बचायेगी भी, तब देश की अर्थव्यवस्था भी सुधरेगी। सामाजिक दृष्टिकोण से देखें तो महिलाओं के कामकाजी होने को लेकर समाज भी बदल रहा है। महिलाओं की समान शिक्षा से रोजगार तक में सकारात्मक बदलाव आ रहा है। समाज का हर वर्ग स्त्री–पुरूष की समानता की आवश्यकता को समझ रहा है, किन्तु अर्थव्यवस्था की गति के समान रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं हो रहे हैं। महिलाओं के लिए उद्योगों से ना जुड़ पाने में एक परेशानी यह भी है कि हमारे देश के श्रम कानून के हिसाब से महिलाओं को रात्रि की पालियों में कार्य करने की मनाही है, जबकि उद्योगों को बाजार के नियमों और परिस्थितियों के हिसाब से चलना पड़ता है। कुछ उद्योग मौसम के हिसाब से भी चलते हैं।

जहाँ पर जरूरत बढ़ने पर दिन–रात कार्य करना पड़ता है, उन उद्योगों में लोग महिलाओं को नियुक्त नहीं कर पाते। उद्योग धन्धों में महिलाओं के लिए मातृत्व अवकाश और उनके बच्चों की देख–रेख के लिए भी कोई व्यवस्था करना व्यर्थ समझते हैं और अपने खुद के व्यवसाय के लिए आर्थिक परेशानी से पार पाना, ऋण की व्यवस्था से लेकर लाइसेन्स आदि तक भी महिलाओं के लिए सरल नहीं है।

स्त्रियों की सुरक्षा के लिए बनाये गये कानूनों का पालन भी पूरे मन से नहीं हो पाता। उचित रूप से कानूनों का पालन ना करने की वजह से महिलाओं की सुरक्षा के लिए बनाये गये कानून बेअसर साबित हो रहे हैं। महिलाओं को आने–जाने में सार्वजनिक परिवहन साधनों का प्रयोग करना पड़ता है, जिनमें उनके साथ अभद्र व्यवहार का ड़र सदैव बना रहता है। बहुत कम ही उद्योग या कार्यक्षेत्र ऐसे हैं, जो महिलाओं को निजी परिवहन सुविधा उपलब्ध करवाते हैं। ऐसी सुविधाओं का अभाव भी एक वजह है, जो महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वावलम्बित नहीं होने देता और उस पर अगर मंदी या किसी अन्य कारण से उद्योगों में छँटनी करनी पड़ जाये तो सबसे पहली मार औरतों पर ही पड़ती है। महिलाओं द्वारा उत्पादित वस्तु को कम या निकृष्ट माना जाता है, जबकि वो इन उत्पादनों को पूरे मन और योग्यता से बेहतर ही बनाती हैं। इसके पीछे सामाजिक सोच है, जो महिलाओं को कम योग्य मानती है। कामगारों के रूप में महिलाओं को समान वेतन–भत्ते आदि की सुविधाएँ भी उपलब्ध नहीं हो पाती, जिससे वो शोषण का शिकार भी हो रही हैं। 'देश की राजनीति से देह की राजनीति तक' की ये पंक्तियाँ इसी का उदाहरण हैं।

''स्त्रियाँ देश की आधी आबादी हैं, पर देश के कामगारों का 35 प्रतिशत भी है और देश में काम पर खर्च होने वाले कुल समय का दो तिहाई भाग भी उनकी मेहनत पसीने का है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम–संगठन के अनुसार–पिछले तीस बरसों में घर के बाहर कृषि और उद्योग के क्षेत्र में स्त्रियों की भागीदारी बेतरह बढ़ी है ..... इन कामगार स्त्रियों की औसत आय इस बीच बढ़ने की बजाय घटी है ..... पिछले पचास सालों में कपड़ा उद्योग में उनकी तादाद 20 प्रतिशत से घटकर 2.5 प्रतिशत, जूट उद्योग में 15 प्रतिशत से घटकर 2 प्रतिशत और खानों में 15 प्रतिशत से घटकर 5 प्रतिशत तक आ गई हैं।..... आर्थिक और पारिवारिक दबावों से जूझती इन स्त्रियों को, मालिकों से लेकर खुद अपनी यूनियनों तक से इस वक्त वे संरक्षण और सुविधाएँ नहीं मिल रही हैं, जो कि पुरूष कामगारों को सहज उपलब्ध हैं, जिन्हें पाने का स्त्रियों को भी कागज पर पूरा संवैधानिक हक है।''1

बाहरी क्षेत्रों में होने वाले भेदभाव और शोषण से महिलाओं की बाजार में भागीदारी प्रभावित होती है। इसके साथ–साथ महिलाओं को उद्योगों या नौकरी की तरफ बढ़ने से हमारा सामाजिक परिवेश और रूढ़िवादी सोच भी रोकता है, जो महिलाओं का मुख्य काम घर, बच्चों का सम्भालना मानता है और पुरूषों का काम बाहर जाकर कमाना। इसी कारण उद्योग धन्धों में कहीं ना कहीं ये माना जाता है कि महिलाओं के लिए कमाना उनकी दोयम दर्जे की जिम्मेदारी है, जिसे

वो कभी भी छोड़कर जा सकती हैं या ये भी मानते हैं कि स्त्रियाँ कार्य कुशल कम है, पुरूष उनसे बेहतर हैं अर्थात् मातृत्व और गृहस्थी की जिम्मेदारी उठाती औरतें चुस्त, जिम्मेदार और कौशल युक्त कार्यों के योग्य नहीं हैं।

समाज की ऐसी सोच और महिलाओं पर विश्वास ना कर पाना उद्योग–धन्धों या बाजार में उनके खिलाफ वातावरण बनाता है। तकनीकी जानकारी से भी महिलाओं को जोड़ने के प्रयास उस रूप में नहीं हुए, जिस रूप में होने चाहिए थे। हमारे प्रदेश में लड़कियों के लिए गणित और विज्ञान जैसे विषय वैकल्पिक एवं गृहविज्ञान पूरक विषय बनाए गये हैं। हमारे गाँव–कस्बों में आज भी सिलाई–कढ़ाई के सेन्टर आसानी से मिल जाते हैं, जबकि तकनीकी ज्ञान के केन्द्र नहीं, जिस कारण से तकनीकी शिक्षा केन्द्रों पर महिलाओं की संख्या कम है। उन्हें तकनीकी ज्ञान से वंचित ना रखकर उन्हें भी इस क्षेत्र में उनकी योग्यता को बढ़ाने के समान अवसर उपलब्ध कराये जाएं। सरकारों को भी इस दिशा में प्रयत्न करने होंगे।

समाज की नारी–विरोधी सोच, पारिवारिक वातावरण, सहकर्मियों का व्यवहार आदि अनेक बातें हैं, जिनसे रोज पार पाना हर कामकाजी स्त्री के लिए चुनौती है। महिलाओं को अपने कार्य की कुशलता के साथ–साथ अपने आस–पास के लोगों से भी सावधान रहना पड़ता। कभी–कभी तो उन्हें ऐसे माहौल में भी कार्य करना पड़ता है, जहाँ उनका ध्यान काम से ज्यादा खुद को बचाने पर लगा रहता है। जैसे कि कहानी 'मेरे हमदम मेरे दोस्त' की 'सुबोधिनी' जिसे उसका पति परेशान करता है, जिसके कारण उसे दफ्तर पहुँचने में देर हो जाती है, जरा सी देर पर उसका दफ्तर में आधा दिन कट जाना, सहकर्मी पुरूषों का सहानुभूति दिखाने के नाम पर उनके द्वारा किया गया व्यवहार आदि सब उसका काम करना दूभर करके रखते हैं।

''ये है आपके दफ्तर आने का समय ? घड़ी देखिए मैडम, घर बना रखा है इसे, जब मन करेगा, आएँगी ?रजिस्टर पर हस्ताक्षर नहीं करने दूँगा। आधे दिन की छुट्टी लगाइए।.....

देखा, देखा! महारानी विक्टोरिया एक घंटा लेट आएँगी और छुट्टी भी नहीं लेगी। .....

रोज ये आदमी इसी तरह की बातें करता है। इसने यहाँ जीना मुहाल किया है, उसने उधर।''2

समान काम करने, समान समय देने के बावजूद महिलाओं को समान वेतन की प्राप्ति नहीं हो पाती। यहाँ पर नारी होने के कारण से उनके श्रम का उचित पारिश्रमिक नहीं मिल पाता। महिला कामगार जो अपने आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए घर की जिम्मेदारियों के साथ इस जिम्मेदारी को भी उठाती है, समाज उन स्त्रियों को उनके श्रम का उचित मूल्य ना देकर उनका शोषण करता है और उन्हें हतोत्साहित करता है। जहाँ पर रोजगार की सम्भावनाओं का अभाव हो, वहाँ पर नारियों को ऐसी शोषणात्मक परिस्थितियों में काम करने को विवश होना पड़ता था। कहानी 'भरी दोपहरी के अंधेरे' से ये उदाहरण इसी बात का चित्रण करता है –

''तीन किलोमीटर।'' जवाब देकर वह फिर अपनी टाँगों को हिलाने लगती है।

''तीन किलोमीटर यानि हर दिन छह किलोमीटर की आवाजाही और नौ घण्टे की रगड़ाई के बाद सिर्फ पाँच रूपये ?''

अग्नि देवी के चेहरे पर पतझड़ छा जाता है। अपने चहुँओर बिखरी सुन्दरता से बेखबर अपने ही भीतर के यातना–गृह में डूबती–उतराती वे कहती हैं–

''क्या करेगी ?और कोई काम भी तो नहीं मिलता।''3

इस तरीके से ना सिर्फ वो महिलाओं की काबिलियत को कम आँकते हैं, बल्कि प्रत्यक्ष आय में उनके योगदान को भी कम कर देते हैं। कहीं ना कहीं ऐसा करके वो पुरूष की महत्ता को बढ़ाने के भी दोषी हैं और नारी पर होने वाले अत्याचार का भी एक कारण हैं। बराबर परिश्रम के बदले बराबर पारिश्रमिक ना देना नारियों के प्रति असमानता और उपेक्षा पूर्ण व्यवहार को बढ़ावा देने वाला है। जैसे कहानी 'पिकनिक' से असमान वेतन का एक उदाहरण प्रस्तुत है।

''ऊंटी के रास्ते से जरा हटकर कुन्नूर में चाय के बागान देखे। मीलों मील हरियाला विस्तार जहाँ मजदूर सपरिवार पत्ती तोड़ने का काम करते हैं। परिश्रम सब बराबर करते हैं, पर मर्दों को मिलते हैं, 120 रूपये रोज और औरतों को सिर्फ नब्बे।''4

इतना असमानता पूर्ण व्यवहार होने के बावजूद भी आर्थिक क्रियाओं में महिलाएँ अपने आपको सफल बना जीवन में आगे बढ़ रही है। महिलाओं के लिए कार्य की अवधि के हिसाब से सबसे ज्यादा जिस क्षेत्र को सही माना जाता हैं, वो है अध्यापन का क्षेत्र किन्तु इस क्षेत्र में भी कुछ कुत्सित मानसिकता वाले लोग अपनी मर्यादा को भूलकर नारी का शोषण करते हैं। कहानी 'अंधी गुफा' की कामिनी एक सम्मानित शिक्षिका है, किन्तु तबादले के बाद जब वो एक गाँव में प्रधानाचार्य बनकर जाती है और प्रधान के भ्रष्टाचार में जब वो उसका साथ नहीं देती तो वो और उसकी सोच कामिनी को लेकर गलत हो जाती है और उससे बचने की कोशिश में कामिनी जब तबादला करवाना चाहती है तो वहाँ भी उसका सामना नर भेड़ियों से ही होता है, जो नारी को नोंच खाने को तैयार बैठे हैं।

''नए स्कूल में पदभार ग्रहण करते ही कामिनी को शिवपूजन के इरादों का पता चल गया था। रोज स्कूल आकर बेवजह बैठना, शाम को उसके कमरे का चक्कर लगाना और चिकनी–चुपड़ी बातों से लुभाने की कोशिश करना। कामिनी की आँखों के आगे सबकुछ स्पष्ट हो चुका था।'' .....

''आप एक औरत है। अक्सर अकेली रहती है। बी0एस0ए0 साहब भी अपने परिवार से दूर यहाँ अकेले ही रहते हैं। आप समझ सकती हैं, मैं क्या कहना चाहता हूँ।''5

पुरूषों की सोच महिलाओं को मात्र देह मानने की रही है, जिससे वो समझते हैं कि महिलाएं उपभोग करने की वस्तु मात्र है

और अपनी इस गन्दी सोच में वो सबकुछ भूलकर महिला से ऐसा घृणित प्रस्ताव रख रहे हैं। पुरूष नारी को आगे बढ़ते देखकर अपने अहं को चोट लगता हुआ पाता है। अपने आप को सर्वश्रेष्ठ समझने के दंभ में नारी का शोषण करता हैं, किन्तु नारी आत्मबल और साहस से बनी है। जब से उसने घर की चारदीवारी के बाहर कदम रखे हैं, तब ही से वो अपने अस्तित्व को तलाशती रही है और पुरूषों की इस गन्दी सोच से लड़कर पार भी जाती रही है।

नारी की आर्थिक स्वतंत्रता की राह में पुरूष प्रधान समाज की सोच ही अड़चन है। परम्पराओं, संस्कृति आदि के नाम पर जब पुरूष नारी की उड़ान नहीं रोक सकता तो वह धर्म के नाम पर नारियों को घर की चारदीवारी में रोकने का प्रयत्न करता हैं। छल–बल का प्रयोग करके उसने महिलाओं को बच्चों एवं घर के नाम पर रोकने का प्रयत्न किया, किन्तु यहाँ पर भी कामकाजी और घरेलू महिलाओं पर किये गये सर्वे से ये बातें साबित हो जाती हैं कि एक कामकाजी महिला किसी भी घरेलू काम को घरेलू महिला की ही भाँति कुशलता पूर्वक कर सकती है, बल्कि उनका कामकाजी होना उनके कौशल को बढ़ाने वाला है। 'औरतः एक दृष्टिकोण' की ये पंक्तियाँ इसका उदाहरण हैं।

''इस प्रकार के आम वाक्य के उत्तर में अमेरिकन डॉक्टर स्मोक की रिपोर्ट ध्यान देने योग्य है : 'रूसी बच्चे, जिनकी माओं का प्रायः माँ बनने के अतिरिक्त भी कोई जीवन का उद्देश्य होता है और वह विज्ञान, शिक्षा, दस्तकारी, कला, राज्य–प्रबंधन जैसे प्रत्येक क्षेत्र में काम करती हैं, अमेरिकन बच्चों से अधिक सुघड़, स्थिर और बुद्धिमान दिखायी देती हैं, जबकि अमेरिकन बच्चों की माएँ और कोई काम नहीं करती, केवल सारे समय उनका ही ध्यान रखती हैं। लगता है रूसी माएँ अपने जीवन के अन्य उद्देश्यों के कारण बहुत अच्छी माताएँ हो गई हैं।''6

निष्कर्ष –

क्षीण रफ्तार से ही सही महिलाएँ आर्थिक रूप से अपनी दमदार स्थिति प्रकट कर रही हैं। पहले जहाँ महिलाओं की भागीदारी सिर्फ कृषि और उससे जुड़े क्षेत्र, सिलाई, कढ़ाई, बुनाई जैसे लघु और कुटीर उद्योगों तक ही थी। समय के साथ उनकी स्थिति बदली है। स्त्रियों ने नई शिक्षा एवं ज्ञान को प्राप्त किया है। कुछ सरकारी प्रयासों और कुछ महिलाओं के सार्वजनिक रूप से किये गये प्रयासों की बदौलत महिलाओं ने तकनीकी और औद्योगिक ज्ञान की ओर अपने कदम बढ़ाये हैं, जिसके फलस्वरूप अब महिलाएँ आधारभूत उद्योगों और नवीन तकनीकी कार्यक्रमों से जुड़ रही हैं। आज कई सारे उद्योग–धन्धों में महिलाएँ पुरूषों की बराबरी कर रही हैं और कुछ क्षेत्रों में तो उन्होंने पुरूषों को पीछे भी छोड़ दिया है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि आर्थिक पक्ष की मजबूती नारी के लिए बहुत जरूरी है, किन्तु नारी की तरक्की के लिए केवल आर्थिक पक्ष ही नहीं वरन् सभी पक्षों की मजबूती आवश्यक है। वैसे भी आज नारी जिस धरातल पर खड़ी है, वो उसके अपने प्रयासों से ही बना है, तथापि नारी की पिछली पीढ़ियों के द्वारा किये गये कार्यों और सोच–विचार से भी आज की नारी बनी है। आर्थिक स्वावलम्बन नारियों के लिए आवश्यक है, किन्तु ध्यान रखना होगा कि नारी आर्थिक दौड़ में अंधी होकर ना भागे, क्योंकि वास्तविक तरक्की वही है, जब नारी अपनी जड़ों से जुड़ी रहे और तरक्की भी करे। अन्धे बाजारवाद को अपने ऊपर हावी ना होने दे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मृणाल पांडे, देश की राजनीति से देह की राजनीति तक, पृ0 96, वर्ष 2011, राधाकृष्ण प्रकाशन, 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली।
2. अल्पना मिश्र, कब्र भी कैद औ, जंजीरे भी, पृ0 80–81, वर्ष 2015, राजकमल प्रकाशन, 1बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली।
3. मधु कांकरिया, चिड़ियाँ ऐसे मरती हैं, पृ0 92, वर्ष 2020, वाणी प्रकाशन 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली।
4. ममता कालिया, ममता कालिया की प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ0 413, वर्ष 2006, वाणी प्रकाशन 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली।
5. साहित्य अमृत, पृ0 26/29, फरवरी 2018, संपादक– त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी, 4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली।
6. अमृता प्रीतम, औरतः एक दृष्टिकोण, पृ0 107, वर्ष 1975, शैलेख प्रकाशन, 4/32, सुभाष गली, विश्वास नगर, शाहदरा।

रेनू पत्नी संदीप धीमान
3/3596, कपिल विहार,
निकट विश्वकर्मा चौक,
पेपर मिल रोड, सहारनपुर।
मो0– 9760453548, 9760519548

शोध निर्देशक
डॉ0 राकेश चन्द्र
(एसोसिएट प्रोफेसर)
हिन्दी विभाग
जे0वी0 जैन कॉलेज
सहारनपुर (उ0प्र0)
मो0– 9457639374

25

भारतीय संस्कृति और सभ्यता

शकिला देवी

सारांश

भारतीय संस्कृति और सभ्यता एकता और समृद्धि का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति अनेक संस्कृतियों को समाहित किए हुए है । भारतीय संस्कृति अनेक सामाजिक मूल्यों को आत्मसात् किए हुए है । भारतीय संस्कृति और सभ्यता की झलक हिन्दी साहित्य मे स्पष्ट देखी जा सकती है । हिन्दी साहित्य को भारतीय संस्कृति का दर्पण कहा जाना गलत नहीं होगा । भारतीय संस्कृति को हिन्दी साहित्य में समावेश करने का श्रेय रामधारी दिनकर जी को जाता है । भारतीय संस्कृति में हमारे शिष्टाचार ,हमारा खानपान, रीति रिवाज, त्यौहार और संगीत आता है । वर्तमान पीढी पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित है परन्तु कही ना कही दिल उनका भारतीय ही है। पश्चिमी देशों से प्राभावित हो सकते है लेकिन हमेशा भारतीय ही कहलाएंगे। हमें हमेशा अपनी संस्कृति का सम्मान करना चाहिए क्योकि भारत की पहचान उसकी संस्कृति ही है। इस संस्कृति पर प्रत्येक भारतीय को गर्व होना चाहिए ।

मुख्य शब्द : समृद्धि ,आत्मसात, संस्कृति, भौगोलिक , विविधता, सभ्यता , क्षणिक , अनुकरण ।

हमारे देश मे विभिन्नताओं के होते हुए भी एकता है। हमारे समाज मे अनेक विधिताओं का समावेश है। भारत मे विविधता की गवाही चारों दिशाएं देती है। भारत मे विविधता का कारण उसका भौगोलिक बनावट है। भारत की चारों दिशाओं का वातावरण भिन्न है। भारत मे 28 राज्य है, जिनकी अपनी रहन सहन और अपनी भाषा है। उत्तर भारत के लोंगो की दिनचर्या दक्षिण भारत के लोंगो से बिल्कुल भिन्न है। दूसरी तरफ पूर्वी भारत में पर्वत जबकि पश्चिम में रेगिस्तान ,क्षेत्रीय भिन्नताओं के करण ये एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न है। लोगों का धर्म, रहन–सहन, वेश–भुषा बिल्कुल अलग–अलग है। इतनी विविधताओ के बावजूद भारतीय संस्कृति की एकता को महसूस किया जा सकता है। भारत में अलग–अलग धर्म के लोग रहते है, इनकी भाषा अलग है, इनका रहन–सहन अलग है, फिर भी इनका मूल रुप एक ही हैं। इनकी धार्मिक शिक्षा एक जैसी है। इनके त्यौहार अलग–अलग हैं परन्तु उनके संदेश एक जैसे ही हैं । इन सबकी मौलिकता ही इन्हें एकता के सूत्र में बांधे रखती है ।

संस्कृति और सभ्यता दोनों अलग–अलग होती हैं। सभ्यता का सम्बम्ध हमारे बाहरी जीवन से होता है और संस्कृति का संबंध हमारे आन्तरिक जीवन से होता है जैसे हमारी सोच,व्यवहार और विचारधारा । संस्कृति का क्षेत्र सभ्यता से ज्यादा व्यापक होता है । संस्कृति को किसी भी देश की आत्मा कहा जा सकता है । संस्कृति से ही उस देश के नैतिक मूल्यों का पता चलता है । संस्कृति का सीधा अर्थ है–संस्कार । वर्तमान समय में सभ्यता और संस्कृति को एक दूसरे का पर्याय समझा जाता है लेकिन गहराई से सोचा जाए तो दोनों एक दूसरे से अलग होती हैं। सभ्यता को सीखा जा सकता है। संस्कृति का अनुकरण नहीं किया जा सकता । संस्कृति वही है जो हम हैं ।

प्राचीन संस्कृतियों में से भारतीय संस्कृति को एक माना जा सकता है । कई विद्वानो के अनुसार भारतीय संस्कृति सबसे प्राचीन संस्कृति है । वेद सबसे प्राचीन ग्रंथ है, इन्ही वेदों में भारतीय संस्कृति की झलक दिखाई देती है । आरम्भ से ही हमारी संस्कृति जीवंत और समन्यवादी रही है । भारतीय संस्कृति में जीवन के प्रति आध्यात्मिक और वैज्ञानिक दोनों ही दृष्टिकोण देखने को मिलते हैं। प्राचीन काल से ही भारतीय उदार रहे हैं, इसी कारण वसुदेव कुटुंबकम(पूरे विश्व को एक परिवार) मानते हैं ।

भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र आश्रम व्यस्था रहा है। भारतीय संस्कृति की झलक धर्म, दर्शन , समाज शास्त्र और साहित्य में दिखाई देती है । भारतीय संस्कृति सच्चे अर्थों में मानव संस्कृति कहलाती है क्योंकि यह मानव जाति के लिए है। भारत पर अनेक विदेशी आक्रमण हुए हैं। विदेशी जातियों ने भारत पर राज किया है परंतु हमारी संस्कृति कभी नहीं झूकी , हमारी संस्कृति ने विदेशी संस्कृति को आत्मसात कर लिया।

सभ्यता का अर्थ है हमारा रहन–सहन, वेशभूषा । सबसे पुरानी सभ्यता मेसोपोटामिया की सभ्यता है जो 3100 ई. पूर्व में थी । जिसके अवशेष आज भी मिलते हैं । सभ्यता का अर्थ है–हमारा बाहरी जीवन और सुख–सुविधा है। सभ्यता की प्रगति क्षणिक होती है

सभ्यता के विषय में विद्वानों की परिभाषाएं :

काण्ट ने कहा है कि "सभ्यता बाह्य व्यवहार की वस्तु है"।

जिसबर्ट के अनुसार : "सभ्यता हमें बताती है कि हमारे पास क्या है । सभ्यता व्यक्ति की विरासत की पहचान है"। सभ्यता वह वस्तु है जो हमारे पास है जिसका हम उपयोग करते है, वही सभ्यता है। सभ्यता नाशवान, क्षणिक, भौतिक और तीव्र प्रगति वाली होती है । सभ्यता को अगर हम मापना चाहें तो माप सकते हैं । सभ्यता हस्तान्तरित होती है। एक संस्कृति तब सभ्यता मानी जाती है जब वह लिखित भाषा और राजनीतिक पद्धति बनती है ।

निष्कर्ष : इस प्रकार से हम कह सकते है कि हमारी संस्कृति अनेक संस्कृतियों का समावेश है। भले ही हमारी वर्तमान पीढी यह मानने को तैयार नहीं है कि वो चाहे किसी देश की सभ्यता को अपना ले पर अपनी संस्कृति को कभी नही भूलते हमारी संस्कृति और सभ्यता में वैदिक संस्कृति हमेशा जिंदा रहेगी हम यह बात कभी नही भूल सकते

कि हम भारतीय है । इसलिए हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी संस्कृति और सभ्यता का सम्मान करें । हमारी संस्कृति और सभ्यता की छाप हमारे समाज पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष देखी जा सकती है हमारी संस्कृति और सभ्यता में लचीलापन है जो हर परिस्थिति मे अपने आप को ढाल लेती है ।

संदर्भ :

1 रामधारी सिंह दिनकर , "चिंतन के आयाम"
2 रामस्वरुप चतुर्वेदी , "हिन्दी साहित्य और सम्वेदना का विकास"
3 रामधारी सिंह दिनकर , "संस्कृति , भाषा और राष्ट्र"
4 हिन्दी साहित्य – पैनड्राईव कोर्स 2020

शकिला देवी
सहायक प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
एम.एम. पी.जी. महाविद्यालय
फतेहाबाद 125050
हरियाणा
मौ0 9416816109

26

भारत के लिए समाजशास्त्र (Sociology for India).

Takdeer Singh

सारांश

भारत में समाजशास्त्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखा जाए तो भारत में समाजशास्त्र का इतिहास उतना ही पुराना है जितना कि खुद मानव का इतिहास। हालांकि भारत में समाजशास्त्र का व्यवस्थित रूप से विकास बहुत बाद में हुआ है। परंतु समाजशास्त्र की प्रसिद्धि के कारण आज संसार के सभी देशों में भारतीय समाजशास्त्र की अपनी एक अलग पहचान है। समाजशास्त्र का उद्भव आधुनिकता की परिस्थितियों के आरम्भ के साथ हुआ माना जाता है! ''17 वीं शताब्दी में यूरोप में उभरे सामाजिक संगठन और जीवन की नई दशाओं ने समाजशास्त्र के उद्भव के लिए परिस्थितियां उत्पन्न की। ये परिस्थितियां केवल यूरोप तक सीमित नहीं रही और शीघ्र ही इसने वैश्विक रूप धारण कर लिया। हार्वे के अनुसार,''गतिशील तकनीकी और सामाजिक परिवर्तन के आधार पर उत्पन्न हुई आधुनिक दुनिया का पूर्ववर्ती ऐतिहासिक स्थितियों के साथ कभी न खत्म होने वाला आन्तरिक संघर्ष और विखंडन आरम्भ हुआ, जिसको वह स्वयं अपने अन्दर लेकर पैदा हुई थी''[1]

मूलशब्द– समाजशास्त्र,व्यवस्थित,उद्भव,वाद–विवाद जी.एस. घुरिए, राधा कमल मुखर्जी, सुझाव व वैज्ञानिक दृष्टिकोण, भारतीय संस्कृति, सामाजिक समस्या, सामाजिक संरचना, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थिति, विश्वविद्यालय, राष्ट्रीय एकता, उपागम!

भारत में समाजशास्त्र :

1.प्राचीन भारत में समाजशास्त्र का विकास

2. आधुनिक भारत में समाजशास्त्र का विकास

भारत में समाजशास्त्र के वर्तमान विकास के प्रमुख दो युग–

1. समाजशास्त्र का औपचारिक प्रतिस्थापन युग

2.समाजशास्त्र का व्यापक प्रसार युग

भारत में समाजशास्त्र के विकास की प्रवृतियां–

1. पाश्चात्य समाजशास्त्रीय परम्परा से प्रभावित

2. परम्परागत भारतीय चिंतन से प्रभावितः

3. पाश्चात्य एवं भारतीय समाज शास्त्रीय परम्पराओं के समन्वित चिंतन से प्रभावित है

भारत के लिए समाजशास्त्र –भारत में समाजशास्त्र के विकास से लेकर अब तक ''भारत के लिए समाजशास्त्र'' (भारतीय समाजशास्त्र) को लेकर अत्यंत वाद–विवाद रहा है! ऐसा माना जाता रहा है कि पश्चिम में विकसित समाजशास्त्र पर आधारित भारत में समाजशास्त्र विषय का विकास भारत जैसे समाज में कोई उपयोगी भूमिका नहीं निभा पाया है! मुम्बई विश्वविद्यालय में 1919 ई० में समाजशास्त्र विषय के विकास तथा 2 वर्ष बाद लखनऊ विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र विभाग की स्थापना के समय से ही भारतीय समाज के अध्ययन में अपनाए जाने वाले

दृष्टिकोणों को लेकर वाद–

विवाद रहा है। एक ओर जी.एस. घुरिए जैसे समाजशास्त्री ने ऐतिहासिक विद्याशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य को समाजशास्त्र में अपनाने पर बल दिया तो दूसरी ओर राधा कमल मुखर्जी ने समाजशास्त्र के पश्चिमी बौद्धिक सन्दर्भ तथा भारतीय लोकाचारों में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया।

इन दोनों ने ''भारत के लिए समाजशास्त्र'' के विकास में अद्वितीय योगदान दिया है। 1970 एवं 1980 के दशक में भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन की प्रक्रियाओं के विश्लेषण पर मार्क्सवादी उपागमों का प्रभाव बढ़ा है। इन अध्ययनों में वर्ग–संरचना को आर्थिक रूपांतरण के सन्दर्भ में देखने का प्रयास किया गया है तथा कृषि एवं जनजातीय आन्दोलनों को उजागर किया गया है। इसी अवधि में संरचनात्मक–ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को भी प्राथमिकता दी गई है।[2]

सैकड़ों वर्षो की गुलामी के बाद भारत 15 अगस्त सन 1947 को स्वतंत्र हुआ।

पश्चिमी देशों की तुलना में भारत आज भी परम्परागत निराधार प्रथाओं के कारण काफी पिछड़ा हुआ है।

यहां की अधिकतर जनसंख्या या जनता अब भी अशिक्षित है। अभी तक भारत की खेती तथा उद्योगों में नई वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग ही नहीं किया जाता है। यहां का सामाजिक संगठन भी आधुनिक विचारों के अनुरूप नहीं है। अनेक सामाजिक समस्याओं के कारण भारतीय समाज संगठित रूप धारण नहीं कर पाया है जिनके समाधान के बिना समाज कल्याण सम्भव नहीं है। भारतीय संस्कृति व समाजशास्त्र के द्वारा ही हम वह ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं जो भारतीय सामाजिक समस्याओं का हल करने एवं उन्नति के लिए अनिवार्य है।

1. राष्ट्रीय एकता में सहायक– आज हमारे देश के सामने राष्ट्रीय एकता की समस्या एक प्रमुख समस्या है। आज सम्पूर्ण राष्ट्र जाति,भाषा, प्रान्त,धर्म,व प्रजाति के आधार पर अनेक छोटे–छोटे स्वार्थ समूहों में विभाजित है। प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र व स्माज के बारे में न सोच कर केवल अपनी जाति, धर्म,भाषा या प्रान्त आदि के बारे में ही सोच रहा है। इसके फलस्वरूप देशवासियों में संकीर्ण दृष्टिकोण पनपता है। समाजशास्त्र जातिवाद, भाषावाद, साम्प्रदायिकता, क्षेत्रवाद आदि के समर्थन में असली जानकारी देकर व्यक्ति को उदार दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करता है। साथ ही समाजशास्त्र अलग–अलग समाजों की जनरीतियों, परम्पराओं,विश्वासों, संस्थाओं आदि को भी समझने में सहायता प्रदान करता है।

2. ग्राम समाज कल्याण –– भारतीय गांव जिनकी 78 प्रतिशत जनसंख्या आर्थिक दृष्टि से काफी पिछड़ी हुई है। यहां के लोग गरीब ही नहीं बल्कि सामाजिक दृष्टिकोण से भी काफी पिछड़े हुए हैं। आज

भी अन्धविश्वासों, जादू टोनों,कुप्रथाओं,कुसंस्कारों, निराधार परम्परागत परम्परा आदि के शिकार हैं। वे ऊंच–नीच,जात–पात,छुआछूत आदि संकीर्ण विचारधारा से घिरे हुए हैं। पुराने जमाने के रीति– रिवाजों तथा कुप्रथाओं को आज भी मान रहे हैं। आधुनिक तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से वे अभी बहुत दूर हैं। इनमें सुधार की अत्यंत आवश्यकता है। परन्तु ये सुधार कानून बनाने से सम्भव नहीं हैं। ग्राम कल्याण का एकमात्र साधन यह है कि देहाती समाज की मनोवृति, संस्कार, इच्छा व भावना आदि का वैज्ञानिक रीति से विश्लेषण किया जाए और उसके आधार पर उनमें परिवर्तन लाने की कोशिश की जाए। समाजशास्त्र के द्वारा उन साधनों का विकास किया जा सकता है जिनसे जनता की प्रथाओं, परम्पराओं आदि में समुचित परिवर्तन कर उसे उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ाया जा सके।

3. समाज के अन्दर सह–अस्तित्व की भावना का प्रसार करने में सहायक–समाजशास्त्रीय ज्ञान भारतीय समाज में अस्तित्व की भावना के प्रसार में सहायक है। यह शास्त्र विभिन्न व्यक्तियों, समुदायों, समूह, समाज और संस्कृतियों के सम्बंध में वैज्ञानिक आधार पर ज्ञान प्रदान करता है और साथ ही यह भी बताता है कि मूल रूप से संसार के सभी मानव मेधावी मानव की संतान हैं। प्रत्येक व्यक्ति को इस संसार में रहने तथा अपनी परम्पराओं के अनुरूप जीवन जीने का पूरा पूरा अधिकार है। भारत जैसे विभिन्न परम्परा वाले देश में अनेक धर्मों, जातियों, प्रजातियों, सम्प्रदायों तथा प्रान्तों के लोग साथ–साथ रहते हैं। समाजशास्त्र इन मन्त्रों के बावजूद भी व्यवहार के ऐसे ढंग खोज निकालने में प्रयत्नशील रहा है जो सबको समान रूप से मान्य हों। साथ ही इन सब के सम्बंध में वैज्ञानिक जानकारी उपलब्ध करके समाजशास्त्र में आपसी प्रेम एवं सह अस्तित्व की भावना के विकास में योगदान किया गया है।[3]

4. समाजशास्त्र समाज का वैज्ञानिक अध्ययन करता है––समाजशास्त्र के जन्म से पहले समाज का कभी भी वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन नहीं किया जाता था। और समाज किसी भी विज्ञान की विषय सामग्री नहीं था। समाजशास्त्र द्वारा ही समाज का वास्तविक वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव है। इतना ही नहीं बल्कि आधुनिक संसार की अनेक समस्याओं से सम्बंधित होने के कारण समाजशास्त्र ने इतना अधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है कि समाजशास्त्रीय उपागम को अन्य सभी सामाजिक विज्ञानों को समझने का श्रेष्ठतम उपागम माना जाता है। समाज का वैज्ञानिक ज्ञान मानव सम्बंधों में किसी भी महत्वपूर्ण सुधार की पूर्व आवश्यकता है।

5. समाजशास्त्र व्यक्ति के विकास में संस्थाओं के स्थान का अध्ययन करता है––समाजशास्त्र के माध्यम से ही महान सामाजिक संस्थाओं तथा प्रत्येक संस्था से व्यक्ति के सम्बंध में वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है। घर तथा परिवार, स्कूल तथा शिक्षा, चर्च तथा धर्म, राज्य तथा सरकार, उद्योग तथा कार्य आदि ऐसी महान संस्थाएं हैं, जिनके माध्यम से समाज की गाड़ी चलती है। इसके अतिरिक्त ये संस्थाएं मनुष्य की अवस्थाएं निर्धारित करती हैं। समाजशास्त्र इन संस्थाओं और मनुष्य के विकास में उनके योग का अध्ययन करता है और इन संस्थाओं को अधिकाधिक शक्तिशाली बनाने के लिए उपयुक्त उपायों का सुझाव देता है, ताकि ये अच्छे ढंग से व्यक्ति की सेवा कर सके![4]

6. परम्पराओं के अध्ययन में सहायक –प्रसिद्ध भारतीय समाजशास्त्री प्रोफेसर डी. पी. मुखर्जी ने तो यहां तक माना है कि ''समाजशास्त्र परम्पराओं का अध्ययन है''इसी आधार पर आपने बताया है कि हम उन सामाजिक परम्पराओं का अध्ययन करें जिनसे हमने जन्म लिया है और जिनमें हमारा जीवन व्यतीत होता है। भारतवर्ष में जो कि एक अति प्राचीन देश है, जिसकी अपनी काफी पुरानी संस्कृति है, परम्पराओं के अध्ययन की विशेष महत्ता है। समाजशास्त्र ऐसा विज्ञान है या सामाजिक विज्ञान है जो हमारे देश को विभिन्न कालों की परम्परा और उनमें होने वाले परिवर्तनों के सम्बंध में जानकारी उपलब्ध कराता है। यह जानकारी भारतीय समाज और संस्कृति को समझने में विशेष उपयोगी है।

7. पारिवारिक जीवन को सफल बनाने में सहायक–परिवार समाज की मूलभूत इकाई है और सामाजिक संगठन की दृष्टि से इसका विशेष महत्व है। परिवार के क्षेत्र में आज अनेक परिवर्तन हो रहे हैं। साथ ही आधुनिक परिवार के सामने वर्तमान में कई प्रकार की समस्याएं हैं। आज बहुत परिवारों में तनाव,संघर्ष और विवाह विच्छेद तक की समस्याएं पाई जाती हैं। वर्तमान में पारिवारिक नियमों,आदर्शों एवं मूल्यों में भी परिवर्तन आ रहा है। अब प्रेम विवाह और अंतरजातीय विवाह भी होने लगे हैं। इन सबसे सम्बंध में जब तक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से यह विचार नहीं किया जाता जब तक न तो पारिवारिक समस्याओं से छुटकारा प्राप्त किया जा सकता और न ही पारिवारिक जीवन को सुखी और सफल बनाया जा सकता है। इन सब के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान प्रदान करने का कार्य समाजशास्त्र ही करता है।5

8. ग्रामीण समस्याओं को समझने में सहायक –ए.आर. देसाई के अनुसार भारत की दो तिहाई से अधिक

जनसंख्या गांव में ही रहती है। भारतीय ग्रामीण समस्याओं के समाधान के लिए समाजशास्त्र एक अति

महत्वपूर्ण विषय है क्योंकि पुनर्निर्माण के लिए केवल आर्थिक शक्तियों का ही नहीं अपितु समाज में

कार्यरत सामाजिक, विचारात्मक एवं अन्य शक्तियों का अध्ययन भी जरूरी है। समाजशास्त्र में ग्रामीण समाज के

क्रमबद्ध तथा वैज्ञानिक अध्ययनों में ग्रामीण पुनर्निर्माण में सहायता मिलती है और समाज को समझने के लिए

अत्यंत आवश्यक है। संस्कार,, मूल्य एवं आदर्शों का अध्ययन करना अति आवश्यक है जो कि समाजशास्त्र के

द्वारा ही संभव है।6

9.समुदाय एवं समाज के लिए महत्व–समाजशास्त्र केवल व्यक्ति के लिए ही उपयोगी नहीं है अपितु

समुदाय एवं समाज की दृष्टि से भी एक अत्यंत उपयोगी विषय है।

Takdeer Singh
Assistant Professor in Sociology
Desh Bandhu Gupta Govt-College
Sector&18 Panipat- Pin code & 132103
(8930874165)

समाजशास्त्र समुदाय एवं समाज की रचना एवं उनको प्रभावित करने वाले तत्वों का अध्ययन करता है तथा इस प्रकार इन्हें समझने में सहायता प्रदान करता है। समुदाय एवं समाज की समस्याओं के अध्ययन में भी यह विषय अत्यंत उपयोगी है।

10.राष्ट्र निर्माण में सहायक–समाजशास्त्रीय ज्ञान नागरिकों में राष्ट्रीयता की भावना जागृत करने तथा राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में तीव्रता लाने में भी सहायक है। इससे हमें यह पता चलता है कि कौन–कौन सी भाषाएं किसी देश के राष्ट्र निर्माण में प्रमुख हैं। उदाहरणार्थ–भारत में जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रीयता व प्रादेशिकता आदि प्रमुख बाधाओं को दूर करने के प्रयासों एवं राष्ट्रीयता की भावना जागृत करने में समाजशास्त्रीय ज्ञान उपयोगी सिद्ध हो रहा है।[7].

निष्कर्ष–ऊपर दिए गए विस्तृत विवरण से स्पष्ट होता है कि भारत की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थिति के संदर्भ में यहां समाजशास्त्र का विशेष महत्व है। समाजशास्त्र देश की विकास योजनाओं को सफल बनाने में सहायक है। इसका मुख्य कारण यह है कि जब तक समाज की संरचना,सामाजिक संगठन,संस्कृति, सामाजिक संस्थाओं,सामाजिक मूल्यों, विश्वास और परम्पराओं को ठीक से नहीं समझ लिया जाता तब तक किसी भी योजना के असफल होने की संभावना बनी रहती है।

समाजशास्त्र इन बातों को समझने में योगदान देता है। साथ ही हम देश को यदि चौतरफा समृद्धशाली बनाना चाहते हैं तो वर्तमान सामाजिक समस्याओं का गहराई से अध्ययन करना होगा तथा समस्या के निराकरण का साधन खोजकर वास्तविकता का पता लगाकर व्यावहारिक हल प्रस्तुत किया जाएगा। इस आधार पर हम समाजशास्त्र को एक महत्वपूर्ण विषय मानते हैं।

संदर्भ सूची :

1.शर्मा प्रदीप–(2014) समाजशास्त्रीय चिन्तन के आधार, ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, 1/24 आसफ अली रोड– नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 16).

2.महाजन, धर्मवीर एवं कमलेश (2017) भारतीय समाजशास्त्र के परिप्रेक्ष्य, विवेक प्रकाशन जवाहर नगर नई दिल्ली पृष्ठ संख्या:275.

3. गौड, बी.एस.और पी.एस.तोमर (2000) समाजशास्त्र –लक्ष्मी बुक डिपो हांसी गेट भिवानी, हरियाणा।–पृष्ठ संख्याः 41–42

4. सचदेवा,बी.वी. और सचदेवा डी.आर. समाजशास्त्र के सिद्धांत,किताब महल डिस्ट्रीब्यूटर 28– नेताजी सुभाष मार्ग नई दिल्ली। पृष्ठ संख्या 30–31

5. शर्मा डी.डी. और गुप्ता एम.एल. समाजशास्त्र (2012). साहित्य भवन सी 17 सिकन्दरा औद्योगिक क्षेत्र आगरा 282007 (उ.प्र.) पृष्ठ संख्याः36–38.

6.अग्रवाल, अमितः समाजशास्त्र बी.ए.–3,विवेक प्रकाशन जवाहर नगर नई दिल्ली –पृष्ठ संख्या–7.

7.अमित अग्रवाल, समाजशास्त्र (2021) बी.ए –1,विवेक प्रकाशन नई दिल्ली पृष्ठ संख्या– 31–32

27

Scientific Knowledge of our ancestors
(हमारे पूर्वजों का वैज्ञानिक ज्ञान)

डॉ0 प्रखर

सारांश

हमें गर्व होना चाहिये कि हम एक ऐसे देश के निवासी हैं जिसकी प्राचीन सभ्यता बहुत ही ज्ञानवान थी। हमारे पूर्वज न केवल गणित, खगोल शास्त्र में विश्व में अग्रगणय थे बल्कि उनको आधुनिक बाइसाईकल, संगीत (सुरों, गर्भशास्त्र, वायुयान, शिल्पकला का भी बहुत उन्नत ज्ञान था । हैरानी की बात तो ये हैं कि उनके पास जो शिल्पज्ञान था उसको देखकर तो विदेशी भी दांतो तले अंगुली दबाते हैं । इस लेख में हम शिल्पकला के माध्यम से उनके इस अभूतपूर्व ज्ञान का अवलोकन करेंगे।

1. Bicycle की जानकारीः– पंचवरण स्वामी मंदिर तिरूचिरापल्ली के पास, वोरैचुर तमिलनाडु में स्थित हैं । यह प्राचीन मंदिर 1800 साल पहले बना था ओर इसमें एक नक्काशी में एक आदमी बलबसम पर सवारी करते हुये दिखाया गया हैं । यह साईकिल आधुनिक ठलबलबसम जैसी ही हैं जबकि आधुनिक ठपबलबसम की खोज 200 साल पहले यूरोप में की गई थी। इसका अर्थ हैं कि भारतीयों को ठपबलबसम बनाने व चलाने का ज्ञान भी था।

2. Musical Stairs:- हमारी वास्तुकला और संगीत ज्ञान कितना विकसित था इसकी जानकारी ऐरावटेसवरा मंदिर जो धारासुरम् में राजराजा चोला II के द्वारा 12वीं CE में बनवाया गया था, को देखकर मिलती हैं । यह मंदिर कुम्बाकोनम, तमिलनाडु में स्थित हैं । इसे न्दमेबव अब विश्व स्मारक मानता हैं । यह मंदिर शिव जी को समर्पित हैं इसमें एक सीढ़ी है जिसमें 10 steps (पैडियां) हैं । इसमें पहली सात पैड़ियों पर चढ़ने पर संगीत के सात स्वर निकलते हैं और अन्तिम 3 Steps (पैड़ियों) से ऊँ (Aum) का स्वर निकलता हैं जो तीन स्वरों से मिलकर बना हैं । शुरू में इसके रखरखाव पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया । परन्तु अब इसे एक जाल लगाकर सुरक्षित कर दिया गया हैं ।

3. गर्भावस्था (Pregnancy) का ज्ञानः– हमारे पूर्वजों को आधुनिक `वदवहतंचील के आविश्कार से पहले ही गर्भावस्था, भ्रूण (विमजने) उसके आकार, अलग–2(stage) अवस्था में भ्रूण का विकास और आकार, गर्भनाल (Placenta), शुक्राणु (sperm) द्वारा अण्ड निशेचन आदि का भी ज्ञान था। सुन्दराकामाक्षी मंदिर जो कावेरीपक्कम के निकट सिरूकरूम्बुर गांव, कांचीपुरम स्थित है उसमें एक नक्काशी में मां के गर्भ में भ्रूण और 9 महीनों के दौरान होने वाले भ्रूण के विकास की अलग–2 अवस्थाओं को दर्शाया गया हैं जबकि उस समय नसजतं sound machine भी नहीं थी । एक अन्य नक्काशी में एक मछली को घट की ओर जाते हुए दिखाया गया हैं यहाँ मछली भ्रूण का और घट माँ के गर्भ का प्रतीक हैं । भारतीय ऋषियों को प्रजनन engineering और cloning का भी ज्ञान था । महाभारत में गांधारी जो धृतराश्ट्र की पत्नी हैं ने 2 वर्ष में 100 पुत्रों को जन्म दिया। ऐसा कैसे हो सकता हैं?वास्तव में तो गांधारी ने एक भ्रूण (माँस का लोथडा)को जन्म दिया था जिसे वेदव्यास ऋषि ने 100 टुकड़ो में विभाजित कर 100 अलग–अलग घड़ो में डालकर विकसित किया और परिणामस्वरूप 100 कौरवों ने जन्म लिया । यह सब आधुनिक incubator और बसवदपदह प्रणाली की ओर संकेत करता हैं ।

आन्ध्रा यूनिवर्सिटी के V.C.G नागेश्वर राव ने भी माना कि कौरवों का जन्म Stem cell और Test Tube Technology का प्रयोग करके हुआ था । जिसकी जानकारी भारतीय ऋषि को हजारों साल पहले थी। हमारे वेदों में यह स्पश्ट लिखा हैं कि बच्चे के लिंग का निर्धारण पिता पर निर्भर करता है। माता की इसमें कोई भूमिका नहीं होती ।

इसी तरह मथुरा में देवकी माता के गर्भ से बलराम जी के भ्रूण को वृंदावन में रोहिणी माता के उदर में और रोहिणी के गर्भ की बालिका को देवकी माता के उदर में ज्तंदेमित करना भी आधुनिक surrogate mother system को इंगित करता है।

तमिलनाडू में वराहमूर्ति मंदिर हैं जो 6000 वर्श पुराना हैं और कुंजराचोल राजा ने इसका जीर्णोंद्वार करवाया था । इस मंदिर की दीवार पर उकेरी एक नक्काशी में एक शुक्राणु और एक female egg को दिखाया गया हैं । इसमें एक मछली और उल्टा घड़ा भी उकेरा गया हैं । घड़ा यहाँ माँ के उदर का प्रतीक हैं और मछली एक तारे का । इसका अर्थ हुआ कि एक तारा (चेतना) उदर में आने को बेताब हैं । इसी तरह काल भैरव मन्दिर जो तमिलनाडु में हें उसकी दीवार पर माँ के गर्भ में भ्रूण की तीन अवस्थाओं को उकेरा गया हैं साथ में गर्भ नाल भी हैं । आश्चर्य हैं कि बिना `वदवहतंचील उनको यह सब कैसे ज्ञात था । क्योंकि Ultra sound मशीन का आविश्कार 100 साल पहले हुआ और भारत में यह 1956 में आई। इसी तरह थिरूकारिकबूर में गर्भस्थकम्बीकाय एक मंदिर हैं जिसका निर्माण चोल राजाराज प ने कराया था । यह मंदिर गर्भ की रक्षा करने वाली माता को समर्पित हैं। इसके अलावा हमारे उपनिशदों में से एक उपनिशद् का नाम हैं गर्भ उपनिशद जिसमें गर्भ से सम्बन्धित सम्पूर्ण जानकारी दी गई हैं । आश्चर्य की बात हैं कि 2, 3 हजार साल पहले हमारे पूर्वजों को कैसे पता था कि भ्रूण का विकास कैसे होता हैं, एक सप्ताह का भ्रूण कैसा दिखता है एक महीने का कैसा होता हैं?4.विमान की जानकारीः आन्ध्रा यानिवर्सिटी के V.C जी नागेश्वर राव ने यह भी माना कि हमारे पूर्वजों को विमान की जानकारी भी थी । ये विमान मन की गति से चलते थे जैसे रामायण में रावण के पास पुश्पक विमान था जिसमें वह सीता का हरण करके ले गया था । बाद में रावण को मारने के बाद श्री राम, सीता व लक्ष्मण इसी विमान में बैठकर एक ही दिन में लंका से अयोध्या पहुँच गये थे ।

5. शिल्पकला का ज्ञानः शिल्पकला का कितना ज्ञान हमारे पूर्वजों को था इसका पता हम प्राचीन मंदिरों की शिल्पशैली को देखकर लगा सकते हैं जिनमें से प्रमुख निम्न हैंः–

क. बृहदेश्वर मंदिरः यह मंदिर तंजावुरू तमिलनाडु में 1010 ई0वी0 में बना था । इसका भव्यता, विशालता और शिल्पकला को देखकर लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि इसे जरूर एलियनस ने बनाया होगा । इसके निर्माण में पदजमतसवबापदह प्रणाली का प्रयोग हुआ कोई सीमेंट या चिपकाने वाला पदार्थ नहीं लगा । इसके निर्माण में 1,30,000 टन ग्रेनाइट पत्थर को 3 हजार हाथियों पर लादकर 6 कि0मी0 दूर से लाया गया । इसकी एक मीनार 216 फीट ऊँची हैं और आश्चर्य यह हैं कि 6 भूकम्पो के बावजूद भी यह मीनार 00 भी नहीं झुकी जबकि यूरोप की पीसा व अन्य मीनारें झुक गई हैं । एक अन्य विशेशता यह हैं कि इस मन्दिर की परिछायीेंकवू भी नहीं पड़ती हैं। इसमें प्राकृतिक रंगो का प्रयोग किया गया । इतने सालों के बाद भी यह मंदिर बिना क्षति के खड़ा हैं । उसकी नींव में रेत भरी हैं और यह एक उवअपदह तंजि पर बना हैं इसी कारण यह भूकम्पों की रगड़ झेल पाया हैं । प्यार से लोग इसे बड़ा शिव मंदिर बुलाते हैं । इसमें सबसे बड़ा शिवलिंग है जिसका वजन 20 टन है। इसमें नीचे अनेक गुप्त रास्ते हैं जो इसे अन्य मंदिरो से जोड़ते हैं । इसमें एक विशालकाय नन्दी की प्रतिमा हें जिसे एक ही चट्टान को काटकर बनाया गया हैं । इसके कवउम (कुबम) में जो पत्थर लगा हैं उसका वजन 80 टन हैं । अनुमान है कि इस भारी पत्थर को 200+ फीट ऊपर पहुंचाने के लिये 6 कि0मी लम्बा तंउच बनाया गया होगा और हाथियों का प्रयोग किया गया होगा क्योंकि उस समय आधुनिक Crane और यातायात के साधन तो थे नहीं ।

ख. कैलाश मंदिरः एलोरा गुफा में कैलाश मंदिर का निर्माण एक ही चट्टान को काटकर किया गया । यह मंदिर बनज पद प्रणाली से बना और इसमें अनेक द्वार, पुल, मूर्तियां, कमरे और बरामदे हैं । इसमें अनेक गुफाएँ भी हैं जिसके बारे में कम ही जानकारी है। इतना भव्य और विशाल मंदिर केवल 18 साल में बन कर तैयार हो गया था जो बेहद मुश्किल काम था ।

ग. वीरभ्रद मन्दिरः इस मन्दिर को आन्ध्रप्रदेश में लेपाकक्षी में दो भाईयों वीरूपन्ना और वीरण्णा ने 1583 में विजय नगर राज्य के दौरान बनवाया था। इस मन्दिर में खास बात हैं इसका झूलता स्तम्भ हैं जो बिना आधार के खड़ा हैं। इस मंदिर में एक विशाल शिवलिंग, विशालकाय नन्दी की प्रतिमा हैं।

घ. अनन्तपुर झील मंदिरः यह केरल के कायरकोड स्थान पर झील में बना विश्णु मंदिर हैं । इसकी विशेश बात यह हैं कि इस मंदिर की रक्षा एक शाकाहारी मगरमच्छ, बबिया करता था । उसने कभी भी झील की एक भी मछली या आदमी का शिकार नहीं किया । यह केवल मंदिर का प्रसाद खाता था ।

ड़. जगन्नाथ मंदिरः उड़ीसा के पुरी में भगवान जगन्नाथ का मंदिर हैं । कहा जाता हैं कि यहाँ जगन्नाथ जी की मूर्ति में असली हृदय धड़कता हैं और मूर्ति बदलने पर दिल भी बदला जाता हैं वह भी अंधेरे में । इस मंदिर पर लगी ध्वजा हवा की विपरीत दिशा में फहराती है और कोई भी पक्षी या वायुयान इस मंदिर को लांघ नहीं सकता ।

च. रानी की वाव (जेम फनममदशे जमचूमसस) इसे राजपूत रानी उदयमति ने 11 वीं सदी में अपने पति भीम देव सोलंकी की याद में पाटन नगर गुजरात में बनवाया था। यह सात मंजिला हैं विशेश बात यह हैं कि इसमें सीढ़िया ऊपर न जाकर नीचे जाती हैं । इसलिए इसे उल्टा मंदिर भी कहते हैं क्योंकि यह भूमि की सतह से नीचे की ओर हैं । इसमें पानी हीे जवतम नहीं होता इसके बरामदो में हिन्दू देवी देवताओं की सुन्दर प्रतिमाएं उकेरी गई है ।

छ. तिरूप्पुरटुंरई मंदिरः इसके द्वारा पर 27 नक्षत्रों को दर्शाया गया है। इसमें तारे और नक्षत्रों की आकृति को फूलों के रूप में उकेरा गया है और इन्हीं के नीचे प्राचीन तमिल लिपि में इनकी व्याख्या की गई हैं इसका अर्थ हैं कि हमारे पूर्वजों को तारा प्रणाली की जानकारी भी थी जिसका प्रयोग वे तिथियों के ज्ञान, ऋतुओं के परिवर्तन, ज्योतिश अध्ययन में करते थे । समुद्री यात्रा के लिये भी नक्षत्रों की जानकारी बेहद जरूरी थी । हैरानी यह हैं कि ऐसी जानकारी बिना दूरबीन कैसे हो पाई । क्योंकि मंदिर का निर्माण 862–879 की बीच हुआ । अगर जीर्णोद्वारा का समय भी लगाए तो नक्काशी फिर भी 500 साल पुरानी तो हैं ही और दूरबीन का आविश्कार 400 पहले हुआ था और भारत में दूरबीन 100 साल पहले ही आई थी ।

6. दूरबीन की जानकारीः कुछ प्राचीन मंदिरो को देखें तो कुछ जगह एक बेलनाकार चीज को आंखो पर लगाकर अंतरिक्ष की तरफ देखती मूर्तियां मंदिर की दीवारों पर उकेरी गई हैं और ये मंदिर 900 साल पुराने है। । इसका अर्थ हुआ कि हमारे पूर्वजों को दूरबीन जैसी चीज की भी जानकारी थी ।

उपसंहारः निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि प्राचीन भारत में हमारे ऋषियों, मुनियों को खगोल शास्त्र, रसायन, गणित, बीजगणित, ज्योतिशशास्त्र, अणु पौधों, जानवरों, शल्य चिकित्सा, आयुर्वेद, वेद्यशाला के साथ–2 बाईसाइकल, संगीत सुर, गर्भशास्त्र, विमान, शिल्पकला, 27 नक्षत्रों और दूरबीन की भी अच्छी जानकारी थी ।

Bibliography & References :-

1. बाल्मिकी, नृपेन्द्र. अदभुतः केरल के इस मन्दिर की रक्षा करता हैं एक शाकाहारी मगरमच्छ. April 30, 2018, 11.48 am.
2. Dey Panchali. " Mysteries of Jagannath Temple that defy scientific logic". ed. Times Travel, June 15, 2018, 15.44 IST
3. Illamurugan. "Airavatesvara Temple, Darasura Architecture". 3.54 a.m.
4. Kimmel, Nicci, "Explore The Ancient ज्मउचसमे वि

India." 9th Jan. 2017.

5. ''रानी की वाव – विश्व प्रसिद्ध हैं ये बावड़ी'' पंजाब केसरी, शनिवार Feb. 26, 2022, 2:39 p.m. IST
6. Ramanis. "800 years Sculpture Child in womb, Sundarakamakshi, Chinna Karumbur, posted 17 Oct. 2018. Hinduism, Ramanis blog.
7. Singh, Sapna. "Hanging Pillar Temple." Navbharat Times, updated 25th Jan. 2022 2:24 p.m.
8. Sengar, Resham. "Interesting Facts About world's largest monolithic structure – The Kailash Temple in Ellora. Ed. Times Travel. June 8, 2021, 12:43 IST
9. Trivedi, Aastha. "Brihideshwar Temple: A structure Conceived with Grace and Magnificence. March 19,2022.

डॉ0 प्रखर

एक्सटेंशन लैक्चरर (इतिहास विभाग)

डा0बी0आर0अम्बेडकर राजकीय पी0जी0 महाविद्यालय

पलवल–121102

मोबा0–9416418861

28

कृष्णा सोबती की रचनाओ मे स्त्री चेतना

डॉ0 सुधा कुमारी

सारांश

आजादी के उपरांत हिन्दी साहित्य में नवीन जीवन मूल्यों का वर्णन स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इस समय की रचनाओं पर अलग अलग विचार धाराओं का प्रभाव पड़ा जिसके कारण स्त्री चेतना के नये आयाम खुलते गए और स्त्री जीवन के अनसुलझे रहस्यों को रचनाकार अपनी समझ के अनुसार सुलझाने के क्रम में अनेक ऐसे जीवन्त पात्रों को गढा जो लम्बे समय तक पाठकों के मन को टटोलते रहे। इसी प्रकार के चरित्र को गढने वाली कृष्णा सोबती ने अपनी रचनाओं में स्त्री जीवन के उन पहलुओं को छुआ व कलमवद्ध किया जो आज तक अछूते थे । उनकी रचनाएँ नारी की कोमल भावनाओं के साथ –साथ उसके मन के उस अथाह गहराई में जाकर डुबकी भी लगाती है जहाँ पीढ़ियों से छटपटाती अन्तरमन की मूक अभिलाषा है।

कृष्णा सोबती हिन्दी साहित्य की ऐसी रचनाकार है जो समय से आगे चलकर उन विषयों को साहित्य से परिचित करवाया जिससे रचनासंसार अभी तक अनभिज्ञ था। स्त्री रचनाओं का हिस्सा तो आदिकाल से रही है परन्तु वह सिर्फ देवी की मूर्ति नहीं बल्कि हाड़ माँस से बनीं ईंसानी पुतला थी जो मानवीय गुणों व अवगुण से लैस थी जो अपनी इच्छाऔ की पूर्ति के लिए कुछ हद तक सही–गलतयपाप–पुणय यमर्यादा आदि में नहीं उलझती बल्कि उनसे परे जाकर अपनी इच्छाओं को पूरा करने की कोशिश करतीं हैं । ऐसी बहादुर व जीवट पात्र कृष्णा सोबती की रचनाओं में आसानी से ढूढे जा सकते हैं रूजो उन्हें औरों से अलग करते हैं तथा अपने समय से आगे।

कृष्णा सोबती वैसे तो मूल रूप से विद्रोही रचनाकार मानी जाती है जिन्होंने हमेशा लीक से हटकर काम किया जो उनकी पहचान भी है एवं विशेषता भी। उनकी रचनाओं में स्त्री जीवन के अलग– आलग रंग उभर कर आते हैं जिसमें मिट्टी की खुशबू के साथ – साथ परिस्थितियों की कडवी सच्चाई भी है जो पाठक के दिलो दिमाग को झकझोर देने में सक्षम होते हैं। उनकी रचनाओं में यदा– कदा ही नारी के ठेठ सङ्कारी स्वरूप का चित्रण मिलता है अधिकांश पात्र परम्पराओं से संघर्ष करतीं नजर आती हैं। इनकी रचनाओं में अधिकतर स्त्री –पुरुष के संबध , स्त्री जीवन की समस्या तथा परिवार व समाज के विरोध से उत्पन्न संघर्ष के कारण बदलती हुइ स्त्री की मनोस्थिति का विषद चित्रण मिलता है। मित्रों मरजानी उनकी एक ऐसी ही पात्र है जो लीक से हटकर जीवन जीने का प्रयास करती है और इस क्रम में वो अनेक नियमों के विरुद्ध जाकर अपनी इच्छाओं की पूर्ति करतीं हैं।

कृष्णा सोबती की समस्त नारी चरित्रों में पाशो - रती,अम्मू, मित्रो आदि कुछ ऐसे चरित्र है जो अपने तलख तेवर के साथ –साथ नारी के जीवट स्वरूप को भी दर्शाती है। मित्रों का चारित्रिक विन्यास ही कुछ ऐसा था जो साहित्य जगत के लिए एक नये प्रयोग के साथ ही कोतूहल का भी विषय था। उपन्यास के प्लैप पर लिखा गया ––––मित्रों ने एक विवादास्पद नारी चरित्र की तरह हिंदी – साहित्य क्षेत्र में प्रवेश किया कि पूरे शिक्षित समाज में इसके प्रति एक जिज्ञासा जाग्रत हो गई थी। ––––––––इसे आदर्श का कोई मोह नहीं है, ना समाज का भय, ना ईश्वर का। ––––––––नारी के तमाम पुराने बिंबो को चुनौती देती वह मित्रों वास्तव में हिंदी साहित्य के इतिहास की एक मणि है।[1]

मित्रों कृष्णा सोबती की ऐसी चरित्र है जो अपने अधिकार के लिए जूनून के साथ लडती है तथा उसको प्राप्त करने के लिए अपने सभी प्रकार के हुनर का इस्तेमाल करने से नहीं चुकती। मित्रों की बेबाकी व तीर सी उसकी चुभने वाले उसकी जुबान कभी– कभी शहद से भी मीठे लगते थे क्योंकि मित्रों दिल की एकदम साफ धी । वह पूरी इमानदारी के साथ ही सच्चाई को बेहिचक बोलने से डरती नहीं थी। मित्रों को अपने रुप और यौवन पर गर्व था जिसे वो स्वीकार करती हुई कहती हैं कि––––––श्जब तक मित्रों के पास यह ईलाही ताकत है मित्रों मरती नही [2] मित्रों सुहाग को अपना कर्तव्य नहीं मानती ब्लिक अपने पति से अपने आधिकार के लिए लड़ना उचित समझती हैं। मित्रों चाहती है कि पति पत्नी के सम्बन्ध दासत्व के रूप में नहीं बल्कि मैत्रीपूर्ण हो तथा परिवार भी इसी रूप में स्वीकार करें परन्तु उसका पति सरदारी इसके विपरीत मित्रों की भावनाओं उसकी इच्छाओं की कद्र नहीं करता बल्कि आए दिन वो मित्रों के साथ मारपीट करता है।मित्रों अपना दुःख व्यक्त करते हुए अपनी जेठानी से कहती है कि––––––जिठानीय तुम्हारे देवर–सा बकलोल कोई और दूजा ना होगा। ना दुःख–सुख. न प्रीति –प्यार, न जलन –प्यास ––––––––– बस आए दिन धौलधप्पा––––लानत मलानत।[3]

मित्रों का ससुराल एक मध्यवर्गीय परिवार है जो सामाजिक आर्दश व नियमों के अनुसार ही चलता है। बेशक ये आर्दश कभी –कभी उनके लिए जीवन भर का दर्द दे जाते हैं परन्तु इनसे लडने की हिम्मत नहीं जुटा पाते और जो लडकर अपने लिए रास्ते बनाते हैं उन्हें कूड़ा–करकट या नूरयहल कहकर उनकी बेइज्जती की जाती है। विशेषकर जो स्त्री घर की परम्परा के आगे नतमस्तक हो जाती हैं वो आशीर्वाद के साथ ही कुलीन व सुशील मान जाती हैं। इन सबके विपरीत मित्रों जड़ परम्पराओं को धत्ता बताकर जीवन अपनी मर्जी से जीना चाहती है। तो उसके लिए छिनालो की छिनाल जैसे अपशब्द प्रयोग किए जाते हैं।

मित्रों का व्यक्तित्व कृष्णा सोबती ने ऐसा गढा है जो बहुआयामी तो है ही साथ ही ऐसा है जिसका थाह लगाया नहीं जा सकता है कि कब कौन सा रूप सामने आ जाए। मित्रों के चरित्र के अनेक पहलू है

जो कभी – कभी उसके व्यक्तित्व को विरोधाभासी भी बना देते हैं। जैसे अपनी सास के समक्ष अपने पति को नामर्द करार देते हुए मित्रों कहती हैं कि–––––सुरखरु हो बैठो, अम्मा। तुम्हारे इस बेटे के यहाँ कुछ होगा तो मित्रों चूहडी के पैरों का धोवन पी अपना जन्म सुफल कर लेगी। [4] उसी पति की तारीफ करते हुए अपनी माँ बालो के सामने उसे गुरयानी सिंह कहती हैं। इतना ही नहीं अपनी माँ की बुरी नजर जब अपने पति की तरफ देखती है तो अपनी माँ को भी लताडती है। अपने पति की लम्बी उम्र की दुआ मांगते हुए कहती हैं कि–––––कहीं मेरे साहबजी को नजर न लग जाए इस मित्रों मरजानी की। [5]

कृष्णा सोबती की रचनाओं में नारी का चित्रण साहित्य के पुराने परम्पराओं से हटकर हुआ है चाहे वो गाँव की अनपढ़ नारी हो अथवा शहर की पढीलिखी अभिजात्य स्त्री वो अपने मन के साथ ही अपने शारीरिक इच्छाओं की भी बात करने से कतराती नहीं। ष्ऐ लड़कीष् की कहानी माँ बेटी के सम्वाद से चलती हुई आधुनिक नारी की समस्याओं से जुड़ने लगती हैं मृत्यु शैय्या पर लेटी माँ अपने जीवन भर के अनुभव बेटी के साथ बॉटते हुए अपने अतीत के चौराहे में खोती तो है पर बेटी को लेकर चिंता भी है। क्योंकि उसकी बेटी विवाह के प्रति नीरस है व विवाह जैसी समाजिक व्यवस्था से चिढ़ भी लेकिन माँ बेटी को अनेक प्रकार से समझाने का प्रयास करती हुई कहती हैं कि –––––यह गढरी जो कंधो पर उठा रखी हैं तुमनें। फेक दो। परे फेक दो। लड़की समय को खाक न बना। संभल जा। पानी ढलान पर है।[6] माँ नारी के सम्मान व अस्तित्व के प्रति सजग हैं लेकिन वो उन परम्पराओं को बचाये रखना चाहती हैं जो समाज तधा पारिवारिक वयवस्थाओ को चलाने के लिए आवश्यक है। माँ कहती हैं––––––लड़की बच्चा बनाना एक तरह का यज्ञ ही है री। इन दिनों औरत पूरे ब्रहमाण्ड की शक्ति के कण खींचकर अपनी ऊर्जा ज्वलित कर लेती है। [7]

कृष्णा सोबती की रचनाओं में स्त्री चरित्र के अनेक फहलू दिखाई देते हैं। उम्र के जिस भी पडाव में हो वह अपने अस्तित्व के प्रति सजग दिखाई देतीं हैं। चाहे वो समय सरगम की अरणया हो, सुरजमुखी अंधेरे के की रति या दिलो दानिश की महकबानो ये सभी चरित्र आपनी– अपनी तरह से अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ती है। आधुनिकता के कारण जहाँ समाज में जागरूकता आई वही समाज व परिवार की खोखली होती मान्यताओं के विरुद्ध नारी संघर्षरत दिखाई देती हैं। दिलो दानिश की महकबानो वकील साहब की पत्नी तो नहीं पर उनके दो बच्चों की माँ हैं। वकील साहब कभी उसे पत्नी का दर्जा नहीं दे पाते तधा समाज भी उसे गलत दृष्टि से देखता है । जिससे बेपरवाह महक वकील साहब से सच्चा प्यार करतीं हैं और अपना सब कुछ न्यौछावर करती हैं बिना किसी उम्मीद के। लेकिन वही महक से जब उसकी बेटी के विवाह के तैयारीयो से दूर रहने की शर्त रखी जाती है तो महक विद्रोही बन जती है । वह वकील साहब से अपने अधिकार को लेकर कहती हैं कि ––––––– आज से पहले तो हम औरत भी नही थे। ओढनी थे, ड गिया थे, सलवार थे! ––––––––––––जूती अपनी थी और पॉव किसी को सौप रखें थे। [8]

निष्कर्षः

स्त्री जीवन को केन्द्र में रखकर अनेक रचनाकारों ने हिंदी साहित्य में कई प्रयोग किए लेकिन स्त्री जीवन की समस्या, उसके सघर्ष, उसकी अपने अस्तित्व को लेकर समाज व परिवार से बढ़ती टकराहट और उनसे उपजा क्षोभ कृष्णा सोबती के यहाँ आसानी से देखें जा सकते हैं। कृष्णा सोबती की लेखनी तो धारदार तो थी ही लेकिन स्त्री चरित्रों के निर्माण में वो और भी ज्यादा धार तेज करतीं हुई नजर आती हैं। इनके सम्पूर्ण साहित्य के क्रेद्र में नारी और उसके जीवन से सरोकार रखने वाले विषय वस्तु ही रहे हैं परंतु इनके यहाँ नारी भोग्या के रूप में नहीं बल्कि सचेत एवं विद्रोही रूप में स्थापित हुई है। आधुनिक युग नारी मुक्ति की चर्चाओं के साथ ही उसके जीवन को अनेक आयाम से जोड़ता है जो उसकी दबी इच्छाओं को पुर्नजीवित करने की चेष्टा करता है, बहुत हद तक यह नारी जीवन को प्रभावित भी करता है परिणामस्वरूप नारी अब अपने अस्तित्व के प्रति सिर्फ जिगरुक नहीं होती ब्लिक पुराने सभी पहचानों को तोड़ती हुई नये स्वरूप को धारण करने के लिए व्याकुल भी दिखती है। इसी आकुलता को कृष्णा सोबती ने बहुत ही संजिदगी के साथ अपने केनवास पर मित्रों, अरणया, महकबानो, रत्ती, अम्मू आदि रूपों में उकेरा है। कृष्णा सोबती की स्त्री पात्र परिस्थितियों को अपने इच्छाओं के अनुरूप ढालने के लिए लागातार प्रयास करती है,। इनके यहाँ स्त्रियाँ जीवट है, सवच्छंद है, सघर्षशील है, स्वाभिमानी है या यूँ कहें तो वो हाड़–मांस का पुतला या देवी नहीं है ब्लिक गुण–अवगुण से लैस एक इंसान है और यही उसकी पहचान भी। कृष्णा सोबती ने नारी को उसके वास्तविक स्वरूप को चेतनता के साथ स्थापित करने का सफल प्रयास किया है। –

संदर्भ –सूची

(1)मित्रों मरजानी , कृष्णा सोबती, फ्लैप पर

(2) मित्रों मरजानी, कृष्णा सोबती , पृः 18

(3) मित्रों मरजानी पृः 17

(4) मित्रों मरजानी पृः 28

(5)वही पृः 65

(6) ऐ लड़की , कृष्णा सोबती, पृः 72

(7) वही पृः 76

(8)दिलो दानिश, कृष्णा सोबती, पृः 98

सम्पर्क –सूत्र

डॉ0 सुधा कुमारी

ए–7/183

सेक्टर –17 , रोहिणी

नई दिल्ली –110089

मोबाइल सख्या –8010164469

29

The Scientific Power of Ancient India
(प्राचीन भारत की वैज्ञानिक ताकत)

डॉ0 प्रखर

सारांश

प्राचीन भारतीय सभ्यता बहुत विकसित थी परन्तु इसके ज्ञान, विज्ञान, तकनीक को प्रचारित और प्रसारित नहीं किया गया । वे गुमनामी में रहे । अरब, मिस्त्र और यूरोप ने भारतीय ऋषियों, मुनियों के ज्ञान, विज्ञान और तकनीक को अपनाकर उसे अपना कहने तक में हिचकिचाहट नहीं की बल्कि भारतीयों को तो बेचारा, अकार्यकुशल, और नकल करने वाला कहा। इस लेख में विद्वानो की खोजों और प्राचीन वैघशालाओं में उपयुक्त किये ज्ञान की जानकारी से पता चलता हैं कि प्राचीन भारतीयों (हमारे पूर्वजों) का वैज्ञानिक ज्ञान कितना उन्नत था ।

1. बोधायनः बोधायन 8वीं सदी BC में हुआ था । उन्होने सबसे पहले 'पाई' के बारे में जानकारी दी और अपने 'सुलभ सुत्रं' में गड्डे का व्यास कैसे निकाला जाता हैं बताया । उन्होने Pythogor ने से 2800 साल पहले ही साल्वशास्त्र में Pythagorus Thorum के बारे में बता दिया था ।

2. पाणिनीः– पाणिनी ने 400 B.C में व्याकरण के नियम और आधुनिक कम्पयूटर प्रणाली के बारे बता दिया था ।

3. आर्यभट्टः– (476CE-550CE) आर्य भट्ट ने अपनी पुस्तक 'आर्य सिद्वान्त' में 23 वर्ष की आयु में ही पाई की Value, Decimal, Number Theory ज्योमैट्री, ट्रीगनोमैट्री, अंक गणित और 0 की अंसनम की जानकारी दे दी थी । उन्होने कोपरनिकस से पहले ही ब्रह्मांड की जानकारी प्रदान कर दी थी । उन्होने बताया था कि पृथ्वी, चन्द्रमा और अन्य ग्रह सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं । उन्होने चारों युग की अवधि समान बताई थी। 4. ब्रह्मगुप्तः– बह्मगुप्त को 'Father of Algebra" कहा जाता हैं उन्होने 8वीं 9वीं सदी में ही गुणा, 0 और कई मापक यन्त्रों की जानकारी थी । 0 की खोज का श्रेय उन्हें ही जाता हैं । उनको छमूजवद से पहले Gravitational pull (गुरूत्वाकर्शण) के नियम का पता था । उन्होने इसे धरती की वितबम का नाम दिया था । उन्होने अपनी पुस्तक बह्मप्रकाश स्कूल of astronomy में खगोलशास्त्र, ग्रह, और ग्रहण का अध्ययन किया । उन्होने बताया था कि एक साल में 365 दिन, 6 घण्टे 12 मिनट और 9 सैकिण्ड होते हैं । उन्होने बपतबसम के अन्दर क्षेत्रफल निकालने के लिय बह्मगुप्त थोरम दी । उन्होने छमहंजपअम दनउइमते की बात की थी।

5. भास्कराचार्यः उनका जन्म 7वीं सदी में हुआ और ये आर्यभट्ट के शिष्य थे। वे जाने माने गणितज्ञ थे । उन्होने 'सिद्धान्त शिरोमणि' और 'लीलावती' नामक पुस्तकें लिखी । 'लीलावती' का अनुवाद Jamमे Taylor ने किया जिसमें उन्होने बीजगाणित के inverse cycling method के बारे में जानकारी दी। उन्होने 'गोलगणित' में गुरूत्वाकर्शण के बारे में छमूजवद से पहले ही बता दिया था। 'गोल अध्याय' में खगोलशास्त्र, चन्द्रग्रहण और सूर्य ग्रहण के बारे में जानकारी दी। उन्होने बह्मी लिपि, संख्या, दशमलव प्रणाली sine system की भी खोज की। उन्होने अपने गुरू आर्यभट्ट पर 'आर्यभटिया भाश्य' लिखी। उन्होने 'महाभाश्करिया' और 'लघुभाश्करिया' भी लिखी जिसमें Trignometry formula, longitude of planets, conjunction of planets with each other and other planets के बारे बताया ।

6. महावीराचार्यः– उन्होने Infinity और (LCM) लघुत्तम निकालने का तरीका खोजा। उन्होने बताया कि प्दपिदपजल चार तरह की होती है। 1- Infinity in space 2. Infinity in time 3. Infinity in one direction and 4. Infinity in other directions उन्होने सतनंग सूत्र लिखे । बीज गणित समीकरण ये 0 का प्रयोग किया।

बखशालीः– बखशाली ने तीसरी शताब्दी मे ही O (Zero) की Place अंसनम बता दी थी।

8. कनादः– कनाद 6जी बमदजनतल BCE में हुये । बचपन से ही उनकी रूचि कण में थी इसलिए इनका नाम कनाद पड़ा । उन्होने क्संजवद से पहले ही Atomic Theory बात की थी। इनका कहना था कि प्रत्येक वस्तु अणु से बनती है। उन्होने 2600 साल पहले ही अणुशास्त्र के बारे में ज्ञान प्राप्त कर लिया था जो गति का नियम न्युटन ने 900 साल पहले दिया कनाद उसे 2500 साल पहले ही दे चुके थे।

9. वराहमिहिरः– वराहमिहिर उच्च कोटि के भूगोलशास्त्री और ज्योतिश शास्त्री थे। उन्हें 6 जानवरों और 30 पौधों की विशेश जानकारी थी। वे Ground water, Earthquake के भी ज्ञाता थे उन्होने अपने पिता आदित्यदास से ज्योतिश और गणित सीखा। वे वेदो के भी ज्ञाता थे उन्होने आर्यभटट् के पास अध्यन किया। वे पर्यावरण, भूमि, विज्ञान, जल विज्ञान के भी ज्ञाता थे। उन्होनें ज्योतिश पर 'पंच सिद्धांतिका' नामक पुस्तक लिखी । वे विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे। उनकी विलक्षण ज्योतिश ज्ञान के कारण उनको वराहमिहिर नाम मिला क्यों कि उन्होने विक्रमादित्य को बताया था कि उनके पुत्र की मृत्यु एक वराह से होगी जो सत्य साबित हुई । समय मापक यंत्र, घट यन्त्र, काल चक्र यन्त्र उनकी देन हैं। उन्होंने शिवजी पर लगने वाली जलाधारी के बारे वैज्ञानिक जानकारी दी थी। उन्होने 'सुश्रुत संहिता' का भी अनुवाद किया।

10. नागार्जुनः– उन्हे रसायन शास्त्र, धातुशास्त्र और alchemy का बहुत अच्छा ज्ञान था। आधुनिक Gold plating technology उन्ही की देन है। उन्होनें 'रस रचनाकर' लिखी। धातु खनन पर भी बताया । जिस अशोक स्तंभ पर जंग नहीं लगता उस तकनीक के बारे वे बता चुके थे।

वेद्यशालाएँः– नक्षत्रों, ग्रहों की स्थिति, इनकी गति और दूरी का अध्ययन करने के लिए भारत में अनेक वेद्यशालाओं को निर्माण करवाया गया। इनका प्रयोग भौमिक सामुद्रिक, अंतरिक्ष की घटनाओं, ज्वालामुखी का अध्ययन के लिये किया जाता था। Observatories की संरचनाएँ ये बताती हैं कि हमारे पूर्वजों के पास वैज्ञानिक ज्ञान कितना उन्नत था।

क. दिल्ली का जंतर मंतरः– राजा जयसिंह II ने 1724 में इसका निर्माण करवाया। उसमें ईटों से बने पांच गणना यंत्र हैं जो इस प्रकार है। 1. मिश्र यंत्र 2. जय प्रकाश 3. सम्राट यंत्र 4. नियति यंत्र और 5 राम यंत्र

ख. उज्जैन का जंतर मंतरः– इसे जीवाजी वेद्यशाला भी कहा जाता हैं। इसे सवाई जयसिंह II ने 1719 में क्षिप्रा नदी के समीप बनवाया था। इसका प्रयोग तालिकाऐं बनाने, सूर्य और चन्द्रमा की गतिविधि ओर भविष्य की जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इसकी सहायता से प्रति नर्श नया पंचाग बनाया जाता है। इसमें ग्रहों को देखने के लिए स्वचालित दूरबीन भी है। इसमें चार यंत्र 1. यज्ञ शाला 2. नादिवलय यंत्र 3. शंकु यंत्र और 4. सम्राट यंत्र हैं ।

ग. जंतर मंतर जयपुरः– यह दुनिया की सबसे बडी वेद्यशाला हैं जिसे सवाई जयसिंह ने 1734 में बनवाया था। इसमें निम्न उपकरण हैं 1. लघु सम्राट यंत्र 2. वृत सम्राट यंत्र 3. जय प्रकाश यंत्र 4. ध्रुव दर्शक यंत्र 5. सम्राट यंत्र 6. क्रांति वृत 7. राम यंत्र 8. दिशा यंत्र 9. उन्नतांश यंत्र 10. शश्ठांश यंत्र 11. नाडीवलय यंत्र 12. शशिवलय यंत्र 13 दिगंश यंत्र ।

घ. जंतर मतंर मथुराः– राजा जयसिंह ने इसे बनवाया था और 1850 में यह नष्ट हो गई।

जंतरमंतर वाराणसीः– राजा जयसिंह ने 1757 मे मान मंदिर की छत पर इसका निर्माण कराया। यह अन्य वेद्यशालाओं से छोटी हैं । इसका प्रयोग खगोलीय और ज्योतिषिय गणनाएँ करने के लिये किया जाता हैं और ये गणनाऐं सटीक होती हैं इसमें निम्न यंत्र हैंः– 1. चक्र यंत्र 2. लघु सम्राट यंत्र 3. सम्राट यंत्र 4. दक्षिणोत्तर भित्ति यंत्र 5. नाडी वलय दक्षिण व उत्तर गोल 6. दिगंश यंत्र ।

विदेशी भी इन वेद्यशालाओं का अध्ययन करने आते है। और हमारे पूर्वजो के ज्ञान, विज्ञान की जानकारी को देखकर हैरान होते हैं परन्तु भारत में इन्हे उतना मान् सम्मान् और ध्यान नहीं मिला जितना इन्हे मिलना चाहिये था।

12 (द्वादश ज्योर्तिलिंग):– भौगोलिक ज्ञान और वास्तुकला का अद्भुत उदाहरण हमारे 12 ज्योर्तिलिंग हैं जो एक सीधी लाईन में 79 स्वदहपजनकम पर बने है। भारत के नक्शे में नीचे पडने वाले 7 ज्योर्तिलिंग बिल्कुल सही भौगोलिय सीधी लाईन–79E 41' 54" longitude पर स्थित हें । ऐसा भौगोलिक ज्ञान वो भी प्राचीन समय में जबकि आधुनिक उपकरण भी नहीं थे, अलौकिक और प्रंशसनीय हैं ।

सारांशः– निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं हमारे पूर्वजों को गणित, अंक गणित, बीज गणित, Trignometry, zero पाई की अंसनमए LCM आदि की जानकारी अन्य देशों के वैज्ञानिक से बहुत पहले से थी परन्तु उनका प्रचार व प्रसार नहीं हुआ। इसी तरह अणुशास्त्र, ज्योतिश शास्त्र, खगोलशास्त्र, धातु शास्त्र, सबीमउल आदि की जानकारी भी काफी प्राचीन, विकसित तथा सटीक थी। जो पांच वेद्यशालाएँ राजा जयसिंह ने बनवाई वो भी यह बात सत्यापित करती हैं कि प्राचीन भारत का खगोल शास्त्र का ज्ञान अतुलनीय था

BIBLIOGRAPHY & REFERENCES:-

1. Amruta, Patil, "Bhaskaracharya." Ancient India History notes. 22 June, 2023.
2. "Jantar Mantar – The Ancient Astronomical observatories of India". Ancient Origins, Reconstructing the story of humanity's Past. DHWTY updated 9th Feb, 2022. 22.4.
3. Varahmihira: Indian Philosopher and Scientist ed. Encyclopaedia Britannica.
4. Hayashi, Takao. Aryabhatta: Indian Astronomer and Mathematician. May 16, 2023.
5. Nagarjuna: "Wizard in Indian Alchemy and Metallogy" myindiaglory com. Https// w.w.w. 18 Dec 2019.
6. "Aryabhatta, Mathmatician and Astronomer" Aryabhatta. India online.
7. Narayan, Anil. History of Indian Astronomy: The Siamese Manuscript. 8 March, 2019.
8. Noony, Joseph T. The Ancient Obseravatories of India. 1. Indology 25th April, 2019.
9. "krk;q] vfu:) tks"kh- Hkkjr ds 5 izeq[k tarj earj- ladyu Webdunia.
10. "Brahamgupta's Contribution in Mathematics". Studious Guy.com.
11. "Why is Maharishi kanad famous? How did he get this name?" Vedantu com. https// w.w.w.

डॉ0 प्रखर

एक्सटेंशन लैक्चरर (इतिहास विभाग)

डा0बी0आर0अम्बेडकर राजकीय पी0जी0 महाविद्यालय

पलवल–121102

मोबा0–9416418861

30

कबीर चेतना के विविध रूप

डॉ0 अनिल कुमार

सारांश

हिन्दी साहित्य के इतिहास का द्वितीय कालखण्ड, भक्तिकाल है जिसे 'स्वर्ण युग' भी कहा जाता है। इस युग में दो धारायें प्रवाहित हुए सगुण काव्य धारा और निर्गुण काव्य धारा। इन दोनों धाराओं ने समाज के प्रत्येक वर्ग को भक्ति से सराबोर कर दिया। कबीर, जायसी, तुलसीदास, सूरदास जैसे अद्वितीय भक्ति कवियों की दिव्य वाणी ने भारतीय जनता को आनंदमय कर दिया। भक्ति काल निर्गुण काव्य–परम्परा को ज्ञानाश्रयी निर्गुण काव्य परम्परा या संत साहित्य कहा गया है।

'संत' शब्द सुनते ही मानव मन में साधु– महात्माओं के बारे में याद आने लगती है। हिन्दी साहित्य में संत शब्द ज्ञानाश्रयी, साधना के कवियों के लिए रूढ माना गया है। किंतु साहित्य में संत के अनेक अर्थ ध्वनित होते है। संस्कृत– हिंदी शब्दकोश के अनुसार संत शब्द संत शब्द का बहुवचन है। उत्स धातु से निष्पन्न सत् शब्द का पुल्लिंगग प्रथम विभक्ति एक वचन का रूप सन है। इसमें शट् प्रत्यय लगा है। इस प्रकार संत शब्द सत्य शब्य का पर्यायवाची बन जाता है।[1] इस प्रकार संत शब्द का अर्थ हुआ जो सत्य के बारे में जान चुका है। संस्कृत भाषा में संत शब्द का अर्थ है महात्मा।[2]

संत काव्यधारा या ज्ञान मार्गी काव्य धारा के प्रमुख कवि कबीरदास जी है। जिनकी पसिद्धि का आधार ग्रन्थ बीजक ग्रन्थ है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार कबीर मुस्लिम संत थे जिसे नीमा व नीरू नामक निम्न जाति के परिवार ने पाला–पोसा। उन्होंने ही उनका नाम कबीर रखा जिसका शाब्दिक अर्थ है महान। संत कवि कबीरदास जी संत काव्य परम्परा में निसंदेह ही सर्वश्रेष्ठ सिंहासन पर विराजमान है। वे एक संत होने के साथ साथ युग दृष्टा, समाज सुधारक, निर्गुण उपासक कवि एवं जन उद्धारक थे। उन्होंने अपनी पैनी व तीक्ष्ण दृष्टि से समाज में व्याप्त, विसंगतियों को देखा और उनका जोरदार खण्डण किया। कबीर के समय में मुस्लिम साम्राज्य की स्थापना हो चुकी थी। राजनीतिक अराजकता ने समाज को दूषित कर दिया था। भारतीय जनता निराशा के गर्त में डूबती जा रही थी। धर्म का स्वरूप भी पतन की ओर अग्रसर हो रहा था। शैव, वैष्णव, शाक्त, बौद्ध आदि भक्ति भावना के नाम पर सामाजिक हदयों में अनेकानेक आडम्बरों को पहाल कर रहे थे। कबीरदास जी ने भक्ति के जिस उदार दृष्टिकोण को जनसामान्य के समक्ष प्रस्तुत किया। उसमें जाति–पाति या वर्ण भेद के लिए अवकाश नहीं या। कबीर दास ने संकीर्णताओं, अंधविश्वासों एवं पाखण्डों का जबरदस्त विरोध करते हुए सदाचारपूर्ण सात्विक जीवन को भी भक्ति का मूल स्वीकार किया है। वे मूर्ति–पूजा व अवतारवाद के प्रखर विरोधी थे। उनके साहब न तो दशरथ–सुत थे। और न ही अलौकिक लीला रचने वाले श्री कृष्ण। उनका साहब एक है।

"मेरा साहब एक है दुजा कहा न जाय
साहिब दुजा जो कहूँ, साबह खरा रिसाये।।"[3]

कबीर के परमात्मा का न तो कोई रूप है और न आकार। वो तो अविदित, विदित, निर्गुण–सुगण सबसे परे है।

"सर्गुण को सेवा करो निर्गुण का कम ज्ञान
निर्गुण–सर्गुण के परे है रहे हमारा ध्यान।।"[4]

कबीर के समय में जाति–पाति का इतना बोलबाता था कि कबीर जाति–पाति के बारे में भेदभाव करने वालो को खुलकर लताडते थे। इस जाति–पाति के भेदभाव को स्वयं कबीरदा जी ने झेला था। इस संदर्भ में देव प्रकाश मिश्र कहते है कि कबीर एक क्रांतिकारी रचनाकार थे। उनकी इस क्रति कारिता का कारण सामाजिक तथा आर्थिक दबाव ही है। आर्थिक साधनों के अधिकार से वंचित और सामाजिक असमानता के शिकार लोगों की स्थिति को देखकर उनका मन द्रवित हो उठा।

धार्मिक कर्म काण्डों और पाखण्डों का विस्तार और रूढियों ने उन्हें मंदिर में प्रवेश की अनुमति तक प्रदान नहीं की। इन सभी कारणों ने उन्हें विद्रोही बना दिया। उन्हें जातिगत, कुलगत, धर्म गत, संस्कार गत, विश्वासगत, समाज गत और साम्प्रदाय गत विभेदों को समाप्त करने के लिए मानवीय अधिकार को विकसित किया। इसी मानवीय अधिकार की विवेचना की नींव पर मानव धर्म की मंजिल की स्थापना की।5 समाज के वर्ताव ने ही उन्हें विद्रोही आक्रामक विचारक और समाज सुधारक बना दिया। वे कहते है–

जौ पै करता बरण विचारै
तौं जनमत तीणि डाँठि. किन सारै।
उत्पत्रि व्यंढ कहाँ यै आया जा थरी अरू लागी गाया
नहीं को ऊँचा नहीं कोई नीचा
जाका घंड ताही का सींचा।।
जे तू बाभन बभनी जाया, तौ आनं बाट है काहे न आया।
जे तू तुरक तुरकनी जाया
तो भी तरि खतना क्यू न कराया।।
कहे कबीर मधिम नहीं कोई सो
मछिम जा मुखि राम न होई।।[5]

कबीरदास जी ने भक्ति भावना पर बहुत बल दिया था। उन्होंने अन्तः करण की भक्ति करके भगवान को ढूंढने का परामर्श दिया। वे स्वयं कहते है–

पोथि पठि–पाठ जग मुआ, पंडित होया ना कोय
ठाई आखर प्रेम के पढे सौ पंडित होया।।[6]

कबीरदास जी ने भक्ति में थकावट डालने वाली माया का भी डटकर सामना किया और उन्होंने ये भी कहा कि। माया भक्ति में बहुत बडी थकावट डालती है। माया मनुष्य, में दुश्कर्मों को उत्पन्न करके उन्हें

ईश्वर भक्ति से विमुख करती है। माया ..... है। वह जन्म पालन एवं संहार करने वाली है। ईश्वर भी उसके प्रभाव से वंचित नहीं है।

"कबीर माया पादिनी, हरि सूकरै हराम।"[7]

संत कबीर दास जी ने भक्ति भावना के अन्तर्गत सांसारिक कर्मों को कष्टदाय एवं भक्ति कर्म को श्रेष्ठ बताया है। मनुष्य को सभी भ्रमों को त्यागकर मन, वचन, कर्म से प्रभु का नाम स्मरण करना चाहिए। नाम स्मरण को ही उन्होंने सार तत्व माना है–

"भगति भजन हरिराम, दूजा दुख अपार
मनसा वाया, क्रमना, कबीर सुनि रण सार।।"[8]

तत्कालीन समाज में व्याप्त अराजकता ने मनुष्य की बुद्धि को भ्रष्ट कर दिया था। इन विकट परिस्थितियों में कबीर ने संसार को भक्ति व ज्ञान का मार्ग प्रशिष्त किया। ज्ञान एवं भक्ति का सुंदर समन्वय करके अपूर्व ज्योंति ईश्वर तक पहुंचाने का कार्य केवल सदगुरू ही कर सकते है। संत कबीर दास ने गुरू का स्थान ईश्वर से भी उपर बताया है।

"गुरू गोविंद दोऊ खडें कानै लागै पायॅ
बलिहारी गुरू आपने गोविन्द दियों मिलाय।।"[9]

कबीर दास जी पद्यभ्रष्ट समाज को उचित मार्ग पर लाना चाहते थे। उनके समय में समाज अनेक धर्मो में बटां हुआ था। प्रत्येक धर्म के लोग अपने आपकों उपर या बड़ा सिद्ध करने की कोशिश में लगे रहते थे। किंतु कबीर दास जी केवल मानव धर्म पर ..... देते थे उनकी नजरों में सभी धर्म समान थे। वे ना तो किसी धर्म को छोटा समझते थे और ना ही बड़ा। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार – भारतीय धर्म साधना के इतिहास में कबीरदास ऐसे महान विचार के एवं प्रतिभाशाली महाकवि है जिन्होंने शताब्दियों की सीमा का उल्लंघन कर दीर्घ काल तक भारतीय जनता का पथ आलंकित किया और सच्चे अर्थों में ..... का नायकत्व किया।"[10]

कबीर दास जी के समय में धर्म की आड लेकर धर्म के ठेकेदार मुल्ला, पांडे आदि समाज को भ्रष्ट कर रहे थे। कबीर ने हिन्दु तुरक दवारा धर्म को लेकर फैलाए सभी बाहय आडम्बरों को नकार कर निरंजन ईश्वर को अपनाया है। वे हज तीर्थ, व्रत आदि के सखत विरोधी थे।

"न हज जाऊं, न तीरथ पूजा,
एक पिछा गया, तो क्या दूजा,
कहे कबीर भ्रम सब सागा,
एक निरंजन सू मन लागा।"[11]

समाज में नेतागिरी करने की प्रवृति फरूड और मस्तमौला कबीर में नहीं थी। किंतु वे समाज में व्याप्त अंधविश्वास और कुरूपता को अवश्य निकाल फैंकना चाहते थे। ऐसी प्रवृति रखने वाले व्यक्ति स्वतः ही सुधारक लगने लगते है। वास्वत में कबीर भी उस समय के समाज में व्याप्त अपने जैसे अन्य उत्पीडितों की सहायता करना चाहते थे। उनकी वाणी में जीवन सत्य को सहज ढंग से प्रस्तुत करने की समता कूट कूट कर भरी थी। उन्होंने समाज में रहने वाले ढोंगी, पाखंडी हठवादी और मिथ्या डंबर करने वालों पर प्रहार किया। इसी लिए इनके दोहे तीखे और व्यंग्य बन पड़ें है।

सो चादर सुन मुनि ओढी
ओढी कैमैली कीनी चदरिया।।
दास कबीर जतन से ओढी
ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया।।[12]

कबीरदास भी इस बात को मानते थे कि समाज का कल्याण एक व्यक्ति से नहीं हो सकता। हमने समाज में बसे सामाजिकों की मानसिकता में परिवर्तन लाना, तभी हम समाज में परिवर्तन कर सकते है। इस परिवर्तन के लिए वे निरंतन चिंतन करते थे। जीवन के भटकन और उलझनों से मुक्त होकर शांति के साथ रहने और समाज के अन्य लोगों को भी शांति प्रदान करने के उद्देश्य से वे स्वयं अशांत रहते।

सुखिया सग संसार है खावे अरू सोवे
दुखिया दास कबीर है जागे और रोवे।।[13]

भगवान को लेकर कबीर का मानना है कि भगवान और कही नहीं बल्कि हमारे विचारों और कर्मों में है यथा

मोको कहाँ ढूँढे बंदे, मैं तो तेरे पास में
ना मैं देवल, न मैं मस्जिद, ना कावै कैलास मे।।
ना तो क्रिया कर्म में, नहीं योग वैराग में
खोजी होये तो तुरंत मिले है
पल भर की तलास में
कहै कबीर सुनो भई साधो, सब स्वाँसो की स्वास में।।[14]

कबीर न मंदिर वाला थे, न मसजिद वाला वे उन दोनों को एक साथ मानवती के सूत में बंधे देखना चाहते थे। वे चाहते थे कि सभी लोग मिलजुलकर रहे और भगवन के नाम पर भगवान का बंटवारा ना करे। संत कबीर बुद्ध के पश्चात पहले ऐसे व्यक्ति हुए है जिन्होंने प्रेम को जीवन का सार बताया। प्रेम की प्राप्ति जीवन की सभी विसंगतियों का क्षरण करती है। और यह प्रेम इतनी सरलता से भी प्राप्त नहीं होता।

"प्रेमी न खेती, नीव जै, प्रेम न हाट बिकाए
राजा परजा, जिहि रूचै सिर दे लो ले आए।।"[15]

संत कबीर का यह प्रेम अन्तत जिस पथ पर जनता की पहुंचाता है या फिर लेकर जाता है वह अगोचर सत्रा के परिपेक्ष्य में अगम और अरूप है। यहां तक की यह गोचर जगत में भी सहज प्राप्य नहीं है। दस सच्चे प्रेम की प्राप्ति हेतु लोगों को अपने घर, अपने शरीर की शुद्धता के प्रति सचेत करते हुए कहते है।

"कबीर निज धट प्रेम का
मारण अगम अगाधा।।
सीस उतारि पगतल धरै, तब
निकटि प्रेम का स्वादा।।"[16]

उपर्युक्त विवेचन के आधार स्वरूप कहा जा सकता है संत शिरोमणी कबीरदास अपने युग के महान प्रवर्तक थे। वे तत्कालीन परिस्थितियों से भली भांति परिचित थे। उन्होंने जन–जन के समक्ष जहाँ आडम्बर रहित सद्भक्ति का मार्ग प्रशिप्त किया वही धर्म व

भक्ति के नाम होने वाले पाखण्डों का पुरजोर विरोध किया। प्रेम, सद चरित्र आदि उदात्र भावों से युक्त उनका व्यक्तित्व समाज के लिए आदर्श था। ईश्वरीय रूप की निर्गुणता आज भी भारतीय समाज के लिए प्रासंगिक है। कबीरदास जी ने माया और जाति–पाति का खण्डन सदगुरू की महिमा का वर्णन, बाहय आडम्बरों का विरोध, पोथिये ज्ञान के स्थान पर प्रेम की महता को प्रतिपादित करके भारतीय समाज को ही नहीं बल्कि समस्त संसार को जो मार्ग प्रशिस्त किया है।

उसकी उपोदियता आने वाले युगों में मनुष्य का निश्चित ही मार्ग प्रदर्शित करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. विमल महता, निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श पृ. 12
2. पं. राम सुंदर शर्मा, संस्कृत कोष सुधा पृ. 498
3. अयोध्यासिंह उपाध्याय हरि औध कबीर रचनावली पृ. 1
4. वही पृ. 2
5. "मसि कागद छूयौ नहीं..... कबीर", देव प्रकाश मिश्र, पृ. 36
6. अयोध्यासिंह उपाध्याय, हरिआध, कबीर रचनावली पृ. 36
7. सं. आचार्य, श्याम सुन्दरदास, कबीर ग्रन्थावली माया को भंग पृ. 32
8. वही पृ. 5
9. हिन्दी साहित्य का इतिहास, संपादक डॉ नगेन्द्र पृ. 118
10. अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध कबीर रचनावली पृ. 30
11. पुष्प पाल सिंह कबीर ग्रन्थावली सटकी पृ. 539
12. गोविन्द त्रिगुपंत, कबीर ग्रंथावाली पृ. 40
13. वही पृ. 30
14. वही पृ. 45
15. "मसि कागद छूयौ नहीं..... कबीर", देव प्रकाश ..... पृ. 37

डॉ0 अनिल कुमार

गांव व डाकखाना जुड्डी

तहसील कोसली, जिला रोहतक – 123302

(हरियाणा)

31

बहुभाषिकता का लाभ

डॉ0 निभा रानी

सारांश

बहुभाषावाद या बहुभाषिता से तात्पर्य एक से अधिक भाषाओं के प्रयोग से है। किसी व्यक्ति अथवा समुदाय द्वारा दो या दो से अधिक भाषाओं का प्रयोग बहुभाषिता कहलाता है। यह बहुभाषिता विभिन्न स्तर पर हो सकती है। कुछ लोग लिखने, बोलने या पढ़ने में दो या अधिक भाषाओं का प्रयोग कर लेते हैं, भले ही भाषाओं के दक्षता में बहुत अन्तर हो। इसी प्रकार कुछ लोग अंग्रेजी या कोई अन्य भाषा बोले जाने पर उसका अर्थ तो समझ लेते हैं, परंतु वे स्वयं बोल नहीं पाते। यह सभी बहुभाषिता के अन्तर्गत आता है।

ऐसे सभी लोग बहुभाषिक है जो एक से अधिक भाषाओं के प्रति सम्मान का भाव रखते हैं और मूलतरू एक से अधिक भाषाओं के इस्तेमाल के विचार को स्वीकार करना और उसे अपने दैनिक जीवन में स्थान देना, उन सब भाषाओं में का प्रयोग करना ही बहुभाषिकता है।

मनुष्य के सामाजिक, बौद्धिक, आर्थिक या भावात्मक विकास में भाषा की भूमिका अहम होती है। एकाधिक भाषाएँ सीखने से व्यक्ति के ज्ञान–क्षेत्र का विकास हो जाता है। इससे उसके कार्य–क्षेत्र का भी विस्तार हो जाता है। एक से अधिक भाषाओं का ज्ञान रखने वाले व्यक्ति के सम्पर्क का दायरा बढ़ जाता है। वह उस भाषा के जानकार लाखों लोगों से अंतःक्रिया कर सकता है जो उस भाषा का प्रभारत में बहुभाषावाद

भारत प्राचीनकाल से ही बहुभाषायी राष्ट्र रहा है और यहाँ विभिन्न क्षेत्र में निवास कर रही विभिन्न आदिम जनजातियाँ भिन्न–भिन्न भाषाओं का उपयोग करती रही। आर्यों के संबंध में एक मजबूत धारणा यह भी है कि ये पश्चिमी एशिया (कैस्पियन सागर के आसपास के क्षेत्र) से आकर सिन्धु नदी और उसके आसपास के क्षेत्र (आधुनिक भारत एवं पाकिस्तान का पंजाब प्रान्त) में आकर बसे। बाद में ये गंगा के मैदान वाले क्षेत्र में अपना प्रभुत्व कायम कर लिये। आर्यों ने प्राचीन काल में संस्कृत भाषा को प्रतिष्ठित कर ज्ञान–विज्ञान की भाषा बनाया और इस भाषा में अनेक ग्रंथों (वेद, पुराण, उपनिषद्, महाभारत आदि) की रचना की।

उस समय पालि, प्राकृत जैसी भाषाएँ जनभाषा के रूप में प्रचलित थी, जिसका जैन एवं बौद्ध धर्मावलम्बियों ने प्रचार–प्रसार किया। पुनः मध्यकालीन भारत में विदेशी आक्रमणकारियों तथा धर्म–प्रचारकों का जब हस्तक्षेप बढ़ा तो वे भी अपनी भाषा को यहाँ लाने एवं प्रतिष्ठित करने में सफल रहे। अंग्रेजों के आगमन के साथ ही भारतीयों ने तेजी से अंग्रेजी सीख ली। अंग्रेजी सीखक इन लोगों को न सिर्फ सरकारी पद और पैसा मिलना शुरू हुआ, बल्कि समाज में भी ये उच्च प्रतिष्ठा की नजर से देखे जाने लगे। अंगेजी सीखे ऐसे लोग आजादी के बाद तक भी अपनी अगली पीढ़ियों को अंग्रेजी सिखाते रहे। इसका परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजी का राजकाज की भाषा के साथ–साथ ज्ञान–विज्ञान या उच्च शिक्षा (खासकर विज्ञान विषयों) की भाषा के रूप में प्रभुत्व कायम रहा।

उपरोक्त तथ्यों के बावजूद भाषाओं को विविधता के मामले में भारत की गिनती सबसे समृद्ध राष्ट्रों में होती है। भारत के संबंध् में यह समझ लेना आवश्यक है कि भारत उस तरह का यूरोपीय राष्ट्र–राज्य नहीं है, जिसे एक पहचान में बाँध जा सके। भारत को किसी यूनीफॉर्म राष्ट्रभाषा की आवश्यकता नहीं है। विविधता भारत को संस्कृति रही है और बहुभाषिता यहाँ के लोगों की जीवनशैली। ऐसे में किसी एक ही भाषा के विकास की बात करना यहाँ बेमानी होगी

साहित्य में जीवन की अभिव्यक्ति किसी ना किसी रूप में अवश्य होती है, वह नितांत जीवन निरपेक्ष नहीं हो सकता है इतना अवश्य है कि उसका कुछ अंश यथार्थ होता है तो कुछ काल्पनिक होता है। भारतीय चिंतक एवं कवि साहित्य के उपयोगिता वादी दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं।

साहित्य के द्वारा ही ब्यक्ति और समाज का निर्माण किया जाता है। सत साहित्य आचरण को बढ़ाता है मनोविकारों पर अंकुश लगाता है और सन्मार्ग की ओर प्रेरित करता है।

किसी भी राष्ट्र या समाज के सांस्कृतिक स्तर का अनुमान उसके साहित्य के स्तर से लगाया जा सकता है, साहित्य न केवल समाज का दर्पण है बल्कि वह दीपक भी है जो समाज को उसकी बुराइयों की ओर ध्यान दिलाता है आदर्श समाज का प्रस्तुत करता है। विद्वानों का यह मानना है कि साहित्य के बिना देश मृतक के समान है। किसी देश की सभ्यता और संस्कृति के इतिहास को समझने के लिए साहित्य को भी पढ़ना आवश्यक है । साहित्य किसी देश समाज तथा उसकी सभ्यता एवं संस्कृति का दर्पण होता है, की महान परंपराओं के कारण ही इस देश का गौरव विश्व मानचित्र पर अक्षुण्ण बना रहा है । जिसमें साहित्यकारों ने अपनी देखने से विश्व समाज का सदैव मार्गदर्शन किया है महाकवि कालिदास, पाणिनि याज्ञवल्क्य, गोस्वामी तुलसीदास जी सूरदास जी मीरा आदि ने आदि ने प्राचीन तथा मध्यकालीन कवित्रीयों द्वारा फैलाए गए प्रकाश से भारतीय समाज सदैव आलोकित होता रहा है।

साहित्य ही वह क्षेत्र है जो मनुष्य को परमार्थ, समाज सेवा, करूणा, मानवीयता, सदाचरण, विश्व बंधुत्व जैसे उद्धात मानवीय मूल्यों की रचना करता है जो प्राणी मात्र के जीवन की कल्पना करते

हैं।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपनी प्रसिद्ध रचना रामचरितमानस में एस्से अनेक सूक्तिपरक चौपाइयों की रचना की है जो सीधे–सीधे निर्देश करता है जैसे–का वर्षों जब कृषि सुखाने, कर्म प्रधान विश्व करि राखा आदि।

भारतेंदु हरिश्चंद्र, मुंशी प्रेमचंद, निराला, मुक्तिबोध जैसे अनेक साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय समाज में सदाचार के संस्कार, श्रम साधना के संस्कार, राष्ट्रभक्ति के संस्कार, समाज सेवा के संस्कार, आचरण की सभ्यता के संस्कार तथा विश्व मानवता के संस्कार सामाजिक समरसता के संस्कार आदि की स्थापना की गई है।

साहित्य व्यक्ति के अंदर छिपे हुए देवता को जगाता है तथा पाशविकता का श्रवण करता है। गोस्वामी तुलसीदास ने स्वीकार किया है कि कविता लोकमंगल का स्थान करती है तथा वाहन गंगा के समान सबका हित करने वाली होती है। साहित्य लोक कल्याण के लिए सृजित किया जाता है । साहित्य का उद्देश्य मात्र मनोरंजन करना नहीं बल्कि इसका उद्देश्य साहित्य का मार्गदर्शन करना है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी के शब्दों में केवल मनोरंजन करना कवि का कर्म होना चाहिए उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।

बीसवीं शताब्दी के हिंदी के महान साहित्यकार आचार्य रामचंद्र शुक्ला जी ने साहित्य को जनता की अभिवृत्ति का संचित प्रतिबिंब माना है, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने साहित्य को ज्ञान राशि का संचित कोष कहां है, पंडित बालकृष्ण भट्ट साहित्य कोश्जनसमूह के हृदय का विकास मानते हैं।

प्राचीन काल में भारतीय समाज काफी समृद्ध थी , हमारी सभ्यता इतनी उन्नत थी कि हम आज भी उस पर गर्व कर रहे हैं। भाषा के वाचित और लिखित सामग्री को साहित्य कह सकते हैं। विश्व में प्राचीन वांछित साहित्य आदिवासी भाषाओं से प्राप्त होता है। भारतीय संस्कृत साहित्य ऋग्वेद से प्रारंभ होता है। व्यास, बाल्मीकि जैसे पौराणिक ऋषियों ने महाभारत एवं रामायण जैसे महाकाव्यों की रचना की। भास कालिदास एवं अन्य कवियों ने संस्कृत में नाटक लिखें जो साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं। भक्ति साहित्य में अवधि में गोस्वामी तुलसीदास जी ने ब्रज भाषा में सूरदास जी ने मारवाड़ी में मीराबाई ने और खड़ी बोली में कबीर एवं रसखान, मैथिली में विद्यापति आदि प्रमुख है। जिस राष्ट्र का समाज और साहित्य जितना समृद्ध होगा, वह राष्ट्र और समाज भी उतना ही समृद्ध होगा।

मानव सभ्यता के विकास में साहित्य का योगदान काफी महत्वपूर्ण रहा है, विचारों में साहित्य को जन्म दिया तथा साहित्य में मानव की विचारधारा में परिवर्तन किया। मानव के विचारधारा में परिवर्तन लाने का कार्य साहित्य द्वारा ही किया जाता है। आज इतिहास साक्षी है कि किसी भी राष्ट्रीय समाज में आज तक जितने भी परिवर्तन आए हैं उनका माध्यम साहित्य ही रहा है।

साहित्य में व्यक्ति और समाज को प्रभावित करने की अपार क्षमता होती है। कहा गया है कि विलास रस राजा जयसिंह अपने कामकाज को छोड़कर नवोढ़ा रानी के प्रेम में बूबा था उसे अपना ही होश हवास नहीं था। किसी साहस न था कि महाराजा को कर्तव्य बोध करावे। तब उसी समय बिहारी ने एक दोहा लिखकर भेज दिया :नहीं पराग नहीं मधुर मधु नहीं विकास इहि काल। अली कली ही सौं बंध्यो आगे कौन हवाल।।

हे भ्रमर तू इस गली में इतना अनुरक्त है–अभी ना तो इसमें पराग की रंगत है, ना मधुर मकरंद है और ना ही यह भी पूर्ण रूप से विकसित ही है, आगे जब यह पूर्ण विकसित पुष्प बनेगी तब तेरी दशा क्या होगी?

इस दोहे में छिपे अन्योक्ति परत अर्थ को भली–भांति समझ लिया और महल से बाहर आकर कामकाज में संलग्न हो गया। यह घटना इस तथ्य को प्रमाणित करती है कि साहित्य में और सीमित शक्ति होती है। साहित्य के द्वारा ही व्यक्ति और समाज का निर्माण किया जाता है। सत्साहित्य आचरण को बढ़ाता है मनोविकारों पर अंकुश लगाता है, सन्मार्ग की ओर प्रेरित करता है। साहित्य की शक्ति तोप से कहीं ज्यादा है। कलम का सिपाही कभी नहीं हारता, उसकी ताकत असीमित होती हैं वह सीधे दिल पर प्रहार करता है। उसकी चोट बाहर कहीं भी घाव नहीं पहुंचा कर अंदर प्रभाव डालती है।

साहित्यकारों ने साहित्य के माध्यम से अपने क्रांतिकारी विचारों को भी समाज में प्रसारित किया है यही कारण है कि आज हम स्वतंत्र देश में रहते हैं यदि आज समाज ना होता तो एक आदर्श साहित्य की कल्पना नहीं की जा सकती थी।

साहित्य का समाज में महत्वपूर्ण योगदान है । साहित्य समाज को एक नई दिशा एवं अच्छे समाज का मार्गदर्शन करने का कार्य करता है। समाज में व्याप्त कुरीतियों को खत्म करने में साहित्य का योगदान महत्वपूर्ण है।

निष्कर्षः

साहित्य और समाज के बीच ऐसा संबंध है कि इन दोनों को अलग कर पाना संभव नहीं है इन दोनों का मानव जीवन में महत्वपूर्ण योगदान होता है साहित्य ही हमें समाज की समस्याओं तथा पुरोहितों आदि से परिचित कराता है और और साहित्यकार साहित्य की रचना मानव कल्याण को आधार बनाकर करता है ताकि वह मानव के कल्याण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकें इस प्रकार साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि साहित्य ही वह उपकरण है जो व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र को संस्कारवान बनाता है।

संदर्भः

हिंदी साहित्य का इतिहास– आचार्य रामचंद्र शुक्ल
साहित्य और समाज – डॉक्टर आरपी वर्मा
हिंदी साहित्य का वस्तु परत इतिहास। रामप्रसाद में
साहित्य और आत्मज्ञान विज्ञान
हिंदी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचंद्र शुक्ल–पृष्ठ–६१
साहित्य और समाज–डॉ आरती वर्मा–पृ–58
साहित्य और समाज का एक मूल्यांकन–डॉ राजीव शर्मा–पृ–125
मैथिलीशरण गुप्त भारत भारतीय पृष्ठ होता
प्रेमचंद जी के कुछ विचार साहित्य का उद्देश्य पृष्ठ 43

डॉ0 निभा रानी
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
रामकृष्ण धर्मार्थ फाउंडेशन विश्वविद्यालय,
रांची–834004
. 91–9431792513(ड)

32

भारत में प्रमुख राजकोषीय सुधारों का एक अध्ययन

डॉ0 योगेश

सारांश

राजकोषीय नीति समग्र व्यापक आर्थिक ढांचे में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। राजकोषीय नीति को एक ऐसे ढांचे में डिजाइन करने की आवश्यकता है जहां सरकारी गतिविधि में वृद्धि से अर्थव्यवस्था को शुद्ध लाभ होगा, भले ही इसका निजी क्षेत्र की गतिविधि पर नकारात्मक प्रभाव पड़े। इस शोध पत्र का उद्देश्य सुधारों के महत्वपूर्ण क्षेत्र को संबोधित करना है। राजकोषीय सुधार, विभिन्न कर उपायों और सार्वजनिक व्यय के परिणामों का विश्लेषण करने के लिए संघ और राज्य सरकारों के सार्वजनिक वित्त पर राजकोषीय सुधारों के प्रभाव का मूल्यांकन करना। भारतीय अर्थव्यवस्था में राजकोषीय अनुशासन बनाए रखने के लिए राजकोषीय सुधारों की शुरुआत की गई है और भारतीय अर्थव्यवस्था ने इसे राष्ट्रीय स्तर पर सफलतापूर्वक पूरा किया है, हालांकि राज्य स्तर पर कुछ समस्याएं हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में राजकोषीय अनुशासन बनाए रखने के लिए राजकोषीय सुधारों की शुरुआत की गई है और भारतीय अर्थव्यवस्था ने इसे राष्ट्रीय स्तर पर सफलतापूर्वक पूरा किया है, हालांकि राज्य स्तर पर कुछ समस्याएं हैं। राजकोषीय सुधारों ने अर्थव्यवस्था के प्रबंधन के लिए प्रतिस्पर्धात्मकता और कुशल मोड की दिशा में केंद्र और राज्य दोनों सरकारों के लिए एक नई दृष्टि और मिशन लाया है। अध्ययन के लिए डेटा ज्यादातर भारत सरकार के बजट दस्तावेजों, आरबीआई द्वारा प्रकाशित केंद्र सरकार के वित्त पर लेखों, भारत सरकार के वित्त खातों, आरबीआई द्वारा प्रकाशित भारतीय अर्थव्यवस्था पर आंकड़ों की पुस्तिका से प्राप्त किया गया है।

परिचय

'राजकोषीय सुधार' सरकार की राजकोषीय नीतियों द्वारा राजकोषीय क्षेत्र में लाए गए परिवर्तनों को संदर्भित करता है। राजकोषीय नीति का संबंध सरकार के राजस्व और व्यय से है। राजकोषीय नीति का उद्देश्य वस्तुओं और सेवाओं की कुल मांग को बढ़ावा देना, मूल्य स्तर को नियंत्रित करना और अर्थव्यवस्था की आर्थिक वृद्धि को बढ़ाना है। महत्वपूर्ण राजकोषीय साधन कर, सरकारी व्यय, सार्वजनिक ऋण और सब्सिडी हैं। भारत ने 1950 से एक योजना प्रक्रिया शुरू की जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र को एक बड़ी भूमिका सौंपी गई और कराधान को सार्वजनिक वित्त का मुख्य आधार बनाया गया। इस प्रकार, स्वतंत्रता के बाद से भारत में राजकोषीय नीति के संचालन पर प्रारंभिक अनुभवजन्य साहित्य कराधान के पक्ष में अधिक झुका हुआ था, जो योजनाबद्ध विकास के लिए संसाधन जुटाने की रणनीति में इसके महत्व को दर्शाता है। स्वतंत्रता के बाद के वर्षों में, राजनीतिक और आर्थिक अनिश्चितता के धीरे–धीरे कम होने के साथ, विकास को प्रोत्साहित करना और तेज करना राजकोषीय नीति के प्राथमिक उद्देश्यों में से एक था। इस प्रकार, 1970 के दशक के दौरान राजकोषीय नीति ने अधिक समानता और सामाजिक न्याय प्राप्त करने पर ध्यान केंद्रित किया और इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए कराधान और व्यय दोनों नीतियों को नियोजित किया गया। उच्च सीमांत कर दरों से परिकल्पित सार्वजनिक व्यय का समर्थन करने के लिए आवश्यक राजस्व नहीं मिला। इस प्रकार अतिरिक्त कराधान और प्रशासित कीमतों में बढ़ोतरी के माध्यम से पर्याप्त मात्रा में संसाधन जुटाने के बावजूद प्राप्तियों में वृद्धि संवितरण में वृद्धि से पीछे रह गई। केंद्र सरकार की राजकोषीय स्थिति 1980 तक आरामदायक रही। लेकिन 1980 के दशक में राजकोषीय स्थिति में उल्लेखनीय गिरावट आई, विशेष रूप से दूसरी छमाही तक, जो बड़े राजकोषीय घाटे के साथ–साथ उच्च और लगातार राजकोषीय घाटे से चिह्नित थी। इस बड़े राजकोषीय घाटे का बाहरी क्षेत्र पर कुछ प्रभाव पड़ा जो 1990 के दशक की शुरुआत में चालू खाता घाटे के बढ़ने में परिलक्षित हुआ। इसलिए, भारतीय नीति निर्माताओं को 1991–92 में आर्थिक सुधार उपायों के एक भाग के रूप में राजकोषीय सुधारों की प्रक्रिया शुरू करने की आवश्यकता महसूस हुई। राजकोषीय क्षेत्र सुधार 1991 के संकट के बाद सरकार द्वारा उठाए गए व्यापक आर्थिक स्थिरीकरण और सुधार कार्यक्रम का अभिन्न और सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा थे।

मुख्य शब्दः – राजकोषीय सुधार, राजकोषीय प्रणाली, कर सुधार, राजकोषीय अनुशासन, व्यय सुधार

भारत में राजकोषीय प्रणाली

राजकोषीय प्रणाली उस तंत्र को संदर्भित करती है जिसके माध्यम से सरकार और उसके निकायों के लिए वित्तीय संसाधनों यानी राजस्व और पूंजीगत संसाधनों को प्राप्त किया जाता है और ऐसे संसाधनों के आवंटन का पैमाना और पैटर्न निर्धारित किया जाता है। भारतीय राजकोषीय प्रणाली भारत के संविधान पर आधारित है जिसका चरित्र संघीय है। संविधान केंद्र और राज्य सरकार के बीच राजस्व, व्यय और उधार लेने की शक्ति के वितरण से संबंधित विस्तृत और जटिल व्यवस्था करता है। भारतीय संविधान ने केंद्र और राज्य सरकार की शक्तियों को तीन सूचियों में विभाजित किया हैः एक संघ सूची, एक राज्य सूची और एक समवर्ती सूची। संघ सूची में 97 आइटम शामिल हैं जिन पर संसद के पास कानून बनाने की विशेष शक्ति है, जिसमें रक्षा, परमाणु ऊर्जा, रक्षा उत्पादन, विदेशी मामले, रेलवे, राष्ट्रीय राजमार्ग, समुद्री, शिपिंग और नेविगेशन, वायुमार्ग, डाक और तार, मुद्रा और

विदेशी जैसे आइटम शामिल हैं। विनिमय, विदेशी और अंतरराज्यीय व्यापार, महत्वपूर्ण उद्योग, राष्ट्रीय महत्व के संस्थान आदि। राज्य सूची में 66 आइटम शामिल हैं और राज्यों के पास व्यक्तिगत रूप से आइटमों पर कानून बनाने का विशेष अधिकार है, जिसमें सार्वजनिक व्यवस्था, पुलिस और न्याय प्रशासन, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, वन, मत्स्य पालन और अन्य उद्योग जैसे आइटम शामिल हैं। समवर्ती सूची में 47 आइटम शामिल हैं जिनमें वाणिज्यिक और औद्योगिक एकाधिकार, श्रम विवाद, सामाजिक सुरक्षा, दान और विवाह और तलाक और सामाजिक नियोजन आदि जैसे सामाजिक कानून शामिल हैं, जिन पर दोनों सरकारें कानून बना सकती हैं। सरकार के राजस्व के स्रोतों में, कराधान प्रमुख स्रोत है, संविधान के अनुच्छेद 265 में विशेष रूप से कहा गया है कि कानून के अधिकार के अलावा कोई भी कर लगाया या एकत्र नहीं किया जाएगा। अनुच्छेद 246 के तहत संविधान की सातवीं अनुसूची में संघ और राज्यों की कराधान शक्तियों का स्पष्ट सीमांकन है। तेरह कर हैं जो संघ सूची में सूचीबद्ध हैं। राज्य सूची में उन्नीस कर सूचीबद्ध हैं। राज्यों द्वारा लगाए और एकत्र किए गए करों के अलावा, संविधान ने संघ सूची के कुछ करों के राजस्व को आंशिक या पूर्ण रूप से राज्यों को आवंटित करने का प्रावधान किया है, जैसा कि निम्नलिखित श्रेणियों में सूचीबद्ध है:

1. वे शुल्क जो केंद्र सरकार द्वारा लगाए जाते हैं लेकिन राज्यों द्वारा एकत्र और विनियोजित किए जाते हैं।
2. वे कर जो संघ द्वारा लगाए और एकत्र किए जाते हैं, लेकिन जिनकी संपूर्ण आय संसद द्वारा निर्धारित अनुपात में राज्यों को सौंपी जाती है।
3. आय और संघ उत्पाद शुल्क पर केंद्रीय कर संघ द्वारा लगाए और एकत्र किए जाते हैं, लेकिन निर्धारित तरीके से राज्यों के साथ साझा किए जाते हैं।
4. मिल–निर्मित वस्त्रों, चीनी और तम्बाकू पर अतिरिक्त उत्पाद शुल्क की आय, जो इन वस्तुओं पर राज्य बिक्री करों के प्रतिस्थापन में 1957 से संघ द्वारा लगाई जाती है, को पूरी तरह से राज्यों के बीच इस तरह से वितरित किया जाता है कि इससे उनकी पूर्व आय की गारंटी हो सके।

व्यय शक्तियों के वितरण के मामले में, "केंद्र सरकार के कार्य वे हैं जो व्यापक आर्थिक स्थिरता, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और संबंधों को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं, और जिनका एक से अधिक राज्यों पर प्रभाव पड़ता है। जहां तक केंद्र सरकार की उधार लेने की शक्तियों का सवाल है, यह संविधान के अनुच्छेद 292 द्वारा विनियमित है। संविधान का अनुच्छेद 292 भारत सरकार को भारत की समेकित निधि, यानी केंद्र के संसाधनों की सुरक्षा पर उधार लेने का अधिकार देता है; केवल ऐसी सीमाओं के अधीन जो संसद कानून द्वारा लगा सकती है। भारत सरकार आंतरिक और बाह्य रूप से उधार ले सकती है। संविधान मानता है कि इसके डिज़ाइन, कर शक्तियों के असाइनमेंट और व्यय कार्यों के कारण केंद्र और राज्य सरकारों के बीच व्यय की आवश्यकता और राजस्व बढ़ाने की क्षमताओं के बीच असंतुलन पैदा होगा। विभिन्न स्तर की सरकारों के बीच असंतुलन ऊर्ध्वाधर और उपराष्ट्रीय स्तर की विभिन्न इकाइयों के बीच क्षैतिज दोनों हो सकता है (राव और सिंग, 2001)। इस असंतुलन को ठीक करने के लिए, संविधान ने वित्त आयोग के माध्यम से केंद्र और राज्यों से वैधानिक वित्तीय हस्तांतरण की व्यवस्था की। राज्यों को केंद्रीय करों के आवंटन की सिफारिश करने के लिए हर पांच साल में वित्त आयोग का गठन किया जाता है।

भारत में राजकोषीय क्षेत्र में सुधार

राजकोषीय नीति के तहत सरकार वांछनीय उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए राजकोषीय उपकरणों का उपयोग करती है। दूसरे शब्दों में, राजकोषीय नीति सरकार के कराधान, व्यय और उधार निर्णय जैसे उपकरणों से संबंधित है। इसलिए, केंद्र सरकार की राजकोषीय स्थिति उसकी कराधान नीति, सार्वजनिक व्यय की वृद्धि और पैटर्न और सार्वजनिक उधार लेने की प्रक्रिया के माध्यम से निर्धारित होती है। इस प्रकार राजकोषीय सुधारों में कर–सुधार, व्यय सुधार और केंद्र सरकार की उधार प्रक्रिया में सुधार शामिल हैं।

कर सुधार

सार्वजनिक राजस्व बढ़ाने के लिए, मुख्य ध्यान कराधान सुधारों पर रहा है। कर संरचना में सुधार का पहला व्यापक प्रयास जॉन मथाई की अध्यक्षता में भारत सरकार द्वारा नियुक्त कराधान जांच आयोग (टीईसी) द्वारा किया गया था। आयोग ने आयकर के संबंध में कई सिफारिशें कीं, जिनमें से कुछ व्यापक संरचना से संबंधित थीं, जबकि अन्य कराधान में आय की कुछ श्रेणियों को शामिल करने और बाहर करने, आर्थिक नीति के उद्देश्यों को बढ़ावा देने के लिए रियायतें देने जैसे मामलों से संबंधित थीं। 2 मार्च, 1970 को सरकार ने न्यायमूर्ति के.एन. की अध्यक्षता में प्रत्यक्ष कर जांच समिति का गठन किया। वांचू को अध्यक्ष नियुक्त किया गया। समिति ने अन्य बातों के साथ–साथ कर चोरी की समस्या पर विचार किया और कर चोरी की बुराई से लड़ने के लिए विभिन्न उपाय सुझाए। समिति द्वारा की गई सिफारिश को प्रभावी करने के लिए, भारत सरकार ने कराधान कानून (संशोधन) अधिनियम, 1975 लागू किया।

भारत सरकार द्वारा 19 जुलाई 1976 को श्री एल.के. की अध्यक्षता में अप्रत्यक्ष कराधान जांच समिति की स्थापना की गई थी। झा से अप्रत्यक्ष कर प्रणाली की मौजूदा संरचना की समीक्षा करने को कहा। समिति ने उत्पाद शुल्क के प्रतिकूल प्रभाव से निपटने के लिए विनिर्माण स्तर पर मूल्य वर्धित कर (वैट) लागू करने की सिफारिश की, जिसे मानवैट कहा जाता है। हालाँकि, इसे 1986–87 तक लागू नहीं किया गया था। 1987 में संशोधित मूल्य

वर्धित कर प्रणाली (एमओडीवीएटी) की शुरूआत के माध्यम से कराधान की घटनाओं को कम करने के लिए एक व्यापक और व्यवस्थित प्रयास किया गया था। इसे कुछ वस्तुओं पर सीमित तरीके से पेश किया गया था और कवरेज को धीरे–धीरे वर्षों में बढ़ाया गया था . इसके अलावा, भारत सरकार ने 29 अगस्त, 1991 के अपने संकल्प के माध्यम से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष करों की संरचना की जांच करने के लिए राजा जे. चेलैया की अध्यक्षता में विशेषज्ञों की एक समिति का गठन किया। समिति ने दिसंबर 1991 में अंतरिम रिपोर्ट और जनवरी में अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की। 1993. कर कानून के सुचारू और उचित प्रशासन के लिए और कर संग्रह में सुधार के लिए, वित्त मंत्री द्वारा सितंबर 2002 में वित्त और कंपनी मामलों के मंत्री के सलाहकार विजय केलकर की अध्यक्षता में दो टास्क फोर्स की स्थापना की गई थी। टास्क फोर्स ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष करों से संबंधित पहलुओं पर अपनी सिफारिशें दी थीं जैसेः (ए) व्यक्तिगत आयकर के लिए छूट सीमा को दोगुना करना, (बी) व्यक्तियों द्वारा प्राप्त इक्विटी पूंजीगत लाभ और लाभांश पर करों को समाप्त करना, (सी) आगे बढ़ना उत्पाद शुल्क और सीमा शुल्क में दोहरी दर संरचना, (ई) न्यूनतम वैकल्पिक कर की समाप्ति। इसे 2003–04 में लागू किया गया था. देश में एक कुशल और सामंजस्यपूर्ण उपभोग कर प्रणाली के लिए 2010–11 में वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) लागू किया गया था। जीएसटी में राष्ट्रीय स्तर पर वस्तुओं के विनिर्माण, बिक्री और उपभोग के साथ–साथ सेवाओं पर व्यापक अप्रत्यक्ष कर लगाने का प्रस्ताव है। जीएसटी का उद्देश्य भारत को विश्व स्तरीय कर प्रणाली देना और कर संग्रह में सुधार करना है। जीएसटी में बदलाव एक गेम–चेंजिंग कर सुधार उपाय होगा जो कर राजस्व में उछाल, विकास में तेजी लाने और कई सकारात्मक बाह्यताओं के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देगा।

व्यय सुधार

व्यय समस्या की गंभीरता को पहचानते हुए, 1987–88 (आर्थिक सर्वेक्षण, 1986–87) के लिए सभी केंद्रीय सरकारी विभागों के बजट के निर्माण के दौरान शून्य–आधार बजटिंग की एक प्रणाली शुरू की गई थी। गैर–विकास व्यय में वृद्धि को कम करने की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए, सरकार ने 2000 में एक व्यय सुधार आयोग की स्थापना की। व्यय सुधार आयोग द्वारा पहचाने गए मुख्य क्षेत्रों में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा बफर स्टॉक का निर्माण और उर्वरक सब्सिडी को कम करना शामिल था। चरणबद्ध तरीके से नियंत्रणों को ख़त्म करना। ग्यारहवें वित्त आयोग ने केंद्र और राज्य सरकारों के सार्वजनिक व्यय के रुझान और संरचना की जांच की और व्यय दक्षता में सुधार और बजटीय घाटे को नियंत्रित करने के लिए कई उपाय सुझाए। ग्यारहवें वित्त आयोग के अनुसार, राजस्व वृद्धि के साथ–साथ, सार्वजनिक वित्त के पुनर्गठन के लिए व्यय पक्ष में भी संरचनात्मक बदलाव की आवश्यकता होगी। जबकि जोर संपीड़न पर होना चाहिए, व्यय की संरचना को प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल, जल आपूर्ति, स्वच्छता, सड़कों और पुलों और अन्य बुनियादी ढांचे जैसे प्राथमिकता वाले क्षेत्रों के पक्ष में सीमित करने की आवश्यकता होगी। जिन वस्तुओं पर कड़ी लगाम लगाने की आवश्यकता होगी वे हैं वेतन और पेंशन, ब्याज भुगतान और सब्सिडी। योजना व्यय के वित्तपोषण के तरीके में भी आमूल–चूल परिवर्तन करना होगा। केंद्र और राज्य सरकारों के स्तर पर व्यय की प्रवृत्ति और संरचना की जांच करने के बाद, बारहवें वित्त आयोग ने निम्नलिखित तर्ज पर इसके पुनर्गठन की सिफारिश की। "व्यय के पुनर्गठन में, आर्थिक गतिविधियों में सरकारी हस्तक्षेप के बुनियादी उद्देश्यों के साथ–साथ केंद्रीय और उप–राष्ट्रीय सरकारों के बीच जिम्मेदारियों के असाइनमेंट के बुनियादी उद्देश्यों के प्रति सम्मान बनाने की आवश्यकता है। सरकारी सेवाओं की गुणवत्ता, पहुंच और प्रभाव के संदर्भ में सरकारी व्यय को परिणाम से जोड़ना भी महत्वपूर्ण है। यह सुविधाजनक होगा यदि सरकार कई क्षेत्रों में संसाधनों को कम फैलाने के बजाय अपनी प्राथमिक जिम्मेदारियों पर अधिक ध्यान केंद्रित करती है जहां निजी क्षेत्र आवश्यक सेवाएं प्रदान कर सकता है।

उधार लेने की प्रक्रिया में सुधार

अनुच्छेद 292 के तहत केंद्र की कार्यकारी शक्ति को भारत के भीतर या बाहर, भारत की संचित निधि की सुरक्षा पर, ऐसी सीमाओं के भीतर, यदि कोई हो, उधार लेने तक विस्तारित किया गया है, जो समय–समय पर तय की जाती हैं। संसद। भारत सरकार आंतरिक और बाह्य दोनों तरह से भारी उधार लेती है। भारत सरकार ने 15 जनवरी, 1981 को उत्पादक उद्देश्यों के लिए बेहिसाब धन को व्यवस्थित करने के लिए विशेष वाहक बांड की योजना की घोषणा की। सार्वजनिक उपयोग के लिए निजी बचत जुटाने के लिए, पूंजी निवेश बांड 28 जून, 1982 को पेश किए गए थे। दस साल की परिपक्वता अवधि वाले इन बांडों पर 7 प्रतिशत की ब्याज दर थी। देश की राजकोषीय स्थिति को मजबूत करने के लिए, बजट घाटे के वित्तपोषण के साधन के रूप में तदर्थ ट्रेजरी बिल की प्रणाली को बंद कर दिया गया। 1 अप्रैल, 1987 से इस प्रणाली को वेज एंड मीन्स एडवांसेज (डब्ल्यूएमए) प्रणाली द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया। वित्तीय संस्थानों और अन्य लोगों को अल्पकालिक निवेश का अवसर प्रदान करने के लिए, 182–दिवसीय ट्रेजरी बिल पेश किए गए। 1991 के वित्तीय संकट के बाद, अप्रैल 1992 की मौद्रिक नीति ने बाजार संचालन की शुरुआत करके आंतरिक ऋण प्रबंधन के लिए एक नए दृष्टिकोण की शुरुआत की। भारत सरकार द्वारा दिनांकित रुपया प्रतिभूतियों और लंबी अवधि के ट्रेजरी बिलों का अवशोषण और इसे 1992–93 में उधार कार्यक्रम में समग्र कमी द्वारा सुगम बनाया जाना था। ये चक्रवर्ती समिति और नरसिम्हा समिति की सिफारिशों के अनुरूप थे। उधार लेने की प्रक्रिया में एक और

उल्लेखनीय सुधार 1993–94 में बाजार उधार और अन्य आंतरिक देनदारियों यानी छोटी बचत, भविष्य निधि आदि पर ब्याज दर के बीच अंतर को कम करना था। इसके अलावा 1994–95 में, परिपक्व होने वाले ट्रेजरी बिलों और जीरो कूपन बांडों के रूपांतरण में ऋण को शामिल किया गया और 'अन्य आंतरिक देनदारियों' पर ब्याज दर में वृद्धि की गई।

राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन अधिनियम (एफआरबीएम अधिनियम)

राजकोषीय संतुलन को प्रभावी ढंग से लाने के लिए राजकोषीय संतुलन को कानूनी रूप से लागू करना बेहतर समझा गया। भारत ने देश की राजकोषीय प्रणाली के विभिन्न पहलुओं की जांच करने और सरकार (केंद्र सरकार) की राजकोषीय जिम्मेदारी पर एक मसौदा कानून की सिफारिश करने के लिए राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून पर एक समिति के गठन के साथ वर्ष 2000 में इस कार्रवाई का विकल्प चुना। इसके बाद, दिसंबर, 2000 में राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन (एफआरबीएम) विधेयक लोकसभा में पेश किया गया। एफआरबीएम विधेयक ने अपने महत्वपूर्ण उद्देश्यों को इस प्रकार बताया थाः

1. राजकोषीय घाटे को समाप्त करके पर्याप्त राजस्व अधिशेष प्राप्त करने के लिए राजकोषीय प्रबंधन में अंतर–पीढ़ीगत इक्विटी और दीर्घकालिक व्यापक आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए केंद्र सरकार को जिम्मेदार बनाना;
2. मौद्रिक नीति के प्रभावी संचालन में राजकोषीय बाधाओं को दूर करना;
3. केंद्र सरकार की उधारी, ऋण और घाटे पर लगाई गई सीमाओं के माध्यम से राजकोषीय स्थिरता के अनुरूप विवेकपूर्ण ऋण प्रबंधन सुनिश्चित करना;
4. केंद्र सरकार के वित्तीय संचालन में अधिक पारदर्शिता सुनिश्चित करना।

मूल विधेयक में राजस्व घाटे और राजकोषीय घाटे में कमी के लिए निश्चित समय–सारणी की सिफारिश की गई थी। मूल एफआरबीएम विधेयक का एक पतला संस्करण (लक्ष्य और समय सीमा के संदर्भ में) जुलाई, 2004 में संसद द्वारा पारित किया गया था। एफआरबीएम अधिनियम 5 जुलाई, 2004 से प्रभावी हो गया। अधिनियम के लिए 2008–09 तक राजस्व घाटे को समाप्त करना आवश्यक था। . इसका मतलब है कि 2008–09 के बाद से केंद्र सरकार को अपने सभी राजस्व व्यय अपनी राजस्व प्राप्तियों से ही पूरे करने होंगे। कोई भी उधार केवल पूंजीगत व्यय, ऋणों के पुनर्भुगतान, उधार और नए निवेश को पूरा करने के लिए होगा। अधिनियम 2008–09 के बाद राजकोषीय घाटे पर 3 प्रतिशत की सीमा अनिवार्य करता है। यह एक उचित सीमा है जो सरकार को राजकोषीय स्थिरता से समझौता किए बिना अर्थव्यवस्था में क्षमता निर्माण के लिए महत्वपूर्ण लाभ उठाने की अनुमति देती है। राजकोषीय घाटे और राजस्व घाटे में कमी के लिए वार्षिक लक्ष्य निर्धारित करने के अलावा, एफआरबीएम कानून राजकोषीय संचालन में अधिक पारदर्शिता प्रदान करता है। वार्षिक लक्ष्य तैयार करने और राजकोषीय नीति की रूपरेखा तैयार करने के लिए केंद्र सरकार द्वारा डॉ. विजय केलकर की अध्यक्षता में एक टास्कफोर्स का गठन किया गया था। राजकोषीय स्थिति की त्रैमासिक समीक्षा और भारतीय रिजर्व बैंक से सीधे उधार को विनियमित करके, एफआरबीएम अधिनियम राजकोषीय अनुशासन के माध्यम से व्यय को नियंत्रित करने का प्रयास करता है। एफआरबीएम कानून ने अब वित्त मंत्री के लिए राजकोषीय स्थिति पर संसद में वार्षिक वक्तव्य देना अनिवार्य कर दिया है, जिसमें केंद्र पर डाले गए राजकोषीय दायित्वों को पूरा करने में किसी भी विचलन की व्याख्या की जाएगी। एफआरबीएम अधिनियम के लागू होने के बाद, केंद्र सरकार के घाटे में गिरावट का रुझान शुरू हो गया है।

निष्कर्ष

राजकोषीय सुधार प्रक्रिया आर्थिक सुधारों का प्रमुख घटक थी जिसका मुख्य उद्देश्य सकल घरेलू उत्पाद के संबंध में घाटे और ऋण के आकार में कमी लाना था। राजकोषीय सुधार प्रक्रिया कराधान सुधारों पर मुख्य फोकस के साथ शुरू की गई थी। केंद्र सरकार द्वारा समय–समय पर किए गए महत्वपूर्ण कर सुधार सीमांत कर दर में कमी से संबंधित हैं। इसके अलावा, केंद्रीय वस्तु कर यानी केंद्रीय उत्पाद शुल्क और सीमा शुल्क में भी कुछ बदलाव किए गए हैं। व्यय सुधार आयोग की सिफारिशों के कार्यान्वयन के माध्यम से व्यय वृद्धि पर अंकुश लगाने के प्रयास शुरू किए गए। भारत सरकार की दिनांकित रुपया सुरक्षा और दीर्घकालिक ट्रेजरी बिलों के अवशोषण के संबंध में बाजार संचालन शुरू करके आंतरिक ऋण प्रबंधन नीति को लागू करने के लिए कई नीतिगत बदलाव भी किए गए।

संदर्भ

1) आचार्य, शंकर, अनअकाउंटेड इकोनॉमी इन इंडियाः ए क्रिटिकल रिव्यू ऑफ सम रीसेंट एस्टिमेट्स', इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 3 दिसंबर, 1983.
2) 'थर्टी इयर्स ऑफ टैक्स रिफॉर्म इन इंडिया', इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 14 मई, 2005
3) आचार्य, शंकर एंड एसोसिएट्स, 1985, एस्पेक्ट्स ऑफ द ब्लैक इकोनॉमी इन इंडिया, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक फाइनेंस एंड पॉलिसी, नई दिल्ली।
4) अहलूवालिया, एम.एस., 2002, '1991 से भारत में आर्थिक सुधारः क्या क्रमिकतावाद ने काम किया है?', द जर्नल ऑफ इकोनॉमिक पर्सपेक्टिव्स, खंड 16, संख्या 3, 67–88।

5) बसु, कौशिक, 1983, 'द बजटः ए क्रिटिक ऑफ इट्स रेशनेल', इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 19 मार्च।
6) भगवती, जे. एंड पी. देसाई, 1970, भारतः प्लानिंग फॉर इंडस्ट्रियलाइजेशन, नई दिल्लीः ऑक्सफोर्ड विश्व – विद्यालय का मुद्रणालय।
7) भगवती, जे. और टी.एन. श्रीनिवासन, 1993, इंडियाज़ इकोनॉमिक रिफॉर्म्स, नई दिल्ली।

डॉ0 योगेश
पोस्ट– अर्थशास्त्र के सहायक प्रोफेसर,
जीसीडब्ल्यू
रोहतक

33

ROLE OF RUSTIC CHARACTERS IN THOMAS HARDY's NOVELS

Sahil Patil

Abstract

Thomas Hardy was one of the most popular Novelist of Victorian age. He seems , like Meredith, to belong to the present rather than to a past age. Hardy makes man an insignificant part of the world. His writings are reflective of the great movement from the Victorian to the modern age. His famous novels are Under the Greenwood Tree, A Pair of Blue Eyes, Far From the Madding Crowd, The Return to the Native, The Woodlanders, Tess of D' Urbervilles, Jude the Obscure etc. He focuses on social problems like unjust marriage law, superstition, inequality, proprieties, orthodoxy and patriarchy by his Novels. Hardy tried tirelessly in order to change the male dominated society and to bring out the desired changes for the mutual benefit of women as well as man. He is hardly a realist and is utter pessimist. The Victorian society of that century was rigid and uncompromising one towards women. Friendship between man and women was not acceptable in that time. It was considered that women education is a sin against God. Live in relationship is a social crime. Thomas Hardy showed his sympathy to the women in Victorian age that faces problems of unhappy marriage life, divorces, deception in love, merciless fate, hypocrisy, mistreatment and orthodoxy. Women were considered an inferior thing who had no any kind of rights. Hardy tried to change the views of male-dominated Society for the benefit of women through his Novels. Rustic characters also have a special place in Hardy's novels. In fact Hardy, through his novels, showed sympathy to rustic, poor and weak characters.(1)

Introduction

His thoughts on lower middle class people= No other writer portrayed middle class people very well as Hardy did. The characters more near to Hardy's heart were those of country-folk whom he loved and understood better. He does not depict them individually but depicts them collectively. It is one of the unique qualities of Hardy. The individual characteristics of these country-men are of little importance to us and we cannot know them fully until we know their manners and society in which they live and move. These country-folk include the farmers, furze cutters, labourers, servants, cottagers and others; and their works and views are an asset in our comprehension of the Wessex life, for they are integrated with the scene. He propounded a fictional place Wessex in his novels.(2)

Vividly portrayal of characters= The foolish and seemingly useless talk of the country-talk is often pregnant with practical wisdom. Mostly Hardy's novels are replete with practical wisdom. These characters are drawn externally. They are not a study from within and can be clearly distinguished from the major and important characters who have been depicted spiritually and psychologically. But Hardy has tried to depict their views and opinions in totality so as to exhibit to us their native culture and upbringing. Thus he cleverly portrayed his characters.

Scientifically but also imaginatively drawn= These characters not being depicted individually but only in groups, have a family likeness. No other writer had such kind of qualities except Dickens. They in their dress and the color of their bodies, in their habits and manners and in their quaint and dialectical speech, are truly rustic but while sketching them the author has lent special charm to them. He has made them more attractive than what they may be in actuality. He also uses the grotesqueries of the people with a peculiar literary flavor by which they do not seem essentially rustic.

Their philosophical comments on characters= It is because of this literary and poetic flavor that these characters are saved from falling into vulgarity and obscenity. We laugh at the remarks and activities of these people not because our sense of humor is vulgar, but rather because of the philosophic heights they arrogate to themselves. In their acts they are not only childish but are also childlike; and sometimes in their foolish wisdom they drop fine phrases and sagacious utterances.(3) The logical arguments of great philosophers seem juvenile in comparison with the utterances of some of Hardy's rustic characters: “It is none too easy a matter, is life, take it gently or take it rough”. Here Hardy powerfully reminds us of one of those methods which George Eliot had already used with success in her earlier novels as in The Mill on the Floss, Silas Marner, but with some difference; the characters of George Eliot are intellectualized with the various theories of their author while the characters of Hardy are truer to their soil and are less, or rather not at all, intellectualized. They are there merely to comment, not to theorize.

A set of happy and lucky fellows= These characters, when

they glow philosophic, are to be seen in their true colors and become the source of the laughter. The truths they propound are such as are commonplace and it is the assumption of a peculiar philosophic pose that they assume while propounding these ordinary truths that invariably excites our laughter. But this humor given at the cost of these rustic characters has no tinge of the somberness which characterizes Hardy's humor in general. It is fundamentally jovial and genial without the touch of sarcasm.(4) The humorous role assigned to these characters has one important purpose in the construction of Hardy's tragedies. It serves as a sort of 'tragic relief'. His rustic characters prepare a sort of humorous background to the serious and somber and drama of humanity. They may be compared with the gravediggers of Hamlet. Most of their fun, as also of the gravediggers, is derived from their humorous comment upon coffins and funerals.

Master of art of characterization= Thomas Hardy was a master of characterization. Some critics believe that some of his characters are among the immortal figures of literature. He often chooses his characters from the lower strata of society. It is noteworthy that Hardy's female characters are more forceful than male characters.

They serve as a chorus to Hardy's tragedies(5)= One of the important functions of these rustic characters is to comment upon the action of the story and the characters of the important figures. Their function is much the same as that of the Chorus in the Greek dramas. The imagination of Hardy's portrayal regarding characters is of fine quality. Like the Greek Chorus, they are indicative of the unceasing movement of life, which goes on forever. The rustics show how life can be smooth and happy if lived on a certain level, without entering into conflict with nature. The actual life of the world consists not merely of Tesses and Boldwoods and Henchards and Sue but also of those thousands of people who fill up the gap between the arrival of a Tess and Jude in this world.(6) The important and major characters come and go away after playing their part on this earth but these lower characters of Hardy are the true representatives of the earth and the earthly life which does not stop even for a moment.

References

1.https://en.wikipedia.org/wiki/Thomas_Hardy

2.Arihant UGC net/jrf/set English paper 2 book by Mridula Sharma, Ajeet Singh Jadaun, Tanveen Kaur, Dr. Chakreswari Dixit, Chhavi Kumar, Arihant Publication Limited, Edition 2022, Chapter 17, The Victorian Age(1837-1901),(page no. 433)

3. Venus English Exam Notes, Varun Enterprises(Regd.), Edition 2019, Edited by Team of distinguished educationists, Unit 4, The Mayer of Casterbridge(M.A. sem 2nd , M.D. University),(page no. 61)

4. English Literature Its History And Its Significance by William J. Long, Edition 1995, Kalyani Publishers, chapter 11 The Victorian Age (page no. 518)

5. Jude The Obscure A Critical Evaluation by Dr. S. Sen, Kalpana Rajaram, Dr. G.S. Mansukhani, Second Revised Edition 1987, Chapter 2, Introduction to Thomas Hardy(1840-1928)(page no. 51,52,53)

6.https://www.goodreads. com/ author/ show/15905. Thomas_Hardy

Sahil Patil

S/o Arvind Kumar Patil

Vidya Nagar, Mehem Road, Dr. Kajal wali gali near Ravinder Shop, Bhiwani, Haryana

8901027630

· Pin Code 127021

34

संथाल जनजाति का सामान्य परिचय : झारखण्ड के संदर्भ में।

शकुन्तला बेसरा

सारांश

विविधता में एकता हमारे भारत देश की सबसे बड़ी विशेषता है। उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में हिन्द महासागर तट और पूरब में बंगाल की खाड़ी से लेकर पश्चिम में अरब सागर तक फैले हुए इस विशाल भूखण्ड भारत भूमि पर कई जातियों तथा जनजातियों के लोग निवास करते हैं। विभिन्न धर्मों को मानने वाले लोग वापस में एक दूसरे के प्रति भाईचारा और प्रेम का आदर्श भावना को अपने हृदय में संजोए रखते है।

इस विशाल देश के 28 राज्यों में ऐसे कई राज्य है, जिसमें जनजातियों की बहुलता है। इन्हीं राज्यों में से एक हमारा झारखण्ड भी है। जहाँ 32 जनजाति के लोग निवास करते हैं। सभी जनजातियों की अपनी भाषा और अपनी संस्कृति है। इन्हीं जनजातियों में एक संथाल जनजाति भी है। यह प्रोटोऑस्ट्रोलॉयड प्रजाति की श्रेणी में आता है। यह मुण्डा भाषा समुदाय की एक शाखा (ऑस्ट्रिक भाषा परिवार) के रूप में मानी जाती है।

संथाल जनजाति देश की एक बड़ी आबादी वाली जनजाति है। संथाल जनजाति झारखण्ड एवं बिहार राज्य के लगभग सभी जिलों मे बसी हुई है, किन्तु संथाल परगना इनका प्रमुख निवास स्थान है। इस क्षेत्र में संथालों की संख्या सबसे अधिक है।

संभवतः इसीलिए इस क्षेत्र को 'संथाल परगना' कहा जाता है। संथालों की जनसंख्या झारखण्ड के अलावे बिहार, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, मध्य प्रदेश और आसाम के विभिन्न स्थानों में है। फिर भी सबसे प्रमुख संथाल जनपद झारखण्ड राज्य का संथाल परगना ही है। संथाल परगना के उत्तरी भाग में पूर्णिया एवं भागलपुर, दक्षिणी भाग में धनबाद एवं बर्द्धमान, पश्चिमी भाग में मुंगेर एवं गिरीडीह एवं पूर्वी भाग में मालदा एवं मुर्शिदाबाद है। यह क्षेत्र ऊँचे पठार पर स्थित है। उत्तर से दक्षिण तक पहाड़ी श्रेणियाँ है। इस क्षेत्र की भूमि को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है – प्रथम – पहाड़ी भूमि, द्वितीय – चौरस भूमि तथा तृतीय – निचली भूमि। इस क्षेत्र के वनों में साल वृक्ष अधिक पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त आम, महुआ, सेमर एवं ऊँची भूमि पर बाँस बहुत मिलता है। राजमहल बहुत प्रसिद्ध पहाड़ी है जो लगभग पाँच सौ से आठ सौ फुट तक ऊँचा है।

संथाल लोग अपने को खरवार भी कहते हैं जो 'होर' (मनुष्य) शब्द से निकला है जिसका अर्थ मनुष्य ही है। संथाल जनजाति को संताल नाम से भी जाना जाता है, जो संस्कृत के समांत, अर्थात् सीमावर्ती शब्द से निकला हुआ माना जाता है जिससे संथालों की सीमा के व्यक्ति के तौर पर भी पहचान बनाती है।

बी0एस0 गुहा के अनुसार – यह जनजाति प्रोटोऑस्ट्रोलायड प्रजाति के समूह की है। संथाल साधारणतः नाटे कद के हुआ करते हैं; इनकी नाक चौड़ी और चिपटी होती है। ये बहुत परिश्रमी होते है। इनकी एक समृद्ध भाषा है जिसे 'संथाली' कहा जाता है। यह भाषा विश्व की प्राचीनतम भाषा "ऑस्ट्रिक" भाषा परिवार की है।

श्री सदर लैण्ड के अनुसार संथाल लोग सन्त देश से आये थे, इस कारण ये लोग संथाल या सन्त देश के निवासी कहलाने लगे।

इस क्षेत्र में संथाल कब और कहाँ से आये निश्चित रूप से कहना मुश्किल है क्योंकि हजारों वर्षों से संथाल झारखण्ड के संथाल परगना के समतल भूमि पर आते रहे हैं। लोक कथाओं के आधार पर यह कहा जाता है कि वे आरंभ में 'बड़ा पहाड़' के निवासी थे। यह बड़ा पहाड़ कहा पर स्थित है, यह कह सकना भी कठिन है। बड़ा पहाड़ छोड़ते समय ये चम्पा पहुँचे और फिर सिल्दा पहुँचे।

शरतचन्द्र राय के अनुसार – ये लोग पहले पंजाब में रहते थे। वहीं से कालक्रमानुसार आजमगढ़, बुन्देलखण्ड, जयपुर, आगरा, पाँचाल, कौशल, विदेह आदि का भ्रमण करते हुए मगध से दक्षिणी बिहार वर्तमान झारखण्ड में आये। झारखण्ड से कुछ लोग उड़ीसा, बंगाल, असम और त्रिपुरा में जाकर बस गए।

संथाल जनजातियों का गाँव 'आतो/आतु' कहलाता है। गाँव ऐसे स्थानों में होता है जहाँ कोई प्राकृतिक जलाशय हो। इनके गाँव काफी साफ–सुथरे और तरीके के होते हैं। इनके घर एक दूसरे से सटे होते है। मकानों को मिट्टी से बनाया जाता है। धनी लोग अब ईंट से भी मकान बनाने लगे हैं। संथाल अपने घरों को साफ–सुथरा रखने में न सिर्फ विशेष ध्यान देते है बल्कि इसके लिए वे सबसे प्रसिद्ध भी हैं।

घरों के दीवालों पर कलात्मक ढंग से फूलों और जानवरों के चित्र बने होते हैं जो इनकी कलात्मक रूचि और सौंदर्य प्रियता का परिचायक है। चित्रों में ज्यामितीय पुट भी मिलते हैं।

प्रत्येक संथाल गाँव का मुख्य केन्द्र स्थल है – माँझीथान, जाहेरथान तथा दाह संस्कार स्थल। गाँव का प्रमुख व्यकित मांझी कहलाता है। उसी के घर के आस–पास एक चौकोर तथा मजबूत चबूतरा होता है जिसे माँझीथान कहते हैं। यहाँ पर संथालों के पितर पत्थर के टुकड़ों के रूप में या सिन्दूर के टीकों के रूप में स्थापित होते हैं। गाँव की पंचायत बैठक यहीं हुआ करती है। इसे संथालों का सिंहासन बत्तीसी कहा जाता है।

जाहेर थान– जोहरथान गाँव से हटकर स्थित होती है। यह संथालों का 'पवित्र कुंज' है। यहाँ पर साल और महुए के कुछ पेड़ों के बीच प्रमुख देवी–देवताएँ संस्थापित रहते हैं।

दाह–संस्कार स्थल गाँव के अंतिम छोर पर किसी जलाशय के नजदीक दाह संस्कार स्थल होता है जहाँ पर दाह संस्कार क्रिया सम्पन्न किया जाता है।

संथाल लोग विवाह को 'बापला' कहते हैं। संथालों में 'महादेव बापला' अर्थात् शिवरात्रि के बाद ही विवाह किया जाता है लेकिन

वैशाख माह ज्यादा शुभ होता है।

विवाह की शुरूआत रायवार के द्वारा होती हैं तथा विवाह के पूर्व वर देखी, तिलक चढ़ी और टाका चाल की रस्में होती है। वधू मूल्य, जिसे पोन कहा जाता है से विवाह की बातें आगे बढ़ती है। अधिकतर विवाह पोन के माध्यम से ही सम्पन्न होता है, लेकिन विवाह के लिए निम्न विधियाँ भी देखी जाती है –

किरिङ बहु बापला, टुंकी दिपिल बापला, घर जावांय बापला, धारती जवांय बापला, किरिङ जावांय बापला, ठाट बापला या इतुद बापला, निर–बोलोक बापला, सांगा आदि।

पोन (वधू मूल्य) निर्धारित हो जाने पर विवाह की तिथि तय की जाती है। निर्धारित तिथि को वरपक्ष बारात लेकर आता है। वधू पक्ष वाले उन्हें गाँव के सीमावर्ती क्षेत्र में ही दराम दाक (स्वागत) करते हैं। बारात पक्ष अपने साथ भोजन का सामान लेते आते हैं और इसी सीमान पर खाना बनाकर खाते हैं और दोपहर बाद नाचने–गाते वधू के पिता के दरवाजे तक आते हैं। यहाँ पर 'जोगमांझी' विवाह सम्पन्न कराता है। वर–वधू की मांग पर सिन्दूर और मेड़हेत् साकोम पहनाता है।

सांस्कृतिक दृष्टिकोण से संथाल परम्परा बहुत ही प्रिय होते हैं। ये अपने पूर्वजों पर गर्व करते हैं तथा पर्वों, उत्साहों, नृत्य, लोकगीतों तथा किम्बदतियों को अपनी मूल्यवान पैतृक थाती समझते हैं। उन्हें अपने धनुषवाण और बांसुरी से अटूट प्रेम है। चाहे कितनी विपत्ति क्यों न आये वे उत्सवों के आयोजन पर नृत्य और संगीत को नहीं छोड़ते हैं इसलिए कोई भी त्योहार नृत्य एवं संगीत के बिना सम्पन्न नहीं होता है।

सामाजिक रीति–रिवाज के कारण ही संथाल जनजाति विश्व की प्राचीन एवं समृद्ध संस्कृति सिंधु सभ्यता का निर्माण करने में सफल हो सकी थी। इसकी चर्चा संथाल संस्कृति का वाचिक इतिहास 'कराम विनती' (सृष्टि गीत) में की गई है –

चाय चाम्पा लिली बिछी,
बादोली कोएण्डा लिखोन मोडहोन।

इसमें संथाल के पूर्वजों द्वारा चाय चाम्पा, बादोली, कोएण्डा आदि बारह राज्यों की स्थापना करने के सम्बन्धों में बातें कही गई है। इन गीतों में बार–बार चर्चा आती है,

"एयाय नय् दिशम" यानी सात नदियों वाला देश। सम्भवतः यह सप्त नदियों वाला देश ही सिंधु था।

संथाल समाज में पितृपक्षीय वंश परम्परा का प्रचलन है। जिसके अनुसार परिवार की परम्परा पिता की ओर चलती है।

तथा नातेदारी नियम पर आधारित सभी सामाजिक समूह परिवार, कुल, समूह, गोत्र पितृपक्षीय है।

संथाल जनजातियों का अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है। ये कुशल कृषक होते हैं। प्रायः संथाल परिवार के पास भूमि जरूर होता है। इनकी जमीने मुख्यतः दो तरह की होती है, खेत और बारी, खेतों में धान होता है और बारी में मकई, बाजरा, घंघरी, कुरथी, अरहर, सरसो और सब्जियाँ होती है।

संथाल जनजाति के धार्मिक विश्वास पर जीववाद, बोंगावाद, प्रकृतिवाद, यथार्थवाद, टोटम, टैबू, जादुई विश्वास, पूर्वज पूजा, बहुदेववाद की छाप है। धार्मिक विश्वास की दृष्टि से इनकी तीन श्रेणियाँ है :–

(प) बोंगा होड, (पप) साफा होड और (पपप) उम होड।

बोंगा होड सनातन संथालों को कहते हैं अर्थात् परम्परागत संथाल के बीच देवी–देवताओं, भूत–प्रेतों आदि की पूजा अर्चना का विशेष स्थान है। देवताओं में सबसे प्रमुख चांदो है। चांदो सूर्य को कहते हैं।

साफा होड़ सुधारवादी संथालों को कहते हैं। ये एक ही ईश्वर में विश्वास करते है तथा सात्विक ढंग से पूजा करते हैं।

उम होड़ ईसाई संथालों को कहते हैं। उम होड़ का अर्थ है 'नहाया हुआ आदमी'।

ये लोग परम्परागत बोंगा की उपासना नहीं करते और न ही जातीय– पर्व त्योंहारों में ही सम्मिलित होते हैं।

संथालों के सभी पर्व–त्योहार सामूहिक होते हैं, व्यक्तिगत नहीं। गाँव का नायके (पुजारी) सबकी ओर से व्रत रखता है और पूजा अर्चना करता है। संथालों के त्योहारों में एरोक (धान बुवाई के समय) हरियाड (फसल खेत में लगने पर) जानथाड़, करमा, सोहराय, सकरात, बाहा या सरहुल आदि प्रमुख त्योहार हैं।

संथालों में राजनैतिक प्रणाली पर राज्य विहीन, राजनीतिक व्यवस्था की छाप है। इनके बीच त्रिस्तरीय न्याय पद्धति है :– (प) गाँव परिषद, (पप) परगना परिषद तथा (पपप) शिकार परिषद। यह प्रत्येक गाँव में होता है जिसके सदस्य गाँव के सभी व्यस्क व्यक्ति होते हैं। परिषद के प्रमुख व्यक्ति– मांझी, परमानिक, जोग मांझी, जोग परमानिक तथा गोडैत है। इनके सम्मिलित समूह को मोडे होड यानी 'पाँच आदमी' कहा जाता है। मांझी और परमानिक के पद वंशानुगत होते हैं। मांझी गाँव का प्रधान होता है और पंचायत का मुखिया भी होता है। परमानिक गाँव का उप प्रधान है। जोग मांझी गाँव का सरदार कहलाता है और जोग परमानिक सहायक सरदार। सरदार और सहायक सरदार के पदों का सामाजिक चुनाव होता है। गोडैत संदेश वाहक या दूत का काम करता है। न्याय एवं दण्ड की व्यवस्था पंचो की सहमति पर आधारित है।

निष्कर्षः

संथाल जनजातियों में एक ही गोत्र के सदस्य आपस में भाई–बहन माने जाते हैं। जिसके कारण उनके बीच शादी–विवाह वर्जित होता है। साथ ही एक ही कुल समूह तथा परिवार वाले भी परस्पर यौन सम्पर्क नहीं करते। जब भी ऐसा मामला पंच के सामने लाया जाता है तब अपराधियों को 'बिटलाहा' यानी समूह (समाज) से अलग कर दिया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. झारखण्ड की जनजातियाँ, डॉ0 चतुर्भुज साहु, के0के0 पब्लिकेशन, 618, कटरा, इलाहाबाद–211002

2. झारखण्ड के आदिवासी, डॉ0 चन्द्रकान्त वर्मा, के0के0 पब्लिकेशन, 618, कटरा, इलाहाबाद–211002
3. झारखण्ड का इतिहास, महावीर सिंह त्यागी राजीव प्रकाशन, लालकुर्ती, मेरठ– 250001
4. झारखण्ड की रूपरेखा, डॉ राम कुमार तिवारी, शिवांगन पब्लिकेशन, शिव भवन कमलाकान्त रोड, रातु राँची–834001

शकुन्तला बेसरा
सहायक प्राध्यापिका (संताली)
जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा संकाय,
राँची विश्वविद्यालय, राँची।
मो0नं0–7645913037
Email-besra1989@gmail.com

35

भारत की भौगोलिक स्थिति : एक समीक्षा

पूजा

सारांश

एशिया में भारत सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थिति में है–पश्चिमी समुद्रों के पार अरब और अफ्रीका तथा पूर्वी समुद्रों के पार बर्मा, मलेशिया और इंडोनेशिया प्रायद्वीप इसके दृष्टिपथ पर है और उत्तर में हिमालय की पर्वत श्रृंखलाएं भारत को पृथक् किए हुए हैं। भारत भूमध्य रेखा के उत्तर में 8°4′ और 37°6′ उत्तरी अक्षांश और 68°7′ तथा 97°25′ पूर्वी देशान्तर के बीच स्थित है। दक्षिण–पश्चिम में अरब सागर और दक्षिण–पूर्व में बंगाल की खाड़ी है। उत्तर, उत्तर–पूर्व और पश्चिमोत्तर भागों में हिमालय पर्वत की श्रृंखलाएं हैं। दक्षिणी किनारा कन्याकुमारी हिन्द महासागर द्वारा सतत् प्रक्षलित होता रहता है। उत्तर से दक्षिण तक 3214 कि० मी० और पूर्व से पश्चिम तक 2900 कि० मी० क्षेत्र में व्याप्त भारत का सम्पूर्ण क्षेत्रफल 3,287,263 वर्ग कि० मी० है। इसकी पार्थिव सीमा 15200 कि० मी० और समुद्री तट 7516.5 कि० मी० है । बंगाल की खाड़ी में अण्डेमान निकोबार द्वीप और अरब सागर में लक्षद्वीप भारतीय क्षेत्र के अंग हैं। पश्चिम में इसकी सीमा पाकिस्तान, अफगानिस्तान से और पूर्व में म्यांमार (बर्मा) तथा बंग्लादेश से मिली हुई है। उत्तरी सीमा में चीन का सिक्यांग प्रदेश तिब्बत, नेपाल और भूटान सम्मिलित हैं।

मुख्य शब्द : भुगोल, अर्थव्यवस्था, समाज, क्षेत्र, अन्तर्राष्ट्रीय, एतिहासिक, संस्कृति आदि ।

भारत एक नजर में :

कर्क रेखा भारत के ठीक मध्य से गुजरती है। 82.5 की पूर्वी देशान्तर रेखा देश के लगभग मध्य से होकर गुजरती है। इससे पूर्व और पश्चिम के भागों के समय में प्रति देशान्तर 4 मिनट का अन्तर रहता है। ग्रीनविच रेखा से यह देश की प्रमाणिक समय निर्धारण देशान्तर रेखा भी है। प्रो. चिशोहमल के अनुसार, ''विश्व में केवल बर्मा को छोड़कर अन्य कोई भी ऐसा देश नहीं है, जिसको प्रकृति ने इतनी अच्छी तरह से परिसीमित किया हो जितना भारत को।'' भारत के सात प्रमुख भौगोलिक क्षेत्र है–

1ण उत्तरी पर्वत श्रृंखलाएं जिनमें हिमालय और उत्तर–पूर्व के पहाड़ों की श्रेणियां शामिल हैं,

2ण गंगा का मैदान,

3ण मध्यदेशीय अधित्यका,

4ण प्रायद्वीपीय पठार,

5ण पूर्वी समुद्र तट,

6ण पश्चिमी समुद्र तट,

7ण समुद्र और द्वीपों के सीमान्त भाग।

भारत की सतही भूमि का अधिकांश भाग पठारी प्रकृति में विकसित हुआ है। विस्तृत मैदान या तो चपटे हैं या 300 से 900 मीटर तक के क्षेत्रों में फैले दलदली क्षेत्र है। इनमें या तो वृत्ताकार पहाड़ियां है अथवा चपटे सिरे वाले कटके क्षेत्र है। ये प्रायः मध्यप्रदेश की अधित्यका और दक्षिण के प्रायद्वीपीय पठारों में स्थित है।

भारत के कछारी मैदान अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। गंगा के समतल मैदान में प्रकृति की हरियाली मीलों तक फैली है। भारत में सात प्रमुख पर्वतीय श्रृंखलाएं हैं–

1. हिमालय श्रेणियां,
2. उत्तर और पूर्व की सीमा में फैली पटकोई और अन्य श्रेणियां,
3. विंध्य श्रृंखला जो गंगा के मैदानी भाग को दक्षिण घाट से अलग करती है,
4. सतपुडा,
5. अरावली,
6. सह्याद्रि जो पश्चिमी तटीय मैदानों के पूर्वी किनारों में फैली है तथा
7. पूर्वी घाट जो भारत के पूर्वी तट पर अनियमित रूप से बिखरी है और पूर्वी तटीय मैदान की सीमा का निर्माण करती है।

हिमालय जो विश्व में सर्वोच्च पर्वतीय व्यवस्था है विश्व की नवजात पर्वत श्रृंखलाओं में से एक है। यह लगभग 2500 कि० मी० क्षेत्र तक बिना किसी रुकावट के फैला हुआ है लगभग 500,000 वर्ग कि० मी० क्षेत्र तक के भूभाग को घेरता है। इसमें विश्व की सर्वोच्च चोटी एवरेस्ट 7500 मी० से अधिक ऊंचाई पर स्थित है तथा लगभग दस अन्य शिखर हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इसका उदय चलायमान भारतीय प्रायद्वीप और दक्षिण एशिया के तिब्बतीय भाग के बीच लगभग 506 लाख वर्ष पूर्व हुई टक्कर से हुआ है। बहुत बाद में हिमालय को वर्तमान ऊंचाई मिली है।

पटकोई और अन्य पर्वत श्रृंखलाएं भारत–बंग्लादेश बर्मा सीमा के साथ–साथ फैली है। इनको सामूहिक रूप से पूर्वांचल कहा जाता है। ये श्रृंखलाएं जो एक चाप की तरह है, हिमालय के साथ–साथ बनी होगी।

अरावली श्रृंखला प्राचीनतम पर्वतीय व्यवस्थाओं में से एक है, जो उत्तर पश्चिम भारत में फैली है। वर्तमान अरावली उस विशालकाय व्यवस्था का अवशेष मात्र है, जो प्रागेतिहासिक काल में बर्फ की रेखा के ऊपर उठी हुई अनेक चोटियों वाली थी तथा भीमकाय विस्तार वाले हिमनदी का पोषण करती थी और ये हिमनदी अनेक बड़ी–बड़ी नदियों को प्लावित करते थे।

विंध्य श्रृंखला भारत प्रायद्वीप की लगभग पूरी चौड़ाई व लगभग 1050 कि० मी० तक फैली है जिसकी ऊंचाई का औसत लगभग 300

मीटर है। ऐसा लगता है कि विंध्य श्रृंखला का निर्माण प्राचीन अरावली श्रृंखलाओं के टूटने से हुआ है।

सतपुड़ा श्रृंखला एक अन्य प्राचीन पर्वतीय व्यवस्था है जो 900 कि० मी० की दूरी तक लगभग 1000 मीटर से ऊपर उठने वाली अनेक चोटियों वाली श्रृंखला है। यह त्रिभुजाकार है जिसका शीर्ष रत्नपुरी है और दो भुजाएं नर्मदा और ताप्ती नदियों के सामान्तर फैली है।

सह्याद्रि अथवा पश्चिमी घाट लगभग 1200 मीटर औसत ऊंचाई वाली श्रृंखला लगभग 1600 कि० मी० लम्बी है और ताप्ती नदी के उद्‌गम स्थल से लेकर सुदूर दक्षिण भाग कन्याकुमारी तक व्याप्त दक्षिण पठार की पश्चिमी सीमा के साथ–साथ फैली है। यह अरब सागर के ऊपर स्थित है और मानसूनी हवाओं की पूरी ताकत को रोकती है और इस तरह पश्चिमी तट पर भारी वर्षा का कारण बनती है।

पूर्वी घाट भारत के पूर्वी समुद्र तट पर स्थित है। इसे शक्तिशाली नदियां पर्वतों को कई बिखरे हुए टुकड़ों में बांटती है। गोदावरी और महानदी नदियों के बीच में बंटा उत्तरी भाग लगभग 1000 मीटर से अधिक ऊँचा है –

भारत में तीन प्रमुख जलस्रोत हैं–

1ण उत्तर की कराकोरम श्रेणी सहित हिमालय श्रृंखला,

2ण मध्य भारत और विंध्य और सतपुड़ा श्रृंखलाएं और

3ण सह्याद्रि अथवा पश्चिम तट के पश्चिमी घाट।

भारत की सभी प्रमुख नदियां इन्हीं में से किसी एक से निकलती है।

जलवायु (ब्सपउंजम)

भारत की जलवायु उघ ण मानसूनी प्रकार की है। कर्क रेखा भारत को 2 बराबर भागों में बांटती है। भारत की उत्तरी सीमा पर विशाल हिमालय पर्वत स्थित है, जो भारतीय उपमहाद्वीप को मध्य एशिया से अलग करता है और वहां से आने वाली ठंडी पवनों को रोकता है। इसी कारण समस्त भारत में उष्णकटिबंधीय जलवायु ;ज्तवचपबंस ब्सपउंजमद्ध पाई जाती है, जबकि अक्षांशीय दृष्टि से इसका उत्तरी भाग उपोष्ण कटिबंध में स्थित है। भारत के दक्षिण में स्थित हिंद महासागर से आने वाली पवनों का भारत की जलवायु पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। तापमान, वर्षा तथा विभिन्न ऋतुओं के आंरभ व उनकी अवधि के संबंध में दक्षिणी भारत की जलवायु दशायें उत्तरी भारत की जलवायु दशाओं से काफी भिन्न है। जून के महीने में उत्तर पश्चिमी मैदानों में 45° से. तापमान महसूस किया जाता है, जबकि राजस्थान के मरुस्थलीय भागों में दिन का तापमान 55° सेल्सियस तक हो जाता है। वही, कश्मीर में गुलमर्ग तथा पहलगांव में ये मुश्किल से 20° से 0° तक ही पाया जाता है। इसी प्रकार, दिसंबर के महीने में, कारगिल या द्रास (जम्मू और कश्मीर) में रहने वाले लोग चुभन भरी ठंड का अनुभव करते है क्योंकि यहां रात के समय तापमान –40° से 0° तक गिर जाता है, जबकि तिरुवनन्तपुरम के निवासी 27° से 0° तापमान का आनंद उठाते है। तटीय क्षेत्रो से देश के आंतरिक भागों की ओर जाने पर ताप परिसर में क्रमिक वृद्धि होती है। फलस्वरूप, कोकंण तथा मालाबार तटों के साथ रहने वाले लोग ऋतुओं में स्पष्ट परिवर्तन का उस रूप में अनुभव नहीं करते, जिस रूप में भारत के उत्तर–पश्चिमी भागों में रहने वाले अनुभव करते है क्योंकि यहां न तो अत्यधिक ठंड पड़ती है और न ही अत्यधिक गर्मी।

वर्षा के वितरण में भी उतनी ही अधिक विभिन्नतायें दिखाई पड़ती है। मेघालय में स्थित चेरापूंजी में वार्षिक वर्षा लगभग 1080 से.मी. होती है जबकि राजस्थान के मरुस्थल में स्थित जैसलमेर में वार्षिक वर्षा केवल 20 से.मी. ही होती है। उत्तर–पूर्वी भाग तथा उड़ीसा और पश्चिम बंगाल के तटीय मैदानों में जुलाई व अगस्त के महीनों में भारी वर्षा होती है जबकि तमिलनाडु के कोरोमंडल तट पर इन महीनों में बहुत कम वर्षा होती है। इन सभी भिन्नताओं और विविधताओं के बावजूद भारत की जलवायु अपनी लय और विविष्टता में मानसूनी है।

सामाजिक जीवन (Social Life)

वैदिककाल में एकमात्र भारत ही सभ्यता और संस्कृति में अग्रणी था। यहीं से ही संसार के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की विद्याओं और ज्ञान का प्रकाश फैला था। वैदकालीन समाज 'पितृमूलक' समाज था। हर फैसला पिता के द्वारा ही लिया जाता था। पुत्र, पुत्री, वधु तथा स्त्री आदि सभी लोग उसी के कहे अनुसार जीवन यापन करते थे। उस समय केवल पुत्रों को ही शिक्षा नहीं दी जाती थी, बल्कि स्त्रियों को भी स्त्रियोचित कलाओं की शिक्षा देकर योग्य गृहिणी बनाया जाता था।

वैदिककालीन समाज विशेषतः गावों में निवास करता था पर उस समय नगरों का अस्तित्व भी था। खासकर शत्रुओं से रक्षा के लिए बड़े–बड़े किले बनाए जाते थे। उनमें पर्याप्त संख्या में मनुष्यों का निवास होने से वे स्वंय ही नगर बन जाते थे। लोहे के द्वारा (अश्रवमन्मशी) भी कई जगह किलों का निर्माण किया जाता था।लोगों के रहने के घरों को बनाने के लिए बांस, मिट्‌टी, लकड़ी पत्थर और पकी हुई ईंट मुख्य सामग्री थी। मकानों मे प्रायः लकड़ी के खम्बे लगाए जाते थे। साधारण लोग बैठने के लिए चटाईयों का निर्माण व इस्तेमान करते थे। विवाह के अवसर पर तक्त (पलंग) काम में लाए जाते थे। धातु या मिट्‌टी के बर्तनों में सोने–चांदी के सिक्के भर कर रखे जाते थे और सुरक्षा के लिए उनकों जमीन के नीचे गाड़ दिया जाता था। भोजन सीधा–सादा और सात्विक होता था और उसमें दूध–घी की प्रचुरता रहती थी। तत्कालीन भारतीयों का सामाजिक जीवन बिल्कुल सीधा–सादा और प्रकति के अनुकुल था। वे कृत्रिमता से दूर रहते थे और आध्यातिम्कता ही उनका आभुकाण था। इसी कारण वे ऐसी धार्मिक और आध्यात्मिक रचनाएं कर सके जो आज तक लोगों की मार्गदर्शक होकर सबके लिए

कल्याणकारी सिद्ध हो रही है।

भारतीय अर्थव्यवस्था (Indian Economy)

भारत जीडीपी के संदर्भ में विश्व की नौवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। यह अपने भौगोलिक आकार के संदर्भ में विश्व में सातवां सबसे बड़ा देश है और जनसंख्या की दृष्टि से दूसरा। हाल के वर्षो में भारत गरीबी और बेरोजगारी से संबंधित मुद्दों के बावजूद विश्व में सबसे तेजी से उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं में से एक के रूप में उभरा है। महत्वपूर्ण समावेशी विकास प्राप्त करने की दृष्टि से भारत सरकार द्वारा कई गरीबी उन्मूलन और रोजगार उत्पन्न करने वाले कार्यक्रम चलाए जा रहे है।

ऐतिहासिक रूप से भारत एक बहुत विकसित आर्थिक व्यवस्था थी जिसके विश्व के अन्य भागों के साथ मजबूत व्यापारिक संबंध थे। औपनिवेशिक युग (1743–1947) के दौरान ब्रिटिश सरकार से सस्ती दरों पर कच्ची सामग्री खरीदा करते थे और तैयार माल को भारतीय बाजारों में मूल्य से कहीं अधिक उच्चतर कीमत पर बेचा जाता था जिसके परिणामस्वरूप स्त्रोतों का द्विमार्गी ह्रास होता था। इस अवधि के दौरान विश्व की आय में भारत का हिस्सा 1700 ए डी के 22.3 प्रतिशत से गिरकर 1952 में 3.8 प्रतिशत रह गया। 1947 में भारत के स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् अर्थव्यवस्था की पुनर्निर्माण प्रक्रिया प्रारंभ हुई। इस उद्देश्य से विभिन्न नीतियां और योजनाएं बनाई गई और पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से कार्यान्वित की गई।

1991 में भारत सरकार ने महत्वपूर्ण आर्थिक सुधार प्रस्तुत किए जिनमें विदेश व्यापार उदारीकरण, वित्तिय उदरीकरण, कर सुधार और विदेशी निवेश के प्रति आग्रह शामिल था। इन उपायों ने भारतीय अर्थव्यवस्था को गति देने में मदद की।

भारत की राजनीति (Indian Politics)

भारत की राजनीति (Indian Politics) संविधान के ढाँचे में काम करती हैं। जहाँ पर राष्ट्रपति सरकार का प्रमुख होता हैं। और प्रधानमंत्री कार्यपालिका का प्रमुख होता है। भारत एक संघीय संसदीय लोकतांत्रिक गणतंत्र है, भारत एक द्वि–राजतन्त्र का अनुसरण करता है, अर्थात, केन्द्र में एक केन्द्रीय सत्ता वाली सरकार और परिधि में राज्य सरकारें। संविधान में संसद के द्विसदनीयता का प्रावधान है, जिस में एक ऊपरी सदन (राज्य सभा) जो भारतीय संघ के राज्य तथा केन्द्र शासित प्रदेश का प्रतिनिधित्व करता है, और निचला सदन (लोक सभा) जो भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व करता है, सम्मिलित हैं। शासन एवं सत्ता सरकार के हाथ में होती है। संयुक्त वैधानिक बागडोर कार्यपालिका एवं संसद के दोनों सदनों, लोक सभा एवं राज्य सभा के हाथ में होती है। न्याय मण्डल शासकीय एवं वैधानिक, दोनों से स्वतंत्र होता है।

संविधान के अनुसार, भारत एक प्रधान समाजवादी, धर्म–निरपेक्ष, लोकतांत्रिक राज्य है, जहां पर विधायिका जनता के द्वारा चुनी जाती है। अमेरिका की तरह, भारत में भी संयुक्त सरकार होती है, लेकिन भारत में केन्द्र सरकार राज्य सरकारों की तुलना में अधिक शक्तिशाली है, जो कि ब्रिटेन की संसदीय प्रणाली पर आधारित है। बहुमत की स्थिति में न होने पर मुख्यमंत्री न बना पाने की दशा में अथवा विशेष संवैधानिक परिस्थिति के अंतर्गत, केन्द्र सरकार राज्य सरकार को निष्कासित कर सकती है और सीधे संयुक्त शासन लागू कर सकती है, जिसे राष्ट्रपति शासन कहा जाता है। भारत का पूरी राजनीती मंत्रियों के द्वारा निर्धारित होती है। भारत एक लोकतांत्रिक, धार्मिक और सामुदायिक देश है जहां युवाओं में चुनाव का बढ़ा उत्साह भारतीय राजनीति में बना रहता है यहां चुनाव को लोकतांत्रिक पर्व की तरह बनाया जाता है। भारत की राजनीति ऐसी राजनीति है जो आज के समय में लोकतंत्र के सबसे सही पायदान पर है।

निष्कर्ष :–

भारत की भौगोलिक संरचना में लगभग सभी प्रकार के स्थलरूप पाए जाते हैं। एक ओर इसके उत्तर में विशाल हिमालय की पर्वतमालायें हैं तो दूसरी ओर दक्षिण में विस्तृत हिंद महासागर, एक ओर ऊँचा –नीचा और कटा–फटा दक्कन का पठार है तो वहीं विशाल और समतल सिन्धु–गंगा–ब्रह्मपुत्र का मैदान भी, थार के विस्तृत मरूस्थल मे जहॉ विविध मरूस्थलीय स्थलरूप पाए जाते हैं तो दूसरी ओर समुद्र तटीय भाग भी है। कर्क रेखा इसके लगभग बीच में गुजरती है और यहॉ लगभग हर प्रकार की जलवायु भी पायी जाती है। मिट्टी, वनस्पति और प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से भी भारत में काफी भौगोलिक विविधता है। प्राकृतिक विविधता ने यहॉ की नृजातीय विविधता और जनसंख्या के असमान वितरण के साथ मिलकर इसे आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता प्रदान की है। इन सबके बावजूद यहॉ की ऐतिहासिक–सांस्कृतिक एकता इसे एक राष्ट्र के रूप में लगभग 4 हजार किलोमीटर लम्बी समुद्री सीमा के साथ हिन्द महासागर के उत्तरी शीर्ष पर स्थित भारत का भू–राजनैतिक महत्व भी बहुत बढ़ जाता है और इसे एक प्रमुख क्षेत्रीय शक्ति के रूप में स्थापित करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. Khullar, DR (2020), Physical Human and Economic Geography. Noida : G.K. publications.
2. Husain, Majid (2022), Geography of India, Chennai : Mc Graw hill publications.
3. Saini, Bhumika (2022), Indian and world Geography, Chennai : Mc Graw hill publications.
4. Barnwal, Mahesh Kumar (2021), Geography of India. Telangana : Cosmos publications.
5. बर्णवाल , महेश कुमार ;2022द्ध, भारत का भूगोल, तेंलगानाः

कोस्मोस पब्लिकेशन्स।
6. तिवारी,आर.सी.(2016),भारत का भूगोल, इलाहाबादः प्रवालिका पब्लिकेशन।
7. Economic Times, 21 Feburary, 2023
8. https://hindigyankosh.com/bharat-ki-bhogolik-sthiti-ka-varnan-kijiye/

पूजा
W/o डॉ0 प्रवीन कुमार
गॉव – सुलखनी
तहसील व जिला – हिसार
(हरियाणा)
पिन कोड – 125121
फोन नं0 – 7027890008
ई–मेलः rao771265@gmail.com

36

स्वतंत्रता आंदोलन में सुभाष चंद्र बोस की भूमिकाः एक अध्ययन

डॉ0 रश्मि

सारांश

भारत के राष्ट्रीय स्वतंत्रता – संग्राम का इतिहास अनेक निर्भीक व्यक्तियों के निःस्वार्थ बलिदान की अमर गाथा है। इन महान् सपूतों और सुपुत्रियों ने अपने देशवासियों को आजादी दिलाने के लिए विभिन्न तरीकों से विशालकाय ब्रिटिश साम्राज्य का बहादुरी से मुकाबला किया। इनमें से एक नाम भारत माता के उस महान सपूत सुभाषचन्द्र बोस का है, जिसमें क्रांति की भावना कूट–कूटकर भरी थी। वह भारतीय स्वतंत्रता–आंदोलन को प्रभावी ढंग से भारत की सीमा से बाहर तक ले गए, जिससे न केवल शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जड़ें ही हिल गई, अपितु राष्ट्र के मन पर इसकी अमिट छाप भी पड़ी। उनके अदम्य साहस और अथक परिश्रम जैसे गुणों ने उन्हें आधुनिक भारत का अग्रणी नेता बना दिया। सभी के कानों में गूंजने वाला ओजस्वी और प्रेरक शब्द 'जयहिन्द' प्रत्येक नागरिक के मन में देशभक्ति की भावता तो जगाता ही है, साथ ही यह एक राष्ट्रीय नारा भी बन गया है।

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के आविर्भाव को पूरी एक सदी और उनके तिरोभाव को प्रायः

आधी सदी हो गई है। कृतज्ञ राष्ट्र अपने इस स्वतत्रंता नायक को श्रद्धांजलि अर्पित करता रहा है। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस भारतीय स्वतंत्रता : यज्ञ की उज्ज्वलतम शिखा और पवित्रतम पूर्णाहुति थे। उनके कार्य–कलाप उनकी अपनी पीढ़ी के लिए तो प्रेरणा के अक्षय स्त्रोत थे ही, वे आज की पीढ़ी के लिए भी आलोक की शुभ किरण है और कल की पीढ़ी के लिए भी बलिदान और उत्सर्ग की अमर–गाथा बनेंगे। जापानी साहित्याकारों ने नेताजी को 'भारतीय समुराई' कहा। 'समुराई' जापान का 'क्षत्रिय योद्धा' है – जिसे युद्ध में 'विजय' या 'मरण' ही अभीष्ट होता है। वे स्वयं में प्रज्ज्वलित अग्नि थे, दिये की टिमटिमाती लौ नहीं। उनकी मृत्यु ने उन्हें अमर बना दिया।

प्रारंभिक जीवनः–

सुभाषचंद्र बोस का जन्म 23 जनवरी 1897 को उड़ीसा के कटक शहर में हुआ था। उनके पिता जानकीनाथ बोस पेशे से वकील थे जो बाद में 1901 में कटक नगरपालिका के प्रथम गैर–सरकारी चेयरमैन तथा सरकारी वकील एवं लोक अभियोजक बने। सन् 1912 में उन्हें बंगाल विधानसभा परिषद् का सदस्य मनोनीत किया गया और 'रायबहादुर' का खिताब दिया गया। जिला मजिस्ट्रेट के साथ गंभीर मतभेद हो जाने पर उन्होंने वर्ष 1917 में सरकारी वकील और लोक–अभियोजक के पदों से इस्तीफा दे दिया था तथा सरकार की दमनकारी नीति के विरोध में उन्होंने 'रायबहादुर' का खिताब भी वापस कर दिया। सुभाष की माताजी प्रभावती दक्षिण कलकता में हतखोला के परंपरागत 'दत्त' परिवार की थी। वह दृढ़ इच्छाशक्ति की महिला थी। वह वास्तविकता को शीघ्र भांप लेती थी तथा उनमें गहरी सूझ–बूझ थी।

शिक्षाः–

1902 में सुभाष को कटक के बैपटिस्ट मिशन स्कूल में दाखिल कराया गया था। फिर राबेनशॉ कॉलेजियेट स्कूल, कटक में चौथी कक्षा में दाखिला लिया और 1913 तक वहां अध्ययन किया। वह अत्यंत कुशाग्रबुद्धि विद्यार्थी थे और अंग्रेजी भाषा पर उनका पूरा अधिकार था। स्वामी विवेकानन्द के दर्शन ने उन पर गहरी छाप छोड़ी। उन्होंने 1913 में हाई स्कूल की परीक्षा पास की और पूरे कलकता विश्वविद्यालय में दूसरा स्थान प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने कलकत्ता में प्रेसीडेंसी कॉलेज में दाखिला लिया। सन् 1916 में उन्हें कॉलेज से एक घटना के कारण निकाल दिया गया। इतिहास के प्रोफेसर ई0 एफ0 ओटेन ने सुभाष से बड़बड़ाते हुए कहा – 'बोस, महाविद्यालय के तुम सबसे उत्पाती व्यक्ति हो। मैं तुम्हें निलंबित करता हूँ।'' ''धन्यवाद!'' बोस ने उत्तर दिया और घर चले गए। निकट – भविष्य में पढ़ाई जारी रखने की कोई आशा न रहने पर बोस ने पूरे उत्साह के साथ समाजसेवा का कार्य अपना लिया। जुलाई 1917 में अपने पिता की सहायता से उनको स्कॉटिश चर्च कॉलेज, कलकता, में प्रवेश मिल गया। दो वर्ष बाद 22 वर्ष की आयु में उन्होंने बी.ए. ऑनर्स की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। पूरे कलकता विश्वविद्यालय में उनका दूसरा स्थान था।

इग्लैंड की यात्राः–

उनके पिता ने उन्हें भारतीय सिविल सेवा की प्रतियोगिता परीक्षा में भाग लेने के लिए 15 सितम्बर 1919 को इंग्लैंड के लिए रवाना कर दिया। यद्यपि वह कुछ विलंब से वहां पहुंचे, तथापि उनको कैब्रिज विश्वविद्यालय में प्रवेश पाने में सफलता मिल गई और अतंतः जुलाई 1920 में उन्होंने आठ विषयों – अर्थशास्त्र, भूगोल, राजनीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, अंग्रेजी, विधिशास्त्र, आधुनिक यूरोप का इतिहास और मानचित्र कला के साथ आई0 सी0 एस0 की परीक्षा दी। जब परीक्षा का परिणाम घोषित हुआ तो प्रतियोगिता में उन्हें चौथा स्थान प्राप्त हुआ। इससे उनके घर वालों को तो प्रसन्नता हुई लेकिन उनके अपने मन में अंतर्द्धद्ध मच गया। वे विदेशी सरकार की नौकरी करना नहीं चाहते थे। उन्होंने इस विषय में अपने बड़े–भाई शरत चन्द्र से पत्र–व्यवहार किया और फरवीर 1921 में इंडियन सिविल सर्विस से त्याग–पत्र दे दिया।

भारत वापसी और राजनीति में प्रवेश :–

16 जुलाई 1921 को सुभाष चन्द्र बोस बम्बई पहुंचे और उसी दिन दोपहर को महात्मा गांधी से मुलाकात की। गांधी जी का असहयोग आंदोलन पूरे जोरों पर था और वे देश के सर्वोच्च राजनीतिक नेता थे। सुभाष बोस ने असहयोग आंदोलन के बारे में गांधी जी से कई पश्न पूछे।

गांधी जी ने उनका शांतिपूर्वक उत्तर भी दिया। लेकिन सुभाष को गांधी जी के उत्तरों से संतोष नहीं हुआ। गांधी जी ने सुभाष को सलाह दी कि वे देशबंधु चिंतरजन दास से मिलें।

सुभाष की देश बंधु चितरंजन दास से भेंट :–

कलकता पहुँचकर सुभाष बोस देशबंधु से मुलाकात करने के लिए उनके घर गए। सुभाष उनसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्हें लगा कि उन्हें उनका गुरू मिल गया है। सुभाष ने तत्काल ही देशबंधु के चरण–चिन्हों पर चलने का संकल्प किया। देशबंधु ने अपने नए युवा सहयोगी का खुले दिल से स्वागत किया और उन्हें अनेक जिम्मेदारियां सौंपी। देशबंधु ने सुभाष को प्रांतीय काग्रेंस समिति और राष्ट्रीय स्वयंसेवी – संघ के प्रचार का प्रभारी बना दिया। वह नवगठित नेशनल कॉलेज के प्राचार्य भी बनाए गए। जिस कार्यकुशलता और समर्पण की भावना से सुभाष ने अपने विभिन्न दायित्वों का निष्पादन किया उसकी सभी ने भूरि–भूरि प्रशंसा की।

कलकता में हड़ताल :–

नवंबर 1921 में प्रिंस ऑफ वेल्स की भारत–यात्रा की घोषणा की गई। काग्रेंस ने राजकुमार के बंबई पहुंचने के दिन लोगों से पूर्ण हड़ताल में शामिल होने का आह्वान किया। हड़ताल का संगठन करने वालों में सुभाष प्रमुख थे। दिसंबर 1921 के दूसरे सप्ताह में देशबंधु तथा अन्य नेताओं के साथ सुभाषचंद्र को भी हिरासत में ले लिया गया और बाद में उन्हें छह महीनें के कारावास का दंड दिया गया। जेल में सुभाष ने पूरी लगन, उत्साह और निष्ठा के साथ अपने मार्गदर्शक देशबंधु की खूब सेवा–शुश्रूषा की। देशबंधु चितरंजन के साथ अंतरंग संबंध होने के कारण उन्हें पंडित मोती लाल नेहरू, लाला लाजपतराय और मौलाना मोहम्मद अली जैसे उच्च कोटी के कुछ नेताओं के संपर्क में आने का अवसर प्राप्त हुआ। 1922 में चौराचौरी कांड के पश्चात् अवज्ञा आन्दोलन समाप्त कर दिया गया। इस समाचार से उन्हें भारी दुःख और रोष हुआ और आशा का सारा वातावरण निराशा में बदल गया।

कुशल प्रशासक के रूप में :–

1924 ई0 में कलकता नगर निगम के चुनावों में स्वराज पार्टी को भारी विजय प्राप्त हुई। देशबंधु कलकता के महापौर तथा सुभाषचन्द्र बोस मुख्य कार्यकारी अधिकारी नियुक्त हुए। कुछ ही महीनों की अवधि में सुभाष ने निगम के प्रशासन को एक नया रूप और गति प्रदान की। सुभाषचन्द्र ने मुख्य कार्यकारी अधिकारी के रूप में मात्र आधा वेतन स्वीकार किया और आधा वेतन दान में दे दिया। ब्रिटिश सरकार स्वराज पार्टी द्वारा लगातार सफलता प्राप्त किए जाने को सहन न कर सकी। 25 अक्तूबर 1924 को सुभाषचन्द्र बोस को गिरफ्तार करके रंगून भेज दिया गया।

कांग्रेस सेवादल की स्थापना :–

राष्ट्रीय कांग्रेस के सन् 1928 के वार्षिक अधिवेशन का आयोजन कलकता में पंडित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में हुआ था। सुभाष काग्रेंस सेवादल के जनरल ऑफिसर कमांडिग भी थे। उन्होंने इस रूप में स्वयंसेवकों की परेड का निरीक्षण किया तथा राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं में सैनिक अनुशासन की भावना जाग्रत की।

लाहौर अधिवेशन :–

दिसंबर 1929 के अंत में भारतीय राष्ट्रीय काग्रेंस का ऐतिहासिक लाहौर अधिवेशन जवाहरलाल नहेरू की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इसमें पूर्ण स्वराज के प्रस्ताव को रखा। सुभाषचन्द्र ने लाहौर में अपने भाषण में कहा कि हमें संपूर्ण बहिष्कार करना चाहिए परन्तु उनका प्रस्ताव पारित नहीं हुआ और उन्हें कांग्रेस कार्यसमिति से निकाल दिया गया।

कलकता के महापौर :–

सन् 1930 में सुभाष ने अपने संघर्ष से काग्रेंस डेमोक्रेटिक पार्टी का गठन किया। परन्तु योजनाओं को कार्यरूप देने से पहले ही उन्हें लाहौर से कलकता लौटते ही गिरफ्तार किया गया तथा एक साल का कठोर कारावास दिया गया। इसी दौरन उन्हें कलकता का महापौर चुना गया परन्तु जेल से रिहा होने पर ही वह पद ग्रहण कर पाएं। 26 जनवरी 1931 को लंबे जुलूस में पुलिस प्रतिबंध का उल्लंघन करने पर पुलिस ने हमला किया जिसमें सुभाषचन्द्र बुरी तरह घायल हुए और उन्हें हिरासत में ले लिया गया। लेकिन दो महीने बाद मार्च 1931 में उन्हें छोड़ दिया गया।

सविनय अवज्ञा आंदोलन :–

जनवरी 1932 में आंदोलन के कारण अंग्रेज सरकार ने दमनात्मक कार्यवाही शुरू कर गांधी, नेहरू, सुभाषचंद्र बोस सहित बड़ी संख्या में नेताओं को गिरफ्तार किया। सुभाष की गिरफ्तारी के बाद सिवनी नामक एक अनजान स्थान पर छोटी सी जेल में बंद कर दिया गया। वहां उनके स्वास्थ्य में तेजी से गिरावट आई। कई जेलों में स्थानांतरित करने पर भी रोग का निदान न हुआ और न उचित उपचार। अन्त में 13 फरवरी 1933 को सुभाषचन्द्र बोस को इटली के एक समुद्री जहाज एस.एस.गांगे द्वारा पुनः एक बार जबरन निर्वासन पर यूरोप भेज दिया गया।

यूरोप का दौरा :–

मार्च 1933 में सुभाषचन्द्र बोस वियना पहुंचे। वहां पर उन्हें योग्य डॉक्टर मिलें और संतोषजनक चिकित्सा उपलब्ध हुई। जैसे ही उनकी तबीयत थोड़ी–सी सुधरी, उन्होंने कई जगहों पर भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन, भारतीय सभ्यता और संस्कृति पर भाषण दिए। उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरूद्ध भारत के संघर्ष के लिए इन देशों के हर वर्ग के लोगों से नैतिक समर्थन मांगा। वियना,चेकोस्लोवाकिया, पौलैंड में उन्हें भारत के दृष्टिकोण पर व्यापक सहानुभूति प्राप्त हुई। वर्ष 1934 के अंत में सुभाषचन्द्र को समाचार मिला कि उनके पिता जानकीनाथ गंभीर रूप से बीमार है। उनके परिवार जन चाहते थे कि वे अपने पिता के अंतिम समय साथ रहे। वे शीघ्रातिशीघ्र भारत के लिए चल पड़े लेकिन वे डेढ़ दिन बाद पहुंचे। उनके पिता का देहांत हो चुका था। वे कलकता पहुंचे तो

उन्हें एलगिन रोड़ स्थित उनके निवास पर नजरबंद रखा गया। एक मास बाद जनवरी, 1935 में इलाज के लिए यूरोप लौटे, जहां उन्होंने फिर से भारत की स्वतंत्रता के लिए कार्य आंरभ कर दिया।

लेखक के रूप में :–

यूरोप में निर्वासन के दौरान सुभाषचन्द्र ने 'दी इंडियन स्ट्रगल' नाम की पुस्तक का प्रथम और मुख्य भाग लिखा। यह पुस्तक जनवरी 1935 में लंदन में प्रकाशित हुई। ब्रिटिश सरकार ने इस पुस्तक पर भारत में प्रतिबंध लगा दिया। ब्रिटिश समाचार – पत्रों ने इस पुस्तक की अच्छी समीक्षा की और यूरोपीय राजनीतिक और साहित्यिक क्षेत्रों में भी इसका व्यापक स्वागत हुआ।

भारती वापसी और काग्रेंस अध्यक्ष के रूप में निर्वाचन :–

1936 में बंबई में भारत–भूमि पर पदार्पण करते ही उन्हें हिरासत में ले लिया गया और जेल में डाल दिया गया। कुछ अवधि के पश्चात् उन्हें दार्जिलिंग के निकट कर्सियोंग ले जाया गया तथा उन्हें उनके भाई शरत् के बंगले में नजरबंद कर दिया गया। लेकिन मार्च 1937 में सुभाष को स्वास्थ्य संबंधी कारणों से बिना शर्त रिहा कर दिया गया। उनकी रिहाई पर कलकता में उनका भव्य स्वागत किया गया। जनवरी 1938 में जब वे लंदन में थे उन्हें पता चला कि उन्हें कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में चुना गया है। फरवरी 1938 में हरिपुरा के कांग्रेस गांव पहुंचने पर सुभाष बाबू का उत्कृष्ट स्वागत किया गया। काग्रेंस अध्यक्ष के रूप में सुभाषचंद्र बोस ने देश का व्यापक दौरा किया। पार्टी अध्यक्ष के रूप में उन्होंने काग्रेंस तथा कार्यकारिणी समिति की बैठकों की अध्यक्षता बहुत ईमानदारी तथा सबके प्रति सहृदयता से की। राष्ट्रीय पुनर्गठन के संबंध में सुभाषचन्द्र बोस के बहुत ही स्पष्ट तथा सुनिश्चित विचार थे तथा उन्होंने उनकी अभिव्यक्ति बहुत ही स्पष्ट शब्दों में की।

दूसरे कार्यकाल में अध्यक्ष रूप में :–

इस बार चुनाव में 1939 में गांधी और काग्रेंस कार्य–समिति द्वारा समर्थित डॉ0 पट्टाभिसीतारमैया को पराजित करके सुभाष पुनः कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में निर्वाचित हुए। अगस्त में सुभाष को बंगाल प्रांतीय कांग्रेस समिति के अध्यक्ष पद से भी हटा दिया गया और आगामी तीन वर्ष की अवधि के लिए उन्हें कांग्रेंस में किसी भी पद को ग्रहण करने से प्रतिबंधित कर दिया गया।

आजाद हिन्द फौज :–

1939 – 40 में सुभाषचन्द्र भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेंस की राजनीतिक विचारधारा से अप्रसन्न एवं असंतुष्ट थे। उन्होंने एक पृथक् मार्ग चुनने का निर्णय किया, जिससे वह भारत की स्वराज–प्राप्ति के लिए बेहतर तरीके से प्रयत्न कर सकें। अंग्रेजी सरकार ने सुभाष को कलकता में एल्गिन रोड स्थित उनके घर पर कैद कर दिया तथा दर्जनों सी.आई.डी. के अधिकारी आस–पास तैनात कर दिये। 16–17 जनवरी 1941 को सुभाषचन्द्र बोस वेश बदलकर 'मौलवी जियाउद्दीन' के नाम से अपने एल्गिन रोड़ स्थित घर से निकलकर 18 जनवरी 1941 को शाम को दिल्ली पहुंचे वहां से पेशावर, काबुल होते स्वराज के समर्थन हेतु जर्मनी के नेताओं और अन्य यूरोपीय नेताओं के संपर्क में रहे। अंततः सुभाष जापान पहुंचे, जहाँ स्थानीय सरकार तथा रासबिहारी बोस ने उनका स्वागत किया। जापान के प्रधानमंत्री हिकेदी तोजो ने उनका स्वागत किया तथा उनके उद्देश्य में उनकी सहायता करने का वचन दिया। मुख्य योजना आजाद हिन्द फौज को संगठित करना और स्वराज की सच्ची भावना उत्पन्न करना तथा अंततः पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करना था। नेताजी ने 5 जुलाई 1943 को अपने जीवन का सबसे अधिक गर्व का दिन कहा था, क्योंकि उस दिन उन्होंने प्रथम बार सिंगापुर में टाउन हाल के सामने के विशाल मैदान में युद्ध के लिए तैयार खड़ी आजाद हिन्द फौज का उसके सर्वोच्च कमांडर के रूप में सिंहावलोकन किया था। अगले तीन महीनों के दौरान नेताजी ने अथक परिश्रम किया तथा समूचे पूर्व एशिया में फैले भारतीय समुदाय में राष्ट्रीयता की पहचान तथा देशभक्ति की नई भावना का संचार करने के लिए व्यापक दौरे किए। साथ ही, आंदोलन को चलाने के लिए उन्होंने एक अनुशासित संगठन भी बनाया, जिसका मुख्यालय सिंगापुर में स्थापित किया। 22 अक्तूबर 1943 को नेताजी ने आजाद हिन्द फौज की 'द रानी ऑफ झांसी रेजीमंट' का उद्घाटन भारतीय महिला–योद्धाओं की समानता में नेताजी के विश्वास की पक्की अभिव्यक्ति उनके इस दृढ़ विश्वास की द्योतक थी कि महिलाओं को जीवन के सभी पहलुओं और सभी कर्म–क्षेत्रों में समान और पूरा–पूरा अवसर दिया जाना चाहिए।

आजाद हिन्द फौज 4 फरवरी 1944 को अराकान मोर्चा पर पहुंच गई। 18 मार्च को उसने बर्मा की सीमा को सीमा को पार किया और पहली बार भारत दृ भूमि पर आ खड़ी हुई। दुर्भाग्यवश वायु–सुरक्षा बल के अभाव में सेना को रूकना पड़ा तथा बर्मा की मुसलाधार वर्षा ने आजाद हिन्द फौज को पीछे हटने पर मजबूर किया। इसी दौरान अमेरिका ने जापान के हिरोशिमा और नागासाकी नगरों पर परमाणु बम गिराए और उस भंयकर विनाश से विवश जापान ने भी 11 अगस्त को आत्मसमर्पण कर दिया। 17 अगस्त 1945 को आजाद हिन्द फौज के सिपाहियों का मनोबल बढ़ाते हुए नेताजी ने भाषण दिया।

मृत्यु :–

आजाद हिन्द फौज की गतिविधियों के स्थगन के पश्चात् सुभाषचन्द्र बोस वापस सिंगापुर गए और उन्होंने नागरिकों और सरकार के थलसेना स्कंधों को अनुदेश जारी किए कि उन्हें क्या करना चाहिए। इसी बीच 15 अगस्त और 17 अगस्त 1945 को जापान के समर्पण की सरकारी तौर पर घोषणा की गई। नेताजी ने सैगोन से हवाई जहाज पकड़ा और पांच दिन बाद ही 22 अगस्त को टोकियो रेडियो ने घोषणा की कि सुभाषचंद्र बोस की जापान जाते हुए 18 अगस्त 1945 को फारमोसा में विमान दुर्घटना में मृत्य हो गई।

निष्कर्ष :–

आजादी के आंदोलन में सुभाष चन्द्र एक चिंगारी के रूप में प्रकट हुए। अंग्रेजों के प्रति विनम्रता अथवा शालीनता उनकी दृष्टि में एक भोथर हथियार थी। इसलिए शुरू में आजादी की लड़ाई में कूदते ही सुभाष ने देश के युवकों में चेतना जगाई। जो निष्क्रिय और आलस्य की जकड़ में बैठे थे उन्हें उठाया और चुनौती दी। भारत को आजाद करने के लिए युवावर्ग के सामने शर्त रखी दृ 'तुम हमें खून दो, हम तुम्हें आजादी देंगे'। 6 जुलाई 1944 को गांधी जी के नाम आजाद हिन्द फौज के रेडियो से सुभाष ने एक भाषण प्रसारित किया जिसमें कहा दृ देश में यो विदेश में ऐसा कोई भी भारतीय नहीं होगा जिसे प्रसन्नता नहीं होगी यदि आपके बताए रास्तों से बिना खून बहाए भारत को आजादी मिल गयी। लेकिन स्थितियों को देखते हुए मेरी यह निश्चित धारणा बन गई है कि यदि हम आजादी चाहते है तो हमें खून की नदियाँ पार करनी होंगी।

नेताजी आजादी के अद्वितीय सेनानी थे। आजादी के इतिहास में वहीं अकेले ऐसे व्यक्ति थे जो अपनी जान पर खेल कर ब्रिटिश सरकार की सारी चौकसी के बावजूद भारत की सीमाओं से बाहर गए और जिन्होंने बर्तानवी हुकूमत से लड़ने के लिए आजाद हिन्द फौज का संगठन किया। नेताजी की एक आवाज पर विदेशों में स्थित हजारों सैनिक और साधारण नागरिक, स्त्री भी, पुरूष भी उनके झंडे के नीचे एकत्रित हो गए। उनमें से बहुतों ने भारत की आजादी की लड़ाई में अपनी जान दी। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस भी एक विमान – दुर्घटना में शहीद हुए। नेताजी के अंतिम शब्द – 'हबीब! जब वापस जाओ, मेरे देशवासियों से कहना कि देश के लिए मैं अंत तक लड़ा और अब देश के लिए प्राण दे रहा हूँ अब कोई शक्ति हमारे देश को गुलामी में नहीं रख सकेगी। वे संघर्ष करते रहें, भारत बहुत शीघ्र स्वतंत्र हो जाएगा'। ..... 'मैं सोना चाहता हूँ।'

–नेताजी सुभाष, 18.8.1945

नेताजी की देशभक्ति बेजोड़ थी। उनका शौर्य अलौकिक था। उनका साहस रोमाचंकारी था। वे साधारण होते हुए भी असाधारण थे। जिस देश की धरती उनके जैसे व्यक्ति के लहू से सींची जाएं, वह देश कभी मर नहीं सकता।

संदर्भ : सूची

सुभाषचन्द्र बोस : जीवन वृत्तः एक अध्ययन

1– व्यास, राजशेखर : सुभाषचन्द्र बोस कुछ अधखुले पन्ने : सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008

2– जायसवाल, चन्द्रप्रकाश : स्वतंत्रता आंदोलन के सेनानी : साहित्य संस्थान, भोपाल, 2008

3– गुप्त, छेदीलाल – तरूणाई के सपने सुभाषचन्द्र बोस : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2001

4– श्रीवास्तव, रमाशंकर : नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आजादी की चिंगारी : हिमाचल बुक सैंटर, दिल्ली, 2008

5– व्यास, राजशेखर : सरहद पार सुभाष क्या सचः क्या झूठ! : ग्रेसी बुक्स दिल्ली, 2006

6– जाखड़, रामसिंह :आजाद हिन्द फौज और स्वतन्त्रता संग्राम : हरियाणा साहित्य मण्डल,रोहतक, प्रथम संस्करण

7– गिल, त्रिलोचन सिंह : भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन : गणपति प्रकाशन, दिल्ली, 1998

8– सक्सेना, शंकर सहाय : नेताजी सुभाषचन्द्र बोस : ग्रन्थ विकास प्रकाशन, जयपुर, 1998

9– मिश्र, भरत : भारत के सपूत : नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998

10– गुप्ता, विश्व प्रकाश, मोहिनी : सुभाषचन्द्र बोस व्यक्ति और विचार, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1997

11– डे, शैलेन्द्र (अनु0 ममता खरे) : मैं सुभाष बोल रहा हूँ, 3 भाग, रवीन्द्र प्रकाशन, इलाहाबाद, 1984

प्रस्तुतकत्री : –

डॉ0 रश्मि

इतिहास विभागाध्यक्षा,

हिन्दू कन्या महाविद्यालय, जीन्द।

पत्र व्यवहार का पता :–

डॉ रश्मि, मकान नं.4650, सेक्टर–11, जींद(हरियाणा)

मोबाइल नंबर.8168726874, 9812532133

37

नागार्जुन की सृष्टि और दृष्टि

डॉ0 जंग बहादुर पाण्डेय'तारेश'

सारांश

यदि कविता लोक चित्त से जुडने का माध्यम है,तो नागार्जुन सही मायने में स्वाधीन भारत के जनकवि हैं।इस देश की करोडों–करोड़, भूखी–अधनंगी जनता की शायद ही कोई. ऐसी आकांक्षा और अनुभूति हो,जिसकी ओर नागार्जुन का ध्यान न गया हो और जिस पर उन्होंने कभी गहन संवेदनात्मक और कभी तीव्र आक्रामक टिप्पणी न की हो।उन्होंने सचमुच हिंदी कविता की विषय वस्तु को अभूतपूर्व विस्तार दिया है और सुन्दर –असुन्दर सभी प्रकार के विषयों पर अपनी बेबाक टिप्पणी की है।डा परमानंद श्रीवास्तव का यह कथन सोलह आने सही हैः

ष्जनता के पक्ष में कविताएं लिखने वाले और भी हैं,पर जनता को अपने में आत्मसात् कर कविता लिखने वाले नागार्जुन अपने ढंग के अकेले कवि हैं।

नागार्जुन का जन्म दरभंगा जिले के तरौनी नामक ग्राम में एक रूढिवादी मैथिल परिवार में 30 जून 1911 ई.को हुआ था।एक एक कर चार भाइयों के बचपन में ही काल कवलित हो जाने के बाद पिता पं. गोकुल मिश्र ने वैद्यनाथ महादेव से संतान की याचना की थी।इसीलिए आगंतुक का नाम पड़ा वैद्यनाथ मिश्र।

वैद्यनाथ की पढाई का श्रीगणेश तत्कालीन प्रथा के अनुसार लघु सिद्धांत –कौमुदी और अमर कोष से हुआ। फिर उन्होंने वाराणसी में रहकर संस्कृत का विधिवत अध्ययन किया। 1931 में उनका विवाह अपराजिता देवी से हो गयायलेकिन इसके केवल तीन वर्ष बाद किसी बात पर रूठकर वे घर से निकल गए।वे सिंहल जाकर बौद्ध धर्म में दीक्षित हुए और नाम पडा नागार्जुन।

नागार्जुन बहुआयामी प्रतिभा के धनी साहित्यकार हैं।उन्होंने एकाधिक भाषाओं में गद्य और पद्य की अनेक विधाओं में इंद्र धनुषी साहित्य सृष्टि की है।उनका रचना संसार निम्नवत् हैरू

1संस्कृत (काव्य)–कर्यालोक– शतकम्,देश –दशकम्,कृषक– दशकम्,श्रमिक– दशकम्, लेनिन– दशकम्।

2 हिन्दी–(काव्य)–युग धारा,सतरंगे पंखोवाली,प्यासी पथराई आंखें,तालाब की मछलियां, तुमने कहा था,चंदना (लम्बी कविताएं),भस्मांकुर,भूमिजा,(खंड काव्य)खिचडी विप्लव देखा हमने,पुरानी जूतियों का कोरस,हजार हजार बांहों वाली।

उपन्यासरू रतिनाथ की चाची,बलचनमा,नई पौध,बाबा बटेसर नाथ,वरुण के बेटे,दुख मोचन,कुंभीपाक,हीरक –जयंती, उग्रतारा, इमरतिया, जमनिया के बाबा।

3 मैथिली (क)काव्यरू चित्रा, पत्र हीन नग्न गांछ।

(ख)उपन्यासरूपारो,बलचनमा,नवतुरिया

यह ठीक है कि नागार्जुन को साहित्य में प्रारंभिक प्रतिष्ठा अपने कथा साहित्य विशेष रुप से बलचनमा(1952) नामक उपन्यास के कारण मिलीय जिसमें उत्तर बिहार के एक विपन्न युवक के जीवन संघर्षों का बडा ही सजीव और बेबाक अकंन हुआ है,पर उनका कवि रूप उनके कथाकार रूप से किसी तरह घटकर नहीं है।

जैसा कि डा नामवर सिंह ने लिखा है कि ष्नागार्जुन सच्चे अर्थों में स्वाधीन भारत के प्रतिनिधि जन कवि हैंष

उन्होंने सामान्य जन के जीवन को केवल निकट से देखा ही नहीं है उसमें साझेदारी भी की है।उन्हें जनता की हर पीडा, हर बेबसी की प्रत्यक्ष अनुभूति है और उसपर अपनी गहरी प्रतिक्रिया वे निर्भीक होकर व्यक्त करते हैंयबल्कि वे केवल प्रतिक्रियाएं ही व्यक्त नहीं करते,आगे बढकर जन संघर्ष में अगुआई भी करते हैं।

नागार्जुन प्रतिहिंसा को अपनी कविता का स्थायी भाव मानते हैं।समाज की हर विषमता, हर असंगति की ओर उनकी दृष्टि जाती है और वे उस पर करारी चोट करते हैं।कविता का एक हथियार की तरह इस्तेमाल करने की बात हमने बहुत बार सुनी है,लेकिन उसका सबसे सचेष्ट और सबसे प्रभावी प्रयोग हिंदी में नागार्जुन ने ही किया है।मुट्ठी भर हड्डियों के ढांचेवाले इस कवि का जीवट और अंतर का ओज देखने योग्य हैरू

जनता मुझसे पूछ रही है,क्या बतलाऊं?
जन कवि हूँ, मैं साफ कहूंगा क्यों हकलाऊं?
और
जनकवि हूँ मैं,क्यों चांटू मैं थूक तुम्हारी?
श्रमिकों पर मैं क्यों चलने दूं बंदूक तुम्हारी?

किसानों और मजदूरों पर चलनेवाली इस बंदूक का नागार्जुन ने अपनी अनेक कविताओं में भांति भांति से विरोध किया है।शासन की बंदूक वाली कविता में कवि ने बंदूक को दमन नीति का प्रतीक मानकर उसके अनेक चित्र खडे किए हैंरू

ष्खडी हो गई चांप कर,ककांलों की हूक।
नभ में विपुल विराट सी, शासन की बंदूक।
और
जली ठूंठ पर बैठकर, गई कोकिला कूक।
बाल न बांका कर सकी,शासन की बंदूक।।

कोकिला भी काली है और बंदूक भी।किंतु दोनों के प्रतीकत्व में कितना अंतर है।एक में जीवन का उल्लास है तो दूसरी में मृत्यु का आतंक।दोनों को समानांतर प्रस्तुत कर कवि ने मौत के शिकंजे को चुनौती देती हुई अभिनव जीवन चेतना का अत्यंत सांकेतिक और व्यजंक चित्र उपस्थित कर दिया है।जो लोग नागार्जुन की कविता कोअखबारी कतरन और नारेबाजी से अधिक महत्व नहीं देना चाहते,उन्हें ऊपर की पंक्तियां तनिक ध्यान से और पूर्वाग्रह मुक्त होकर

देखनी चाहिए।

फक्कड़पन और घुमक्कड़ी प्रवृति नागार्जुन के व्यक्तित्व की प्रमुख विशेषता रही है।व्यंग्य नागार्जुन के साहित्य में स्वभावतः समाहित है।चाहे सरकार हो,चाहे समाज हो या चाहे मित्र, उनके व्यंग्य वाण सबको बेध डालते हैं।कई बार संपूर्ण भारत का भ्रमण करने वाले इस कवि को अपनी स्पष्टवादिता और राजनीतिक कार्य कलापों के कारण कई बार जेल भी जाना पड़ा है।

कांग्रेस द्वारा गांधी जी के नाम के दुरूपयोग पर नागार्जुन ने प्रश्न उठाया हैरू–

गांधी जी का नाम बेचकर,
बतलाओ कब तक खाओगे?
यम को भी दुर्गंध लगेगी,
नरक भला कैसे जाओगे?
नागार्जुन–झंडा कविता

अंदर संकट, बाहर सङ्कट,संकठ चारो ओर।
जीभ कटी है भारत माता,मचा न पाती शोर।
देखो धंसी धंसी ये आंखें, पिचके पिचके गाल।
कौन कहेगा आजादी के बीते तेरह साल!

नागार्जुन तो कभी सीधे सीधे आक्रोशी मुद्रा में प्रहार करते हैं,तो कभी तेवर बदलकर व्यंग्य पर उतर आते हैं।उनकी व्यंग्यात्मक कविताओं की संख्या अनगिनत है।मात्रा और बेधकता दोनों दृष्टियों से कबीर के बाद वे हिंदी के सबसे बड़े व्यंग्यकार हैं।प्रेतका बयान, बाकी बच गया अंडा, आओ रानी हम ढोएंगे पालकी,इंदुजी इंदुजी क्या हुआ आपको?,तुम रह जाते दस साल और,नया तरीका,भूले स्वाद बेर के,जयति नखरंजनी,
तीनों बंदर बापू के,यंत्र कविता, आए दिन बहार के,आदि उनकी एक से एक उत्कृष्ट व्यंग्य रचनाएं हैं।आए दिन बहार के में कलयुगी नेताजी की अच्छी खबर ली गई है रू–

श्वेत श्याम रतनार आंखियां निहार के,
सिंडीकेटी प्रभुओं की पगधूर झार के
लौटे हैं दिल्ली से कल टिकट मार के,
खिले हैं दांत ज्यों दाने अनार के।

नागार्जुन की इस तरह की कविताओं के महत्व को स्वीकारते हुए डा राम विलास शर्मा ने लिखा है कि रू–"नागार्जुन ने लोकप्रियता और कलात्मक सौंदर्य के संतुलन और सामंजस्य को जितनी सफलता से हल किया है,उतनी सफला से बहुत कम कवि –हिंदी से भिन्न भाषाओं में भी –हल कर पाए हैं।"(अस्तित्ववाद और हिंदी कविता)

सचमुच अखबारी समाचारों को कविता में रूपायित करना बड़ा कठिन होता है,क्योंकि यह बोध को अनुभव में ढालने की समस्या है।नागार्जुन की बहुतेरी कविताएं सपाटबयानी के दोष से पीडित हैं।मगर,जहाँ उनका मन सध गया है,वहाँ रचना अविस्मरणीय बन पड़ी है।जैसे अकाल और उसके बाद शीर्षक कविता।इसमें कवि ने अकाल की त्रासदी और अन्न प्राप्ति के उत्सव को कम से कम शब्दों में केवल चित्रों और बिंबों के माध्यम से व्यक्त किया हैरू–

कई दिनों तक चूल्हा रोया,चक्की रही उदास,
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उसके पासय
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकिलियों की गश्त,
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त,
××××××××××××××××××××
दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद,
धुआं उठा आंगन से ऊपर कई दिनो के बाद,
चमक उठी घर भर की आंखें, कई दिनों के बाद,
कौए ने खुजलाई पांखे,कई दिनों के बाद।

यहां कवि ने कई खंडचित्रों को पिरोकर एक संपूर्ण चित्र तो बनाया ही है,एक ही पद की आवृत्ति से प्रभाव को घनीभूत करने में भी सफलता पायी है।मानुषी स्थिति के साथ घरेलू पशु–पक्षियों और कीट–पंतगों तक को जोड़कर अकाल की व्यापकता का भी संकेत किया है।

नागार्जुन स्वभाव से घुमंतू रहे हैं।उन्होंने देश विदेश के अनेक प्राकृतिक दृश्यों को खुली आंखों देखा है और उन्हें मार्मिकता से कलमबंद किया है।ऐसी कविताओं में श्बादल को घिरते देखा हैश एक महत्वपूर्ण कविता हैरू–

तुंग हिमालय के कंधों पर,
छोटी बड़ी कई झीलें हैं,
उनके श्यामल नील सलिल में,
समतल देशों से आ आकर
पावस की ऊमस से आकुल,
तिक्त–मधुर विसतंतु खोजते,
हंसो को तिरते देखा है!
बादल को घिरते देखा है?

नागार्जुन जीवनपर्यंत यायावर जरूर रहे,लेकिन उनकी कविता में गार्हस्थिक जीवन का आकर्षण कम नहीं है।सिंदूर तिलकित भाल,यह दंतुरित मुस्कान, तन गई रीढ़, गुलाबी चूड़ियाँ आदि कविताएं पारिवारिक भावोष्णता से परिपूर्ण हैं। संक्षेप में नागार्जुन की कविता की संवेदना का वृत अत्यंत व्यापक है।उसमें महाकवि कालिदास से लेकर मादा सूअर तक का अंटाव है।एक ओर यदि नागार्जुन कालिदास से प्रश्न पूछते हैंरू–

कालिदास सच सच बतलाना,
इंदुमती के मृत्यु शोक से
अज रोया या तुम रोए थे?

तो दूसरी ओर मादा सूअर से भी सहानुभूति रखते हैंरू–

जमुना किनारे मखमली दूबों पर,
पूस की गुनगुनी धूप में,

पसर कर लेटी है
यह भी तो मादरे हिंद की बेटी है,
भूरे–पूरे बारह थनोवाली।

नागार्जुन जनकवि होने के साथ अत्यधिक अधीत और सुपठित कवि हैं।लोक जीवन, प्रकृति और समकालीन राजनीति उनकी रचनाओं के मुख्य विषय रहे हैं,विषय की विविधता और प्रस्तुति की सहजता नागार्जुन के रचना संसार को नया आयाम देती है।छायावादोत्तर काल के वे अकेले ऐसे कवि हैं जिनकी रचनाएं ग्रामीण चौपाल से लेकर विद्वानों की बैठक तक में समान रूप से आदर पाती हैं।जटिल से जटिल विषय पर लिखी गई उनकी कविताएं इतनी सहज संप्रेषणीय और प्रभाव शाली होती हैं कि पाठकों के मानस लोक में तत्काल बस जाती हैं।नागार्जुन की कविता में धारदार व्यंग्य मिलता है।जनहित के लिए प्रतिबद्धता उनकी कविता की मुख्य विशेषता है।

निष्कर्ष:

नागार्जुन ने छंद बद्ध और छंदमुक्त दोनों प्रकार की कविताएं लिखी हैं।उनकी काव्य भाषा में एक ओर संस्कृत काव्य परम्परा की प्रतिध्वनि है,तो दूसरी ओर बोल चाल की भाषा की रवानी और जीवंतता भी।उनके कंधे पर लटक रहे खादी के झोले में एक तरफ कालिदास का मेघदूतम मिलेगा तो दूसरी तरफ मार्क्स, लेनिन और टाल्सटाय की रचनाएं भी।

संदर्भ सूची–

1 नागार्जुन रचनावली सं शोभाकांत राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1990
2 नागार्जुन सं राजेश जोशी वाणी प्रकाशन दिल्ली 1995
3 हिंदी साहित्य का इतिहास आचार्य राम चंद्र शुक्ल ,जय भारती प्रकाशन इलाहाबाद 2001
4 हिंदी साहित्य रूउद्भव और विकास आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी,राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1998
5 सुकवि समीक्षा डा आनंद नारायण शर्मा भारती भवन पटना 1985

डॉ0 जंग बहादुर पाण्डेय'तारेश'
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी –विभाग
रांची विश्वविद्यालय, रांची 8
चलभाष:9431595318, 8797687656
द्रुतडाक:pandey_ru05@yahoo-co-in

38

पर्यावरणीय समाजशास्त्र

डॉ० बुद्धप्रिय सिद्धार्थ

सारांश

पर्यावरणीय समाजशास्त्र यह शब्द दो शब्दों पर्यावरण और समाजशास्त्र का संयोजन है यहाँ पर्यावरण का तात्पर्य लोगो अन्य जीवों भूमि पानी हवा एवम धरती पर उपलब्ध हर उस आवश्यक वस्तु के परस्पर सम्बन्ध से है जो भौतिक जीवन के लिए आवश्यक है वहीं समाजशात्र उस समाज के व्यवस्थित अध्ययन की विधा है जिसमे हम रहते है इसका सम्बन्ध लोगो समूहों संस्थानों उनके परस्पर सम्बन्धो संवाद और इनके परिणामों तथा समाजिक ढांचे के उस पहलू से है जो सामाजिक जीवन के लिए जरूरी है इससे सामान्यतः यह अंदाजा लगाया जा सकता है की पर्यावरणीय समाजशास्त्र मानव समाज और उनके भौतिक पर्यावरण के सम्बन्धो के अध्ययन का तरीका है जिसे आर डनलप और केटन ने सामाजिक पर्यावरणीय सम्बन्ध कहा है।

समाज और पर्यावरण के ये सबंध और परस्पर क्रिया प्रतिक्रिया एक दूसरे को गहरे स्तर पर प्रभावित करते हैं। पारस्परिक क्रियाओं का परिणाम ही पर्यावरणीय चिताओं और समस्याओं के तौर पर उभरकर सामने आया है। वैश्विक मौसम परिवर्तन मृदा गुणवत्ता में गिरावट जैवविविधता का हास ओजोन परत को हानि ठोस कचरा प्रदूषण अम्ल वर्षा जलस्तर में गिरावट जैसी कई गंभीर पर्यावणीय चिंताएं लगातार बढ़ना इसके बड़ी उदाहरण हैं। इस इकाई के प्रारंभ में हम अध्ययन शाखा के तौर पर पर्यावरणीय समाजशास्त्र के उद्धव एवं विकास को समझने का प्रयास करेंगे। आगे हम मानव और पर्यावरण संबंधों की प्रकृति को सैद्धांतिक रूप से जानने के साथ परीक्षण भी करेंगे।

इन पर्यावरणीय समस्याओं को समझने के दौरान हम औद्योगीकरण शहरीकरण और वैश्वीकरण की निरंतर जारी प्रक्रिया के कारण जैविक भौतिक पर्यावरण पर पड़ रहे प्रभाव की पहचान और वास्तविक वजहों को सुनिश्चित करने की ओर बढ़ेंगे। पर्यावरण के स्तर में व्यापक क्षय को ध्यान में रखते हुये हम पर्यावरणीय मुद्दों से उत्पन्न हो रहे संघर्ष और शक्तियों के उपयोग पर भी ध्यान केंद्रित कर सकेंगे। चूंकि समाज में शक्तियों एवं अधिकार का असमान प्रयोग पर्यावरणीय फलक पर समस्याओं के परिणाम के तौर पर संघर्ष को जन्म देता है लिहाजा हमारी यह इकाई समाज पर्यावरण सम्बन्धों के संदर्भ में सामाजिक असमानता के महत्व को भी विस्तार से समझाने का प्रयास है। यहां यह भी समझना आवश्यक है कि चिपको आंदोलन नर्मदा बचाओ पर्यावरणीय न्याय आंदोलन ग्रीनपीस समेत विभिन्न पर्यावरणीय आदोलन भी समाज और पर्यावरण सम्बन्धों के बीच की उस अवस्था में संतुलन स्थापित करने में के प्रयास रहे जो जाहिर तौर पर समाज की ओर झुकाव में तो थे लेकिन लंबे समय के परिणामों को ध्यान में रखा जाये तो यह न तो समाज और न ही पर्यावरण के पक्ष में रह सके

पर्यावरणीय समाजशास्त्र का उदभव

पर्यावरणीय समाजशास्त्र के उद्भव के बारे में चर्चा से पहले हमें गिफर्ड पिन्शो जॉर्ज पर्किन्स मार्श आल्डो लियपोल्ड एवं अन्य संरक्षणवादियों तथा जॉन म्योर रॉबर्ट मार्शल व अन्य परिरक्षावादियों के योगदान पर ध्यान देना होगा, जिन्होंने जीवमंडल एवं इससे संबद्ध पारिस्थितिकी तंत्र के नाजुक होने और पर्यावरणीय मुद्दों के समाजशास्त्र और पर्यावरणीय समाजशास्त्र के अंतर को स्पष्ट किया है। हन्निगन बताते हैं पर्यावरणीय मुद्दों के समाजशास्त्र का अर्थ पारंपरिक सामाजिक दृष्टिकोण के संदर्भ में पर्यायणीय कार्यकर्ताओं समूहों की ओर से तैयार की जाने वाली रणनीतियों और इनके जरिये तप होने वाले जनमत सामाजिक आदोलन औपचारिक संगठनात्मक कदम उठाये जाने से है।

जबकि पर्यावरणीय समाजशास्त्र पर्यावरण– समाज के सबंधों जैसे आधुनिक औद्योगिक समाज और उस भौतिक पर्यावरण के संबंध जिसमें यह समाज व्यवस्थित है के अध्ययन पर केन्द्रित है।

लव कैनाल प्रकरण

लव कैनाल अमेरिका के न्यूयॉर्क में नियाग्रा प्रपात के नजदीक का क्षेत्र है। यह क्षेत्र यहां रहने वाले लोगों के लिये बड़ी पर्यावरणीय आपदा का कारण बन गया था। दरअसल में यह क्षेत्र हुकर केमिकल कंपनी की ओर से फेंके जाने वाले रासायनिक कचरे का ढेर बन गया। समय के साथ आबादी बढ़ी तो खाली जमीनों पर रिहायशी क्षेत्र भी बढ़े। भवन निर्माण उसी भूमि पर किये जाते रहे जहां अपना कम्पनी रासायनिक कचरा फेंका करती थी। इससे हुआ ये कि बरसात के बाद अकसर गीली जमीन के भीतर से रासायनिक तत्व बाहर निकल आते थे जो यहा रहने वाले लोगों में बीमारियों का कारण बनने लगे।

सामाजिक पर्यावरण सम्बन्धों की परिकल्पना

इस इकाई में उपरोक्त सामाजिक पर्यावरणीय पारस्परिकता और अब तक हम इस में सन्दर्भ जिन बिंदुओं पर चर्चा कर चुके है, उनके आधार पर यदि समाज पर्यावरण संबंधों को परिभाषित करें तो यह स्पष्ट होता है कि यह ऐसी स्थिति है, जिसमें उन सामाजिक पारिथितिकी में मानवीय क्रियाकलाप पर्यावण को प्रभावित करते हो और इनके परिणामस्वरूप पर्यावरण के स्वरूप में अन्तर स्पष्ट परिलक्षित होता हो । इन संबंधों में वे तरीके भी शामिल हैं, जिनके जरिये समाज और पर्यावरण की पारस्परिकता को आसानी से समझा जा सकता है और आवश्यक कदम उठाये जा सकते हैं।

हालांकि इन पारस्परिकताओं को इसलिये भी महत्व मिलता है क्योंकि मानव जीवन के अस्तित्व के लिये जैवभौतिकीय पर्यावरण अत्यावश्यक है। समाज और जैवभौतिकीय पर्यावरण के मध्य के इस संबंध की आवश्यकता और समझ विकास के नये परिणामों के कारण

निरन्तर परिवर्तित होती है।

मानवीय पारिस्थितिकी मॉडल

रॉबर्ट ई. पार्क ने वर्ष 1920 में चार्ल्स डार्विन एवं अन्य विशेषज्ञों के जैवभौतिकीय पर्यावरणीय सिद्धांतों की श्रृंखला को ध्यान में रखते हुये मानव पारिस्थितिकी मॉडल (Human Ecology Model) का प्रतिपादन किया।

पार्क ने अपने अध्ययन के जरिये प्रकृति में पौधों वनस्पतियों एवं जन्तुओं अन्त सम्बन्धों एवं परस्पर निर्भरता को समझाने के साथ इसे मानवीय सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति एवं समुदाय के अंतसंबंध एवं परस्पर निर्भरता के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया।

वह इसे जीवन के संजाल (Web of Life) के रूप में वर्णित करते हैं, जो जैवभौतिकीय तंत्र में जीवों के उत्तराधिकार पर आधारित है, जिसमें परस्पर ऊर्जा ए अन्तसम्बन्धों व पोषण के एक दूसरे को हस्तांतरण से इस तरह होता है। कि प्राकृतिक व्यवस्था में जैविक संतुलन (Biotic Balance) या पारिस्थितिकीय संतुलन (Ecological Balance) बना रहे। वह जैविक संतुलन के रूपक का प्रयोग मानव समाज में सामाजिक संतुलन (Social Equilibrium) को स्पष्ट करने में भी करते हैं। जीवन के संजाल का मूल सिद्धांत प्रतिस्पर्धा (Competition) और अस्तित्व के लिये संघर्ष (Struggle For Survival) है। ये वे प्रक्रियाएं हैं जो प्रकृति अथवा समाज में स्थापित संतुलन को भंग करती है।

यह भगुरता अस्तित्व के लिये संघर्षवानों के भौतिक या सामाजिक पर्यावरण में शरण प्राप्त करने के प्रयासों और पारिस्थितिकी तंत्र या मानव समाज में लोगों की श्रेणियों में श्रम विभाजन से भी आती है।

मानवीय समाज में यह असंतुलन की स्थिति सामान्यतः सूखा रोग, युद्ध, शहरी विकास की अति और औद्योगिक प्रदूषण की वजह से देखी जाती है जो सामाजिक पर्यावरण में जीवन के संजाल की कड़ियों को तोड़ देती है।

हालांकि, वह मानते थे कि इस प्रकार के परिवर्तनों में ऐसी नयी और प्रायः बेहतर क्षमता होती है जो भावी अनुकूल रूपांतरण बदलाव और नये संतुलन की स्थापना का काम करती है (Hannigan 1995).

समाजः पर्यावरण पारस्परिकता

समाज– पर्यावरण पारस्परिकता को समझाने के लिये डब्ल्यू कॉटन और और डनलप नै पर्यावरण के तीन प्रतिस्पर्धी कार्यों को स्पष्ट किया जो मानव समाज के लिये उपयोगी है पर्यावरण मानव समाज के लिये जीविका के आधार अथवा आपूर्तिकर्ता के तौर पर काम करता है। मनुष्यों को हवा, पानी.. भोजन, जंगल, ईंधन और अपने दैनिक उपभोग उपयोग की वस्तुओं के उत्पादन को कच्चा माल पर्यावरण से मिलता है। पर्यावरण इन सभी नवीकरणीय (उदाहरण के लिये वन) और गैरनवीकरणीय (जैसे जीवाश्म ईंधन) प्राकृतिक संसाधनों का स्रोत है। हालांकि, जब हम इन संसाधनों का पर्यावरण के प्रदान करने की गति से अधिक रफ्तार से दोहन करने लगते हैं तो यह स्थिति संसाधनों के अभाव को बढ़ाती है।

समाजः पर्यावरणीय द्वन्द

1970 के दशक में सार्वजनिक चिंताओं में उभरती पर्यावरणीय समस्याओं को ध्यान में रखते हुये इनके परीक्षण के उद्देश्य के साथ पर्यावरणीय समाजशास्त्र में सामाजिक व्यवस्था एवं भौतिक पर्यावरण के ढांचागत सम्बन्ध का अध्ययन प्रारम्भ हुआ।

एलेन श्राईवर्ग ने अपने अभूतपूर्व अध्ययन के माध्यम से आधुनिक औधौगिक समाज की प्राकृतिक परिवेश से बढ़ती मांग – दोहन और इसके कारण पर्यावरण की स्थिति में लगातार गिरावट की वजह से समाज और पर्यावरण के मध्य बढ़ते द्वन्द को समझाने का प्रयास किया।

उन्होंने अपने शोध में समाज पर्यावरण के परस्पर प्रभावों का परीक्षण किया उनके अनुसार समाजों का आर्थिक विस्तार अनिवार्य रूप से पर्यावरणीय निष्कर्षण को बढ़ाता है।

पर्यावरणीय निष्कर्षण में वृद्धि अनिवार्य रूप से पारिस्थितिकीय समस्याओं का कारण बनती है, जिसके अंतर्गत प्राकृतिक जैविक व्यवस्था के जाने से लेकरस्थिर (गैर नवीनीकरणीय) संसाधनों के हास तक परिणाम सामने आते है के तक परिणाम सामने आते है.

ये पारिस्थितिकीय समस्याएं आगे चलकर आर्थिक विस्तार की प्रक्रिया में बाधा बन जाती है ये बिंदु आर्थिक विकास और पर्यावरणीय गिरावट के अनिवार्य अंतर्विरोधी सम्बन्धों को रेखांकित करते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि एक सघन औद्योगिक समाज अपने निरंतर आर्थिक विकास के लिये पारिस्थितिकी तंत्र से तब भी निरंतर संसाधनों की मांग दोहन करता है, जबकि पारिस्थितिकी तंत्र की संसाधनों के विकास, उत्पादन की सीमाएं या तो समाप्त हो चुकी हों अथवा पारिस्थितिकी आगे ऐसा कर पाने में अक्षम हो आगे श्राईबर्ग उन्नत औद्योगिक समाजों में नीति निर्धारण की प्रक्रियाओं के दौरान पर्यावरण संरक्षण एवं आर्थिक विस्तार की निरन्तर बढ़ती मांग के बीच तनाव की दन्दात्मक भी पहचान करते हैं। इस परिदृश्य में राज्य को आर्थिक विकास को बढ़ावा देने वाले और पर्यावरणीय नियंत्रक के तौर पर अपनी दोहरी भूमिका में संतुलन स्थापित करना आवश्यक हो जाता है।

एलेन श्राईबर्ग ने अपनी पुस्तक The Environment From Surplus to Scarcity (1980) में उत्पादन का टडमिल (Treadmill of Production) दृष्टिकोण के जरिये समाज पर्यावरण द्वंद्वको और विस्तार से विश्लेषणात्मक तरीके से स्पष्ट किया है।

पर्यावरणीय दुर्दशाएं

आधुनिक औद्योगिक समाज और पर्यावरण के परस्पर प्रभाव ने कई पर्यावरणविदों एवं पर्यावरणीय समाजशास्त्रियों को सतत स्थिरता के लिये पेश हुयी चुनौतियों पर ध्यान देने को प्रेरित किया है। विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं और इनसे सामाजिक व्यवस्था पर पड़ने

वाले असर के परीक्षण की आवश्यकता महसूस की जाने लगी है। इसके अलावा पर्यावरणीय चिंताओं और समस्याओं को लेकर सामाजिक उत्तरदायित्व एवं प्रतिक्रिया को भी समझना आवश्यक है। यहां हम सततता को नुकसान पहुंचाने वाले कुछ बड़े मसलों पर चर्चा करेंगे

वैश्विक तापमान वृद्धि यानी ग्लोबल वार्मिंग

जीवाश्म ईंधन जैसे कोयला गैस तेल और लकड़ी जंगलों को जलाने से पृथ्वी के वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा में तेजी से हुयी वृद्धि . का परिणाम ग्लोबल वार्मिंग

अम्ल वर्षा

पृथ्वी के वातावरण में सल्फर डाई ऑक्साइड ैनसनित क्पवगपकम) और नॉक्स (छव्ग) उत्सर्जन वातावरण में मौजूद पानी से मिलता है तो इसका परिणाम अम्ल वर्षा के रूप में सामने आता है। अम्ल वर्षा प्रत्यक्ष रूप से वनस्पतियों के 8 ऊतकों को नुकसान पहुंचाती है, मिट्टी की उपजाऊ क्षमता को नष्ट करती है जिसका असर फसलों के उत्पादन में गिरावट के तौर पर दिखता है।

इसके अलावा यह जलस्रोतों के पानी में अम्लता की वृद्धि करने की वजह बनती है, जो मछलियों मेढकों और अन्य जलीय जंतुओं के जीवन के लिये खतरा बनता है। यहां तक कि वनक्षेत्रों में भी यह जंतुओं की मौतों का कारण बनती है। चीन के जंगलों में किये गये कई अध्ययनों ने स्पष्ट किया है कि जिन जंगलों में अम्ल वर्षा दर्ज की गयी।

वहां पतझड़ दर में 40 प्रतिशत तक की वृद्धि देखी गयी दुनियाभर में नाइट ओजोन उत्सर्जन को कम करने के लिये कदम उठाये जाने के बावजूद अम्ल वर्षा लगातार चिंता का कारण बनी हुयी है। 1.4.5 अन्य पारिस्थितिकी द्वास (व्जीमत म्बवेलेजमउ क्पेतनचजपवदे) विकास के नाम पर कृषि एवं औद्योगिक विस्तार के माध्यम से जैसे जैसे अधिक से अधिक लोग प्राकृतिक पर्यावरण के संसाधनों का आवश्यकता से अधिक उपयोग उपभोग करते हैं, वैसे वैसे जल और भूमि (वायु प्रदूषण की चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं) में भी क्षरण प्रदूषण की समस्याएं सामने आती हैं। इन सबके कारण धरती की सततजीविता की क्षमता पर भी बुरा असर पड़ता है। यहां हम ऐसी कुछ चिंताओं पर ध्यान देंगे मृदाक्षरण ैवपस मतवेपवद) यह हवा और पानी के संपर्क में आने के कारण मृदा यानी मिट्टी की उच्च पोषक परत के धीरे धीरे नष्ट होने की प्रक्रिया है। सामान्यतः मृदाक्षरण की दर पारिस्थिति प्रक्रियाओं के जरिये मृदा की प्रतिस्थापना की दर से कहीं अधिक है। अनुमान के अनुसार दुनियाभर की 23 प्रतिशत के करीब कृषि भूमि, चारागाह भूमि, वनक्षेत्र में मृदाक्षरण के कारण गिरावट आयी है। ऊपरी मिट्टी का कटाव न सिर्फ कृषि उत्पादन पर नकारात्मक असर डालता है बल्कि जल प्रदूषण के जरिये पानी की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है। क्योंकि मिट्टी में मिलायी जाने वाली खाद, कीटनाशक मृदाक्षरण के साथ पानी की धाराओं, नदियों और भूजल में जाकर मिल जाते हैं। इस कारण से खाद्य पदार्थों में कीटनाशकों के मिले होने की आशंकाएं भी बढ़ जाती हैं जो मानव अन्य जीव प्रजातियों के स्वास्थ्य को बड़ा खतरा है। लवणीकरण एवं जलभराव (Salinisation and Water logging) 20 वीं सदी में दुनियाभर में आबादी की बढ़ोतरी के साथ सिंचाई वह साधन बन गयी, जिसके जरिये इस आबादी को भोजन उपलब्ध कराने के लिये आवश्यक फसल उत्पादन किया जा सके । लेकिन सिंचाई भी मिट्टी के लवणीकरण का कारण हो सकती है। चूकि सिंचाई अधिकतर सूखे क्षेत्रों में की जाती है, इन जगहों पर सूर्य की तेज किरणें अधिकतर जल को वाष्पीकृत कर देती है और भूमि में मात्र लवण को छोड़ देती हैं। इजिप्ट और चीन समेत दुनिया के कई क्षेत्र अत्यधिक लवणीकरण की समस्या से जूझ रहे हैं

सिंचाई खराब जलनिकासी वाली मिट्टी वाले क्षेत्रों में जलभराव का भी जरिया बनती है। जलभराव जलजमाव वह स्थिति है, जहां बारिश, उच्च जलवहाव अपवाह, भूजल स्तर में वृद्धि, वाद या अत्यधिक सिंचाई के कारण जलनिकासी की समस्या के कारण पानी जमा होता जाता है।

जलनिकासी की समस्या निम्न जलप्रवाह वाष्पीकरण की दर में गिरावट कृषि भूमि में विस्तार या अन्य मानवीय गतिविधियों के लिये जंगलों के कटान (जैसा कि पश्चिमी आस्ट लिया के मामले में देखा गया) की वजह से पैदा होती है। इस प्रकार अत्यधिक सिचाई दलदल के निर्माण और मृदा के लवणीकरण, दोनों की ही वजह है जल की कमी (Water Shortage) : 21 वीं सदी में जल की कमी बड़ी चिंता है। मध्य पूर्व देशों जैसे जल चिंता से जूझ रहे कई क्षेत्रों में किये गये अध्ययन यह स्पष्ट करते हैं कि इन देशों में न तो अपनी कृषि औद्योगिक आवश्यकताओं और न ही जनसंख्या के रिहायशी और दैनिक जरूरतों के उपयोग के लिये पर्याप्त जल संसाधन उपलब्ध है। यहां तक कि कई ऐसे देशों में भी जन की कमी लगातार बढ़ रही है. जो फिलहाल जल चिंता से नहीं जूझ रहे है। भूजल स्तर के संसाधनों का तेजी से हास जलस्तर में गिरावट की बड़ी वजह है। शहरी क्षेत्रों में दैनिक उपयोग और ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कार्यों के लिये भूजल के उपयोग की दर इसके पुर्न भन्डारण की दर से कहीं अधिक है। भूजल का अत्यधिक उपयोग न सिर्फ जलस्तर में गिरावट का कारण बनता है।

सामाजिक उत्तरदायित्व

मानव समाज लंबे समय से जिन तरीकों से पर्यावरण को प्रभावित करने के साथ पारिस्थितिकी तन्त्र अन्धाधुन्ध दोहन उपभोग करता रहा है, उसने कई पारिस्थितिकीय क्षतियों और चिन्ताओं को बढ़ावा दिया है। इन चिंताओं पर विमर्श और इनका हल तलाशना अब जरूरी हो गया है। पर्यावरणीय समस्याओं को दो स्तरों (1. वैचारिक और 2 क्रियान्वयन या व्यावहारिक) में अवधारित किया गया है। यहां हम इनकी चर्चा करेंगे। वैचारिक स्तर पर (At the level of ideas) पर्यावरणविद वैज्ञानिक और समाजशास्त्री संरक्षणवाद, परिरक्षणवाद नये पारिस्थितिक प्रतिमान (New

Ecological Paradigm NEP) मानवीय मुक्तिवाद प्रतिमान 10 (Human Exemptionalism Paradigm HEP), उत्पादन के ट्रेडमिल (Treadmill of Production society environment dialectic) पारिस्थितिकीय आधुनिकीकरण, राजनीतिक, पारिस्थितिकी, समाज जोखिम परिकल्पना, सामाजिक पारिस्थितिकी, पर्यावरणीय न्याय, गहन पारिस्थितिकी, पारिस्थितिकीय नारीवाद, पारिस्थितिकीय अपराध, हरित अपराध संकटग्रस्त जंतु अध्ययन और यथार्थवाद बनाम निर्माणवाद, सह निर्माणवाद जैसे सिद्धातों के माध्यम से पर्यावरणीय समस्याओं को उद्घाटित करते है।

निष्कर्ष:

कियान्वयन या व्यावहारिक स्तर पर (At the level of practices) दुनिया के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न पर्यावरणीय न्याय सम्बन्धी आन्दोलनों ने अन्तराष्ट्रीय स्तर पर अपनी उल्लेखनीय उपस्थिति दर्ज करायी है। इनमें अमेरिका का सियेरा क्लब, ग्रीनपीस आन्दोलन अर्थ ऑवर दुनियाभर के चिर परिचित अभियान रहे हैं। भारत भी ऐसे कई अभियानों आदोलनों का देश रहा है, जिनमें चिपको आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन, साइलेंट वैली आदोलन, अप्पिको आन्दोलन, खनन विरोधी आंदोलन, जीएम फसल विरोधी आन्दोलन शामिल हैं। पर्यावरणीय चिताओं के ये दोनों आयाम एक दूसरे से इस प्रकार निरन्तर सम्पर्क सबंध में रहते हैं कि शक्ति राजनीति सामाजिक असमानता और अंतर्विरोध द्वन्द पर्यादणीय चिताओं के स्वरूप को – निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

References

1. संस्करण हजार ओक्स पाइन फोर्ज प्रेस सीएः साधु प्रकाशन भारत अध्याय 129, डनलप, आर. ई और यूजीन ए. रोजा 2000
2. पर्यावरण समाजशास्त्र में प्रवेश (पीपी एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशियोलॉजी दूसरा संस्करण।
3. खंड 2. ई. एफ. बोरगट्टा और रोंडा जे. पी. मैकमिलन संदर्भ द्वारा संपादितां यू एस ए (पीपी 800 हैनिगन, जे. ए. 1995 – 813) पर्यावरण समाजशास्त्र । दूसरा मोंटगोमरी संस्करण।

डॉ० बुद्धप्रिय सिद्धार्थ

असिस्टेट प्रोफेसर समाज शास्त्र विभाग

ठाकुर रोशन सिंह संघटक राजकीय महाविद्यालय नवादा

दरोवस्त कटरा,

शाहजहांपुर (उ०प्र०)

मो० नं०– 9415587252

Email – dr.buddhapriya@gmail.com

39

साहित्य में किन्नर विमर्श

डॉ0 प्रशान्त गौरव

सारांश

साहित्य जिस तरह समाज को परिष्कृत करती है उसके मूल्यों को समवर्धित करती है। ठीक वैसे ही समाज भी अपनी वेदनाओं, समस्याओं, भिन्नताओं तथा असमान्यताओं से साहित्य को भी परिष्कृत और समवर्धित करती जाती है। निःसंदेह समाज की कई विडम्बनाओं पर सहानुभूति–पूर्वक चर्चा कर साहित्य ने उनसे जुड़ी विकृतियों और असंगतियों को बहुत हद तक परिमार्जित कर अपनी सार्थकता को सिद्ध किया है। यह साहित्य में कई प्रकार के विमर्शों के रूप में सामने आता है जैसे– स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, बाल विमर्श, पर्यावरण विमर्श, विकलांग विमर्श आदि। जब साहित्य ने इन समस्याओं पर गहन परिचर्चा छेड़ी उसके परिणाम हम सबों के सामने है। स्त्रियों ने अपनी शक्ति को समझा, आदिवासी भी अब मुख्य धारा में आने लगे हैं, दलित की तो परिभाशा ही बदल गई है। जहाँ दलित विशेष जाति सूचक होते थे वहाँ अब दलित स्वर्णों (EWS) की बात होती है और इनके लिए भी अब आरक्षण की व्यस्था हुई है। तात्पर्य यह है कि जाति सूचक दलित का अर्थ बदल कर अब यह आर्थिक स्थिति की सूचक रह गई है। साहित्य ने इसमें महती भूमिका निभाई। इसी प्रकार अभी हाल ही से वैश्विक साहित्य में विकलांगों की दशा पर काफी चर्चा हुई जिसकी परिणती है कि संयुक्त राष्ट्र ने इनके अधिकारों के लिए अलग से व्यवस्था की है। हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 'दिव्यांग' शब्द का प्रयोग कर इन्हे यथेचित सम्मान प्रदान किया। नौकरियों तथा प्रवेश–परिक्षाओं में इनके लिए व्यस्था की गई है। साहित्य ने अपने सामर्थ्य से सहानुभूति पूर्वक इस विशय पर चर्चा कर समाज के मनोदशा को इस प्रकार बदला की अब विकलांग होना मतलब अभिशप्त होना नहीं रह गया है।

ऐसा ही एक मौजू विमर्श ने साहित्य में जोरदार दस्तक दिया है जिसका नाम है 'किन्नर विमर्श'। यह विमर्श उस तीसरे लिंग (थर्ड जेंडर) की बात करता है जिसे समाज ने 'लैंगिक विकृति' मानकर सामाजिक जीवन में किसी कोटि का नहीं रखा था, इन्हें 'हिजड़ा' कहकर पूर्व संचित पाप कर्मो का फल मानकर एक तिरस्कृत जीवन–जीने वाले लोगों के रूप में समझा जिनकी समाज में कोई भूमिका नहीं थी अर्थात् वे पूर्णतः हाशिए पर रह गए, किंतु बीतें दो–तीन दशकों से साहित्य ने इनकी पीड़ा को समझा उसे अपनी रचनाओं में स्थान दिया इनकी गरिमा की भी बात कही, इनकी महिमा की भी बात कही और एक नया विमर्श चल पड़ा जिसका नाम है 'किन्नर विमर्श'। इसे 'थर्ड जेंडर' के लिए प्रयुक्त कई सारे नामों से 'किन्नर' नाम कुछ अधिक गरिमा पूर्ण है। देवों की कई कोटियों में एक किन्नर कोटि भी है और यहीं से यह शब्द लिया गया है और इनकी कथा–व्यथा की साहित्य में उपस्थिति को किन्नर विमर्श के नाम से जाना गया। इस विमर्श ने अभी बहुत उपल्बिध तो नहीं पाई है किंतु कई मानवाधिकार संगठनों, सामाजिक संगठनों, वैश्विक संगठनों ने इनके सम्मान, आजीविका, सुरक्षा आदि के अधिकार की वकालत करनी शुरू कर दी है। कई देशों के संविधानों में इन्हें संवैधानिक सुरक्षा प्राप्त है।

अप्रैल 2014 में भारत के सर्वोच्च न्यायालाय में थर्ड जेंडर (तृतीय लिंग) के रूप में किन्नरों को परिभाषित किया गया। इसके बहुत पूर्व संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सन् 1945 में मानवाधिकारों के संदर्भ में जारी–घोषणा–पत्र के अनुसार रंग, लिंग, प्रजाति, भाषा, धर्म, राजनीति, पद, जन्म, सम्पत्ति या अन्य किसी भी आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जायेगा। भारत का संविधान भी इसी बात को कहता है (भाग –3, अनु. 14–18) कि जाति, धर्म, जन्मस्थान और लिंग के आधार पर भेद–भाव गैर कानूनी है। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी लिंग भेद वर्जित है। इसके बावजूद इन किन्नरों के प्रति हमारा नजरिया नहीं बदला है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता में केन्द्रीय कैबिनेट ने 19 जुलाई 2017 को ट्रांसजेंडरों के अधिकार–संरक्षण बिल को पारित किया जिससे शिक्षा और अर्थिक क्षेत्र में स्वतंत्रता पूर्वक जीने का अवसर मिल सके। इससे प्रेरित होकर कई राज्यों के सरकारों में भी विभिन्न लोकोपयोगी और पुनर्वास–संबंधी योजनाएँ बनाई जा रही है। दक्षिण भारत के केरल राज्य में किन्नर कल्याण–बोर्ड की स्थापना प्रसन्नता का संदर्भ है।

साहित्य में किन्नर विमर्श की चर्चा करते हुए सबसे पहले हमारे हिन्दी साहित्य की उन रचनाओं पर प्रकाश डालेंगे जिनमें 'किन्न विमर्श' मुखर है। उनके नाम इस प्रकार हैं– यमदीप (2002), मैं भी औरत हूँ (2005), तीसरी ताली (2011), किन्नर कथा (2012, गुलाम मंडी (2014), मै पायल (2016), पो.वाक्स नं. 203 नाला सोपारा (2016), जिन्दगी 50–50 (2017), अस्तित्व (2017), दरमियान (2018), आधा आदमी (2018), अस्तित्व की तलाश में सिमरन (2019) आदि हिन्दी के उपन्यास है 'वहीं मैं क्यों नहीं?' मराठी और 'वाडामल्लि' तमिल उपन्यास हैं।

महेंद्र भीष्म कृत किन्नर–कथा (2012) एवं मैं पायल (2016) उपन्यास में किन्नर जीवन के संघर्षों, अंतर्द्वंद्वों की दारूण दशा का जीवंत वर्णन है। लेखक ने इस उपन्यास के माध्यम से किन्नरों को मुख्य धारा में लाने का सार्थक प्रयास किया है। 'किन्नर–कथा' के केन्द्र में नकली किन्नरों के आतंक से बदनाम हो रहे समाज पर प्रकाश डाला गया है– ''नकली हिजड़ों की संख्या दिनों–दिन बढ़ती जा रही है जो पैदाइशी हिजड़ों पर हावी हो रहे हैं। उनके हिस्से की कमाई हड़प रहे हैं और मारपीट तक पर आमदा रहते हैं।''[1] उपन्यास का पात्र

अपनी पीड़ा कहता है – ''साहब असली हिजड़ा कभी दो–चार रूपये के लिए मेले–ठेले में भीख मांगते नहीं घूमते। पैसा न मिलने पर किसी को कोसते नहीं है और न लड़ाई–झगड़ा करते हैं। असली हिजड़ा मन और आत्मा से स्त्री होता है। शरीर उसका पुरूष की तरह हो सकता है पर मन से वह एक पुरूश का साथ चाहता है। स्त्री की तरह उसकी चाहत पुरूष से जुड़ने की होती है जबकि नकली हिजड़े पुरूश होते हैं और सेक्स के लिए स्त्री की चाहत रखते हैं।''[2] पीड़ा का एक स्वर और देखिए ''.....चीख–चीख के कह रही थी, आज साला कोई नामर्द हत्थे चढ़ जाता तो बताती। साले को चीर कर रख देते ..... रण्डुवे, तीन–तीन बच्चों के बाप बन बैठे और साड़ी पहन कर हमारा हक मारने पर तुले हैं, भिखारी कहीं के धंध बना लिया है हरामियों ने बहुचर माई नरक में भेजेगी इनको, बहुत शौक है हिजड़ा बनने का। जाओ सालो, बहुचर माई अगले जन्म में तुम सभी की मुराद पूरी कर देंगे। तब ये साले जानेंगे की हिजड़ा होने का क्या दर्द होता है। खाली रूपया–पैसा ही सब कुछ नहीं होता है।''[3]

इसी क्रम में भगवत अनमोल का उपन्यास 'जिन्दगी 50–50', (2017) अपने नाम के अनुसार नर–नारी के आधे–अधूरेपन को सामने ही नहीं लाता बल्कि 'किन्नर विमर्श' के बहाने 'स्त्री' और 'बिकलांगों' की समस्याओं को भी उभारा है। उपन्यास की कथा रामलखन तिवारी का एक पुत्र 'हर्षा' की है। 'हर्षा' किन्नर होने के कारण बचपन से ही उपेक्षा का शिकार है। पिता के द्वारा प्रताड़ित अपमानित होता रहा है। उसका भाई अनमोल पिता के इस अमानवीय व्यवहार से आहत है लेकिन प्रतिकार करने की स्थिति में नहीं है। 'हर्षा' अपने नाम के विपरीत दुःखी रहता है उसकी पीड़ा उसी के शब्दों में ''इतने वर्षों में मैं यह समझ गई थी कि यह समाज मुझे प्यार तो छोड़ो, मुझे समझने की भी काशिश नहीं कर सकता। आखिर मेरी गलती क्या है? मेरा एक अंग अविकसित है। बस इतनी ....सी! शायद इस तथाकथित समाज में सारा फसाद सिर्फ इसी अंग को लेकर होता है।.....स्कूल से लेकर घर–बाहर तक हर कोई मेरा मजाक उड़ाता है। गाहे–बेगाहे मुझे हिजड़ा कहने से कोई चूकता नहीं।.....पुरूष, महिला या अन्य, हर वक्त मुझे यह एहसास दिलाया जाता है कि मैं हर किसी से अलग हूँ''[4] घर–परिवार में उसकी भावनाओं को समझने वाला कोई नहीं था। माँ मजबूर दिखती है। पिता जिस पुत्र को अपमानित करते हैं नरकीय जीवन जीने को मजबूर करते हैं वही किन्नर पुत्र दुर्दिन के दिनों में पिता के लिए वरदान साबित होता है उनके लिए 8 लाख रूपये कर्ज की जुगाड़ करता है। इसके माध्यम से लेखक ने किन्नरों की संवेदना; परोपकार और सेवा भावना को प्रकट किया है। हर्षिता अपने अधूरेपन पर क्षुब्ध होकर समाज को कोसता है – '' किन्नर होना इतना बड़ा अभिशाप क्यों हैं, बस मेरा अधूरापन ही तो न? कैसे–कैसे पल आए। इस शरीर ने सब भुगता, सब सहा। जिस शरीर को लोग मजाक उड़ाते हैं, उसे ही रात को अपने मन बहलाने का जरिया बना लेते हैं। अच्छा है, इन लोगों से दूर अपना एक समुदाय है। मेरे शारीरिक अस्तित्व में दुहरापन है लेकिन उस तथाकथित समाज के व्यक्तित्व के दुहरेपन पर मैं थूंकती हूँ। बचपन में मेरे बाबूजी को ये लोग न सताते तो मैं भी पढ़–लिखकर कुछ बन जाती। खींसे निपोटर सड़क पर भीख माँगती नजर नहीं आती। उस पर एक के बाद एक इस शरीर पर हुए अत्याचार याद आता है तो खौफ से सिहर जाती हूँ।''[5]

किन्नरों के जीवन पर डॉ. मोनिका देवी द्वारा लिखित उपन्यास 'अस्तित्व की तलाश में सिमरन' (2019) द्रश्ट्व्य है, जिसमें सिमरन के संघर्श की जीवन गाथा है। सिमरन का बालपन माँ–बाप की स्नेह छाया में बीता तथा सामान्य संतानों तरह वह बड़ी होती जा रही थी। उसके शरीर में आए अलैंगिक बदलाव और किन्नर–स्वभाव को देखकर परिवार सन्न रह गया। परिवार उसकी मनोस्थिति को समझने की जगह उसके कोमल भावनाओं को आहत करने लगा। उसके साथ जानवरों जैसा सलूक करने लगा। किन्नरता से अभिशप्त सिमरन घुट–घुटकर जी रही थी। उसका मित्र बॉवी उसे समझता है '' यह समाज तुमको समझने वाला नहीं है। यहाँ कितनी मेहनत से काम कर लो, उसके बाद भी तुम्हारी पहचान वही रहेगी जो तुम हो।''6 सिमरन अपनी वेदना साझा करती हुई कहती है लोग बिल्ली–कुत्ते पाल लेते हैं लेकिन किन्नर तो संभवतः उससे भी बदतर हैं। वह किस्मत को ही दोश देती है। घर में आर्थिक सहयोग करने के उपरान्त भी सिमरन के लिए घर में कठोर नियम कानून थे। वह अपनी रूचि से कपड़े भी पहन नहीं सकती थी। इन पाबंदियों और रोक–टोक का दुश्परिणाम यह हुआ कि सिमरन स्वभावतः अंतर्मुखी होती चली गई। आर्थिक विपन्नता की स्थिति में वह ट्रेन में सफर करती और लोगों से पैसे वसूलती। इस दौरान उसका संपर्क राजवीर से हुआ। संबंध इतने घनिष्ठ हो गये कि अब राजवीर उसके सुख–दुःख की साथी हो गया। इसी बीच सिमरन एक समाजसेवी संस्था से जुड़कर एचआईवी संक्रमित के जागरूकता के लिए कार्य करने लगी। जहाँ उसकी मुलकात चम्पा गुरू से हुई। उसने उसे किन्नर समाज में दीक्षित किया। उसका 'निर्वाण' संस्कार संपन्न कराया गया, चालीसवें दिन 'गोद–भराई' में बहुचरा माता की उपासना कर किन्नर बनाया गया। अब सिमरन विधिवत किन्नर बन चुकी थी और अपने दायित्व का बखूबी निर्वाह भी कर रही थी। इस दुर्दशा के लिए वह अपनी परिवार को दोशी मानती है। सिमरन को पूरा जीवन संघर्षों और स्व अस्तित्व की तलाश है। अब वह प्रतिदिन स्टेशन में जाकर भीख मांगती, अपने गुरू के हर निर्देश का पालन करती जहाँ उसके द्वारा उपार्जित आय का बड़ा हिस्सा चम्पा द्वारा ले लिया जाता। इस उपन्यास के माध्यम से डॉ. मोनिका ने किन्नरों की यथार्थ जीवन की पड़ताल की है।

निष्कर्षतः

हम कह सकते हैं कि साहित्य किन्नर विमर्श के माध्यम से भले

ही सीधे तौर पर किन्नरों के हितों के लिए नीतियों का निर्धारण नहीं कर पा रहा हो किन्तु इसने 'नजरिये' को बदलने की दिशा में बड़ी कोशिश कर रहा है। अगर समाज का नजरिया बदल जाये और वह किन्नरों को किसी अजूबा, अजनवी, विकृत रूप में न देखकर उनपर हिकारत भरी दृष्टि न डालकर उन्हें भी हमारे जैसे एक सामाजिक वैयक्तिक इकई के रूप में मान्यता दे तो इन्हें भी जीवन की गरिमा प्राप्त हो पायेगी। इनके प्रति मानवतावादी उदात्तता को उभारने की जरूरत है। जो शनैःशनैः साहित्य कर रहा है। एक किन्नर होने में न माँ–बाप का दोश है और न ही संतान की गलती, तो फिर ये किसी भी प्रकार के उपेक्षा के शिकार क्यों?मात्र एक लैंगिक विकृति के कारण उनके जीवन के अन्य पक्षों– भावनाओं, संवेदनाओं आदि की अनदेखी उचित नहीं है। यह नजरिया विकसित करना होगा कि वे हम लोंगों के बीच में हमारे जैसे ही लोग हैं। जिनमें भी प्रेम, घृणा, ईर्श्या–द्वेश, काम–भावना उसी रूप में पलती है जैसे हम सबों में। सबसे पहले तो यह आवश्यक है कि किसी किन्नर संतान को दूसरों की दृष्टि से न देखकर उनकी मनोभाओं को समझने की कोशिश की जाए। महादेवी वर्मा ने अपने एक निबंध 'जीने की कला' में किन्नरों को अर्धनारिश्वर की संज्ञा देते हुए कहा है कि– ''एक गुण होने पर पुरूष उसे प्रचारित करके प्रकर्श पर पहुँच जाता है लेकिन अपने आंतरिक मानवीय गुणों की खान होते हुए भी नारियों पार्श्व में रहती हैं क्योंकि जीने की कला से वे अनजान हैं। तात्पर्य यह है कि नारियों में जो मानवीय गुण है वे उसे उदात्त ही नहीं बनाते, वरन् पुरूषों के साथ पूरकता के रूप में प्रस्तुत होकर सार्थकता की सिद्धि भी करते हैं। वस्तुतः किन्नर में स्त्रीत्व भी है और पुरूषत्व भी इसलिए ये सही अर्थों में 'अर्धनारीश्वर' के ही आधुनिक स्वरूप हैं।

संदर्भ ग्रंथों की सूचीः–

1. 'किन्नर कथा' – महेन्द्र भीश्म, सामयिक बुक्स, नयी दिल्ली, पृ. –60
2. वही पृ.–91
3. वही पृ.– 88
4. 'जिंदगी 50–50' – भगवत अनमोल, राजपाल एंड संस, नयी दिल्ली, पृ.163
5. वही पृ.–159
6. अस्तित्व की तलाश में सिमरन – डॉ. मोनिका देवी, माया प्रकाशन, कानपुर पृ.–39

डॉ0 प्रशान्त गौरव
सहायक प्राध्यापक
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग
गोस्सनगर महाविद्यालय, रांची (झारखण्ड)
पिन : 835303
9430408221

40

मुण्डाओं का पर्व–त्योहार : सामान्य परिचय

करम सिंह मुण्डा

सारांश

विश्व में हमारा देश भारत एक अनोखा देश है। विविधता में एकता यहाँ का मूल मंत्र है। जिस तरह भारत देश तीन और महासागर से तथा एक ओर विशाल हिमालय पर्वतमाला से घिरा हुआ है। सुन्दरता की इस अनुपम रूप को लेकर पूरी दुनिया में सबसे अलग है। कई धर्मों को मानने वाले लोग एक साथ रहते हैं। एक दूसरे के पर्व–त्योहारों में सहयोग और सौहार्द की भावना रखते है।

भारत देश कई राज्यों के समूह के रूप में हैं। प्रत्येक राज्य की अपनी अलग भाषा है, अलग संस्कृति है और अलग–अलग पर्व–त्योहार है। उन कई राज्यों में हमारा झारखण्ड भी एक राज्य है जिसकी अलग भाषा और संस्कृति है। यह जनजातीय बहुल राज्य है। जनजातियों की कुल संख्या 32 है। इनमें से संताल जनजाति है जो जनसंख्या की दृष्टि से प्रथम स्थान पर है। उराँव जनजाति दूसरे स्थान पर है और तीसरे स्थान पर मुण्डा जनजाति है।

आदिवासियों में मुण्डा एक प्रमुख आदिवासी (जनजाति) है। ये प्रोट्रो आस्ट्रोलायड अथवा 'आग्नेय' समूह में आते हैं। आदिवासी समुदायों में मुण्डाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। मुण्डा जनजाति एक अति प्राचीन आदिवासी समुदाय है जो मुख्य रूप से झारखण्ड राज्य में निवास करती है।

मुण्डा लोग अपने को 'होड़ो' कहते है जिसका अर्थ (आदमी) होता और अपनी भाषा को होड़ो जगर कहते हैं। मुण्डा जनजाति स्वभाव से अत्यंत सरल, साहसी, सहृदय एवं स्वाभिमानी होते हैं।

पी0 पोनेट के अनुसार – मुण्डा लोग सर्वप्रथम मध्य एशिया के इलाके में थे। जहाँ पर वे स्वतंत्र रूप से जीवन–यापन करते थे। कालान्तर में आक्रमणकारियों के आक्रमण के प्रभाव से मुण्डा लोग दक्षिण पूर्व एशिया की ओर तिब्बत होते हुए भारतवर्ष की पश्चिमी भाग में बस गये। फिर आजमगढ़ रोहतासगढ़ होते हुए छोटनानागपुर में आकर बस गये।

सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री शरत चन्द्र राय के अनुसार मुण्डा लोग छोटानागपुर में पश्चिम दिशा से 600 ई0पू0 में प्रविष्ट हुए।

मुण्डा जनजाति की बोली मधुर एवं स्वभाव शांत प्रकृति का होता है। मुण्डा समाज पितृसत्तात्मक परिवार है। संपत्ति का अधिकार पुत्र का होता है। परिवार एकल एवं संयुक्त दोनों प्रकार का होता है।

मुण्डा जनजाति संगीत प्रेमी होते हैं। अपने जीवन में हर पल उल्लास उमंग का संचार रहे इसलिए भांति–भांति पर्व–त्योहार मनाने की प्रथा है। वह केवल उमंग का प्रतीक नहीं है, बल्कि आत्मिक उत्थन का माध्यम भी है। दिव्य प्रेरणाओं से भरा पर्व बोझिल मन को जीने की एक नई उमंग, शक्ति प्रदान करता है। आपस में कटुता, ईष्या, द्वेष, राग इत्यादि को भुलाकर एक साथ जीने–मरने की ललक पैदा करता है। इसी उद्देश्य से पर्व–त्योहार मनाने की प्रथा है।

मुण्डा लोग प्रकृति पूजक हैं। अतः अधिकांश पर्व–त्योहार प्रकृति से सम्बन्धित है। वैसे तो मुण्डा जनजाति अनेक पर्व–त्योहार मनाते हैं, किन्तु उनके कुछ प्रमुख त्योहार निम्नवतः हैं :–

फागु पर्व :– यह पर्व फागुन महिने की अंतिम पूर्णिमा एवं चैत मास के प्रथम दिवस का त्योहार है। पूर्णिमा के दिन अखरा में एरण्ड या सेमल की डाली को गाड़कर पहान द्वारा संवत् काटा जाता है। तत्पश्चात् लकड़ी– पुआल आदि देकर जला दिया जाता है। यह पूजा आधी रात को होती है। चारों ओर मांदर, ढोल, नगाड़ा आदि लेकर फागुआ गीत गाया जाता है। नाचते–गाते, बजाते लोग सुबह कर देते हैं। सुबह उसी राख का टीका लगाते हैं। किसान अपने खेतों में धूल उड़ाने के लिए निकल जाते हैं। नहा–धोकर पुरखों तथा देव सिंगबोंगा को हड़िया का तपावन पाक–पकवान आदि प्रसाद चढ़ाते है। पहले उपवास कर रसोई में फिर घर के आंगन में पूजन विधि पूरी होती है।

प्रकृति के रंग परिवर्तन का यह बसंत उत्सव ही है। अखड़ा में फगुवा संगीत की बहार रहती है। दूसरे दिन लोग जंगलों में शिकार खेलने निकलते हैं। शिकार के बाद लौटने पर शिकारियों के पाँव धोये जाते हैं।

बा पर्व :– बा पर्व मुण्डा जनजातियों के साथ ही संताल, हो, खड़िया एवं उराँव जनजातियों का भी विशेष त्योहार है। इसे अन्य झारखण्ड वासियों की भी भागीदारी रहती है। यह भी प्रकृति परिवर्तन की प्रसन्नता का उल्लासमय त्योहार है। सखुआ के फूलों को पहली बार स्वर्ण पुष्पों के रूप में सरना में चढ़ाया जाता है। सरना एक पवित्र पूजा स्थल होता है। यहाँ पर हड़िया का तपावन तथा मुर्गे की बलि दी जाती है। इन सभी पूजन सामग्रियो को गाँव के सभी लोग मिलकर सहयोग करते हैं।

मुण्डाओं का बा पर्व वैसे तो पूरा महिने भर का होता है, किन्तु प्रमुख रूप से तीन दिन का होता है। प्रथम दिन हाई कड़ाकम, दूसरा दिन गोटा रामबड़ा तथा तीसरे दिन बा पर्व मनाया जाता है।

एक सृष्टि कथा के अनुसार – मछली और केकड़ा पृथ्वी के पूर्वज हैं। समुंद्र के नीचे पड़ी मिट्टी को ऊपर लाकर ही पृथ्वी बनी। इसका पहला प्रयास मछली और केकड़ा ने ही किया था। बा पर्व का प्रथम दिन उनके सम्मान हेतु समर्पित किया जाता है। शाम को पाहन जल रखाई करते हैं।

दूसरे दिन गोटा रामबड़ा होता है। इस दिन रामबड़ा एक तरह का दाल है जिसे गोटा ही पकाया जाता है। फिर पूजा में प्रसाद के रूप में चढ़ाया जाता है। उसके बाद घर के सभी सदस्य उसे ग्रहण करते हैं।

तीसरे दिन बा पर्व मनाया जाता है। गाँव के सभी युवक सुबह में जंगल चले जाते हैं और सखुआ फूल तोड़कर ले आते हैं। फिर गाँव के पाहन नहा–धोकर नये वस्त्र पहनकर तैयार हो जाते हैं। सभी युवक, बूढ़े– बुजुर्गों के साथ पाहन पूजा सामग्रियों को लेकर सरना/जायर पहुँच जाते हैं। जायर में पहले ही सभी मिलकर साफ–सुथरा कर गोबर से लिपा हुआ रहता है।

पाहन के पूजा कर लेने के बाद बाकी लोग भी पूजा करते हैं। जिन मुर्गियों की बलि दी जाती है उसे वहीं पर आरवा चावल के साथ खिचड़ी पकाकर सभी लोग प्रसाद के रूप में ग्रहण करते हैं। शाम में घर वापस आने के बाद फूल खोंसी होता है। खाना–पीना के बाद रात भर नृत्य होता है।

करम पर्व :– झारखण्ड के सर्वाधिक लोकप्रिय पर्वों में से एक है करम पर्व। करम पर्व सामूहिकता, बंधुत्व तथा भाई–बहन के पवित्र प्रेम का प्रतीक पर्व है। ये पर्व प्रकृति की सहजता और बहुरंगी धार्मिक आस्था का समागम है। इसके कई रूप समाज में प्रचलित हैं, परन्तु सबमें प्रकृति के प्रति समर्पण और श्रद्धा निहित है।

करम पर्व भाद्रपद की एकादशी (शुक्ल पक्ष) को एकादशी कहा जाता है, में मनाया जाता है। रोपनी (कृषि काम) से निवृत होने के बाद इसे धूमधाम और पूरे हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। इस समय बरसात का मौसम होता है। चारों ओर वातावरण हरियाली नजर आती है। ऐसा लगता है मानो प्रकृति खुशी से झूम रही है। आकाश में काले–काले बादल उमड़ते–घुमड़ते रहते हैं, नदियाँ कल–कल शोर मचाती हुई किल्लोल करती रहती है।

करम पर्व वैसे तो अनेक रूपों में मनाया जाता है यथा–करम, बूढ़ी करम, ईंद करम, राजी करम, राइज करम, दसईं करम इत्यादि। ये पर्व अलग–अलग क्षेत्रों में अलग–अलग समय पर मनाया जाता है। किन्तु राइज करम सभी स्थानों पर एक ही साथ निश्चित तिथि, अर्थात् भाद्र पद की एकादशी को ही मनाया जाता है।

करम पर्व मुख्यतः बहनों का पर्व है, जो अपने भाईयों के दीर्घजीवी तथा सुखी–सम्पन्न होने के लिए करती हैं। करम पर्व की शुरूआत सात अथवा नौ दिन पूर्व से ही हो जाती है। तीज पर्व के अगले ही दिन जावा रखने की विधि प्रारंभ होती है। बहनें बालू को टोकरी में भरती है और सात प्रकार के अनाजों के बीज यथा–मकई, जौ, धान, चना, उड़द, कुर्थी और सुरगुंजा बोये जाते हैं। इसे 'जावा रखना' कहते है।

करम पूजा के दिन भाई जंगल से करम की तीन डालियाँ काट कर लाते हैं। डालियाँ एक ही बार में कटनी चाहियें। इस दिन भाई भी उपवास रखते हैं। करम की डाली आंगन में गाड़ी जाती है। इस अवसर पर भी गीत गाये जाते हैं। बहने पूजा सामग्री के साथ डाली के चारों ओर बैठकर पूजा करती हैं। इसके पश्चात् समाज के बुजुर्ग अथवा पाहन करम कथा (करमा–धरमा) की कथा सुनाते हैं। रात भर संगीत–नृत्य का कार्यक्रम ढोल–नगाड़ों के साथ चलता है। ऐसी धारणा है कि करम पर्व मात्र वृक्ष पूजा ही नहीं है बल्कि एक जीवंत देवता की अराधना है, जो सिर्फ दयालु ही नही वरन् न्याय प्रिय भी है।

दूसरे दिन सुबह करम देवता को नदी या तालाब में विसर्जित कर दिया जाता है। इस दिन खेतों में डारि (पेड़ की डाली) जिसमें भेलवा पत्ता बांधकर खेतों में गाड़ा जाता है। ऐसी धारणा है कि इसे धान की फसल में कीड़े नहीं लगते हैं।

सोहराई पर्व :– मुण्डा जनजाति कृषि प्रेमी होते हैं। मुण्डाओं का मुख्य पेशा खेती–बारी है। अतः इनके लिए पशु एवं विभिन्न प्रकार के कृषि यंत्रों का उपयोग किया जाता है। पशुओं के सम्मान में कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष के अमावस्या को सोहराई पर्व मनाया जाता है। पर्व दिन से एक सप्ताह पहले से ही पशुओं (खास करके गाय–बैलों) को धोकर उनके सींग में तेल लगाया जाता है। पशुओं को मवेशियों को नहलाया जाता है। शुभ मुहूर्त में पशुओं को धान के बालियों से सजाकर अनाजों से बना पकवान खिलाया जाता है। यह त्योहार पशु प्रेम का प्रतीक है। साथ ही परिश्रम कर धनोपार्जन करना भी सिखाता है।

बुरू/मागे पर्व :– बुरू पर्व जाड़े के ऋतु में मनाया जाता है। इस पर्व में जो नृत्य होता है। उसमें जदुर और करम नृत्य का मिश्रण होता है। यह पर्व धान की फसल की कटाई के बाद मनाया जाता है। लोगों में एक अलग ही खुशी का महौल होता है। कारण कि खेतों में जो फसल होती है, वो खलिहान तक पहुँच चुका होता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. मुण्डा जनजाति का परिचय, डॉ0 बीरेन्द्र कुमार सोय 'मुण्डा' सत्यम पब्लिशिंग हाऊस एन–3/25, मोहन गार्डन, उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059
2. झारखण्ड की जनजातियाँ, डॉ0 चतुर्भुज साहु, के0के0 पब्लिकेशन 618, कटरा, इलाहाबाद–211002
3. झारखण्ड की आदिवासी, डॉ0 चन्द्रकान्त वर्मा, के0के0 पब्लिकेशन 618, कटरा, इलाहाबाद–211002
4. थाती, सम्पादक, डॉ0 हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, राँची, झारखण्ड, 2007
5. झारखण्ड का इतिहास, महावीर सिंह त्यागी, राजीव प्रकाशन, लालकुर्ती, मेरठ–250001

करम सिंह मुण्डा

सहायक प्राध्यापक

जनजातीय एवं क्षेत्रीय

भाषा संकाय मुण्डारी विभाग

राँची विश्वविद्यालय, राँची।

मो0नं0–8809783457

Email-mundakaram1990@gmail.com

41

''धर्मस्य लक्षणम्''

डॉ0 पुनीत शर्मा

सारांश

1.धर्म का अर्थ व परिभाषाः–

'धर्म' शब्द अनके परिवर्तनों और विषयों के चक्र में घूमता रहा है। अतएव इसके प्रयोग भी भिन्न–भिन्न अर्थों में होते रहे हैं। ऋग्वेद में 'धर्म शब्द' विशेषण या संज्ञा के रूप में प्रयुक्त हुआ है। अधिकतर 'धर्म' शब्द ऋग्वेद में 'धार्मिक विधियों' या 'धार्मिक क्रियाओं–संस्कारों' के रूप में प्रयुक्त हुआ है। कहीं–कहीं ऋग्वेद में 'धर्म' का अर्थ 'निश्चित नियम' या 'आचरण नियम' भी है। अथर्ववेद में 'धर्म' शब्द का प्रयोग 'धार्मिक क्रिया संस्कार करने से अर्जित गुण' के अर्थ में हुआ है। ऐतरेय ब्राह्मण में 'धर्म' शब्द सकल धार्मिक कर्तव्यों के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। छान्दोग्योपनिशद् (2.23) में 'धर्म का विविध अर्थ प्राप्त होता है– 1 यज्ञ, अध्ययन और दान अर्थात् गृहस्थ धर्म, 2 तपस्या अर्थात् तापस धर्म, तथा 3 ब्रहमचारित्व अर्थात् आचार्यगृह में अन्त तक रना। तैत्तिरीयोपनिशद् भगवद्गीता और अन्य धर्मशास्त्र साहित्य में 'धर्म' वर्णाश्रम धर्म ही कहा गया है। इस प्रकार 'धर्म' शब्द समय–समय पर भिन्न–भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होते हुए अन्त में मानव के विशेष कर्तव्यों का द्योतक, आचारविधि का परिचायक और वर्णाश्रम धर्म कहा गया है। 'मनुस्मृति' में सुनियों ने मनु से सभी वर्णों के धर्मों की शिक्षा देने के लिए ही प्रार्थना की है–

'भगवन् सर्ववर्णानां यथावदनुपूर्वशः।
अन्तरप्रभवाणां च धर्मान्नो वक्तुमर्हसि।। 1.2।।

मनुस्मृति के सुप्रसिद्ध टीकाकार मेधातिथी ने धर्म के पांच स्वरूप स्वीकार किए है– 1 वर्ण–धर्म, 2 आश्रम–धर्म, 3 वर्णाश्रम धर्म, 4 नैमित्तिक धर्म तथा 5 गुणधर्म (मनुस्मृति, 2.25)। याज्ञवल्क् (1.1) में भी वर्णाश्रमधर्म हो 'धर्म' है। 'वर्णाश्रम धर्म' विशेश विशेश हैं, किन्तु धर्म सामान्य का लक्षण हुए मनुस्मृति में कहा गया है–

'विद्वद्भिः सेवितः सर्दभिर्नित्यमद्वेशरागिभिः।
हृदयेनबीयनुज्ञातो या धर्मस्तं निबोधत।। 2.1।।

'धर्मात्मा और राग–द्वेश से रहित वेदविद–विद्वानों द्वारा जिसका सेवन–पालन किया जाता है तथा अपने हृदय में जिसका भलीभांति अनुमोदन किया जाता है, वही 'धर्म' है।

इसके अनुसार 'धर्म' श्रेयः साधन है, क्योंकि स्वरस होने से उसमें मन लगता है। श्रेयःसाधन के ज्ञान में वेद ही कारण है अतएव वेदप्रमाणक श्रेयस् का साधन धर्म है 'वेदप्रमाणक' श्रेयः साधनं धर्मः।

इसीलिए हारीत कहते हैं– 'श्रुतिप्रमाणकों धर्मः'। जैमिनि वेदविहित अनुशासन को 'धर्म' कहते हैं। धर्म का संबंध उन क्रिया–संस्कारों से है जिससे आनन्द मिलता है और जो वेदों द्वारा प्रेरित और प्रशंसित है– 'चादेनालक्षणोऽर्थो धर्मः'। 'धर्म' वही है जिससे आनन्द और निःश्रेयस की सिद्धि हो यह तात्पर्य है।

2. धर्म के उपादान अथवा प्रमाणः– 'वेद' धर्म का मूल है– वेदो धर्ममूलम् गौतमधर्मसूत्र, 1.1.211।

जे धर्मज्ञ है, जो वेदों को जानते हैं, उनका मत ही धर्म–प्रमाण है– 'धर्मज्ञसमयः प्रमाणं वेदाश्च', आपस्तम्ब धर्मसूत्र, 1.1.1.21।

'वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्।
आचारश्चैव साध्नामात्मनस्तुश्टिरेव च।। 2.6।।

'सम्पूर्ण वेद, वेद–शास्त्र जाननेवाले के रचे हुए धर्मशास्त्र– स्मृतियाँ, वेदवेत्ताओं के मन की स्वाभावित, प्रवृत्ति–शील, वेदवेत्ता साधुओं शिश्टजनों का आचार और वेदज शिश्टजनों के मन का सन्तोश ये सब धर्म के प्रमाण हैं'।

वैदिक–धर्म को मानने वालों के प्रमाण–ग्रंथ–सूत्र, स्मृति, इतिहास, पुराण और वेद है। प्रत्यक्षादि प्रमाणों से अज्ञेय 'धर्म' का स्वरूप जिससे जाना जाता है उसको 'वेद' कहते हैं 'मन्त्र–ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम् मन्त्र और ये दो भाग मिलकर 'बंद' कहा जाता है। वेदू की चार संहिताएँ है।– ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, और अथर्ववेद। बंद के छः अङ्.ग हैं– शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, ज्योतिश और छन्द। उपनिशद्, उपवेद और अड्को सहित मन्त्र ब्राह्मण रूप 'वेद धर्म का मूल है। सम्पूर्ण वेद विधिपरक और अर्थवादपरक मन्त्रस्वरूप है, यहाँ धर्म में प्रमाण हैं, कारण की अर्थवाद–वाक्य विधि–वाक्यों के साथ एकवाक्यता प्राप्त होने से धर्म में प्रमाण हैं। जैसा कि जैमिनि ने कहा है–

'विधिनात्वेकवाक्यत्वास्तुत्यर्थेन विधीनां स्युः। जैमिनिसूत्र, 1.2.7।।

वेदवेताओं द्वारा विरचित 'स्मृतियां' भी धर्म में प्रमाण हैं। उनमें से अतिप्रसिद्ध कुछ स्मृतियाँ ये हैं– मनुस्मृति, अत्रिस्मृति, विश्णुस्मृति, हारीतस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, उशना–अंगिरा–यम–आपस्तम्ब संवत–कात्यायन–बृहस्पति प्रो स्मृतियां, पराशरस्मृति व्यासस्मृति गौतमस्मृति, बौधायन, बुद्धमनु–वृद्धपराशर वृद्धहारीत द्वारा प्रणीत स्मृतिया नारदस्मृति आदि। धर्मशास्त्रों या स्मृतियों ने वेद को जो धर्म का मूल कहा है, वह उचित ही है। किन्तु यह भी सत्य है कि वेद सर्वथा धर्म–संबंधी निबन्ध नहीं है, वहाँ धर्म–संबंधी विशय प्रसंगवश आये हैं। वास्तव में धर्मशास्त्र संबंधी विशयों के यथातथ्य और नियमनिश्ठ विवेचन के लिए वेदानुसारी स्मृतियों को ही प्रमाण कहा जाता है– मनुस्मृति में कहा है–

'श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनूतिश्ठन्हि मानवः।
इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्। 2.911।

वेद जानने वालों को जो 'शील' है उसको भी धर्म में प्रमाण स्वीकार करते हैं। यह 'शील' त्रयोदशविध है– ब्रह्मणयता, देव–पितृभक्ति, सौम्यता, दूसरे को सन्ताप न देना, डाह न करना, कोमलता, अकठोरता

सबको मित्र मानना, प्रिय बोलना, कृतज्ञ होना, शरणागत को यथाशक्ति रक्षा करना, दयालुता और उत्तम शान्ति राग–द्वेश का परित्याग भी'शील' है। 'शील धर्म' में प्रमाण है। इस 'शील' का जिन ग्रन्थों में वर्णन किया गया है व महाभारत, रामायण आदि इतिहास और पुराण भी धर्म में प्रमाण माने जाते हैं।

वेदशास्त्र के ज्ञाता महात्मा गांधी पुरूषों का 'आचरण भी धर्म में प्रमाण है। वेदज्ञ धर्मात्मा पुरूषों का मन जिस धर्माचरण को करने से प्रसन्न हो वह अर्थात् धार्मिक सदाचारी शिश्टजनों की 'आत्मतुष्टि' भी धर्म में प्रमाण है। 'आत्मतुष्टि' अर्थात् वैकल्पिक–पदार्थ– विषयक आत्मसंतुष्टि धर्म में प्रमाण हैं। गर्गाचार्य ने कहा है– 'वैकल्पिके आत्मतुष्टिः प्रमाणम्। इन पञ्चविध उपादानों को ही मनु ने शील का आचरण में अन्तर्भाव करके धर्म में चतुर्धा प्रमाण कहा है–

'वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्।। 2.12

वेद, स्मृति, सत्पुरूषों का आचार तथा जिस आचरण को करने से अपना मन प्रसन्न हो वह ऋषियों ने यह चार प्रकार का धर्म का साक्षात् लक्षण कहा है।

उपर्युक्त धर्म के उपादानों के सहश ही याज्ञवल्क्यस्मृति में भी पञ्चविध धर्मोपादान कहे गये हैं।

श्रुति–वंद, स्मृति–धर्मशास्त्र, सदाचार–भ्रदपुरूषों का आचार–व्यवहार, जो अपने को प्रिय लगे तथा उचित संकल्प में उत्पन्न अभिकांक्षा या इच्छा–यू पांच धर्म के मूल कहे गये हैं।।

निष्कर्षः– धर्म के मूल उपादान है– वेद, स्मृतियाँ और परम्परा से चला आया हुआ शिष्टाचार यदि कदापि धर्म के ज्ञापक और कारक हेतुओं में सन्देह होने लगे तो सन्देह होने लगे तो सन्देह निवारण के लिए चारों बंद और धर्मशास्त्र के ज्ञाता चार पुरूषों या तीन विद्याओं ऋग्यजुः और साम के ज्ञाता तीन पुरूषो की जो परिषद् होती है वह जो कहे। में धर्म में प्रमाण हैं, अथवा अध्यात्मविद्रूा में निपुणतम एक व्यक्ति भी जो कहे वह धर्म में प्रमाण है। जैसा कि याज्ञवल्क्य ने कहा है–

'चत्वारों वेदधर्मज्ञाः पर्शत्त्रैविद्यमेव वा।
सा ब्रूते यं स धर्मः स्यादेको वाऽध्यात्मवित्तमः।। 1.9।।

3. धर्म के अनुष्ठान–योग्य देशः धर्म के अनुष्ठान योग्य स्थानों में सर्वश्रेष्ठ अथवा सर्वोच्च स्थान 'ब्रह्मावती–देश हैं। यह देश सरस्वती और इन दो देव–नदियों के मध्य में देवताओं द्वारा निर्मित प्रदेश है। ब्रह्मावर्तीय ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों का जो वर्णसङ्कर जातियों का कुल परम्परागत जो आचार है वह 'सदाचार' कहा जाता है। अतएव ब्रह्मावर्त देश धर्मानुष्ठानयोग्य स्थान हैं। इन देशों में उत्पन्न अंग्रेजों–ब्राह्मणों से पृथ्वी के समस्त मानवों को अपना–अपना सदाचार सीखना चाहिए– ऐसा मनु कहते हैं–

''एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षरेन्पृथिव्यां सर्वमानवाः। 1'2.20।।

ब्रह्मर्षि देश के बाद मध्यदेश हिमालय और विन्ध्याचल का मध्य अर्थात् विनशन–कुरूक्षेत्र के पूर्व और प्रयाग के पश्चिम का देश मध्यदेश धर्मानुष्ठान योग्य स्थान कहा जाता है (मनुस्मृति, 2.21)। हिमालय और विन्ध्याचल के मध्य पूर्व समुद्र से लेकर पश्चिम समुद्र पर्यन्त विस्तृत भू–भाग जो 'आर्यवर्त' देश कहलाता हैं वह धर्मानुष्ठान के लिए अग्रणी कहा गया है। अतएव द्विजातियों को प्रयासपूर्वक आर्यावत् के प्रदेशों में धर्मार्थ निवास करना चाहिए।

इतिः धर्मस्य लक्षणम्।

संदर्भः

1. मनुस्मृति
2. विष्णुस्मृति
3. आदिस्मृति
4. हरितस्मृति
5. यागवलयकरस्मृति
6. परास्मृति
7. नारदस्मृति

डॉ0 पुनीत शर्मा
पुत्र सुरेश कुमार
गां+यो–मंधाना
तः नारनोल
जिला – महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)
पिन – 123001
मौ0 9416909465

42

'अंत्येष्टि संस्कार'

डॉ0 बबलू शर्मा

सारांश

मनष्य की मृत्यु के पश्चात् शव को अग्नि देने के समय उसके प्रेतत्व का निवारण हो जाने तक सभी विधियों का अंतर्भाव अंत्येष्टि मे होता है। इसमें से शव, दहन, अस्थि मेलन एवं रक्षा विसर्जन ये तीन विधियां पंचमहाभौतिक मृत शरीर यानी शव के और्ध्वदैहिक गमन से संबंधित हैं। इसी तरह उसके बाद होने वाली सभी विधियों का समावेश इहलोक से परलोक को जाने वाले मृतात्मा से जुड़े प्रेत के एकोद्दिष्ट क्रियाकर्म में होता है।

अंत्येष्टि संस्कार केवल शव के साथ जुड़ा न होकर आत्मा से भी संबंध है। शरीर छोड़कर गए हुए जीवात्मा को प्रेत की संज्ञा दी गई है। जीवात्मा के जाने पर शेष बचे पंचमहाभौतिक शरीर को शव कहा जाता है। शव और प्रेत–दोनों संकल्पनाएं एक–दूसरे से परस्पर भिन्न होते हुए भी इनका मृत शरीर के अर्थ में प्रयोग होता है। अंत्येष्टि संस्कार से लेकर तीन दिनों तक की विधि (और्ध्वदैहिक कर्म, शव और प्रेत का उद्देश्य करके की जाती है। जबकि उसके बाद की विधि (एकोद्दिष्ट कर्म) केवल प्रेत का उद्देश्य करके सम्पन्न होती है। निर्गमन हुए जीवात्मा का एकाकी प्रवास ही प्रेतावस्था है।

यह प्रवास कम से कम एक साल तक रहता है। उसके बाद उसे पितृतव प्राप्त होकर उसका अंतर्भाव पितृत्रयी वसु–रूद्र आदित्य स्वरूप पिता, दादा, पड़दादा या मातृमययी वसु–रूद्र–आदितय स्वरूप मां, पिता की मां , पिता की दादी में होता है। अंत्येश्टि से लेकर अब्दपूर्ति अर्थात वर्शश्राद्ध तथा प्रति सांवत्सरिक श्राद्ध अत्यंत वैविध्यपूर्ण होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि हमारे धर्म शास्त्रकारों ने परलोक प्रेत को उद्देश्य कर किए गए क्रियाकर्म और बारहवें दिन तक किए गए श्राद्ध मृत व्यक्ति के निमित होने से उन्हें एकोददिष्ट की संज्ञा प्राप्त है। संपिडीकरण के बाद मृत व्यक्ति का समावेश वसु–रूद्र आदित्य नामक पितरों–पिता, पड़दादा में होने से वह त्रयी में समाविष्ट हो जाता है। ऐसे व्यक्ति को उद्देश्य कर किए गए श्रादध 'पार्वण श्राद्ध' कहलाते हैं।

''मृतक की इच्छा के विरूद्ध अंत्येष्टि करें या नहीं?

''यदि शय्या पर पड़े रूग्ण को दवा, शुश्रुषा या शल्यकर्म करवाने की इच्छा न होते हुए भी यह सब किया जाता है तो परिजनों को कोई दोश नहीं लगता है। रूग की तरह जिद्दी बालक अपना इहनिष्ट न समझने के कारण दूध पीते समय प्रतिकार करता है, फिर भी उसकी मां उसे जबरदस्ती दूध पिलाती हैं।

उपर्युक्त दोनों उदाहरणों का एक ही निष्कर्ष है कि यदि किसी व्यक्ति के विरूद्ध उसके निर्विवाद फायदे के लिए कोई दोष नहीं लगता । रूग्ण की तरह जिद्दी बालक अपना इहनिट न समझने के कारण दूध पीते समय प्रतिकार करता है, फिर भी उसकी अंतयेष्टि करने में कोई दोष नहीं लगता। अंत्येष्टि एवं और्ध्वदैहिक क्रिया मृतक के मन के विरूद्ध होने पर भी शास्त्र संकेत की दृष्टि में कोई दोश नहीं है। इसेस कोई अनर्थ नहीं उत्पन्न होता।

विद्युत दाह के बारें में अंत्येष्टि विधान क्या है?

जिस समय धर्म सूत्रों एवं धर्म शास्त्र विषयक विविध ग्रंथों की रचना की गई, उस जमाने में 'विद्युत' की खोज नहीं हुई थी। वस्तुतः विद्युतदाहिनी के विषय में अनुकुलता या प्रतिकूलता दर्शाने वाला कोई भी शास्त्र उपलब्ध नहीं है। लेकिन शरीर के निष्प्राण होने के बाद हिन्दू धर्म शास्त्र के अनुसार उसका पूर्ण ज्वलन होना जरूरी है। इस बारें में कहीं भी मत भिन्नता नहीं पाई जाती । फर्क सिर्फ अग्नि और ईंधन के रूप में मां प्रयुक्त किए जाने वाले माध्यम के विषय में होता है। कई प्रांतों में शव दहन के लिए सिर्फ गोबर के उपलों का तथा कई प्रांतों में जलाऊ लकड़ियों का उपयोग किया जाता है।

जब शरीर पूर्ण रूप से अग्निमान हो जाता है तब उसका रूपांतर विभूति में शरीर एवं ईंधन की राख रहती है। ईंधन जितना अधिक ज्वालाग्राही हो, उसकी राख उतनी ही कम रहना स्वाभाविक है। शास्त्र संकेत के अनुसार भी यह उचित है।

''देहदानी की अंत्येष्टि कैसे करें?

किसी भी धर्म शास्त्रीय ग्रंथ में आजकल प्रचलित देहदान की विधि नहीं बताई गई है। हिमालय के कुछ तीर्थ क्षेत्रों में देहदान करने की सुविधा है परंतु वहां पेड़ पर चढ़कर नदी में कूदकर शरीर दान करना होता है। नदी में वह देह बह जाता है। मृत देह को सुरक्षित रखकर उसका अध्ययन करने की संकल्पना उस समय प्रचलित नहीं थी। आजकल वैद्यकीय महाविद्यालयों में मृत देहों की आवश्यकता होती है।। इस कारण उदारमना लोग अपना शरीर मरणोपरांत किसी वैदयकीय महाविद्यालय को सुपुर्द कर देते हैं। ऐसे समय कानूनी कार्यवाही पूरी करनी पड़ती है। खुद के प्रतिज्ञापत्र के साथ घर के लोगों को भी लिखित सम्मति पत्र आवश्यक रहता है। मृत्यु के बा किए जाने वाले नेत्रदान के कारण अंधों को दृष्टि प्राप्त होती है, यह बात सर्ममान्य है। अब ऐसे देहदान के बाद अंत्येष्टि करें या न करें, यह प्रश्न उत्पन्न होता है। इसका उत्तर यह है कि देहदान करने से शव से जुड़ा देहदह एवं अस्थि संचयन आदि और्ध्वदैहिक संस्कार टाल सकते हैं। परंतु प्रेम से जुड़े संस्कार नहीं टाले जा सकते बल्कि वे संस्कार अधिक कार्यक्षम एवं ब्योरेवर करने में प्रशस्त होते हैं। देहदान किए हुए व्यक्ति के लिए अंत्येश्टि बहुत जरूरी रहती है। कारण–अपने शरीर की ओर देखकर उसमें ममत्व की भावना उमड़ सकती हैं। अंत्येष्टि के कारण यह ममत्व कम होकर उसके आगे के प्रवास में सहजता प्राप्त होती है। इसलिए

किसी भी हालत में देहदान के बाद अंत्येश्टि को नहीं टालना चाहिए। देहदान किए हुए व्यक्ति का मृत शरीर अर्थी पर रखकर श्मशान तक ले जाने में कोई अड़चन नहीं आती। वहां मृत व्यक्ति की जानकारी दर्ज कराना अनिवार्य होता है। इसके अलावा देहदान के पूर्व किए हुए प्रतिज्ञापत्र एंव डाक्टरी प्रमाणपत्र की नकल दिखाना भी आवश्यक होता है। यदि देहदान करने वाले व्यक्ति ने अंतिम संस्कार के विशय में रखा हो तो डॉक्टर से उसके मृत शरीर का छोटा सा हिस्सा निकालकर उसका दहन करें। फिर शव को शववाहिका में रखकर नियोजित महाविद्यालय के कुछ लिख हवाले कर दें। बदा में दहन किए गए शरीर के उस छोटे हिस्से की अस्थि उपलब्ध होने पर उसका अस्थि मेलन एवं रक्षा विसर्जन करें। शरीर का छोटा हिस्सा न निकाले जाने की स्थिति में अर्थी खोलने के लिए उपयोग में लाया गया 'अश्म' संभालकर उसके ऊपर क्रियाकर्म की विधि करें।

''शवनयन की शास्त्रीय विधि''?

शवनयन की विधि हिन्दुओं के प्रमाणित ग्रंथ 'धर्मसिंधु' में प्रस्तुत की गई है। शवनयन के शास्त्रीय स्वरूप का पर्याप्त ज्ञान न होने के कारण विविध प्रांतों में उसकी अलग–अलग पद्वतिया प्रचलित हैं। सर्वमान्य रूप से अंतिम घड़ी समीप आते ही उस व्यक्ति को ऊनी वस्त्र या कोमल बिस्तर पर लिटा दिया जाता है। यदि वह पलंग पर हो तो जमीन पर बिस्तर बिछाकर उसे लेटा दें। देहांत होते ही सर्वप्रथम उसके शरीर के कपड़े निकाल ले। केवल अंतर्वस्त्र रहने दें। मांडी डालकर हाथ छाती पर रखें जाएं। यदि दिखाई देने वाला त्वचा रोग हो तो सूती वस्त्र डालकर उसका शरीर ढक दें। मांडी डालकर हाथ छाती पर रखें जाए। यदि दिखाई देने वाला त्वचा रोग हो तो सूती वस्त्र डालकर उसका शरीर ढक दे। नाक एवं कान में कपास डाले। अगर आंखे खुली हो तो उन्हें बंद कर दे। बाद में शवनयन की सामग्री मंगवाएं। यदि शववाहिका से शव शमशान ले जाना हो तो भी अर्थी का साहित्य लांए। अर्थी के लिए 2 लंबे बांस एवं 7 छोटे टुकड़े लगभग 1 या 1 1/2 फुट चौड़े होने चाहिए। एक बांस जीवात्मा का तथा दूसरा बांस भौतिक शरीर का प्रतीक हैं। सात टुकडे शरीरर्गत मुलाधार आदि सात चक्रों के प्रतिनिधि हैं। दोनों बांसों के बीच का अंतर तीन प्रादेश रहना चाहिए। सात टुकड़ों में से हर ''टुकड़े के बीच एक हथेली का अंतर होना चाहिए। अर्थी को दक्षिणोतर रखा जाना चाहिए। कुछ बांस के टुकड़े नीचे की ओर भी रहने चाहिए। अर्थी बांधते समय बांस के लिए पक्की सुतली का प्रयोग करें। सुतली अखंड हो। अर्थी पर मुलायम घास–फूस बिछाकर उश्णोदक डोले। शव के ऊपर डाले जाने वाले वस्त्र बांस से अटकाकर रखें। शरीर को भस्म–गुलाल लगाकर पुश्पहार अर्पण केरं। यदि सुहागिन का शव हो तो हल्दी, कुमकुम एवं फूलों का गजरा आदि सौभाग्यालंकार पहनाए। मृत सुहागिन का मंगलसूत्र एवं मृत पुरूश का जनेऊ शव पर ही रहने दें। एक थाली में मिट्टी की पणती रखकर उसमें कपास की बती एवं तेल डालकर प्रज्वलित करके शवारती उतारे। फिर घर के एक कोने में थोडा सा आटा गोलाकार करके उस पर दीपक रखें। यह दीपक दसवें दिन तक प्रज्वलित रहे। यदि पुरूष मृत हो तो पत्नी के मंगलसूत्र की दो बाटियां उसके मुख में रखें। मुंह में तुलसीपत्र भी डाले। मस्तक पर थोड़ा मक्खन चुपड दे। इसके बाद मृतक को दक्षिण की ओर पैर करके अर्थी पर लेटांए। शव का मुंह ढकना शास्त्र सम्मत है। अर्थी उठाते समय रामनाम का जप जोर से करें। मृतात्मा की शांति के लिए अंत्येष्टि के सूक्त पढ़ें।

ब्रह्मचारी, रजस्वला एवं बालक का और्ध्वदैहिक कैसे करें?

यदि व्यक्ति का उपनयन हो चुका हो परंतु समावर्तन न हुआ हो तो उसे ब्रहमचारी कहते हैं। ऐसे मनुष्य के बाद श्मशान में उसका अर्क विवाह या रूई के पेड़ से विवाह किया जाता है। यदि श्मशान में अर्क का पेड़ न हो तो रूइ के पेड़ की एक टहनी के साथ उसका विवाह किया जाता है। यह विधि बहुत छोटी होती है। यदि शव को भड़ाग्नि दी गई हो तो यह विधि दसवें दिन उसकी अस्थियों पर की जाती है। नूतन प्रसुता स्त्री की मृत्यु होने पर उसका पूर्ण दहन, रक्षा विसर्जन एवं अस्थि मेलन करके ही घर लौटने की प्रथा है। इस प्रथा का मूल कारण यह है कि कुछ तांत्रिक नूतन प्रसूता स्त्री की अस्थियां इकटठी करने के लिए इस प्रथा का उल्लेख नहीं है।

यदि रजस्वला स्त्री की मृत्यु हो जाए तो गोमूत्र, कुशोदक, दर्भ के पानी एवं तुलसी के पानी से शव का अभिमंत्रित करे। फिर शव का भड़ाग्नि से न करके दसवें दिन अस्थियों पर मंत्र क्रिया करें। यदि दंतयुक्त या दंत विहीन बालक का मृत शरीर हाथों पर श्मशान तक ले जाया जा सकता हो तो ऐसे में अर्थी का प्रयोग नहीं करना चाहिए। हाथों पर शवनयन करने के लिए बच्चे के रिश्तेदार, भाई–बंधु एवं गड़डा खोदकर उसमें पर्याप्त मात्रा में नमक डालकर शव को गाड़ना चाहिए।

लिंगायत समाज में यह प्रथा सबके लिए लागू है। यदि अविवाहित स्त्री या जनेऊ धारण न करने वाला पुरूष मृत हो जाए तो उसका और्ध्वदैहिक करना उचित रहता है। इससे मृतात्मा का परलोक सुखकर होता है। इसके बाद सपिंडीकरण आदि का प्रश्न उसके विषय में नहीं उठता। कारण– वे एकोद्दिष्ट ही होते हैं। बाद में उनका सावंत्सरिक या प्रति सावंत्सरिक श्राद्ध की प्रथा नहीं है, फिर भी ऐसे लोगों के लिए महालय में एक खास पिंड दिया जाता है।

''इति अंत्येष्टि संस्कार''

संदर्भः

1. धर्म सिन्धु
2. निर्णय सिन्धु
3. मनुस्मृति
4. अग्वेद 10–1
5. अथर्ववेद 8, 7,11.6.14
6. अग्वेद 10–97.6
7. प्र0 30 1.5
8. गो.ब.10 –07
9. अथर्ववेद 8.11.6.14.15

डॉ0 बबलू शर्मा
सहायक प्रोफेसर
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक।

43

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020रूस्वरूप, संभावनाएं और चुनौतियां

डॉ0 तपन कुमार शाण्डिल्य, कुलपति

सारांश

विद्या ददाति विनयं,विनयाद् याति पात्रताम।

पात्रत्वात् धनमाप्नोति, धनात् धर्म ततरूसुखम।

चाणक्य नीतिरूआचार्य चाणक्य

(अर्थात् विद्या से विनय,विनय से पात्रता,पात्रता से धन और धन से धर्म और सुख की प्राप्ति होती है।)

शिक्षा समाज के विकास की आधार–शिला है।आज से लगभग 2600 वर्ष पूर्व यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू ने कहा था कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।आज भी उसकी यह बात पूर्णतः सत्य है।मनुष्य एक चिंतनशील और विवेकशील प्राणी है।यों तो उसकी आवश्यकताएं अनंत हैं ,परंतु चार ऐसी मौलिक आवश्यकताएं हैं ,जिनके बिना जीवन जीना दूभर है।

भोजन,वस्त्र, आवास और शिक्षा।गणना के क्रम में भले शिक्षा चौथे क्रम पर हो,परंतु महत्व और गुणवत्ता की दृष्टि से वह प्रथम स्थान की अधिकारिणी है।

शिक्षा का मानव जीवन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है।संस्कृत के शिक्ष् धातु से बना शिक्षा का कोशगत अर्थ है–सीखना,जानना और आचरण में उतारना।राष्ट्र पिता महात्मा गांधी के अनुसार मनुष्य के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना ही शिक्षा है।श स्वामी विवेकानंद के अनुसार मनुष्य के भीतर निहित क्षमता का पूर्ण प्रकटीकरण ही शिक्षा है।यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने इस बात पर बल दिया है कि शशिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व विकसित करने का प्रयत्न है।प्लेटो ने लिखा है कि शिक्षा छात्र के शरीर और आत्मा में उस सब सौंदर्य और पूर्णता का विकास करती है,जिसके योग्य वह है।श्वेदांत के अनुसार समस्त ज्ञान हमारे भीतर विद्यमान है।एक बालक में भी है,केवल उसे जागृत करना है।बालक में ज्ञान का जागृत होना ही शिक्षा है।अतरूहम कह सकते हैं कि मनुष्य के व्यक्तित्व में सत्यं,शिवं सुंदरं के भाव का प्रकटीकरण ही शिक्षा है।

हिन्दी का शिक्षा शब्द अंग्रेजी के 'EDUCATION' का हिंदी पर्याय है जिसका गूढ़ार्थ निम्नवत् हैः–

हिन्दी का शिक्षा शब्द अंग्रेजी के 'EDUCATION' का हिंदी पर्याय है जिसका गूढ़ार्थ निम्नवत् हैः–

E: Etiquette–विनम्रता / शिष्टाचार / सदाचार

D:Discipline–अनुशासन

U:Universal Brothaerhood–विश्वबंधुत्व।

C:Creativity–सृजनशीलता

A:Awareness–जागरूकता / सजगता

T: Transformation–रूपांतरण / आदान–प्रदान।

I: Integrity–एकताध्नेकता / सत्यनिष्ठा

O: Optimism–आशावादिता

N% Nobility–नम्रता / विनम्रता

विष्णु पुराण में कहा गया है।

सा विद्या या विमुक्तये अर्थात विद्या(शिक्षा) वही है जो हमें सारे बंधनों से मुक्त करती है।प्राचीन भारतीय शिक्षा मूल्यपरक और नैतिकता परक थी ,आधुनिक शिक्षा व्यावसायिक और रोजगारपरक हो गई है।

ब्रिटिश कालीन भारत में पहली शिक्षा नीति 2.2.1835 में भारत के तत्कालीन गवर्नर लार्ड विलियम बैंटिक के द्वारा लागू की गई, जिसका मसौदा ब्रिटिश गवर्नर लार्ड विलियम बैंटिक के शिक्षा सलाहकार थामस बैबिंगटन लार्ड मैकाले ने तैयार किया था।जो 10.6.1834 को शिक्षा शिक्षा सलाहकार नियुक्त होकर भारत आया था।लार्ड मैकाले की शिक्षा नीति का उद्देश्य भारतीयों में अग्रेजीयत पैदा करना था और भारतीयता की भावना को विस्मृत कराना था।अपने उद्देश्य में मैकाले बहुत हद तक कामयाब रहा।

स्वतंत्र भारत में 1968 तक यह शिक्षा नीति लागू रही।1952 में लक्ष्मण स्वामी मुदलियार की अध्यक्षता में गठित माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा 1964 में डा दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में गठित शिक्षा आयोग की अनुशंसा के आधार पर 1968 में शिक्षा नीति पर एक प्रस्ताव प्रकाशित किया गया, जिसमें राष्ट्रीय विकास के प्रति वचनवद्ध, चरित्रवान और कार्यकुशल युवक युवतियों को तैयार करना था।1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य राष्ट्र के सभी बच्चों को जाति,धर्म,लिंग,स्थान आदि के किसी भी आधार पर भेदभाव किए बिना शिक्षा के समुचित और समान अवसर प्रदान करना था।इसकी पूर्ति के लिए समस्त बालकों की पहुंच के अंदर ही कम दूरी पर प्राथमिक विद्यालय स्थापित किए गए। 24 जुलाई 1986 के पूर्व तक यह नीति लागू रही।

तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी के कार्यकाल में 24 जुलाई 1986 को द्वितीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति घोषित की गई।यह शिक्षा नीति भी पूर्णतः कोठारी आयोग के प्रतिवेदन पर आधारित थी।सामाजिक दक्षता,राष्ट्रीय एकता एवम् समाजवादी समाज की स्थापना करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।बच्चों के समग्र व्यक्तित्व विकास पर जोर दिया गया और शिक्षकों के हाथ से छड़ी छिन ली गई।परिणामतरू छात्रों में उदंडता और अनुशासन हीनता का क्रमशःश्री गणेश हुआ,जो उनके सेहत के लिए शुभ नहीं हुआ।

भारत सरकार ने तीसरी राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा 29 जुलाई 2020 को की ।भारतवर्ष में 34 वर्षों बाद नई शिक्षा नीति आई है। इससे पूर्व 1986 में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी के

समय में राष्ट्रीय शिक्षा नीति आई थी ।मोदी सरकार ने 2016 में ही नई शिक्षा नीति लाने की तैयारियां शुरू कर दी थीं और इसके लिए टी.एस.आर .सुब्रमण्यम कमिटी का गठन भी हुआ थाय जिन्होंने मई 2019 में शिक्षा नीति का अपना मसौदा (Draft) केंद्र सरकार के सामने रखा, लेकिन सरकार को वह ड्राफ्ट (मसौदा)पसंद नहीं आया ।इसके बाद सरकार ने वरिष्ठ शिक्षाविद् एवं जे.एन.यू. दिल्ली के पूर्व कुलपति डा.के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में एक 9 सदस्य समिति का गठन किया। डा.के. कस्तूरीरंगन की कमेटी ने एक नई शिक्षा नीति का मसौदा तैयार किया, जिसे सार्वजनिक कर केंद्र सरकार ने आम लोगों से भी सुझाव मांगे। अनेक सुझाव आए। डा रमेश पोखरियाल श्निशंकश मानव संसाधन मंत्री ने कहा कि इस मसौदे पर आम और खास लोगों के सुझाव आए। जिसमें विद्यार्थी, अभिभावक, अध्यापक से लेकर बड़े–बड़े शिक्षाविद्, विशेषज्ञ पूर्व शिक्षा मंत्री और राजनीतिक दलों के नेता शामिल थे। इसके अलावा संसद के सभी सांसदों और संसद की स्टैंडिंग कमिटी से भी इस बारे में सलाह मशविरा किया गया। जिसमें सभी दल के लोग शामिल थे । इसके बाद लगभग अंग्रेजी में 66 पन्ने (हिंदी में 117 पन्ने)की नई शिक्षा नीति को मंजूरी दी गई।

वैसे तो इस शिक्षा नीति में स्कूली शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक बड़े बड़े बदलाव किए गए हैं, लेकिन कुछ अहम् बदलाव की चर्चा यहां मैं करना चाहूंगा। अगर सबसे पहले स्कूली शिक्षा की बात की जाए, तो स्कूली शिक्षा के मूलभूत ढांचे में एक बड़ा परिवर्तन किया गया है। 10. 2 3 पर आधारित हमारी शिक्षा प्रणाली को 5 3 3 4 के रूप में बदला गया है। इसमें पहले 5 वर्ष अर्ली स्कूलिंग के होंगे। इसे अर्ली चाइल्डहुड पॉलिसी का नाम दिया गया है। जिसके अनुसार 3 से 5 वर्ष के बच्चों को भी स्कूली शिक्षा के अंतर्गत शामिल किया गया जाएगा।

वर्तमान में 3 से 5 वर्ष की उम्र के बच्चे 10 2 वाले स्कूली शिक्षा प्रणाली में शामिल नहीं हैं और इसमें 3 से 5 वर्ष के बच्चों को भी स्कूली शिक्षा के अंतर्गत शामिल किया गया है। हालांकि इन छोटे बच्चों के प्री–स्कूलिंग के लिए पूर्ववर्ती सरकारों ने आंगनबाड़ी की पहले से व्यवस्था की थी, लेकिन इस ढांचे को इस नई शिक्षा नीति में और मजबूत किया है ।

नई शिक्षा नीति 2020 में कहा गया है कि बच्चे भगवान के रुप हैं और बाल्यावस्था एक महत्वपूर्ण आयाम है।इसमें बच्चों के देखभाल और शिक्षा की एक मजबूत बुनियाद की आवश्यकता है । जिससे आगे चलकर बच्चों का विकास बेहतर हो।इसमें इस तरह शिक्षा के अधिकार (ए.ज.ए.) का दायरा बढ़ गया है। यह पहले 6 से 14 साल के बच्चों के लिए था ,जो अब बढ़कर 3 से 18 साल के बच्चों के लिए हो गया है और उनके लिए प्राथमिक, माध्यमिक और उत्तर माध्यमिक शिक्षा अनिवार्य हो गई है।

सरकार ने इसके साथ ही स्कूली शिक्षा में 2030 तक नामांकन अनुपात यानी ग्रॉस एनरोलमेंट रेशियो(ळम्त्) को 100ः और उच्च शिक्षा में इसे 50ः तक करने का लक्ष्य रखा है और इंडिया सर्वे ऑन हायर एजुकेशन द्वारा किए गए एक सर्वे के मुताबिक 2017 से 18 में भारत का उच्च शिक्षा में जी.ई.आर. 27.4 :प्रतिशत था, जिसे अगले 15 सालों में दोगुना करने का लक्ष्य सरकार ने रखा है।

5 3 3 4 के प्रारूप में पहला 5 साल बच्चा चतम–ेबीववस और कक्षा एक एवं दो में पढेगा। इन्हें मिलाकर 5 साल पूरे हो जाएंगे। इसके बाद 8 साल से 11 साल की उम्र में आगे तीन कक्षाओं कक्षा 3, 4 और 5 की पढ़ाई होगी ।इसके बाद 11 से 14 साल की उम्र में कक्षा 6, 7 और 8 की पढ़ाई होगी ।इसके बाद 14 से 18 साल की उम्र में कक्षा नौवीं से 12वीं तक की पढ़ाई कर सकेंगे। यह 9 वीं से 12 वीं तक की पढ़ाई बोर्ड आधारित होगी ।इसे नई शिक्षा नीति में बहुत सरल बनाया गया है ।बोर्ड परीक्षा को दो भागों में बांटने का प्रस्ताव है ,जिसके तहत साल में दो हिस्सों में बोर्ड परीक्षा ली जा सकती है। इससे बच्चे पर परीक्षा का बोझ कम होगा और वे रट्टा मारने की वजह सीखने और आकलन पर जोर देंगे।

स्कूली शिक्षा में एक और अहम बदलाव के रूप में मातृभाषा को शामिल किया गया है। जिस पर काफी विवाद हो रहा है। नई शिक्षा नीति के अनुसार अब बच्चे पहली से पांचवी तक की कक्षा या संभवतः 8 वीं तक की कक्षा अपनी मातृभाषा के माध्यम में ही ग्रहण करेंगे। इसके अलावा यह भी कहा गया है कि अगर आगे की कक्षाओं में भी इसे जारी रखा जाता है तो और बेहतर होगा।

शिक्षा मंत्रालय का कहना है कि बच्चा अपनी मातृभाषा में चीजों को बेहतर ढंग से समझता हैय इसलिए शुरुआती शिक्षा मातृभाषा माध्यम में होनी चाहिए। इसमें कुछ नया नहीं है। लगभग हर शिक्षा नीति में प्राथमिक शिक्षा के लिए मातृभाषा के माध्यम की बात को कहा गया है यलेकिन कभी इसे पूर्ण रुप से लागू नहीं किया गया। यह शोध परक सत्य है कि बच्चा अपनी भाषा में सबसे अधिक सीख समझ सकता है और ऐसा होना भी चाहिए यलेकिन मातृभाषा के संबंध में कई लोग सवाल उठा रहे हैं कि क्या जब बच्चा प्राथमिक कक्षाओं को पास कर आगे बढ़ेगा और उन्हें आगे की कक्षाओं में हिंदी या अंग्रेजी माध्यम से विषयों को पढ़ाया जाने लगेगा तब वे उससे सही ढंग से समझ पाएंगे? या उच्च कक्षाओं में वे अंग्रेजी माध्यम के छात्रों से प्रतियोगिता कर पाएंगे? इसके अलावा एक प्रश्न यह भी उठता है कि क्या स्थानीय या मातृभाषा माध्यम में पर्याप्त एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षण सामग्री उपलब्ध होंगीं! किंतु मेरा मानना है कि यह बात हमें नहीं सरकार को सुनिश्चित करना होगा कि जब वह इस संबंध में नीति ला रही है तो वह पर्याप्त और गुणवत्तापूर्ण शिक्षण सामग्री भी स्थानीय भाषाओं में उपलब्ध कराएय क्योंकि यह बात अंशतः सत्य है कि पहले की सरकारें भी मातृभाषा में पढ़ाई पर जोर देती रही हैं लेकिन उन्होंने इस दिशा में कोई खास काम नहीं किया।

नई शिक्षा नीति की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह व्यावसायिक और कौशल विकास पर केन्द्रित होगी।इसमें नैतिकता और राष्ट्रीय भावना पर जोर दिया गया है।नई शिक्षा नीति में डिग्री और डिप्लोमा के साथ साथ गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा पर अधिक जोर दिया गया है।नई नीति में 1 वर्ष में सर्टिफिकेट,2 वर्ष में डिप्लोमा,3 वर्ष में डिग्री और 4 वर्ष में मास्टर डिग्री प्राप्त होगी।एम.फिल को समाप्त किया गया है। इसमें अनुसंधान पर जोर है।भारत में सभी वैज्ञानिक और सामाजिक अनुसंधान के लिए रिसर्च फाउंडेशन बनेगा।सभी प्रांतीय सरकारें अपने संसाधनों के परिपेक्ष्य में यथाशीघ्र इस शिक्षा नीति को लागू करें ताकि देश का संपूर्ण विकास हो सके।नई शिक्षा नीति के कार्यान्वयन से भारत के प्रतिभावान छात्र–छात्राओं का भविष्य उज्ज्वल होगा और भारत पुनः विश्व गुरु बनेगा –ऐसा विश्वास है।

जय हिंद जय शिक्षा

संदर्भः

1. E Balagurusam (2022) National Education Policy 2020 EBH Foundation coimbatore.
2. Tripathi M.P. (2023) National Education policy N.B. Publications Ghaziabad
3. भारत के उच्च शिक्षा भारत सरकार का मानव संसाधन विकास विभाग उच्च शिक्षा मंत्रालय 18 जुलाई 2011
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 2020, भारत सरकार नई दिल्ली
5. पाठक पी0 डी0 (2004) भारतीय शिक्षा और उसकी समंस्याएं आगरा विनोद पुस्तक मंदिर।
6. विश्वकर्मी देवेन्द्र (2020) राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 2020, चुनितियाँ और अवसर SRF Publication Jabalpur (M.P.)
7. Ramaswamy B sciki Divya (2020) source book of National Education Policy : 2020 A comprehensive National Kanishtika Publication Distributors New Delhi 11002
8. Chopra Ritika (2 August 2020). Explained Reading the New National Education Policy 2020, The Indian Express. Retrieved 2 August 2020.
9. Nandini, ed. (29 July 2020). "New Education Policy 2020 Highlights School and Higher Education to see major Changes" Hindustan Times retrieved & August 2020.
10. National Education Policy 2020, Cabinet Approves New National Education Policy, Key Point' The Times of India, 29 July 2019 Retrieved 29 July 2020.
11. Rajeev, K.R. (31 July 2020). Teacher Education set for Major Overall' The Times of India Retrieved 31 July 2020.
12. State Education Boards to be Regulated by the National Body: Draft NEP. The Times of India Retrieved 21 November 2019.

डॉ0 तपन कुमार शाण्डिल्य, कुलपति

डॉ.श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय,

रांची (झारखण्ड)

चलभाषः9431049871

44

हिंदी नवजागरण के जनक : भारतेंदु हरिश्चंद्र

डॉ0 कुमारी मनीषा

सारांश

हिंदी साहित्य के इतिहास में नवयुग का उन्मेष भारतेन्दु हरिश्चंद्र से माना जाता है।भारतेंदु एक ऐसे महाप्राण साहित्यकार थे,जिन्होंने अपने बहुमुखी सृजन द्वारा न केवल साहित्य के भण्डार में विपुल अभिवृद्धि की,बल्कि अपने स्निग्ध और मंजुल प्रकाश से उसे नयी राहों की ओर प्रेरित भी किया।मात्र 35 वर्ष की अल्पायु में उन्होंने लगभग 100 से अधिक छोटे बड़े ग्रंथों का प्रणयन कर अपनी अभूतपूर्व सृजनशीलता का परिचय दिया।लेकिन इससे भी बड़ा कार्य जो उन्होंने किया,वह है सहयोगी साहित्यकारों का एक विराट् संगठन, जिसके माध्यम से जन जागरण की ज्योति शिखा प्रज्जवलित कर उन्होंने सचमुच श्जीवन और साहित्य श्के बीच गांठ बांध दी।

सुप्रसिद्ध इतिहासकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी साहित्य के इतिहास को चार काल खंडो में विभाजित किया है रू–

1आदिकाल(वीरगाथा–काल)वि.स.1050–1375 तक।

2 पूर्व मध्यकाल(भक्ति काल)वि.स.1375–1700 तक।

3 उत्तर मध्य काल(रीति काल)वि.स.1700–1900 तक।

4 आधुनिक काल(गद्य काल)वि.स.1900 से अद्यतन।

आधुनिक काल हिंदी साहित्य के नवजागरण का काल है।आधुनिक काल में तीन उत्थान का उल्लेख आचार्य शुक्ल ने किया हैः–

प्रथम उत्थान(भारतेन्दु युग) सन1850–1900 तक।

द्वितीय उत्थान(द्विवेदी युग)1900–1920 तक।

तृतीय–उत्थान(छायावाद)1920–1936तक।

आधुनिक काल के प्रथम उत्थान को 'भारतेंदु युग' के नाम से भी जाना जाता है, क्योंकि इसका नामकरण भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाम पर हुआ है।

9 सितंबर 1850 को काशी के एक संपन्न वैश्य परिवार में जन्मे भारतेंदु हरिश्चंद्र आधुनिक हिंदी के जनक हैं। हिंदी खड़ी बोली में गद्य का प्रारंभ उन्हीं के समय से होता है।

भारतेंदु के समय देश अंग्रेजों के चंगुल में था। हिंदी काव्य–जगत में रीतिकाल और सामंती प्रवृत्ति चरम पर थी, लेकिन उन्होंने अपनी रचनाओं में जन–भावनाओं को रेखांकित किया। विभिन्न सामाजिक और राजनैतिक विसंगतियों को उजागर करते हुए समाज–सुधार को साहित्य का लक्ष्य बनाया। गरीबी, पराधीनता और अंग्रेजों का अमानवीय व्यवहार उनकी लेखनी के निशाने पर थे। वे एक अच्छे कवि, व्यंग्यकार, नाटककार, गद्यकार तथा जागरूक पत्रकार थे। उन्हें लंबा जीवन नहीं मिला।

लगभग पैंतीस साल के जीवन में उन्होंने पत्रकारिता, नाटक और काव्य के क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य किया। हिंदी भाषा की सेवा, देश की आजादी और समाज–सुधार को लक्षित उन्होंने तीन पत्रिकाएँ निकालींकृ

1. 1867 में कविवचनसुधा,

2.1873 में हरिश्चन्द्र मैगजीन और

3.1874 में बाला बोधिनी।

'बाला बोधिनी' का लक्ष्य स्त्री–शिक्षा को आगे बढाना तथा स्त्री को पुरुष की बराबरी का दर्जा दिलाना था।

उनकी बहुआयामी प्रतिभा को देखते काशी के विद्वानों ने उन्हें 1880 में 'भारतेंदु' उपाधि प्रदान की, जिसका अर्थ है– भारत का चन्द्रमा। निःसंदेह, यह उपाधि उनके सम्मान के अनुरूप थी।

उन्होंने एक लेखक मंडल भी तैयार किया, जिसमें राधाचरण गोस्वामी, गोकुलचंद, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बदरीनारायण प्रेमघन, लाला श्रीनिवास दास,सत्यनारायण कविरत्न जैसे लेखक शामिल थे। इन लेखकों ने उनके साहित्य के प्रसार के उद्देश्य को आगे बढ़ाया और उनके बाद भी उनकी स्मृति से प्रेरणा लेते हुए इस कार्य में संलग्न रहे।

उनके पिता गोपालचंद्र स्वयं कवि थे और श्गिरधरदासश उपनाम से कविता करते थे।नहुष नामक ऐतिहासिक नाटक भी उन्होंने लिखा था। काव्य–प्रतिभा तो उन्हें पिता से विरासत में ही मिली थी। मात्र सात वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने यह दोहा अपने पिताजी को सुनाया और उनका आशीर्वाद प्राप्त कियारू–

लै ब्योढ़ा ठाढ़े भए, श्रीअनिरुद्ध सुजान।

बाणासुर की सैन को, हनन लगे भगवानड

पिता ने इस पर प्रसन्न होकर कहा :–तू मेरा नाम बढ़ाएगा।

इसी के आसपास एक बार अपने पिता को गंगा में तर्पण करते देखकर उन्होंने पूछारू–बाबू जी आप यह पानी में पानी क्यों मिला रहे हैं?बेटे की नास्तिकता देखकर धर्मप्राण बाप ने सिर पीट लिया और बोले जान पड़ता है,तू कुल को बोरेगा।

पुत्र के संबध में पिता की ये दोनों भविष्यवाणियां सही निकलीं।भारतेंदु ने अपने पिता का नाम उजागर भी किया और अपने पूर्वजों की गाढी कमाई को डूबा भी दिया। भारतेन्दु के पिता और पितामह अंग्रेजों के सिपहसलार थे और अकूत संपत्ति अर्जित की थी।भारतेन्दु की शाहखर्ची पर काशी नरेश ने उन्हें समझाने की कोशिश की थी,लेकिन भारतेन्दु उन्हें दो टूक उत्तर दिया किरू–ष्इस धन ने मेरे पूर्वजों के ईमान को खाया है,अब मैं इसे खाकर रहूंगा।ष

उनका बचपन कठिनाइयों में बीता। जब वे पाँच वर्ष के थे तो उनकी माता नहीं रहीं। विमाता से उन्हें स्नेह न मिला और दस वर्ष की अवस्था

में उन्होंने पिता को भी खो दिया। इन झंझावातों के कारण उनमें स्वतन्त्र रूप से दुनिया देखने और सोचने–समझने की शक्ति का तेजी से विकास हुआ। वे स्कूल अवश्य गए, पर स्वाध्याय से उन्होंने खूब ज्ञानार्जन किया। संस्कृत, बंगला, उर्दू और अंग्रेजी भाषाएँ सीखीं और किशोरावस्था से ही साहित्यिक रचनाएँ करनी शुरू कर दीं।

भारतेंदु का रचना–संसार वृहद् है। काव्य, निबंध,आलोचना और नाटक के क्षेत्र में उन्होंने सर्वाधिक कार्य किया। 1873 से लेकर 1883 तक, दस वर्षों में उन्होंने नौ मौलिक नाटकों की रचना की और छह विश्वप्रसिद्ध नाटकों का हिंदी में अनुवाद किया। 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, प्रेमजोगिनी, भारत दुर्दशा और अंधेर नगरी' सत्य हरिश्चंद्र उनके प्रसिद्ध मौलिक नाटक हैं। 'अंधेर नगरी' का मंचन आज भी किया जाता है जो इसकी लोकप्रियता का प्रमाण है। 'विद्यासुंदरश, श्मुद्राराक्षस' तथा 'दुर्लभ बंधु' उनके क्रमशः बांगला, संस्कृत और अंग्रेजी के अनूदित नाटक हैं। श्दुर्लभ बंधुश, शेक्सपियर के 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का अनुवाद है।

वे कुशल अभिनेता, निर्देशक और नाट्य–समीक्षक भी थे।

उन्होंने कई निबंध लिखे। 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है, कश्मीर कुसुम, संगीत सार, हिंदी भाषा, स्वर्ग में विचार–सभा' आदि उनके प्रमुख निबंध हैं।

कहानी विधा में भी उन्होंने, 'अद्भुत अपूर्व स्वप्न' जैसी कृति दी। 'पूर्ण प्रकाश और चंद्रप्रभा' नामक दो उपन्यास भी उन्होंने हिंदी जगत को दिये। 'सरयू की यात्रा' और 'लखनऊ' उनके यात्रा–वृत्तांत हैं। 'एक कहानी– कुछ आप बीती और कुछ जगबीती' उनकी आत्मकथा है।

काव्यजगत को उन्होंने बीस कृतियाँ दीं। इनमें 'भक्तसर्वस्व, प्रेम–मालिका, प्रेम–माधुरी, प्रेम–तरंग, प्रेम–प्रलाप, प्रेम फुलवारी, विनय प्रेम–पचासा, कृष्ण–चरित्र' विजय वैजंती उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। 'फूलों का गुच्छा' उनकी खड़ी बोली का काव्य है। 'बन्दर सभा, बकरी विलाप', जैसा कि नाम से ही संकेत मिलता है, उनके हास्य–व्यंग कविता–संग्रह हैं। भारतेंदु कृष्ण–भक्त थे, लेकिन उनका काव्य–कर्म भक्तिकाव्य तक नहीं सीमित रहा। उन्होंने राष्ट्रप्रेम और समाज–सुधार आदि विषयों को अपनी रचनाओं में प्रमुखता से शामिल किया। छंदों की दृष्टि से उन्होंने दोहा, चौपाई, छप्पय, रोला, सोरठा, कुंडलियाँ, कवित्त आदि छंदों का सफल प्रयोग किया है। कजली, ठुमरी, लावनी जैसे लोक छंदों का भी प्रयोग भी उनके यहाँ प्रचुरता से मिलता है। विभिन्न रसों से स्नात उनके काव्य में उपमा, उत्प्रेक्षा और रूपक जैसे अर्थालंकारों का सफल प्रयोग है। शब्दालंकारों के प्रयोग में भी वे पीछे नहीं है। वृत्यानुप्रास का एक उदाहरण देखिएकृ

तरनि तनूजा तट तमाल, तरुवर बहु छाए।
झुके कूल सों जल–परसन हित मनहु सुहाएड

'रसा' उपनाम से वे गजलें लिखते थे। प्रेम–विषयक उनकी गजलों की भाषा हिन्दुस्तानी थी। एक गजल का मक्ता देखिए।

'रसा' की है तलाशे–यार में यह दश्ते–पैमाई,
कि मिस्ले–शीशा मेरे पाँव के छाले झलकते हैं।[६]

समाज में व्याप्त कुरीतियों पर प्रहार के लिए उन्होंने हर विधा में व्यंग्य का भरपूर इस्तेमाल किया। नाटक 'अंधेर नगरी' में एक पात्र हैकृ पाचक–वाला, उससे वे सरकारी कारिंदों, महाजनों और अँगरेजों के पिट्ठुओं पर जमकर निशाना साधा रू–––

चूरन अमले सब जो सब खावैं। दूनी रिश्वत तुरत पचावैंड
चूरन सभी महाजन खाते। जिससे जमा हजम कर जातेड
चूरन साहेब लोग जो खाता।
सारा हिन्द हजम कर जाताड

इसी नाटक के कुछ काव्यांशों में अंग्रेजी शासन पर कठोर टिप्पणियाँ हैंः–

अंधेर नगरी चौपट राजा।
टका सेर भाजी टका सेर खाजाड
ऊँच–नीच सब एकहि ऐसे।
जैसे भडुए पंडित तैसेड
भीतर स्वाहा बाहर सादे।
राज करहिं अमले और प्यादेड
धर्म–अधर्म एक दरसाई।
राजा करइ सो न्याव सदाईड

लोककाव्य में उन्होंने 'नये जमाने की मुकरियाँ' लिखीं। एक मुकरी में उन्होंने अंग्रेजों पर सीधे–सीधे प्रहार किया।

भीतर–भीतर सब रस चूसै।
हँसि–हँसिकै तन–मन–धन मूसै।
जाहिर बातन में अति तेज।
क्यों सखि सज्जन? नहिं अँगरेज।

उनके समय फारसी भाषा प्रचलन में थी, लेकिन उन्होंने बोलचाल वाली हिंदी और उर्दू से बनी खड़ी बोली का विकास किया। उसमें आधुनिक चेतना का समावेश किया और उसे श्जनश से जोड़ा। यह आज के हिंदी का प्रारंभिक रूप है। हिंदी के महत्त्व को दर्शाता उनका यह दोहा आज भी किसी महामंत्र से कम नहींः

निज भाषा उन्नति लहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को शूलड

'कविवचनसुधा' में उन्होंने लिखा कि जिस प्रकार अमेरिका उपनिवेशित होकर स्वतन्त्र हुआ, उसी प्रकार भारत भी स्वतन्त्रता–लाभ कर सकता है। उन्होंने विलायती कपड़ों के बहिष्कार की अपील की, जो बाद में भारत के लोगों का प्रतिज्ञा–पत्र बन गया।

हम लोग सर्वान्तरयामी, सर्वस्थल में वर्तमान सर्वद्रष्टा और नित्य–सत्य परमेश्वर को साक्षी देकर यह नियम मानते हैं और लिखते हैं कि हम लोग आज के दिन से कोई विलायती कपड़ा न पहिरेंगे और जो कपड़ा कि पहिले से मोल ले चुके हैं और आज की मिती तक हमारे पास हैं, उसको तो उसके जीर्ण हो जाने तक काम में लावेंगे, पर नवीन मोल लेकर किसी भाँति का भी विलायती कपड़ा न पहिरेंगे, हिंदुस्तान का ही बना कपड़ा पहिरेंगे।

आधुनिक हिंदी साहित्य में भारतेंदु अग्रगण्य हैं। कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबंधकृ सभी में उनकी देन अभूतपूर्व है। उनकी रचनाओं की संख्या 150 के आस–पास है। काशी प्रचारिणी सभा ने उनका सम्पूर्ण साहित्य प्रकाशित किया है।

यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि हिंदी में वे नवजागरण का संदेश लेकर अवतरित हुए। अनेक रचना–विधाओं में उन्होंने सर्वथा नवीन भाषा–शैली में मौलिकता का समावेश किया और आधुनिक काल के अनुरूप बघनाया। निस्संदेह, वे हिंदी नवजागरण के जनक हैं।

निष्कर्ष:

ऐसा कहा जा सकता है कि भारतेन्दु व्यक्ति से अधिक एक संस्था थे।उनके साहित्य में परंपरा के प्रगतिशील तत्वों के ग्रहण के साथ विद्रोह की बलवती चेतना भी है।उन्होंने निराशा और अवसाद की बेला में जीवन की प्रतिकूल शक्तियों से लोहा लिया और प्रगति की होड़ में देशवासियों को आगे आने की प्रेरणा दी।इसीलिए उनकी वाणी अनागत की आरती और वर्तमान के इतिहास के साथ आगत का पथ–निर्देश बन सकी।

संदर्भ ग्रंथ–

1 भारतेंदु ग्रंथावली सं हेमंत शर्मा, हिंदी प्रचारक संस्थान वाराणसी

2 हिंदी साहित्य का इतिहास आचार्य राम चंद्र शुक्ल जय भारती प्रकाशन इलाहाबाद 1998

3 हिंदी साहित्य रू उद्भव और विकास आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1998

4 हिंदी नवजागरण और भारतेंदु हरिश्चंद्र डा राम विलास शर्मा राजकमल प्रकाशन दिल्ली 2001

5 सुकवि समीक्षा डॉ0 आनंद नारायण शर्मा भारती भवन पटना 1995

डॉ0 कुमारी मनीषा

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग

जगलाल चौधरी कालेज,छपरा

चलभाष –9430067819

45

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में महिलाओं की भूमिका

डॉ0 ममता देवी, अंजू

सारांश

1857 से 1947 तक, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन ब्रिटिश उपनिवेशवाद के खिलाफ लड़ा गया। इसमें विभिन्न विचारधाराओं, वर्गों, क्षेत्रों और व्यक्तियों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस आंदोलन में भाषा, धर्म, जाति, क्षेत्र, धन–दौलत और लिंग का भेद भुलाकर, भारतीयों ने एकजुट होकर दुनिया के सबसे प्रबल साम्राज्यवादी शक्ति को चुनौती दी। इस लंबे संघर्ष में कई व्यक्तियों ने अपनी जान दी और कठिनाइयों का सामना किया, लेकिन अंततः हमें स्वतंत्रता की प्राप्ति हुई। इस राष्ट्रीय आंदोलन में कष्ट सहने के श्रय देश की महिलाओं को अधिक जाता है। क्योंकि इसमें उनकी भूमिका बहुमुखी थी जो इस लंबे तथा व्यापक राष्ट्रीय आंदोलन की दिशा, गति, स्थिति, आवश्यकता तथा समयानुसार अपना रूप बदलती रही रही। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के विभिन्न पहलुओं पर लगातार शोधकार्य जारी है। कई क्षेत्रों और घटनाओं पर व्यापक ढंग से शोध कार्य हुआ है जिसकी वजह से वहाँ के शहीदों ओर स्वतंत्रता सेनानियों के बारे में काफी मात्रा में जानकारी उपलब्ध है। लेकिन अभी भी कई क्षेत्र और वर्ग ऐसे हैं जो अभी ठीक से उभरे नही है। राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भूमिका को समझना भी एक ऐसा ही अछूता क्षेत्र है। इस शोध कार्य का उद्देश्य इसी कड़ी को पूरा करना है तथा राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी का व्यवस्थित ढंग से विश्लेषण करना है। तथा योगदान का इतिहासिक विश्लेषण करना। साथ ही महिलाओं के नेतृत्व में राष्ट्रीय आंदोलन के प्रमुख कार्यकलापों का अध्ययन करना व महिलाओं द्वारा उठाए गए मुद्दों के आधार पर भारतीय राष्ट्रीय आंदोलनों के प्रभाव का मूल्यांकन करना। इस शोध कार्य के लिए शोध सामग्री भारतीय इतिहास, स्वतंत्रता संग्राम, महिला आंदोलन, और महिला संगठनों से संबंधित विभिन्न पुस्तकों, विभिन्न पत्र– पत्रिकाओं में छपे आलेखों तथा शोध पेपरों आदि द्वितीय स्त्रोतों से ली गई है।

मुख्य शब्द : राष्ट्रीय आंदोलन, महिलाएं, भूमिका, भागीदारी, नेतृत्व आदि।

परिचय :

राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भूमिका को समझने के लिए तीन चरणों में बांटकर विश्लेषण किया गया है। पहले चरण में सामाजिक सुधार आंदोलन और धार्मिक सुधार आंदोलन, दूसरे चरण में स्वदेश आंदोलन तथा तीसरे चरण में महात्मा गांधी के नेतृत्व में चलाए राष्ट्रीय आंदोलन को शामिल किया गया है।

सामाजिक सुधार आंदोलन और महिलाएं :

समाज सुधार आंदोलन को आधुनिक भारत के निर्माण में की जाने वाली बौद्धिक प्रक्रियाओं की कुंजी माना जाता है। समाज सुधारकों ने महिलाओं पर हो रहे अन्याय व अत्याचार के प्रति लोगों को जागरूक करके सामाजिक बुराइयों को दूर करने का प्रयास किया। उनका मानना था कि महिलाओं की शिक्षा तक पहुंच बनाकर सामाजिक परिवर्तन की शुरुआत की जा सकती है। समाज में धनी वर्ग में बहु विवाह, बाल विवाह, कन्याओं की हत्या और पहली कन्या को पवित्र जल में फेंकना आदि भारतीय इतिहास में सबसे अधिक प्रचलित कुप्रथाएं थी। नैतिकता और व्यवहारिक मर्यादा अपने सबसे निचले स्तर पर पहुंच गई। 19 वीं सदी में अंग्रेजी शिक्षा की शुरुआत हुई। पश्चिम और पश्चिमी विचारों के साथ संपर्क हुआ, पुनर्जीवित प्राचीन परंपराओं से प्रेरणा ली और भारत के गौरवशाली अतीत के परिणाम स्वरूप महान जागृति पैदा हुई। महिलाओं को प्रभावित करने वाली दमनकारी सामाजिक प्रथाओं को समाप्त करने वाली सुधारवादी चेतना से प्रेरित पहला प्रयास राजा राममोहन राय और ईश्वर चंद्र विद्यासागर जैसे व्यक्तियों के थे। राजा राममोहन राय ने दो मुद्दों महिलाओं की शिक्षा और सती प्रथा का उन्मूलन पर ध्यान केंद्रित किया। इसके लिए उन्होंने सती प्रथा के खिलाफ उचित कानूनी अधिनियम के लिए राज्य का समर्थन जुटाने का प्रयास किया। राजा राममोहन राय ने पहली बार इस ओर इशारा किया कि प्राचीन हिंदू धर्म ग्रंथों में सती का वर्णन नहीं है। इससे भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बेंटिक के हाथ मजबूत हुई और 1829 में ब्रिटिश सरकार ने सती प्रथा को अवैध घोषित कर दिया। सती प्रथा का उन्मूलन केवल महिलाओं की मुक्ति के लिए प्रयास नहीं था वास्तव में यह विधवा पुनर्विवाह की स्वीकृति के लिए भी आवश्यक पहला कदम था। (एच.सी. उपाध्याय, 1991) ईश्वर चंद्र विद्यासागर के प्रयासों से विधवा पुनर्विवाह के लिए एक अभियान शुरू किया गया, जिसके परिणाम स्वरूप 1856 में एक विधेयक पारित हुआ और विधवा पुनर्विवाह को अनुमति मिल गई। (कविता मिश्रा, 2006) स्वामी दयानंद सरस्वती ने 1875 में आर्य समाज की स्थापना की। वे भी बाल– विवाह के खिलाफ थे तथा विधवाओं के पुनर्विवाह के लिए काम किया। वे महिलाओं को समानता का दर्जा देने के पक्ष में थे तथा उन्होंने पहली बार सार्वजनिक रूप से स्त्री शिक्षा की वकालत करते हुए कन्या पाठशाला खोलने का आह्वान किया। (रोमी शर्मा, 2002) ब्रह्म समाज के प्रयत्नों से 1872 में सिविल मैरिज एक्ट आया, जिसे महिलाओं की स्थिति सुधारने में'मील का पत्थर 'कहा जा सकता है। राजा राममोहन राय, रानाडे और दयानंद सरस्वती जैसे समाज सुधारको ने प्राचीन भारत में स्त्रियों की स्थिति का गुणगान किया। ज्योतिबा फुले का मानना है कि शूद्र और स्त्रियों को शिक्षा की मनाही इसलिए कर दी गई ताकि वे मानवाधिकारों की समानता और स्वतंत्रता के महत्व को समझ ही न सके और कानून, रीति–रिवाजों और परंपराओं में इसकी व्यवस्था कर दी गई ताकि वे अपनी निम्न स्थिति को स्वीकार कर ले। (सुनील गोयल, 2003)

ज्योतिबा फुले ने अपनी पत्नी सावित्रीबाई फुले के साथ मिलकर स्त्री अधिकारों एवं शिक्षा के क्षेत्र में काम किया। सावित्रीबाई फुले ने आजीवन विधवा विवाह करवाना, छुआछूत मिटाना, महिलाओं की मुक्ति और दलित महिलाओं को शिक्षित बनाने के लिए काम किया। इसी तरह फातिमा शेख ने भी सावित्रीबाई फुले के साथ मिलकर महिलाओं और उत्पीड़ित जातियों के लोगों को शिक्षा देने का काम किया। फातिमा शेख आधुनिक भारत मे सबसे पहली मुस्लिम महिला शिक्षकों में से एक थी, 1848 में सावित्रीबाई फुले ने फातिमा शेख के घर मे ही बालिकाओं के लिए एक विद्यालय खोला और दोनों ने मिलकर समाज मे शिक्षा के प्रचार– प्रसार के लिए काम किया। उस समय मुस्लिम समाज भी पिछड़ा हुआ था सर सैयद अहमद खान ने महसूस किया कि मुस्लिम महिलाएं पर्दे की कुप्रथा से ग्रस्त हैं और शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़े हुए हैं। इसलिए उन्होंने पर्दा प्रथा की समाप्ति और मुस्लिम महिलाओं में शिक्षा प्रसार के लिए मुहिम चलाई। (रोमी शर्मा, 2002)

समाज सुधार आंदोलन के परिणामस्वरूप अखिल भारतीय मारवाड़ संघ की स्थापना हुई और इस आंदोलन में महिलाओं ने अपना अमूल्य योगदान दिया। उन्होंने जुलूस निकालने, प्रदर्शन किए, आम सभाएं, वाद–विवाद, सत्याग्रह आदि का आयोजन एक बड़े स्तर पर किया। 5000 महिलाओं ने पर्दे के विरोध में एक विशाल सभा का आयोजन किया। हालांकि बहुत सीमित रूप में, लेकिन महिलाएं राजनीति में भी आगे आनी शुरू हुई। (निशांत सिंह, 2009)

कर्नाटक में कित्तूर रियासत की रानी, कित्तूर चेन्नम्मा ने अंग्रेजों की डॉक्ट्रिन ऑफ लैप्स की नीति के खिलाफ सशस्त्र विद्रोह का नेतृत्व किया। तटीय कर्नाटक की महारानी अबक्का रानी ने 16 वीं सदी में हमलावर पुर्तगाली सेना के विरुद्ध सुरक्षा का नेतृत्व किया। झांसी की महारानी रानी लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों के खिलाफ 1857 के भारतीय विद्रोह का झंडा बुलंद किया। अवध की सह–शासिका बेगम हजरत महल ने 1857 के विद्रोह का नेतृत्व किया था। उन्होंने अंग्रेजों के साथ सौदेबाजी से इंकार कर दिया और बाद में नेपाल चली गई। (डॉ. ममता)

सार रूप में बंगाल में महिला आंदोलन में मोटे तौर पर तीन चरण शामिल थे। पहले चरण में, 19 वीं सदी की शुरुआत में सती प्रथा, विधवा पुनर्विवाह पर रोक और बाल विवाह जैसी सामाजिक प्रथाओं के धार्मिक आधार को बदलने, तर्कसंगत और माननीय मानदंडों को लागू करने के प्रयास किए गए थे। दूसरे चरण में, 19 वीं सदी के मध्य में, महिलाओं की शिक्षा पर बहुत जोर दिया गया था। राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं के प्रवेश में तीसरे चरण को चिन्हित किया। महिलाओं की मुक्ति अब कुछ समाज सुधारको का आदर्श नहीं थी बल्कि एक बहुत बड़े राजनीतिक धर्मयुद्ध का हिस्सा बन गई थी। (सम्पा गुहा)
सामाजिक सुधार आंदोलन के साथ–साथ धार्मिक सुधार आंदोलन में भी कई प्रतिष्ठित महिला सुधारको ने भाग लिया, जिनमें पंडिता रमाबाई, मनोरमा मजूमदार, सरला देवी घोषाल ने महिलाओं की शिक्षा के लिए 'भारत स्त्री महिलामंडल' की शुरुआत की , स्वर्ण कुमारी देवी ने विधवाओं के लिए 1886 में महिला संगठन सखी समिति की शुरुआत की।। इन गतिविधियों ने सार्वजनिक स्थानों पर महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा दिया, जिससे स्वतंत्रता संग्राम में उनके प्रवेश का मार्ग प्रशस्त हुआ।

1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अस्तित्व में आई, इसके पहले सत्र में ए. ओ. ह्यूम ने चेतावनी दी कि– ''सभी राजनीतिक संस्थाओं को एक बात पूर्ण रूप से समझ लेनी चाहिए कि जब तक महिलाओं का योगदान हर क्षेत्र में नहीं होगा तब तक स्वतंत्रता प्राप्ति के सारे प्रयास विफल हो जाएंगे''। (निशांत सिंह, 2009)

1889 तक कोई भी महिला राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल नहीं हुई। मुख्य रूप से द्वारिकानाथ गांगुली के आग्रह पर कांग्रेस के पांचवें सत्र में महिला प्रतिनिधियों को मान्यता दी गई और स्वर्ण कुमारी देवी और कादम्बिनी गांगुली के साथ– साथ आठ अन्य महिला प्रतिनिधि मुंबई कांग्रेस अधिवेशन में अन्य प्रांतों से शामिल हुई। 1890 में कोलकाता में आयोजित अगले स्तर में महिलाओं ने अधिक सक्रिय रूप से भाग लिया। कादंबिनी गांगुली को कांग्रेस के मंच से बोलने वाली पहली महिला होने का सामान मिला। (सम्पा गुहा) 1890 के कांग्रेस अधिवेशन में राज्य का प्रतिनिधित्व करने के लिए बंगाल से चुने गए दो प्रतिनिधियों में से एक स्वर्ण कुमारी देवी को चुना गया था। सवर्ण कुमारी देवी ने स्वदेशी आंदोलन में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया और राष्ट्रीय चेतना जगाने के लिए अपनी कलम उठाई थी तथा घरों में सीमित महिलाओं को साक्षरता प्रदान करने का प्रयास किया। (रमा चेरी, 2012)

स्वदेशी आंदोलन और महिलाएं :

बंगाल की प्रारंभिक महिला संगठन पुरुषों द्वारा अपनी महिला रिश्तेदारों को स्वयं द्वारा गठित संघों की विचारधारा और कार्यक्रमों से प्रेरित करने के प्रयासों के परिणाम स्वरूप पैदा हुए थे। 1904 – 1911 में स्वदेशी काल के दौरान महिलाओं को लामबंद करने के प्रयास किए गए और कई नेताओं ने सार्वजनिक मामलें में महिला की भागीदारी बढ़ाने में योगदान दिया। बंगाल में, महिलाओं का राजनीतिकरण 1905 के स्वदेशी आंदोलन के दौरान शुरू हुआ। बंगाल का विभाजन, बंगाली राष्ट्रवाद की भावना के लिए एक चुनौती थी जिसने एक व्यापक लोकप्रिय आंदोलन को जन्म दिया। स्वदेशी और बहिष्कार के विचारों को सभी वर्गों से प्रतिक्रिया मिली। विभाजन की तारीख 16 अक्टूबर 1905 को महान कवि रविंद्रनाथ टैगोर के सुझाव पर राखी बंधन दिवस के रूप में मनाया। बंगाल में शिक्षित महिलाओं ने बंगाली घरों में उपवास, कताई और राखी बंधन द्वारा उस दिन को विरोध दिवस के रूप में मनाया। विरोध सभाओं ने कस्बों और गांवों को जगाने का काम किया और महिलाओं ने कई तरह से विभाजन विरोधी आंदोलन में भाग लिया। 16 अक्टूबर को मुर्शिदाबाद में फेडरेशन हॉल में आयोजित विरोध सभा में लगभग

500 महिलाओं के आने की खबर मिली। उसी दिन रामेंद्र सुंदर की ''बंगा लक्ष्मीर व्रत कथा'' को महिलाओं की बैठक से पहले पढ़ा गया। इस व्रत कथा ने स्वदेशी आंदोलन को इतनी स्पष्ट भाषा और शैली में समझाने की कोशिश की गई कि एक गांव की महिला भी समझ सके। 1906 में नटोर की महारानी के नेतृत्व में कलकत्ता के मैरी कारपेंटर हॉल में लगभग 100 महिलाएं इकठ्ठी हुई। गिरीवाला देवी ने इस बैठक में शपथ ली कि विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करेगी और केवल स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करेगी। चरखे या चरखे के उपयोग को प्रोत्साहन करने के लिए महिलाओं ने बंगाल के विभिन्न हिस्सों में घरों और विभिन्न इलाकों में सभाओं का आयोजन किया। वंदेमातरम के नारे पर ब्रिटिश सरकार के प्रतिबंध के बावजूद बंगाली महिलाओं ने इस को अपनाए रखा और श्रीमती सरोजिनी बोस ने कसम खाई कि जब तक ब्रिटिश सरकार वन्देमातरम के उपयोग पर लगे प्रतिबंध को रद्द नहीं करती, वह सोने की चूड़ियां नहीं पहनेगी। नवनिर्मित राष्ट्रीय कोष में महिलाओं ने चावल, चूड़ियां, नाक की बाली, अंगूठी आदि गहने दान किए। श्रीमती जे .के. गांगुली को राजद्रोह के आरोप में दोषी ठहराया गया। सुरेंद्रनाथ बनर्जी अपने 'ए नेशन इन मेकिंग' में लिखते हैं कि ''स्वदेशी आंदोलन ने हमारे घरों पर आक्रमण किया और हमारी महिलाओं के दिलों पर कब्जा कर लिया, जो पुरुषों से भी ज्यादा उत्साहित थी।'' 22 दिसंबर, 1906 को बेथयूंन कॉलेज में एक बैठक बुलाई गई। सभा की अध्यक्षता, बड़ौदा की महारानी, स्वदेशी आंदोलन में बंगाली महिलाओं के काम से बहुत प्रभावित हुई।

विभिन्न स्थानों पर महिलाओं ने स्वदेशी मेलों का आयोजन किया, जिनमें स्वदेशी वस्तुओं की प्रदर्शनी लगाई गई। स्वदेशी आंदोलन वास्तव में बंगाली राष्ट्रीय जीवन का वसंत था। इस दौरान कला, साहित्य, संगीत के साथ–साथ आर्थिक, राजनीतिक और शैक्षणिक क्षेत्रों में सर्वांगीण विकास हुआ। महिलाएं इस आंदोलन के हर पहलू में शामिल हुई। कई क्रांतिकारी महिला प्रख्यात लेखिकाएं भी थी जैसे कामिनी राय, मनुकुमारी बसु, किरणमयी देवी और कुमुदिनी बसु, नागेंद्रकला मुस्तफी, मैरी भोरे, गोदावरीबाई, कमला साथियानंदन, रामेश्वरी नेहरू, रूपकुमारी नेहरू, पार्वतीबाई और रुकमणी बाई आदि ने अपने लेखन के माध्यम से स्वदेशी की भावना को भरने की कोशिश की। (रमा चेरी, 2012)

नवंबर 1908 में, कोलकाता में महिला महासमिति नामक एक संगठन ने महिलाओं की एक सामूहिक बैठक आयोजित की। जिसमें विभिन्न प्रांतों से महिलाएं राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं के कर्तव्य पर चर्चा करने आई। 1908 में जब गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में एक नया आंदोलन शुरू किया, तो बंगाली महिलाओं ने 'मेयर कोटा' (मां का डब्बा) नामक एक संग्रह अभियान चलाया। स्वदेशी आंदोलन के दौरान कई महिला संगठनों , स्वयं सहायता समूहों और महिला समितियों का उदय हुआ। लेकिन यह भी सच्चाई है कि रूढ़िवाद की वजह से महिलाओं को पुरुषों के साथ समान आधार पर राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने की इजाजत नहीं मिली। जिन परिस्थितियों में भारत में महिलाओं के आंदोलन की शुरुआत हुई थी, उन्होंने इसे मूल रूप से पुरुष निर्देशित आंदोलन बना दिया। शुरुआत में जो महिला संघ बने थे वे पुरुष नेतृत्व से संचालित हुई।

1914 में श्रीमती एनी बेसेंट ने राष्ट्रीय आंदोलन में प्रवेश किया, जिससे राजनीति में महिलाओं की भागीदारी की प्रक्रिया तेज हुई। उन्होंने भारत के लिए होमरूल प्राप्त करने के उद्देश्य से सितंबर 1915 में होमरूल लीग की स्थापना की। वे 1917 में स्थापित भारतीय महिला संघ की पहली अध्यक्ष थी। उन्होंने महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व की मांग को आगे बढ़ाया। एनी बेसेंट को 1917 में ही कोलकाता में कांग्रेस की पहली महिला अध्यक्ष चुना गया था। सरोजिनी नायडू पहली भारतीय महिला थी जिनकी राजनीति में पूर्णकालिक भागीदारी रही। होमरूल लीग की सदस्य के रूप में उन्होंने इंग्लैंड में महिलाओं के एक प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व किया था।

सिस्टर निवेदिता राष्ट्रीय क्रांतिकारी परिषद की सदस्य बनी और महिलाओं को राष्ट्रवादी गतिविधियों के लिए संगठित किया। उनकी तरह दिल्ली में अज्ञवती, मैडम कामा, जिनको क्रांतिकारी नेता की मान्यता प्राप्त थी, कुमुदिनी मिश्रा, जिन्होंने 'सुप्रभात' नामक एक पत्रिका शुरू की थी, सहित कई अन्य महिलाओं को अंग्रेज खतरे के रूप में देखते थे, ने महिलाओं को संगठित करने का काम किया। 19वीं तथा 20 वीं सदी में कुछ भारतीय महिलाओं के योगदान से इन आंदोलनों को असाधारण उन्नति और बढ़ावा मिला। महिला उत्थान के लिए उन्होंने विशेष रूप से कार्य किया। महारानी तपस्विनी, पंडिता रमाबाई, स्वर्ण कुमारी देवी, रानी स्वर्णमयी, रमाबाई रानाडे, लेडी हरनाम सिंह, एनी बेसेंट, चिमनाबाई, हँसा मेहता, धनवनती रामाराव, मृत्युलक्ष्मी रेड्डी, निवेदिता बहन, शारदा बहन आदि कुछ उदाहरण हैं। जिन्होंने महिला उत्थान तथा सामाजिक सुधार के लिए अपना अमूल्य योगदान दिया। सरोजिनी नायडू, कमला देवी चट्टोपाध्याय, अरुणा आसफ अली और बसन्त देवी स्वतंत्रता आंदोलन में मजबूत नेता थी। लेकिन अभी तक बड़ी संख्या में आम महिलाओं की राजनीति में सक्रिय भागीदारी नही थी। महिलाओं का आरंभिक आंदोलन अपने दायरे और संरचना में सिर्फ अभिजात्य वर्ग तक ही सीमित था। इसमें वे ही महिलाएं शामिल थी जो शहरी, शिक्षित, कुलीन परिवारों से थी। ये अपने परिवार के राजनीतिक सहयोग से ही आगे आई थी। यह गांधी ही थे जिन्होंने सबसे पहले स्वतंत्रता आंदोलन को एक नई दिशा, शक्ति, प्रेरणा दी और बड़ी संख्या में महिलाओं को राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल किया। (सम्पा गुहा)

राष्ट्रीय आन्दोलन में महिलाए और महात्मा गाँधी :

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं ने शानदार भूमिका निभाई है। असंख्य स्वतंत्रता– संग्रामी महिलाओं ने अपनी कुर्बानियों से समस्त नारी समुदाय को गौरवान्वित किया है। स्वतंत्रता संग्राम

में भाग लेने का श्रेय केवल उन महिलाओं को ही प्राप्त नहीं है, जिन्होंने राजनीति में सक्रिय भाग लिया, बल्कि प्रत्येक उस पुरुष के पीछे जो आजादी की लड़ाई में शहीद हुआ और हजारों देशभक्त व राष्ट्र सेवकों की पीछे, जिन्होंने कारवास के कष्ट झेले, उतनी ही हजारों माताएं, बहने, बेटियां और पत्नियां थी, जिन्होंने बड़े ही हौसले के साथ अपने प्रियजनों से जुदाई के दिन काटे,पारिवारिक मुसीबतों को बर्दाश्त किया तथा साम्राज्यी दमन के शिकार अपने परिवारों के पुरुषों का मनोबल बनाए रखा। इन महिलाओं को हम सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता की गणना में नहीं रख सकते, लेकिन इनकी कुर्बानियों की गरिमा कुछ कम नहीं है। (राजेंद्र, 1994)

भारत में समय–समय पर महिलाओं ने राजनीति में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मुख्य भूमिका निभाई है, अस्तु, राष्ट्रीय आंदोलन के बढ़ते ज्वर के कारण उनका घर की चारदीवारी में रहना संभव नहीं था। राष्ट्रीय आंदोलन से जहां आम जनजीवन में नवचेतना का संचार हुआ वहीं उसने नारी समाज में भी जागृति पैदा की। गांधी जी ने महिलाओं को घरों से निकलकर राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय सहयोग करने की अपील की। गांधी जी ने कहा कि– ''पुरुषों के समान महिलाओं को भी स्वराज प्राप्त करने के प्रयत्नों में भाग लेना होगा, मैं पूरी उम्मीद करता हूं कि भारत की महिलाएं इस चुनौती को स्वीकार कर अपने को संगठित करेगी। (मीनाक्षी सिंह, 2013) गांधी का विश्वास था कि यदि महिला किसी कार्य के लिए दृढ़ प्रतिज्ञा कर ले तो वह कठिन से कठिन कार्य को शांतिपूर्वक हल कर सकती हैं, क्योंकि स्त्रियों में अहिंसा की शक्ति अधिक होती है। इसलिए, उन्हें महिला की आंतरिक शक्ति और उसकी नैतिक अपील में अत्यधिक विश्वास था। गांधी द्वारा शुरू किए गए सत्याग्रहों में न केवल उच्च वर्ग की शहरी महिलाओं ने भाग लिया, बल्कि कई जगहों पर साधारण ग्रामीण महिलाओं ने भी नेतृत्व सम्भाल। अपर्णा बसु टिप्पणी करती है कि "महिलाएं बड़े पैमाने पर लोकप्रिय आंदोलन, हरिजनों, आदिवासियों के बीच रचनात्मक कार्यों से लेकर औपचारिक संस्थागत चुनावी राजनीति तक विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में शामिल थी।''

गांधी जी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन से भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में नए दौर की शुरुआत हुई। आजादी के आंदोलन में जनसाधारण एवं जनआंदोलन की महत्वपूर्ण भूमिका को समझने वाले वे पहले राष्ट्रीय नेता थे। गांधी जी ने संघर्ष का ऐसा कार्यक्रम बनाया जिसमें जनसाधारण राष्ट्रीय आंदोलन के प्रति जागरूक हो सके और मजदूर, पूंजीपति, विद्यार्थी, वकील और दूसरे पेशेवर लोग, औरतें सब आंदोलनों में भाग ले सके। असहयोग आंदोलन के तहत, गांधी ने सरकार के आर्थिक आधार को कमजोर करने के लिए किसानों से सरकार को भू–राजस्व न देने की अपील की, वकीलों से कचहरियां छोड़ने को कहा गया, जिससे सरकार की कानून व्यवस्था ठप हो जाए। यह बड़ा उत्साहवर्धक दृश्य था कि हजारों लाखों की तादाद में औरतें घर की सीमाएं लांघ कर अपने पुरुष साथी देशभक्तों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर गैरकानूनी प्रदर्शनों में भाग ले रही थी। महिलाओं ने शराब की दुकानों पर धरने दिए, विदेशी वस्त्रों की होली जलाई। महिलाओं ने आंदोलन के लिए चंदा भी इकट्ठा किया। बहुत– सी बहनों ने गांधी जी के कहने पर अपने गहने उतार दिए। गांधी जी कहते हैं कि मुझे उस समय बहुत प्रसन्नता हुई जिस समय दाल दलने वाली मजदूर स्त्री ने मुझे अपनी बाली उतारकर दी, तभी मैं इस निश्चय पर पहुंच गया कि हमारे देश की महिलाएं शांतिपूर्ण असहयोग की पवित्रता को समझ गई है। (मीनाक्षी सिंह, 2013)

बंगाल में महिलाओं ने 'महिला कर्म समाज' जो बंगाल के प्रांतीय कांग्रेस कमेटी का एक संगठन था, गठित कर लिया। इस संगठन का उद्देश्य बंगाल की महिलाओं के मध्य प्रचार करना था। कुछ महिलाएं इसकी पूर्णकालिक कार्यकर्ता थी। बंगाल में बसंती देवी, उर्मिला देवी, सुनीति देवी और नेली सेन गुप्ता प्रमुख नेता थी, जिन्होंने असहयोग आंदोलन में कई युवा महिलाओं को लाने में योगदान दिया। चितरंजन दास की अनुपस्थिति में, उनके कारावास के दौरान, बसंती देवी ने अपने पति के बंगाल प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष के रूप में काम किया। महिलाओं के बीच सत्याग्रह और रचनात्मक कार्य के कार्यक्रम को अंजाम देने के लिए बंगाल प्रांतीय कांग्रेस कमेटी का एक 'नारी कर्म मंदिर' स्थापित किया गया था। श्रीमती बसंती देवी और उर्मिला देवी को हथकरघा बेचते हुए, कुछ लोगों के साथ गिरफ्तार किया गया था। उनके साथ गिरफ्तार होने वालों में श्रीमती अकुलमित्र, श्रीमती शोम, श्रीमती उमासी देवी, श्रीमती सत्या देवी, कुछ लड़के और 8 सिख महिलाएं थी। यद्यपि उसी शाम उन्हें छोड़ भी दिया गया। जब पुरुषों को गिरफ्तार किया गया था, हजारों महिलाओं ने कोलकाता के पार्कों में बैठके आयोजित करने का काम अपने हाथ में ले लिया था। अतः महिलाओं ने नेतृत्व की स्थिति तभी ग्रहण की, जब उनके पुरूष साथी गिरफ्तार हुए।

पंजाब में महिलाओं की पहली मीटिंग 6 एवं 7 दिसंबर, 1922 को हुई, अध्यक्षता श्रीमती कस्तूरबा गांधी ने की। लाला लाजपत राय की पत्नी श्रीमती राधा देवी ने मंच से पंजाब की साहसी एवं उत्साही महिलाओं को आह्वान किया कि वे स्वराज आंदोलन में पूर्ण सहयोग करें। कुलीन मुस्लिम परिवार से संबंधित एक महत्वपूर्ण शख्सियत बाई अमान थी। उन्होंने पर्दा उतार फेंका और अपनी मृत्यु तक राजनैतिक कार्यों से जुड़ी रही। लगभग सभी प्रांतों में महिलाएं लोगों को प्रोत्साहित कर रही थी और प्रचार करके संघर्ष को तेज करने में सहयोग दे रही थी। लखनऊ में भी श्रीमती अब्दुल कादिर की अध्यक्षता में कांग्रेस कमेटी के कार्यालय में बैठक हुई जिसमें महिलाओं से अनुरोध किया गया कि वे खद्दर धारण करने का संकल्प लें। सिंध की महिलाएं भी पीछे नहीं रही। उन्होंने मुख्य बाजारों और गलियों में जुलूस निकालकर राष्ट्रीय गान करते हुए लोगों में चेतना पैदा की और सशक्त भाषण दिए।

असहयोग आंदोलन रोज अपनी जड़ें गहरी कर रहा था तभी सरकार ने संगठनों और जुलूसों को अवैधानिक घोषित करते हुए लोगों की गिरफ्तारियां तथा लाठीचार्ज करवाना शुरू कर दिया। इस समय तक आंदोलन हिंसक रूप धारण कर चुका था। मुंबई में होने वाले दंगों में 50 मौतें हुई और 379 लोग घायल हुए। उसी वर्ष मोपला विद्रोह का भी विस्फोट हुआ। दंगों का उग्र रूप गोरखपुर जनपद के चोरी– चोरा में दिखाई पड़ा जहां 21 पुलिस कांस्टेबल का कत्ल कर दिया गया और थाने में आग लगाकर उसमें फेंक दिया गया। गांधी जी ने हिंसक कार्यवाही के कारण विवश होकर असहयोग आंदोलन स्थगित कर दिया।

दिसंबर 1929 में जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन के साथ एक नया माहौल बनाया गया, इस अधिवेशन में कांग्रेस ने डोमिनियन स्टेट की बजाय पूर्ण स्वतंत्रता को अपना लक्ष्य बनाया, साथ ही गांधी जी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू करने का निश्चय किया। गांधीजी ने यह अनुभव किया कि गरीब जनता के बीच प्रयोग में आने वाली चीज नमक है जिस पर लगने वाला कर अन्यायपूर्ण है इसलिए उन्होंने नमक कानून तोड़ने का निश्चय किया । सत्याग्रह के प्रथम दल के चयन में गांधी जी ने महिलाओं को बाहर रखने की बात की । मीराबेन और रेनीनॉल्डस रेनॉल्ड्स जैसी महिलाओं ने प्रथम दल में सम्मिलित किए जाने की मांग रखी, किंतु गांधी जी ने यह कहकर टाल दिया कि इससे महान पवित्र कार्य आपके लिए है। हालांकि बाद में महिलाओं को नमक सत्याग्रह अभियान में भाग लेने की अनुमति दे दी गई। (कविता मिश्रा, 2006)

6 अप्रैल को गांधी जी ने प्रार्थना सभा के बाद अपने उद्‌बोधन में घोषणा की कि यदि उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया तो अब्बास तैय्यब जी के आदेशों के बाद श्रीमती नायडू के आदेशों का पालन होगा । आजादी के आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी का मूल कारण था, गांधी जी का अहिंसा और शांतिपूर्ण सत्याग्रह इसीलिए गांधी ने खुशी से नमक आंदोलन का नेतृत्व भी सरोजिनी नायडू को सौंपा था। 6 अप्रैल 1930 को गांधी जी को बंदी बना लिए जाने से देश में तूफान आ गया। मुंबई में जबरदस्त हड़ताल हुई जिसका अनुसरण देश के अन्य हिस्सों में भी किया गया। राष्ट्र की मांग के अनुरूप महिलाओं ने समता की मांग करते हुए कहा कि ''भारत का उद्धार के लिए अब बिना महिला प्रतिनिधित्व के कोई सम्मेलन, कोई कांग्रेस अथवा कोई आयोग नहीं बैठेगा तथा किसी तरह की यात्रा एवं प्रदर्शन का भी आयोजन नहीं होगा। इसके बाद अनेकों अभियानों में महिलाओं को प्रवेश की अनुमति दे दी गई। इन सब के परिणाम स्वरुप महिलाएं नमक कानून तोड़ने लगी, प्रभात फेरी करने लगी, स्कूल, कालेज तथा विधान काउंसिल के सामने धरना देने लगी। दिल्ली के प्रदर्शन में पंडित नेहरू की सास सहित 10 महिलाएं लाठीचार्ज में घायल हुई जबकि मध्यप्रदेश में जंगल कानून का विरोध करने में 3 महिलाओं को जान से हाथ धोना पड़ा। श्रीमती हंसा मेहता और कामाभाई लक्ष्मण राय ने अवैतानिक मजिस्ट्रेट पद से त्यागपत्र दे दिया। मिस डिक्शन जो सेंट्रल लेजिसलेटिव असेंबली की पहली महिला थी, उन्होंने न केवल अपने पद से त्यागपत्र दिया बल्कि केसर–ए–हिंद की पदवी भी अस्वीकार कर दी। (मीनाक्षी सिंह, 2013)

1931 में करांची में कांग्रेस के अधिवेशन में भारत के लोगों के लिए मौलिक अधिकारों का एक चार्टर तैयार किया, साथ ही स्वीकार किया कि महिला–पुरुष में किसी प्रकार का भेद–भाव नहीं किया जाएगा। (राधा कृष्णा शर्मा, 1981)

नमक सत्याग्रह में हजारों महिलाएं शामिल हुई। महिलाओं ने जुलूस धरना और चरखा कताई सहित राष्ट्रवादी गतिविधियों में भाग लेने और संगठित करने के लिए कई महिला संगठनों का गठन किया। जैसे लेडीज पिकेटिंग बोर्ड, देश सेविका संघ, नारी सत्याग्रह समिति और महिला राष्ट्रीय संघ। (2012) महिलाओं की राजनीतिक चेतना को देखते हुए 12 फरवरी, 1940 को मृदुला साराभाई ने डॉ. राजेंद्र प्रसाद को एक पत्र के द्वारा कांग्रेस के अंदर ही 'महिला विभाग' स्थापित करने की मांग की। अरुणा आसफअली, सुचेता कृपलानी, विजयलक्ष्मी पंडित आदि ने भी इसी प्रकार के विचार व्यक्त किए। महिला विभाग का गठन किया गया, सुचेता कृपलानी इस विभाग की सचिव बनी। उसके बाद देश के सभी हिस्सों में महिला मंडलों की स्थापना की गई। (2013)

भारत छोड़ो आंदोलन एवं महिलाएं :

7 से 9 अगस्त 1942 को बंबई में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की बैठक बुलाई गई जिसमें तत्कालीन परिस्थितियों पर विचार विमर्श करके 8 अगस्त को गांधीजी ने 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' और भारतीय 'करो या मरो' का प्रस्ताव रखा जो सर्वसम्मति से पारित हो गया। इस प्रस्ताव में अंग्रेजों को कहा कि वह भारत छोड़कर लंदन चले जाएं और भारतीयों से अपील की कि वे भारत की आजादी के लिए 'करो या मरो' का मूल मंत्र अपनाएं, इसके अतिरिक्त हमारे पास अब अन्य कोई विकल्प नहीं रहा है। प्रस्ताव रखते वक्त गांधी जी ने कहा था कि यह आंदोलन 'संक्षिप्त' तथा 'तीव्र' होगा। (गणपति सिंह, 1993)

1942 का भारत छोड़ो आंदोलन स्वतंत्रता संघर्ष का अंतिम आंदोलन था जिसमें संपूर्ण भारत की महिलाओं ने भागीदारी ली थी। अगस्त 1942 की एक रिपोर्ट के अनुसार दो सबसे अधिक प्रभावित शहर इलाहाबाद व आगरा थे। इलाहाबाद में नेतृत्व नेहरू परिवार की महिलाओं ने किया। जुलूस और सभाओं पर प्रतिबंध के बावजूद यहां जुलूस निकालने गए और सभाएं की गई। श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित ने विश्वविद्यालय जाकर छात्रों से शांतिपूर्ण जुलूस निकालने का अनुरोध किया। जुलूस से छात्राएं आगे थी। हाथ में तिरंगा लिए 'करो या मरो' के नारे से राष्ट्र गूंज उठा।

महिलाओं ने न केवल जुलूस निकाल ले बल्कि प्रदर्शन किए और जगह–जगह पर प्रशिक्षण केंद्र खोले। जहां पर महिलाओं को

भारतीय संविधान, नागरिक कर्तव्य, प्राथमिक चिकित्सा, प्रजातंत्र तथा महिला समितियों के बारे में जानकारी दी जाती थी। उन्हें लाठी चलाना सिखाया जाता था। महिलाओं में राजनीतिक बंदियों के लिए शरणार्थी कैम्प भी खोले तथा उनके लिए चंदा भी जुटाया। (निशांत सिंह, 2009)

1943 के अंत तक संपूर्ण भारत में गिरफ्तारियों में महिलाएं सर्वाधिक गिरफ्तार हुई। श्रीमती सरोजनी नायडू, विजयलक्ष्मी पंडित के अलावा अरूणा आसफअली, उषा मेहता और सुचेता कृपलानी आदि महिलाओं ने भूमिगत रहकर आंदोलन का नेतृत्व संभाले रखा। आजादी की इस लड़ाई में हजारों महिलाओं ने हिस्सा लिया और जेल यातनाओं के साथ ही परिवारिक कष्ट भी सहे। मार्च 1946 को कैबिनेट मिशन भारत आया, इस मिशन की योजना के अनुसार सविधान सभा के लिए चुनाव हुए। जिसमें महिलाओं ने भी हिस्सा लिया और जीत हासिल की। देश के विभिन्न प्रांतों से 15 महिलाएं निर्वाचित हुई जिसमें सुचेता कृपलानी, श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित, राजकुमारी अमृत, उषा मेहता मुख्य थी। माउंटबेटन योजना के आधार पर 15 अगस्त 1947 को भारत एक लंबी गुलामी के बाद आजाद हुआ। 30 जनवरी 1948 को गांधी जी की हत्या हो गई। जिससे देश ने राष्ट्रनायक, जननायक एवं राष्ट्रपिता को खो दिया लेकिन महिलाओं तथा देश के सभी वर्गों के लिए उनके द्वारा किए अमूल्य योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है।

निष्कर्ष :

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहना सार्थक है कि भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में पुरुषों के साथ–साथ महिलाओं ने भी पूरी हिम्मत और वीरता के साथ अपना भरपूर व सक्रिय योगदान दिया है। महिलाओं के सहयोग के बिना आजादी का सपना अधूरा था। भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी के प्रवेश ने महिलाओं को अत्यधिक आंदोलित किया। गांधी का मानना था कि स्त्री में अहिंसा की ताकत पुरुष से अधिक होती है और यदि महिला आंदोलन से जुड़ेगी तो पूरा परिवार जुड़ेगा। अतः महिलाओं ने महात्मा गांधी की इस भविष्यवाणी को साकार करके दिखा दिया और अपने अधिकारों और उत्तरदायित्व को समझते हुए सक्रिय रुप से राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेकर आजादी की लड़ाई को सफल बनाया। उन सीधी–सादी और निरक्षर महिलाओं के बलिदान भी उल्लेखनीय है जो राजनीति की बारीकियां न जानते हुए भी देश की आजादी की कीमत समझती थी।

सन्दर्भ सूची :

1. डॉ. देसाई, नीरा, राज कृष्णना, ''वुमन एन्ड सोसायटी इन इंडिया'', पेज न. 39
2. गुहा,सम्पा,''पॉलिटिकल पार्टिसिपेशन ऑफ वुमन इन ए चेंजिंग सोसाइटी'', इंटर –इंडिया पब्लिकेशन, नई दिल्ली,पेज न. 57.58
3. उपाध्याय, एच. सी.,''स्टेट्स ऑफ वुमन इन इंडिया,'' अनमोल पब्लिकेशन, नई दिल्ली,1991.पेज न.43.46
4. मिश्रा, कविता,''वुमन्स रोल इन पॉलिटिक्स इन मॉडर्न वल्ड'', ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली,2006 पेज न.139
5. शर्मा,रोमी,''भारतीय महिलाएंःनई दिशाएं,''प्रकाशक विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार,2002 पेज न.22
6. डॉ. गोयल,सुनील, ''भारतीय समाज में नारी'', आर बी एस ए पब्लिशर्स, जयपुर, 2003. पेज न.135.137ण
7. डॉ. सिंह, निशांत, ''भारतीय महिलाएं एक सामाजिक अध्ययन'',ओमेगा पब्लिकेशनस, दिल्ली,2009.पेज न.118ण
8. डॉ.शर्मा,ममता, ''नारी सशक्तिकरण एवं समाजवाद'',विश्वभारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पेज न.–6.
9. चेरी,रमा मरोजु,''वूमन एण्ड पोलिटिकल पार्टिसिपेशन इन इंडियाः ए हिस्टोरिकल प्रोस्पेक्टिव'', दी इंडियन जनरल ऑफ पोलिटिकल साइज, जनवरी–मार्च, 2012ए 119.132
10. राजेन्द्र,''स्वतंत्रता–संग्राम की वीरांगनाओं और उनके बलिदानों की कहानी'', हरिगन्धा : जनवरी–फरवरी, 1994.पेज न.22.26.
11. सिंह, मीनाक्षी,''स्वतंत्रता संग्राम और महिलाएं'',मेहन्द्र बुक कम्पनी,गुड़गांव , हरियाणा, 2013. पेज न. 132.133
12. डॉ. देसाई, नीरू,राज,कृष्णा,''वुमन एण्ड सोसाइटी इन इंडिया'', पेज न. 39.41.
13. मिश्रा, कविता, ''वोमेन्स रोल इन पॉलटिक्स इन मॉडर्न वर्ल्ड'',ओमेशा पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली, 2006 पेज न. – 171. 172.
14. शर्मा, राधाकृष्णना, ''नेशनलिज्म सोशल रिफॉर्म एंड इंडियन वीमेन'', जानकी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1981. पेज नं. 50.
15. सिंह, गणपति, ''भारत छोड़ो आंदोलन : 1947 की अगस्त क्रांति'', हरिगन्धा : जुलाई–अगस्त, 1993. पेज नं. 47.48.

डॉ0 ममता देवी

सहायक प्रोफेसर,

राजनीति विज्ञान विभाग,

महर्षि दयानंद विश्वविधालय, रोहतक ।

ईमेलः : mamtadevi.polsc@mdurohtak.ac.in

अंजू

शोधकत्री,

राजनीति विज्ञान विभाग,

महर्षि दयानंद विश्वविधालय, रोहतक ।

ईमेलः anju.rs.polsc@mdurohtak.ac.in

ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਦੇ ਦੁਖਾਂਤਕ ਦੌਰ ਦਾ ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ

ਡਾ. ਸਤਨਾਮ ਸਿੰਘ ਜੱਸਲ

1947 ਦੀ ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਦਾ ਦੁਖਾਂਤ, ਭਾਰਤੀ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿਚ ਇਕ ਅਜਿਹਾ ਸਾਕਾ ਹੋ ਨਿਬੜਿਆ ਜਿਸ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਅੱਜ ਵੀ ਦੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦੇ ਹਨ। ਲਾਰਡ ਡਲਹੌਜੀ ਨੇ 29 ਮਾਰਚ 1849 ਨੂੰ ਇਹ ਐਲਾਨ ਕੀਤਾ ਕਿ 'ਪੰਜਾਬ ਰਾਜ ਦਾ ਅੰਤ ਹੋ ਗਿਆ ਅਤੇ ਪੰਜਾਬ ਬਰਤਾਨਵੀ ਰਾਜ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ ਅਤੇ ਅਗੋਂ ਤੋਂ ਇਹ ਭਾਰਤ ਵਿਚ ਬਰਤਾਨਵੀ ਸਾਮਰਾਜ ਦਾ ਇਕ ਹਿੱਸਾ ਹੋਵੇਗਾ। ਪੰਜਾਬ ਵੀ ਬਰਤਾਨਵੀ ਸਾਮਰਾਜ ਦਾ ਗ਼ੁਲਾਮ ਹੋ ਗਿਆ ਅਤੇ ਇਸ ਦੀ ਹੋਣੀ ਵੀ ਸਮੁੱਚੇ ਭਾਰਤ ਦੀ ਹੋਣੀ ਨਾਲ ਬੱਝ ਗਈ।ਪੰਜਾਬ ਲਗਭਗ ਸੌ ਸਾਲ ਅੰਗੇਜ਼ਾਂ ਦੀ ਗ਼ੁਲਾਮੀ ਭੋਗਦਾ ਰਿਹਾ ਅਤੇ 15 ਅਗਸਤ 1947 ਨੂੰ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨਨੂੰ ਅੰਗ੍ਰੇਜ਼ਾਂ ਦੀ ਗ਼ੁਲਾਮੀ ਤੋਂ ਮੁਕਤੀ ਮਿਲੀ ਅਤੇ ਲੋਕਤੰਤਰ ਦਾ ਮੁੱਢ ਬੱਝਿਆ। ਪਰ ਧਰਮ ਆਧਾਰਿਤ ਹੋਈ ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਨੇ ਇਕ ਵੱਡੇ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਦੁਖਾਂਤ ਨੂੰ ਜਨਮ ਦਿੱਤਾ। ਇਸ ਦੇ ਕਰਨ ਭਾਰਤ ਸਮਾਜ ਦੀ ਗੁੰਝਲਦਾਰ ਸਮਾਜਿਕ ਬਣਤਰ ਅਤੇ ਇਸ ਵਿਚ ਕਾਰਜ-ਸ਼ੀਲ ਅੰਤਰ ਵਿਰੋਧ ਸਨ ਜਿਹੜੇ ਭਾਰਤੀ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿਚਲੇ ਮੁੱਢਲੇ ਦੌਰ ਵਿਚ ਹੀ ਉਜਾਗਰ ਹੋਣੇ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਗਏ ਸਨ। ਭਾਰਤੀ ਸਭਿਆਚਾਰ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਨੇ, ਸਦੀਆਂ ਤੋਂ ਹੀ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਕੌਮਾਂ/ਸਭਿਆਚਾਰਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਰਹੁ-ਰੀਤਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਨੂੰ ਕਬੂਲਿਆ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਭਰਪੂਰ ਬਣਾਇਆ ਜਿਸ ਦੇ ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਇਕ ਵਿਸ਼ਾਲ ਬਹ-ਨਸਲੀ ਸਭਿਆਚਾਰ ਹੋਂਦ ਵਿਚ ਆਇਆ।

15 ਅਗਸਤ,1947 ਨੂੰ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਵੰਡ ਹੋਈ। 'ਪਾਰਟੀਸ਼ਨ ਆਫ਼ ਇੰਡੀਆ'-ਵੀਕੀਪੀਡੀਆ ਅਨੁਸਾਰ ਇਸ ਵੰਡ ਨੇ 14 ਮਿਲੀਅਨ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਇਸ ਵੰਡ ਦਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਵਧੇਰੇ ਕਰਕੇ ਪੰਜਾਬ,ਆਸਾਮ ਅਤੇ ਬੰਗਾਲ ਨੇ ਝਲਿਆ ਅਤੇ ਇਹ ਵੰਡ ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਿਮ ਧਰਮ ਵਿਚਾਲੇ ਸੀ। ਇਸ ਵੰਡ ਵੇਲੇ ਲਗਭਗ 1.26 ਮਿਲੀਅਨ ਮੁਸਲਮਾਨਅਤੇ 0.84 ਮਿਲੀਅਨ ਹਿੰਦੂ/ਸਿੱਖਾਂ ਦਾ ਕੋਈ ਅਤਾ-ਪਤਾ ਨਹੀਂ ਲੱਗਿਆ। ਵੰਡ ਕਾਰਨ ਕੁਲ 2.23 ਮਿਲੀਅਨ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ 'ਮਿਸਿੰਗ'(ਲੱਭੇ ਨਹੀਂ) ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ। ਇਸ ਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਸਰਕਾਰ ਆਖਦੀ ਹੈ ਕਿ ਉਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਪੰਜਾਹ ਹਜ਼ਾਰ ਮੁਸਲਮਾਨ ਔਰਤਾਂ ਅਤੇ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਸਰਕਾਰ ਅਨੁਸਾਰ ਉਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਤੇਤੀ ਹਜ਼ਾਰ ਹਿੰਦੂ/ਸਿੱਖ ਔਰਤਾਂ ਨੂੰ ਇਸ ਵੰਡ ਦੇ ਸੰਤਾਪ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰਨਾ ਪਿਆ। 1949 ਵਿਚ ਬਾਰਾਂ ਹਜ਼ਾਰ ਮੁਸਲਮਾਨ ਔਰਤਾਂ ਭਾਰਤ ਵਿਚੋਂ ਅਤੇ ਛੇ ਹਜ਼ਾਰਹਿੰਦੂ/ਸਿੱਖ ਔਰਤਾਂ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਵਿਚੋਂ ਲੱਭੀਆਂ ਗਈਆਂ ਅਤੇ 1954 ਵਿਚ 20,728 ਮੁਸਲਮਾਨ ਔਰਤਾਂ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਵਿਚੋਂ ਅਤੇ 9,032ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਸਿੱਖ ਔਰਤਾਂ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਵਿਚੋਂ ਲੱਭਕੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਇਕ-ਦੂਜੇ ਦੇਸ਼ ਭੇਜਿਆ ਗਿਆ। ਦੋਵੇਂ ਦੇਸ਼ਾਂ ਵਿਚ ਕਈ ਔਰਤਾਂ ਨੇ ਇਸ ਡਰ ਤੋਂ ਵਾਪਿਸ ਜਾਣ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਘਰਦਿਆਂ ਵੱਲੋਂ ਹੁਣ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਨਹੀਂ ਅਪਣਾਇਆ ਜਾਵੇਗਾ। ਜਿੱਥੇ ਇਸ ਵੰਡ ਸਮੇਂ ਮਾਨਵੀ ਸੰਕਟ ਪੈਦਾ ਹੋਇਆ ਇਸ ਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਆਰਥਿਕ ਸੰਕਟਾਂ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਵੀ ਕਰਨਾ ਪਿਆ ਕਿਉਂਕਿ ਜਾਇਦਾਦਾਂ ਦੀ ਲੁੱਟ-ਖਸੁੱਟ, ਅੱਗ-ਜਨੀ ਦੀਆਂ ਘਟਨਾਵਾਂ,ਕਾਰਖ਼ਾਨੇ ਤੇ ਕਾਰੋਬਾਰਾਂ ਦੀ ਤਬਾਹੀ, ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਦੇਵੇਂ ਪਾਸੇ ਹੀ ਬੇ-ਘਰ ਹੋਣਾ, ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਵੱਡੀਆਂ ਮੁਸ਼ਕਲਾਂ ਸਹਿਣ ਲਈ ਮਜਬੂਰ ਹੋਣਾ ਪਿਆ। ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਨੇ ਸਮੁੱਚੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਢਾਂਚੇ ਨੂ ਬੁਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕੀਤਾ। ਇਸ ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਤੋਂਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਹੋ ਕੇ ਲਗਭਗ ਸਾਰੀਆਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਵਿਚ ਹੀ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਸਿਰਜਨਾ ਹੋਈ। ਪੰਜਾਬ ਇਕ ਅਜਿਹਾ ਸੂਬਾ ਸੀ ਜਿਸ ਨੇ ਸੰਕਟ ਨੂੰ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਧ ਝੱਲਿਆ,ਜਿੱਥੇ ਲੋਕਾਂ ਵਿਚ ਵਟਵਾਰਾ ਹੋਇਆ ਉੱਥੇ ਭੂਗੋਲਕ ਤੌਰ ਤੇ ਵੀ ਇਸ ਦੇ ਪੂਰਬੀ ਅਤੇ ਪੱਛਮੀ ਦੋ ਹਿੱਸੇ ਬਣ ਗਏ। ਪੰਜਾਬੀ ਦੇ ਦੇ ਕਈ ਨਾਟਕਕਾਰਾਂ ਨੇ ਇਸ ਵੰਡ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਪਿੰਡੇ ਤੇ ਹੰਡਾਇਆ ਅਤੇ ਕਈ ਨਾਟਕਕਾਰਾਂ ਨੇ ਇਸ ਵੰਡ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਨੂ ਬਹੁਤ ਨੇੜੇ ਤੋਂ ਵੇਖਿਆ ਸੀ। ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ ਨਾਟਕਕਾਰਾਂ ਨੇ 1947 ਦੀ ਵੰਡ ਦੇ ਦੁਖਾਂਤ ਨੂੰ ਆਪਣੀਆਂ ਨਾਟਕੀ ਰਚਨਾਵਾਂ ਰਾਹੀਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ।

ਜਦੋਂ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਵੰਡ ਹੋਈ ਤਾਂ ਫਿਰਕੂ ਆਗੂਆਂ ਨੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਧਰਮ ਤੇ ਕੌਮ ਦੇ ਨਾਂ ਉੱਤੇ ਭੜਕਾਅ ਦਿੱਤਾ,ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਪੱਛਮੀ ਪੰਜਾਬ ਵਿਚ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੇ ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਸਿੱਖਾਂ ਨੂੰ ਅਤੇ ਪੂਰਬੀ ਪੰਜਾਬ ਵਿਚ ਹਿੰਦੂਆਂ ਅਤੇ ਸਿੱਖਾਂ ਨੇ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦਾ ਕਤਲੇਆਮ ਕੀਤਾ,ਜਾਇਦਾਦਾਂ ਲੁੱਟੀਆਂ, ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਇੱਜਤ ਲੁੱਟੀ ਅਤੇ ਪੰਜ ਪਾਣੀਆਂ ਦੀ ਧਰਤੀ ਖੂਨ ਨਾਲ ਲਾਲ ਹੋ ਗਈ। ਇਸ ਦੁਖਾਂਤ ਤੋਂ ਪੈਦਾ ਹੋਈਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਜਿਵੇਂ ਫਿਰਕੂ ਤਾਕਤਾਂ ਅਧੀਨ ਹੋਏ ਮਾਨਵਤਾ ਦਾ ਘਾਣ, ਸਮਾਜਿਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਦੇ ਹੋਏ ਪਤਨ ਅਤੇ ਔਰਤਾਂ ਨਾਲ ਹੋਏ ਵਹਿਸ਼ੀਆਨਾ ਵਿਹਾਰ ਦਾ ਇਹਨਾਂ ਨਾਟਕਾਂ ਵਿਚ ਯਥਾਰਥਕ ਚਿਤਰਣ ਮਿਲਦਾ ਹੈ। ਹਰਚਰਨ ਸਿੰਘ ਦੇ ਨਾਟਕ 'ਚੌਧਰੀ', ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਘੁੰਮਣ ਦੇ ਨਾਟਕ 'ਉਧਾਲੀ ਹੋਈ ਕੁੜੀ',ਹਰਸਰਨ ਸਿੰਘ ਦੇ ਨਾਟਕ 'ਇਕ ਵਿਚਾਰੀ ਮਾਂ', ਕਰਤਾਰ ਸਿੰਘ ਦੁੱਗਲ ਦੇ ਨਾਟਕ 'ਸ਼ਰਨਾਰਥੀ', ਅਜਮੇਰ ਸਿੰਘ ਔਲਖ ਦੇ ਨਾਟਕ 'ਅੰਨ੍ਹੇ ਨਿਸ਼ਾਨਚੀ' ਆਦਿ ਵਿਚ ਵੰਡ ਸਮੇਂ ਔਰਤ ਉੱਤੇ ਹੋਏ ਜ਼ੁਲਮ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਗਿਆ । ਕਿਵੇਂ ਉਹਨਾਂ ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਵਾਰ-ਵਾਰ ਇੱਜਤ ਲੁੱਟੀ ਗਈ, ਉਹ ਵਹਿਸ਼ੀਅਨ ਕਾਮੁਕ-ਭੁੱਖ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੋਈਆਂ,ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਸੁਹਾਗ ਉਜਾੜੇ ਗਏ,ਇਸ ਮਾੜੇ ਵਿਹਾਰ ਨੇ ਮਾਨਵ ਜਾਤੀ ਦੀ ਰੂਹ ਨੂੰ ਕੰਬਾਅ ਦਿੱਤਾ ਅਤੇ ਕਈ ਦਹਾਕਿਆਂ ਤੱਕ ਇਹ ਸਹਿਮ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਮਨਾਂ ਤੇ ਛਾਇਆ ਰਿਹਾ। ਕਈ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਧੀਆ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਹੱਥੀਂ ਵੀ ਮਾਰਿਆ ਤਾਂ ਜੋ ਉਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਅੱਖਾਂ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਉਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਧੀਆਂ ਦੀ ਕੋਈ ਇੱਜਤ ਨਾ ਲੁੱਟ ਸਕੇ। ਚੌਧਰੀ ਨਾਟਕ ਦਾ 'ਰਹਿਮਤ' ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮੈਨੂੰ ਆਪਣੇ ਮਰਨ ਦਾ ਗਮ

ਨਹੀਂ,ਮੇਰੀਆਂ ਤਿੰਨ ਜਵਾਨ ਧੀਆਂ ਹਨ ਅਤੇ ਇਹਨਾਂ ਦੀ ਮਾਂ ਨੇ ਤਾਂ ਬਹੁਤ ਕਿਹਾ ਕਿ ਇਹਨਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਹੱਥੀਂ ਮਾਰ ਦਿਓ ਪਰ ਮੇਰਾ ਹੌਸਲਾ ਨਾ ਪਿਆ, ਹੁਣ ਕਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅੱਖਾਂ ਸਾਹਮਣੇ ਇਹਨਾਂ ਦੀ ਬੇਇੱਜ਼ਤੀ ਵੇਖਾਂਗੇ'।ਦੇਸ਼-ਵੰਡ ਸਮੇਂ ਕੁੱਝ ਲੜਕੀਆਂ ਜਾਂ ਔਰਤਾਂ ਆਪਣੇ ਪਰਿਵਾਰਾਂ ਤੋਂ ਵਿਛੜ ਗਈਆਂ ਸਨ ਪਰ ਜਦੋਂ ਦੋਵੇਂ ਪਾਸਿਆਂ ਤੋਂ ਹਾਲਾਤ ਕੁੱਝ ਕਾਬੂ ਹੇਠ ਆਏ ਤਾਂ ਦੋਵੇਂ ਸਰਕਾਰਾਂ ਨੇ ਔਰਤਾਂ ਤੇ ਲੜਕੀਆਂ ਨੂੰ ਲੱਭਕੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਵਾਰਿਸਾਂ ਦੇ ਹਵਾਲੇ ਕਰਨ ਦੇ ਯਤਨ ਕੀਤੇ ਪਰ ਇੱਥੇ ਇਕ ਹੋਰ ਦੁਖਾਂਤ ਵਾਪਰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਅਜਿਹੀਆਂ ਔਰਤਾਂ ਜਾਂ ਲੜਕੀਆਂ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨਾਲ ਅਣਮਨੁੱਖੀ ਵਿਹਾਰ ਵਾਪਰਿਆ,ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਜਾਣ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਉਹ ਹੁਣ ਕਿਹੜੇ ਮੂੰਹ ਨਾਲ ਆਪਣੇ ਮਾਪਿਆਂ ਸਨਮੁੱਖ ਹੋਣਗੀਆਂ ਜਿਵੇਂ ਕਿ 'ਉਧਾਲੀ ਹੋਈ ਕੁੜੀ' ਦੀ ਸਲਮਾ ਇੱਥੇ ਰਹਿ ਕੇ ਹੀ ਆਪਣੇ ਉੱਤੇ ਹੋਏ ਜ਼ੁਲਮ ਦਾ ਬਦਲਾ ਲੈਣ ਲਈ ਬਜ਼ਿੱਦਹੈ ।'ਇਕ ਵਿਚਾਰੀ ਮਾਂ' ਦੀ ਰਾਜੋ ਜਿਹੜੀ ਵਿਆਹੀ ਹੋਈ ਅਤੇ ਦੋ ਬੱਚਿਆਂ ਦੀ ਮਾਂ ਸੀ ਜਿਸ ਨੂੰ ਨੱਥਾ ਨਾਂ ਦਾ ਵਿਅਕਤੀ ਗੱਡੇ ਤੋਂ ਘੜੀਸਕੇ ਜਬਰਦਸਤੀ ਆਪਣੇ ਘਰ ਵਸਾ ਲੈਂਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਵਸੇਬੇ ਵਿਚੋਂ ਫਿਰ ਦੋ ਬੱਚੇ ਧਰਮਾ ਤੇ ਬੀਰਾ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦੇ ਹਨ।ਜਦੋਂ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਦੀ ਪੁਲਿਸ ਇਧਰ ਰਹਿ ਗਈਆਂ ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਤਲਾਸ਼ ਵਿਚ ਆਉਂਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਵਿਚ ਰਾਜੋ ਦੀ ਮਾਸੀ ਦਾ ਮੁੰਡਾ ਜਮਾਲ ਪੁਲਿਸ ਅਫ਼ਸਰ,ਰਾਜੋ ਨੂੰ ਦਸਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਦੇ ਬੇਟੇ ਅਸਗਰ ਤੇ ਗਫ਼ਰੂ ਉਸ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਯਾਦ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਔਰਤਾਂ ਨਾਲ ਅਜਿਹੀ ਵਿਡੰਬਨਾ ਵੀ ਵਾਪਰੀ ਇਕ ਵਿਛੜੇ ਦਾ ਦੁੱਖ ਅਤੇ ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਮਮਤਾ ਦੀ ਖਿੱਚ।ਰਾਜੋ ਜਾਣ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰ ਕਰਦੀ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈਕਿ 'ਹੁਣ ਮੈਂ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਨਹੀਂ ਜਾਣਾ। ਉੱਥੇ ਲੋਕੀਂ ਮੇਰੇ ਤੇ ਤੋਹਮਤਾਂ ਲਗਾਉਣਗੇ ਤੁ ਨਾਲੇ ਮੇਰੇ ਧਰਮੇ ਤੇ ਬੀਰੇ ਨੂੰ ਹਰਾਮ ਦਾ ਆਖਣਗੇ'।ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ 'ਉਧਾਲੀ ਹੋਈ ਕੁੜੀ' ਦੀ ਪਾਤਰ ਸਲਮਾ ਸਵਾਲ ਖੜ੍ਹੇ ਕਰਦੀ ਹੈ ਕਿ "ਮਾਪਿਆਂ ਕੋਲ ਕਿਹੜਾ ਮੂੰਹ ਲੈ ਕੇ ਜਾਵਾਂ ਮੈਂ?ਕਿਵੇਂ ਉਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਅੱਖਾਂ ਵਿਚ ਮੈਂ ਵੇਖ ਸਕਾਂਗੀ?ਕੌਣ ਮੇਰੇ ਨਾਲ ਸ਼ਾਦੀ ਕਰਨੀ ਮੰਨੇਗਾ? ਕੌਣ ਝੋਲੀ ਪਾਏਗਾ ਮੇਰੇ ਪੇਟ ਵਿਚਲੀ ਐਹ ਗੁਨਾਹ ਦੀ ਪੰਡ? ਕੇਹੜੀ ਸੱਸ ਮੇਰਾ ਆਦਰ ਕਰੇਗੀ? ਕੇਹੜੀ ਨਨਾਣ ਮੈਨੂੰ ਤਾਹਨਿਆਂ ਨਾਲ ਨਾ ਭੁੰਨੇਗੀ? ਕੇਹੜੀ ਬਰਾਦਰੀ ਮੇਰਾ ਨੱਕ ਨਾ ਵੱਢੇਗੀ? ਕੇਹੜਾ ਬ1ਚਾ ਮੇਰੇ ਵਰਗੀ ਮਾਂ ਤੇ ਮਾਣ ਕਰ ਸਕਦੈ?" ਇਹਨਾਂ ਸਵਾਲਾਂ ਕਰਕੇ ਸਲਮਾ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਨਹੀਂ ਜਾਣਾ ਚਾਹੁੰਦੀ। ਉਹ ਇਸ ਲਈ ਵੀ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਨਹੀਂ ਜਾਣਾ ਚਾਹੁੰਦੀ ਕਿਉਂਕਿ ਉਹ ਇੱਥੇ ਰਹਿਕੇ ਉਹਨਾਂ ਲੋਕਾਂ ਤੋਂ ਬਦਲਾ ਲੈਣਾ ਚਾਹੁੰਦੀ ਹੈ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਉਸ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਕਾਮੁਕ ਭੁੱਖ ਦਾ ਨਿਸ਼ਾਨਾ ਬਣਾਇਆ ਤੇ ਉਹ ਆਖਦੀ ਹੈ "ਏਸ ਲਈ ਕਿ ਪੇਟ ਵਿਚਲਾ ਇਹ ਕਲੰਕ ਮੈਂ ਓਹਨਾਂ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਮੱਥੇ ਤੇ ਥੱਪ ਦਿਆ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕਰਤੂਤ ਦਾ ਇਹ ਫਲ ਏ। ਉਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਤੀਵੀਂਆਂ ਤੇ ਬੱਚੇ ਇਸ ਕਲੰਕ ਵੱਲ ਉਂਗਲਾਂ ਕਰਕੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਛਿੱਤਰ ਮਾਰਦੇ ਰਹਿਣ। ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਭਲਮਾਣਸੀ ਤੇ ਸ਼ਰਾਫਤ ਦੀ ਚਾਦਰ ਉਤੇ ਗੁਨਾਹ ਦਾ ਥੋਬਾ ਲਿਬੜਿਆ ਰਹੇ।" ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂਦੀਆਂ ਸਥਿਤੀਆਂ ਵਿਚ ਔਰਤ ਨੇ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਕਿਵੇਂ ਢਾਲਿਆ, ਇਹ ਵੀ ਇਕ ਸਵਾਲ ਇਸ ਦੁਖਾਂਤ ਤੋਂ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।ਇਸ ਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਔਰਤ ਦੇ ਦੁਖਾਂਤ ਦੀ ਇਕ ਹੋਰ ਪਰਤ 'ਅੰਨ੍ਹੇ ਨਿਸ਼ਾਨਚੀ' ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦੀ ਹੈ ਜਦੋਂ ਇਕ ਮੁਟਿਆਰ ਉੱਤੇ ਅੰਨ੍ਹਾ ਜ਼ੁਲਮ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤੇ ਉਹ ਆਪਣਾ ਮਾਨਸਿਕ ਸੰਤੁਲਨ ਗੁਆ ਬੈਠਦੀ ਹੈ,ਨਤੀਜੇ ਵਜੋਂ ਦੋ ਵਿਅਕਤੀ ਖੜਕ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਨਥੂ ਰਾਮ ਜਿਹੜੇ ਆਪ ਆਪ ਨੂੰ ਲੋਕ ਹਿਤੈਸ਼ੀ ਅਤੇ ਕੌਮਪ੍ਰਸਤ ਹੋਣ ਦਾ ਹੋਕਾ ਦਿੰਦੇ ਹਨ ਇਸ ਲੜਕੀ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਹਵਸ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਬਣਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਇਹੋ ਲੋਕ ਜਿਹੜੇ ਇਸ ਲੜਕੀ ਨੂੰ ਹਰਾਮਜ਼ਾਦੀ,ਕੁੱਤੀ,ਵੇਸਵਾ ਦੀ ਧੀ, ਬੇਸ਼ਰਮ,ਕੰਜਰੀ ਆਦਿ ਆਖਦੇ ਸਨ ਜਦੋਂ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਇਹ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਇਹ ਮੁਸਲਮਾਨ ਕੁੜੀ ਨਹੀਂ, ਸਿੱਖਾਂ ਦੀ ਕੁੜੀ ਹੈ ਤਾਂ ਪਛਤਾਵਾ ਕਰਦੇ ਹੋਏ 'ਭੈਣ' ਆਖਦੇ ਹਨ।ਕੁੱਝ ਲੋਕ ਵਿਖਾਵੇ ਦੇ ਤੌਰ ਤੇ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਧਰਮ ਦੇ ਰਖਵਾਲੇ ਆਖਦੇ ਹਨ ਪਰ ਵਿਹਾਰ ਦੀ ਪੱਧਰ ਤੇ ਉਹ ਧਰਮ ਦੇ ਮੂਲ ਮਨੋਰਥ ਤੋਂ ਬਹੁਤ ਦੂਰ ਹਨ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਜਨੂੰਨ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਅਕਲ ਤੋਂ ਅੰਨ੍ਹਾ ਕਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ।ਪਰ ਇਸ ਨਾਟਕ ਦਾ ਗੁਰਮੁਖ ਸਿੰਘ ਸਹੀ ਅਰਥਾਂ ਵਿਚ ਗੁਰਮੁਖ ਹੈ ਜਿਸ ਨੇ ਆਪਣੇ ਪਿੰਡ ਦਾ ਇਕ ਵੀ ਮੁਸਲਮਾਨ ਮਰਨ ਨਹੀਂ ਦਿੱਤਾ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਸਾਰਿਆਂ ਨੂੰ ਸਹੀ ਸਲਾਮਤ ਕੈਂਪਾਂ ਵਿਚ ਪਹੰਚਾਇਆ ਅਤੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਅਸੂਲਾਂ ਨੂੰ ਨਿਭਾਇਆ।ਉਹ ਬਿਨਾਂ ਝੇਂਪ ਤੋਂ ਇਹ ਗੱਲ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ "ਮੈਨੂੰ ਆਪਣੇ ਕੀਤੇ ਤੇ ਮਾਣ ਹੈ। ਬਿਪਤਾ ਦੀ ਇਸ ਘੜੀ ਵਿਚ ਜੇ ਮੈਂ ਕਿਸੇ ਬੇਗੁਨਾਹ,ਅਬਲਾ ਤੇ ਕਿਸੇ ਮਾਸੂਮ ਦੀ ਜਾਨ ਬਚਾ ਸਕਿਐਂ ਤਾਂ ਅਜਿਹਾ ਮੈਂ ਸਿੱਖੀ ਦਾ ਦਿੱਤੀ ਸੇਵਾ ਭਾਵਨਾ ਕਰਕੇ ਹੀ ਕਰ ਸਕਿਅਐਂ! ਅਜਿਹਾ ਕਰਕੇ ਮੈਂ ਸਚਮੁੱਚ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦਾ ਸਿਰ ਉੱਚਾ ਕੀਤੈ"।ਉਹ ਇਹ ਵੀ ਸਵਾਲ ਖੜਾ ਕਰਦਾ ਕਿ ਕੁੱਝ ਲੋਕ ਸਿੱਖੀ ਦੀ ਆੜ ਵਿਚ ਸ਼ੈਤਾਨ ਤੇ ਹੈਵਾਨਾਂ ਵਾਲੇ ਅਮਲ ਕਰ ਕਰਕੇ ਸਿੱਖੀ ਦੇ ਨਾਂ ਤੇ ਧੱਬਾ ਲਾ ਰਹੇ ਨੇ। ਜਿੱਥੇ ਇਕ ਪਾਸੇ ਫਿਰਕੈ ਜ਼ਹਿਨੀਅਤ ਵਾਲੇ ਲੋਕ ਸਨ ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਪੰਜਾਬੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਹੋਏ ਲੋਕ ਸਨ ਜਿਹੜੇ ਸਰਬੱਤ ਦੇ ਭਲੇ ਵਿਚ ਭਲਾ ਵੇਖਦੇ ਸਨ।

ਪਰ ਇੱਥੇ ਹੀ ਇਕ ਹੋਰ ਨੁਕਤਾ ਸਾਂਝਾ ਕਰਨਾ ਜਾਇਜ਼ ਹੋਵੇਗਾ। ਇਹ ਠੀਕ ਹੈ ਕਿ ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਸਮੇਂ ਇਕ ਧਰਮ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਦੂਜੇ ਧਰਮ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਉੱਤੇ ਹਮਲੇ ਕੀਤੇ ਪਰ ਉਸ ਸਮੇਂ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਅਜਿਹੇ ਲੋਕ ਵੀ ਸਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਧਰਮ ਦੀ ਪਰਵਾਹ ਨਾ ਕਰਦਿਆਂ ਦੂਜੇ ਧਰਮ ਦੀਆਂ ਧੀਆਂ/ਭੈਣਾਂ ਤੋ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਬੇਖ਼ੌਫ਼ ਸਹਾਇਤਾ ਕੀਤੀ ਜਿਵੇਂ ਕਿ 'ਚੌਧਰੀ' ਇਕਾਂਗੀ ਦਾ ਮੁਨਸ਼ਾ ਸਿੰਘ ਆਪਣੇ ਪਿੰਡ ਦੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਭਾਈਚਾਰਾ ਸਮਝਦਾ ਹੋਇਆ ਹਰ ਕੀਮਤ ਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਸਹਾਇਤਾ ਲਈ ਅੱਗੇ ਆਉਂਦਾ ਹੈ ਜਦੋਂ ਕਿ ਜੱਗੂ ਵਰਗੇ ਸੌੜੀ ਸੋਚ ਦੇ ਮਾਲਕ ਇਹਨਾਂ ਮੁਸਲਮਾਨ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਉਜਾੜਨ ਵਿਚ ਆਪਣੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਸਮਝਦੇ ਹਨ ਕਿਉਂਕਿ ਹੋਰ ਪਿੰਡਾਂ ਵਾਲਿਆਂ ਨੇ ਵੀ ਮਸਲਮਾਨਾ ਨੂੰ ਕੱਢ ਦਿੱਤਾ ਸੀ।ਨਾਟਕ 'ਉਧਾਲੀ ਹੋਈ ਕੁੜੀ' ਦੀ ਸਲਮਾ ਨਾਲ ਵਹਿਸ਼ੀਆਨਾ ਵਿਹਾਰ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਪਰ ਜਦੋਂ ਵਿਰਸਾ

ਸਿੰਘ ਉਸ ਦੀ ਮਦੱਦ ਲਈ ਆਇਆ ਤਾਂ ਉ ਨਾਲ ਫਿਰਕਪ੍ਰਸਤਾਂ ਨੇ ਅਣਮਨੁੱਖੀ ਵਿਹਾਰ ਕੀਤਾ:

ਵਿਰਸਾ: ਮੈਂ ਸਭ ਕੁੱਝ ਕਰਦਾ ਜੇ ਮੇਰੀ ਪੇਸ਼ ਜਾਂਦੀ,ਪਰ ਸਿਰ-ਚਿੱਥੇ ਸੱਪ ਵਾਂਗ ਮੈਂ ਵਿਸ ਘੋਲਣ ਬਿਨਾਂ ਕੁੱਝ ਨਹੀਂ ਸੀ ਕਰ ਸਕਦਾ। ਆਹ ਵੇਖ। (ਪਿੰਡਾ ਨੰਗਾ ਕਰਕੇ ਵਖਾਂਦਾ ਹੈ) ਸਲਮਾ ਦੀ ਪੱਤ ਬਚਾਣ ਲਈ ਮੈਂ ਉਹਨਾਂ ਭੂਤੇ ਹੋਏ ਵਹਿਸ਼ੀਆਂ ਨੂੰ ਵੰਗਾਰਿਆ, ਪਰ ਓਹਨਾਂ ਰਲਕੇ ਮੈਨੂੰ ਭੁਹ ਵਾਂਗ ਕੁੱਟਿਆ ਤਟ ਸੰਗਲ ਪਾ ਕੇਪਿਪਲ ਨਾਲ ਜੁੜ ਦਿੱਤਾ। ਸਲਮਾ ਦੇ ਪਿਉ ਤੇ ਵੀਰ ਦੀਆਂ ਅੱਖਾਂ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਓਹਨਾਂ ਓਹ ਕੁਝ ਕੀਤਾ ਜੋ ਮੈਂ ਦੱਸ ਨਹੀਂ ਸਕਦਾ। ਕੋਈ ਪਿਉ ਕੋਈ ਵੀਰ ਵੇਖ ਨਹੀਂ ਸਕਦਾ। ਓਹਨਾਂ ਸਲਮਾ ਦੇ ਮਾਸ ਨੂੰ ਚੂੰਡਿਆ,ਹਲਕੇ ਕੁੱਤਿਆਂ ਵਾਂਗ, ਭੁੱਖੀਆਂ ਗਿਰਝਾਂ ਵਾਂਗ, ਸਲਮਾ ਵਰਗੀ ਇਸਤਰੀ ਦਾ ਸਦਾ ਲਈ ਸਾਹ ਘੁੱਟ ਦਿੱਤਾ। ਓਹਨਾਂ ਉਡਣੇ ਸੱਪਾਂ ਨੂੰ ਦੁੱਧ ਪਿਆਉਣ ਵਾਲੀ ਇਸਤਰੀ ਸਦਾ ਲਈ ਮਰ ਗਈ। (ਕਰਤਾਰੋ ਅੱਖਾਂ ਪੂੰਝਦੀ ਹੈ)ਕਈ ਵਾਰ ਉਹ ਵਿਕੀ,ਕਈ ਥਾਈ ਓਹ ਖਜਲ ਖਰਾਬ ਹੋਈ ਤੇ ਫੇਰ ਉਹਦੀ ਦੱਸ ਊਘ ਕਿਤੇ ਨਾ ਪਈ। ਪਿਛਲੇ ਐਤਵਾਰ ਸ਼ਾਮ ਨੂੰ ਜਦ ਮੈਂ ਪੱਠਿਆਂ ਦੀ ਪੰਡ ਲੈ ਕੇ ਲਾਲੂਆਣੇ ਕੋਲੋਂ ਲੰਘਿਆ, ਖੂਹ ਵਿਚ ਕਿਸੇ ਦੇ ਡਿਗਣ ਦੀ ਵਾਜ਼ ਆਈ। ਭਰੀ ਓਥੇ ਈ ਸੁਟਕੇ ਜਦ ਮੈਂ ਖੂਹ ਵਿਚ ਵੇਖਿਆ, ਤਾਂ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰ ਦਾ ਝਾਉਲਾ ਪਿਆ। ਮੈਂ ਵੀ ਛਾਲ ਮਾਰ ਦਿਤੀ ਤੇ ਓਸ ਡੁੱਬਦੀ ਨੂੰ ਜਦ ਬਾਹਰ ਕੱਢਿਆ,ਮੈਂ ਹੈਰਾਨ ਹੋ ਗਿਆ। ਉਹ ਸਲਮਾ ਸੀ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਵਿਰਸਾ ਸਿੰਘ ਵਰਗੇ ਲੋਕ ਆਪਣੀ ਜਾਨ ਦੀ ਪ੍ਰਵਾਹ ਨਾ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਸਲਮਾ ਵਰਗੀਆਂ ਧੀਆਂ/ਭੈਣਾਂ ਦੀ ਇੱਜਤ ਬਚਾਉਣ ਨੂੰ ਪਹਿਲ ਦਿੰਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਅਜਿਹੀ ਕੁਰਬਾਨੀ ਪੰਜਾਬੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਹੀ ਨਹੀਂ 'ਅੰਨੇ ਨਿਸ਼ਾਨਚੀ' ਨਾਟਕ ਦਾ ਗੁਰਮੁਖ ਸਿੰਘ ਮਾਨਵਤਾ ਦਾ ਪੱਲਾ ਫੜ੍ਹਣ ਲਈ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਨੂੰ ਜਾਪਦਾ ਹੈ ਕਿ ਇਹ ਲੋਕ ਨਫਰਤ ਦੇ ਵਣਜਾਰੇ ਹਨ ਅਤੇ ਜਿਹੜਾ ਜ਼ਹਿਰ ਇਹ ਘੋਲ ਰਹੇ ਹਨ ਇਸ ਦਾ ਅਸਰ ਬਹੁਤ ਦੇਰ ਤੱਕ ਰਹਿਣਾ ਹੈ। ਸੱਤਰ ਸਾਲ ਬੀਤ ਜਾਣ ਬਾਅਦ ਵੀ ਉਸ ਜ਼ਹਿਰ ਦਾ ਅਸਰ ਵੀ ਵਿਖਾਈ ਦੇ ਰਿਹਾ ਹੈ।

ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਦੇ ਦੁਖਾਂਤ ਦੀ ਇਕ ਹੋਰ ਪਰਤ ਜਿਹੜੀ ਪੰਜਾਬੀ ਦੇ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ ਨਾਟਕਕਾਰਾਂ ਨੇ ਪੇਸ਼ ਕੀਤੀ, ਉਹ ਇਹ ਸੀ ਕਿ ਦੇਸ਼ ਵੰਡਿਆ ਗਿਆ ਉਜਾੜਾ ਹੋ ਗਿਆ। ਇਧਰੋਂ ਤੇ ਉਧਰੋਂ ਦੋਵੇਂ ਪਾਸਿਆਂ ਤੋਂ ਲੋਕ ਉਜੜਕੇ ਸ਼ਰਨਾਰਥੀ ਬਣੇ। ਨਾਟਕਕਾਰ ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ(1993:51) ਨੇ 1947 ਦਾ ਕਤਲੇਆਮ ਆਪਣੇ ਸੀਨੇ ਤੇ ਹੰਢਾਇਆ ਸੀ। ਉਹ ਉਸ ਸਮੇਂ ਮੁਲਤਾਨ ਤੋਂ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਕਾਫਲੇ ਦੇ ਨਾਲ ਪੈਦਲ ਆਇਆ ਇਸ ਸੌ ਮੀਲ ਦੇ ਸਫਰ ਵਿਚ ਉਸ ਨੇ ਬਹੁਤ ਕੁੱਝ ਵੇਖਿਆ,ਲਹੂ ਡੁਲ੍ਹਦਾ ਵੇਖਿਆ,ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਬੇਇਜਤੀ ਹੁੰਦੀ ਵੇਖੀ ਅਤੇ ਹੋਰ ਬਹੁਤ ਕੁੱਝ-ਜਿਸ ਨੂੰ ਵੇਖਕੇ ਉਹ ਹੱਸਣਾ ਹੀ ਭੁੱਲ ਗਿਆ। ਇੱਥੋਂ ਤੱਕ ਕਿ ਜਿਹੜੇ ਲੋਕ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਵਿਚ ਜ਼ੁਲਮ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ ਅਤੇ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਉੱਤੁ ਜ਼ੁਲਮ ਹੋ ਰਿਹਾ ਸੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਉਸ ਨੇ'ਕਮਿਊਨਿਟੀ' ਵਿਚ ਜ਼ੁਲਮ ਕਰਦਿਆਂ ਵੇਖਿਆ ਅਤੇ ਉਸ ਨੇ ਕਿਹਾ:-

'ਮੈਂ ਹਮੇਸ਼ਾ ਰਿਕਾਰਡ ਤੇ ਕਹਿੰਦਾ ਹਾਂ ਕਿ 29 ਅਗਸਤ ਨੂੰ ਹਾਲ ਬਾਜ਼ਾਰ ਦੇ ਵਿਚ ਨੰਗੀਆਂ ਵੀਹਜਵਾਨ ਮੁਸਲਮਾਨ ਕੁੜੀਆਂ ਦਾ ਜਲੂਸ ਵੇਖਿਆ। ਇਹ ਜਲੂਸ ਕੱਟੜਾ ਜ਼ੈਮਲ ਸਿੰਘ ਜਿਹੜਾ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦਾ ਬਾਜ਼ਾਰ ਸੀ,ਵਿਚ ਦੀ ਲੰਘਿਆ ਅਤੇ ਜੈਕਾਰੇ ਲੱਗ ਰਹੇ ਸਨ। ਜਿਵੇਂ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਮੁਸਲਮਾਨ ਕੁੜੀਆਂ ਦਾ ਜਲੂਸ ਵੇਖਿਆ ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮੁਲਤਾਨ ਮਿੰਟਗੁਮਰੀ ਆਦਿ ਵਿਚ ਹਿੰਦੂ ਸਿੱਖ ਕੁੜੀਆਂ ਦਾ ਜਲੂਸ ਵੀ ਵੇਖਿਆ। ਉਸ ਵੇਲੇ ਮੇਰੀ ਉਮਰ ਅਠਾਰਾਂ ਕੁ ਸਾਲ ਦੀ ਸੀ। ਮੈਂ ਕਹਿ ਸਕਣਾ ਜੋ ਕੁੱਝ ਮੈਂ ਵੇਖਿਆ ਉਸ ਨੂੰ ਵੇਖ ਕੇ ਮੈਂ ਜੀਵਨ ਵਿਚੋਂ ਹੱਸਣਾ ਭੁੱਲ ਗਿਆ। ਇਹ ਘਟਨਾਵਾਂ ਮੇਰੇ ਮਨੋਂ ਉੱਤਰ ਨਹੀਂ ਸਕਦੀਆਂ।'

1947 ਦੀ ਵੰਡ ਸਮੇਂ ਸ਼ਰਨਾਰਥੀਆਂ ਦੀ ਸੇਵਾ ਲਈ ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਉਸ ਦੀ ਵੱਡੀ ਭੈਣ ਨੇ 'ਭਾਈ ਘਨ੍ਹੀਆ' ਨਾਂ ਦਾ ਸੁਕੈਡ ਬਣਾਇਆ। ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਤੋਂ ਉਜੱੜ ਕੇ ਆ ਰਹੇ ਲੋਕ ਪਹਿਲਾਂ ਖਾਲਸਾ ਕਲਿਜ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਦੇ ਕੈਂਪ ਵਿਚ ਆਉਂਦੇ ਸਨ ਅਤੇ ਇਸ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਉਹ ਫਿਰ ਲੋੜ ਅਨੁਸਾਰ ਅਗਾਂਹ ਤੁਰ ਜਾਂਦੇ ਸਨ ਅਤੇ ਜਿਹੜੇ ਬਜ਼ੁਰਗ ਲਾਵਾਰਿਸ ਸਨ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕੈਂਪ ਵਿਚ ਸੇਵਾ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। ਉਸ ਵੇਲੇ ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਸਿੰਘ ਦੇ ਨਾਲ ਭਗਤ ਪੂਰਨ ਸਿੰਘ ਜੀ ਪਿੰਗਲਵਾੜੇ ਵਾਲੇ ਵੀ ਸਨ। ਕੈਂਪ ਵਿਚ ਬਜ਼ੁਰਗਾਂ ਦੇ ਕਪੜੇ ਬਦਲਣੇ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਸਫ਼ਾਈ ਕਰਨੀ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਮੈਲਾ ਆਦਿ ਸਾਫ਼ ਕਰਨਾ ਅਤੇ ਸਿਹਤ ਸੰਭਾਲ ਲਈ ਪੂਰੇ ਯਤਨ ਦਾ ਬੀੜਾ ਚੁੱਕਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਤੋਂ ਉੱਜੜਕੇ ਆਏਸ਼ਰਨਾਰਥੀਆਂ ਨੂੰ ਕੈਂਪਾਂ ਵਿਚ ਰਹਿਣਾ ਪਿਆ। ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਇਸ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਸੰਬੰਧੀ 'ਸ਼ਰਨਾਰਥੀ' ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਉਲੇਖ ਹੈ ਕਿ ਇਹਨ੍ਹਾਂ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਕਿਵੇਂ ਨਰਕੀ ਜੀਵਨ ਭੋਗਣਾ ਪਿਆ, ਬਹੁਤੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਤਾਂ ਭੁੱਖਿਆਂ ਦਿਨ ਕੱਟਣੇ ਪਏ ਅਤੇ ਜਿਹੜਾ ਕੁੱਝ ਖਾਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦਾ ਸੀ ਉਹ ਵੀ ਖਾਣ-ਯੋਗ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ ਸੀ ਅਤੇ ਮਜਬੂਰੀਵੱਸ ਖਾਣਾ ਪੈਂਦਾ ਸੀ,ਨਤੀਜੇ ਵਜੋਂ ਲੋਕ ਬਿਮਾਰੀਆਂ ਦੇ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੋ ਗਏ ਸਨ। ਕੁੱਝ ਲੋਕ ਸ਼ਰਨਾਰਥੀਆਂ ਦੀ ਮਨੋ ਸਹਾਇਤਾ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ ਪਰ ਕੁੱਝ ਲੋਕ, ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਦਰਸਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ,ਫੋਕੇ ਦਿਖਾਵੇ ਵਜੋਂ ਲੋਕ ਸੇਵਾ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ। ਸ਼ਰਨਾਰਥੀ ਨਾਟਕ ਦੀ ਪਾਤਰ ਸ਼੍ਰੀਮਤੀ ਭੰਡਾਰੀ ਜਿਹੜੀ ਕਿ ਡਿਪਟੀ ਕਮਿਸ਼ਨਰ ਦੀ ਪਤਨੀ ਹੈ,ਜਦੋਂ ਸ਼ਰਨਾਰਥੀਆਂ ਨੂੰ ਇਹ ਗੱਲ ਆਖਦੀ ਹੈ ਕਿ ਆਜ਼ਾਦ ਦੇਸ਼ ਦੇ ਵਾਸੀਆਂ ਨੂੰ ਵਿਹਲੇ ਬੈਠਕੇ ਕਿਸੇ ਤੇ ਬੋਝ ਨਹੀ ਬਣਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਤਾਂ ਸੁਲੱਖਣ ਸ਼ਾਹ ਵਰਗੇ ਲੋਕ ਨਾ ਕੇਵਲ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦੇ ਹਨ ਸਗੋਂ ਸੰਘਰਸ਼ ਲਈ ਵੀ ਮਜਬੂਰ ਹੁੰਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸੰਘਰਸ਼ ਤੋਂ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਕੋਈ ਗੱਲ ਨਹੀਂ ਬਣਨੀ। ਇਹ ਸੰਘਰਸ਼ ਇਸ ਲਈ ਵੀ ਇਹਨਾਂ ਦੀ ਮਜਬੂਰੀ ਸੀ ਇਹ ਲੋਕ ਆਪਣੀ-ਆਪਣੀ ਥਾਂ ਚੰਗਾ ਜੀਵਨ ਜੀਉਂ ਰਹੇ ਸਨ ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਕਰਤਾਰ ਸਿੰਘ ਦੁੱਗਲ ਦੇ ਨਾਟਕ 'ਮਿੱਠਾ ਪਾਣੀ'(1998:93) ਤੋਂ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਜਿਹੜੇ ਲੋਕ

ਖੇਤੀ ਕਰਦੇ ਸਨ ਉਹ ਆਪਣਾ ਜੀਵਨ ਚੰਗਾ ਜੀਉਂ ਰਹੇ ਸਨ ਅਤੇ ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਉਪਜਾਓ ਜ਼ਮੀਨਾਂ ਦੀ ਥਾਂ ਮਾਰੂ ਜ਼ਮੀਨਾਂ ਹੀ ਮਿਲੀਆਂ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚ ਕੋਈ ਪੈਦਾਵਾਰ ਵੀ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੀ ਸੀ। ਜੁਆਲਾ ਸਿੰਘ ਦਾ ਪਰਿਵਾਰ ਜਿੱਥੇ ਉਪਜਾਓ ਜ਼ਮੀਨ ਦੀ ਮਾਲਕੀ ਤੋਂ ਬੰਜਰ ਜ਼ਮੀਨ ਨਾਲ ਟੱਕਰਾਂ ਮਾਰਨ ਲੱਗਿਆ,ਉੱਥੇ ਉਹ ਭਰੇ-ਭਰਾਏ ਭਾਈਚਾਰੇ ਤੋਂ ਸੱਖਣੇ ਹੋ ਗਏ। ਇਸ ਸੰਬੰਧ ਵਿਚ ਜੁਆਲਾ ਸਿੰਘ ਦੀ ਪਤਨੀ ਜੁਆਲੀ ਦਾ ਦੁੱਖ ਵਧੇਰੇ ਧਿਆਨ ਦੀ ਮੰਗ ਕਰਦਾ ਹੈ:

ਜੁਆਲੀ: ਇਹ ਵੇਲਾ ਏ ਜਦੋਂ ਸਾਡੇ ਪਿੰਡ ਸ਼ਾਮਾਂ ਦੀ ਬਾਂਗ ਹੁੰਦੀ ਸੀ। ਮੁਸਲਮਾਨ ਨਮਾਜ਼ ਪੜ੍ਹਦੇ ਸਨ,ਹਿੰਦੂਸਿੱਖ ਪੂਜਾ ਤੋਂ ਵਿਹਲੇ ਹੋ ਲੈਂਦੇ ਸਨ। ਇਹ ਵੇਲਾ ਸੀ ਜਦੋਂ ਚਾਹੇ ਕਿਤੇ ਵੀ ਹੋਏ ਸਵਿਤ੍ਰੀ ਆਪਣੇ ਘਰ ਆ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। ਤੇ ਫੇਰ ਮੈਥੋਂ ਪੁੱਛੇ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਬਾਹਰ ਕਦਮ ਨਹੀਂ ਸੀ ਰੱਖਦੀ। ਇਹ ਵੇਲਾ ਏ ਜਦੋਂ ਵਿਹੜੇ ਵਿਚ ਕਿਤਨੀ ਗਹਿਮਾ ਗਹਿਮੀ ਹੁੰਦੀ ਸੀ। ਕਿਤੇ ਬਲਦ ਮੁੜ ਰਹੇ ਨੇ,ਕਿਤੇ ਮਹਿੰ ਉੜੀਂਗ ਰਹੀ ਏ,ਕਿਤੇ ਪੱਠੇ ਸਿਰ ਤੇ ਚੁੱਕੀ ਕੋਈ ਆ ਰਿਹਾ ਏ। ਮੱਕੀ ਦੇ ਟਾਂਡੇ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚ ਦੁੱਧਲ ਕਾਚਾਂ ਹੁੰਦੀਆਂ ਸਨ,ਮੇਰੀ ਧੀ ਭੁੰਨ ਭੁੰਨ ਨਹੀਂ ਥੱਕਦੀ ਸੀ,ਖਾ ਖਾ ਕੇ ਨਹੀਂ ਹਾਰਦੀ ਸੀ। ਇਹ ਵੇਲਾ ਏ ਜਦੋਂ ਮੈਨੂੰ ਅੰਦਰ-ਬਾਹਰ ਭਰਿਆ ਭਰਿਆ ਲਗਦਾ ਸੀ। ਲਵੇਰੀਆਂ ਦੀਆਂ ਧਾਰਾਂ ਕਢਦੀ,ਕੁੱਕੜੀਆਂ ਕੁੱਕੜਾਂ ਨੂੰ 'ਕੱਠਾ ਕਰਦੀ। ਡੰਗਰਾਂ ਨੂੰ ਚਾਰਾ ਪਾਂਦੀ,ਵਿਹੜੇ ਵਿਚ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰਵੇਖਦੀ,ਬੱਚਿਆਂ ਦੇ ਪਿਉ ਨੂੰ ਵੇਖਦੀ,ਆਏ ਗਏ ਨਾਲ ਹੱਸ ਹੱਸ ਗੱਲਾਂ ਕਰਦੀ। ਕੁੱਝ ਗੁਆਂਢੀਆਂਦਿਉਂ

ਆਂਦਾ,ਕੁੱਝ ਗੁਆਂਢੀਆਂ ਨੂੰ ਭੇਜਦੀ, ਸਾਂਝਾਂ ਬਣਾਂਦੀ,ਵੰਡ ਵੰਡਦੀ ਮੇਰੇ ਰਾਤ ਹੋ ਜਾਂਦੀ।

ਜੁਆਲਾ ਸਿੰਘ:(ਆਂਦੇ ਹੋਏ) ਦੇਵੀ ਦੀ ਮਾਂ, ਤੂੰ ਫੇਰ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨਾਲ ਗੱਲਾਂ ਕਰ ਰਹੀ ਏਂ? ਮੈਂ ਕਿਹਾ ਏਤੂੰ 'ਕਲੀ ਨਾ ਰਿਹਾ ਕਰ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਹੀ ਗੁਰਦਿਆਲ ਸਿੰਘ ਖੋਸਲਾ ਦੇ ਨਾਟਕ 'ਬੇਘਰੇ' ਦਾ ਭੋਲੇ ਸ਼ਾਹ ਜਿਹੜਾ ਕਿ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਵਿਚ ਚੰਗੇ ਕਾਰੋਬਾਰ ਦਾ ਮਾਲਕ ਸੀ ਹੁਣ ਉਸ ਨੂੰ ਅਤੇ ਉਸ ਦੇ ਪਰਿਵਾਰ ਨੂੰ ,ਨਿੱਤ ਦੀ ਰੋਟੀ ਦੇ ਲਈ, ਛੋਟੇ ਕੰਮਾਂ ਵਾਲੀ ਮਜ਼ਦੂਰੀ ਕਰਨੀ ਪੈ ਰਹੀ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਗੁਜ਼ਾਰਾ ਫਿਰ ਵੀ ਔਖਾ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਇਉਂ ਹੀ 'ਹੇਠਲੇ ਉੱਤੇ'ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਗੁਪਾਲ ਦਾਸ ਨਾਲ ਵਾਪਰਦਾ ਹੈ । ਗੁਪਾਲ ਦਾਸ ਜਿਹੜਾ ਕਿ 'ਸਰੀਨ' ਮਹੱਲੇ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡਾ ਸ਼ਾਹੂਕਾਰ ਸੀ ਅਤੇ ਅਮੀਰ ਵਿਅਕਤੀ ਸੀ ਪਰ ਸਥਿਤੀ ਨੇ ਉਸ ਨੂੰ ਬੇਵੱਸ ਤੇ ਮਜਬੂਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਸੀ ਅਤੇ ਹੁਣ ਉਸ ਕੋਲ ਰਹਿਣ ਲਈ ਛੱਤ ਵੀ ਨਹੀ ਸੀ। ਜਿੱਥੇ ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਸ਼ਾਹੂਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਦੂਜਿਆਂ ਦੀ ਖੂਨ ਪਸੀਨੇ ਦੀ ਕਮਾਈ ਤੇ ਮੌਜ ਕਰਨ ਅਤੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਬਦਲਾਅ ਅਧੀਨ ਇਹਨਾਂ ਦੇ ਮਾੜੇ ਦਿਨਾਂ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਕੀਤਾ ਹੈ ਉੱਥੇ ਇਹ ਗੱਲ ਵੀ ਉਠਾਈ ਹੈ ਕਿ 'ਸੋਹਣ ਸਿੰਘ' ਵਰਗੇ ਮਿਹਨਤਕਸ਼ ਲੋਕ ਪਹਿਲਾਂ ਵੀ ਮਿਹਨਤ ਕਰਕੇ ਆਪਣਾ ਗੁਜ਼ਾਰਾ ਕਰਦੇ ਸਨ ਅਤੇ ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਬਾਅਦ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣੀ ਮਿਹਨਤਨਾਲ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਸੰਕਟ ਵਿਚੋਂ ਕੱਢ ਲਿਆ। ਇਸ ਨਾਟਕ ਵਿਚ 'ਨੰਦ ਲਾਲ' ਵਰਗੇ ਪਾਤਰ ਰਾਹੀਂ ਸਮਾਜਵਾਦ ਦਾ ਸੁਨੇਹਾ ਅਤੇ ਸਰਮਇਦਾਰੀ ਵਰਗ ਵਲੋਂ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਲੁੱਟ ਨੂੰ ਭੰਡਿਆ ਗਿਆ ਹੈ।

ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਇਹਨ੍ਹਾਂ ਚੋਣਵੇਂ ਨਾਟਕਾਂ ਰਾਹੀ ਜਿੱਥੇ ਪੰਜਾਬੀ ਸੰਵੇਦਨਾ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਇਸ ਦੁਖਾਂਤ ਅਤੇ ਅਮਾਨਵੀ ਵਿਹਾਰ ਸਮੇਂ ਕਿਵੇਂ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਈਚਾਰੇ ਦਾ ਪ੍ਰਮਾਣ ਸਿਰਜਿਆ ਉੱਥ ਇਹ ਵੀ ਕਿ ਪੰਜਾਬੀ ਜਨ-ਜੀਵਨ ਨੇ ਕਿਹੜੇ ਕਿਹੜੇ ਸੰਕਟ ਝਲੇ ,ਦਾ ਯਥਾਰਥਕ ਚਿੱਤਰਣ ਮਿਲਦਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬੀ ਨਾਟਕ ਨੇ ਦੇਸ਼ ਵੰਡ ਸਮੇਂ ਦੇ ਹਾਲਾਤ,ਉਸ ਦੁਖਾਂਤ ਤੋਂ ਪੈਦਾ ਹੋਏ ਸੰਕਟਾਂ ਨੂੰ ਕਿਵੇਂ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਸਹਾਰਿਆਆਦਿ ਬਾਰੇ ਤਾਂ ਗੰਭੀਰ ਚਰਚਾ ਮਿਲਦੀ ਹੈ ਪਰ ਇਸ ਦੁਖਾਂਤ ਪਿੱਛੇ ਮਾੜੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਕੀ ਰਹੀ ਅਤੇ ਇਹ ਵਟਵਾਰਾ ਸਹਿਜ ਦੀ ਥਾਂ ਅਸਹਿ ਕਿਉਂ ਬਣਿਆ? ਇਸ ਆਲੋਚਨਤਾਮਿਕ ਯਥਾਰਥ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਨਾਟਕਕਾਰ ਥੋੜ੍ਹਾ ਉਰ੍ਹਾਂ ਰਹਿ ਗਏ ਹਨ। ਪਰ ਇਹਨ੍ਹਾਂ ਨਾਟਕਾਂ ਦੀ ਇਕ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਮਹੱਤਤਾ ਹੈ ਜਿਹੜੀ ਕਿ ਭਵਿੱਖੀ ਘਟਨਾਵਾਂ ਤੋਂ ਸੁਚੇਤ ਜ਼ਰੂਰ ਕਰਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਜੋ ਭਵਿੱਖ ਵਿਚ ਅਜਿਹਾ ਦੁਖਾਂਤ ਨਾ ਵਾਪਰੇ।

-::-

ਆਧਾਰ ਪੁਸਤਕਾਂ:

ਅਜਮੇਰ ਸਿੰਘ ਔਲਖ, ਅੰਨ੍ਹੇ-ਨਿਸ਼ਾਨਚੀ, ਲੋਕ-ਗੀਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ,ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ,1997

ਸਤਨਾਮ ਸਿੰਘ ਜੱਸਲ,ਈਸ਼ਵਰ ਚੰਦਰ ਨੰਦਾ ਦੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦਾ ਆਲੋਨਾਮਿਕ ਅਧਿਐਨ,(ਖੋਜ-ਪ੍ਰਬੰਧ),1989

ਹਰਸਰਨ ਸਿੰਘ, ਮੇਰੇ ਚੋਣਵੇਂ ਇਕਾਂਗੀ,ਆਰਸੀ ਪਬਲਿਸ਼ਰਜ਼,ਦਿੱਲੀ,1975

ਹਰਚਰਨ ਸਿੰਘ, ਸਾਂਝਾ ਰਾਜ,ਲਾਹੌਰ ਬੁੱਕ ਸ਼ਾਪ, ਲੁਧਿਆਣਾ,1949

ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਘੁੰਮਣ, ਨਾਟ ਧਾਰਾ,ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ,ਪਟਿਆਲਾ,1998

ਕਰਤਾਰ ਸਿੰਘ ਦੁੱਗਲ,ਦੁੱਗਲ ਦੇ ਨਾਟਕ, ਪਹਿਲੀ ਤੇ ਦੂਜੀ ਸੈਂਚੀ,ਨਵਯੁਗ ਪਬਲਿਸ਼ਰਜ਼,ਨਵੀਂ ਦਿੱਲੀ,1998

ਗੁਰਦਿਆਲ ਸਿੰਘ ਖੋਸਲਾ, ਬੇਘਰੇ ਤੇ ਹੋਰ ਇਕਾਂਗੀ, ਲਾਹੌਰ ਬੁੱਕ ਸ਼ਾਪ ਲੁਧਿਆਣਾ,1974

ਰਾਮਧਾਰ ਸਿੰਘ ਦਿਨਕਰ, ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਚਾਰ ਅਧਿਆਇ,ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ,ਪਟਿਆਲਾ,1992 (ਅਨਵਾਦ ਧਨਵੰਤ ਕੌਰ ਅਤੇ ਇੰਦਰਜੀਤ ਕੌਰ)

ਰਿਸਾਲਾ: ਪੰਜਾਬੀ ਦੁਨੀਆ,ਸਤੰਬਰ,1983

ਹਟਟਪਪਸ//ਏਨ.ਮ.ਾਕਿਪਿਏਦਓਿੰ.ਰਗ

ਡਾ. ਸਤਨਾਮ ਸਿੰਘ ਜੱਸਲ
ਡੀਨ, ਬੇਸਿਕ ਸਾਇੰਸਜ਼ ਐਂਡ ਹਿਊਮੈਨਟੀਜ਼,
ਗੁਰੂ ਕਾਸ਼ੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ,ਤਲਵੰਡੀ ਸਾਬੋ,ਜ਼ਿਲ੍ਹਾ ਬਠਿੰਡਾ।
094172-25942,
Email- prof.satnam@gmail.com

47

भारत पाकिस्तान विभाजनः एक विश्लेषण

सतीश देशवाल

सारांश

भारत पाकिस्तान विभाजन आधुनिक इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक है, जिसने भारतीय उपमहाद्वीप के प्रक्षेपवक्र को आकार दिया। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के अंत के साथ, स्वतंत्रता की खोज धार्मिक विभाजनों से टकराई, जिससे भारत दो अलग–अलग राष्ट्रों में विभाजित हो गया, भारत और पाकिस्तान। भारत पाकिस्तान विभाजन की पृष्ठभूमि, कारण और परिणाम का विश्लेषण हमें ऐतिहासिक घटनाओं का वह सामरिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आयाम दिखा सकता है जिनसे यह बात स्पष्ट होती है कि विभाजन केवल दो अलग देशों के बीच के मामले नहीं थे, बल्कि यह भारतीय साम्राज्यवाद और धार्मिक बंधनों के व्यापक प्रभाव का परिणाम था। इस लेख का उद्देश्य विभाजन का विश्लेषण करना और इस उथल–पुथल भरे दौर की व्यापक समझ प्रदान करने के लिए इसके विभिन्न पहलुओं को समझने की कोशिश करना है।

मुख्य शब्दः भारत, पाकिस्तान, विभाजन, इतिहास, राजनीति, समाज, अर्थव्यवस्था।

परिचयः

भारत वर्ष पर 200 वर्षों तक अंग्रेजों का शासन रहा हैं, फिर भारत को जो स्वतन्त्रता मिली उसकी देश को बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। स्वतंत्रता के साथ ही भारत के दो हिस्से हुए और एक नये देश पाकिस्तान का जन्म हुआ। इससे पहले ही भारत से श्रीलंका और बर्मा अलग हो चुके थे।भारत का विभाजन 20वीं सदी की वो घटना हैं जिसे भुलाना या नजरंदाज करना असम्भव हैं, क्योंकि देश को अंग्रेजों से मुक्ति तो मिल गयी लेकिन पाकिस्तान के रूप में भारत को एक नया पड़ोसी देश मिल गया। ये प्रक्रिया आसान नही थी, बहुत लम्बे अंतरद्वंद के बाद पाकिस्तान का निर्माण हुआ था। इसके अंतर्गत पहले बंगाल का पूर्वी और पश्चिमी बंगाल में विभाजन हुआ,पूर्वी बंगाल के मुस्लिम बहूल होने के कारण इसे पूर्वी पाकिस्तान में शामिल किया गया था, लेकिन कालान्तर में कुछ ऐसी परिस्थितियां बनी कि ये प्रदेश पाकिस्तान से अलग हो गया और वर्तमान में बांगला देश के नाम से जाना जाता हैं। हालांकि विश्व और देश में और भी कई जगह और कई बार इस तरह की मांग असुरक्षित अल्पसंख्यकों ने है, जैसे कि पश्चिम एशिया में कुर्द, रूस में चेचेन, चीन में उइगर, और वर्तमान में हमारे देश में भी मिजोस, नागा और कश्मीर जैसे उदाहरण हैं। वास्तव में ये अंग्रेजों का दिमाग था जो देश में सदा से फूट डालो राज करो की कूटनीति पर काम कर रहे थे।1757 की शुरुआत में ईस्ट इंडिया कम्पनी ने बंगाल के कुछ हिस्सों पर शासन शुरू किया,और धीर–धीरे लगभग पूरे भारत की सत्ता अपने हाथ में ले ली।1858 में हुयी सशस्त्र क्रान्ति के बाद 1878 तक सत्ता का हस्तानांतरण ईस्ट इंडिया कम्पनी से क्वीन विक्टोरिया के हाथ में चला गया। और इसके बाद परिस्थितियाँ बदलने लगी जो स्वतंत्रता के साथ विभाजन के कगार तक पहुंची।

1885 में इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुयी जिसमें हिन्दुओं का प्रभुत्व ज्यादा था । जब ब्रिटिश सरकार ने धर्म के आधार पर बंगाल विभाजन करने की कोशिश की तब इंडियन नेशनल कोंग्रेस ने इसका विरोध किया,जिससे मुस्लिम लीग का जन्म हुआ। इस तरह अंग्रेज अपनी कूटनीति में सफल हुए। हालांकि कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों का उद्देश्य अंग्रेजों को भारत से बाहर करने का ही था। लेकिन तब भी पाकिस्तान बनाने के लिए कुछ स्पष्ट उद्देश्य या एक्शन प्लान नहीं था,ये लम्बी प्रक्रिया थी जिसके चलते भारत–पाकिस्तान अलग हुए।

विभाजनकाघटनाक्रम

1909 में ब्रिटिश ने धर्म के आधार पर अलग निर्वाचन क्षेत्र बनाया जिसके कारण दोनों पक्षों में तनाव बढ़ गया। ब्रिटिश सरकार ने इस तनाव को और ज्यादा बढ़ाने के लिए रेलवे टर्मिनल्स पर अलग सुविधाए देना शुरू किया।1920 तक व्यक्ति की धार्मिक आधार पर पहचान बनना शुरू हो गयी और ऐसे में होली के त्यौहार पर दंगों की स्थिति बन ही गयी जब गायों को काटा गया और हिन्दूओं ने मस्जिद के सामने नमाज के समय संगीत बजाया।

फरवरी 1947 में ब्रिटिश सरकार ने ये घोषणा की थी वो देश छोड़ देंगे। इस दौरान भारतीय और ब्रिटिश सरकार के नेताओं ने आवश्यक निर्णय और सत्ता हस्तांतरण पर काम करना शुरू कर दिया,भारत के नेताओं में इंडियन नेशनल कांग्रेस की तरफ से जवाहरलाल नेहरु जबकि मुस्लिम लीग की तरफ से मोहम्मद अली जिन्ना प्रतिनिधित्व कर रहे थे।

जिन्ना ने मुस्लिमों के लिए एक नए देश की मांग की, क्योंकि उन्हें डर था कि भारत एक हिन्दू बहुल देश हैं और स्वतंत्रता के बाद शायद उनकी राजनीतिक महत्वकांक्षा पूरी ना हो सकेगी। हालांकि नेहरु ने अविभाजित और एक भारत बनाने पर जोर दिया जिसमें पूरे उपमहाद्वीप को शामिल किया जा सके। लेकिन ब्रिटिशर्स उपनैविशिक राजनीति से खुदको अलग करना चाहते थे, और प्रधानमन्त्री क्लीमेंट एटली एक साल पहले अगस्त 1947 में भारत के स्वतंत्रता की तारीख निश्चित कर चुके थे।

3 जून 1947 के दिन मुस्लिम लीग और कांग्रेस के एक जॉइंट कांफ्रेंस में भारत के आखिरी वायसराय लुईस माउंटबेटन ने स्वतंत्रता की घोषणा की। इसी दिन रेडियो पर प्रसारित एक संबोधन में नेहरू, जिन्ना, बलदेव सिंह और माउंटबेटन ने स्वतंत्रता और इससे सम्बंधित योजनाओं के बारे में बताया। इन योजनाओं में माना गया कि एक विभाजन अवश्य होना चाहिए, जो कि पूर्व में बंगाल के प्रांतों और उत्तर

पश्चिम में पंजाब को विभाजित करेगा। ब्रिटिश सिविल सर्वेंट ने सर डिवाइल रेडक्लिफ, इस विभाजन को मैप करने का स्मारक कार्य सौंपा, भारत और पाकिस्तान की नई सीमाओं को निर्धारित करने के लिए सिर्फ छह सप्ताह दिए गए।

वास्तव में रेडक्लिफ की नक्शे पर जल्दबाजी में खींची गई रेखाओं ने एक राजनीतिक सीमा बनाई जिसके लिए कोई ठोस आधार ना था। उपमहाद्वीप के उत्तर–पश्चिम और उत्तर–पूर्व में मुस्लिम आबादी वाले अधिकांश इलाके पाकिस्तान के रूप में नामित किए गए थे वही हिन्दू बहुसंख्यक क्षेत्र भारत बन गया। •

इस जनसांख्यिकी तर्क ने भारतीय समाज की उस जमीनी सच्चाई को खारिज कर दिया, जिसमें हिंदू और मुसलमान–सिख, ईसाई और अन्य लोगों के साथ–साथ उपमहाद्वीप के सभी हिस्सों में सदियों से साथ–साथ रहते थे। एक मानचित्रकार की कलम के कारण वो परिवार और समुदाय रातोंरात धार्मिक "अल्पसंख्यक" बन गए। इस अल्पसंख्यक वाले दर्जे से सावधान होते हुए बहुत से लोग अपने घर छोड़ने लगे। भारत में हिंदू और सिख सुरक्षित स्थानों की और भागने लगे मुसलमान पकिस्तान की तरफ बढ़ने लगे। और इन सबमें पंद्रह मिलियन तक शरणार्थियों ने इस दौरान अपनी जगह बदली।

इस तरह सबसे महत्वपूर्ण बात ये थी कि भारत पाकिस्तान का विभाजन शांतिपूर्ण नहीं था,इसकी पृष्ठभूमि स्वतंत्रता के बहुत पहले ही बनना शुरू हो गयी थी। जैसे–जैसे स्वतंत्रता का दिन नजदीक आ रहा था, आम–जन में आक्रोश बढ़ रहा था और तनावपूर्ण स्थिति बनने लगी थी। हालांकि गांधीजी तब भी शांति और सौहार्द बनाये रखने की अपील कर रहे थे लेकिन मुस्लिम लीग ने 16 अगस्त 1946 को एक डायरेक्ट एक्शन डे घोषित किया, जिसके कारण कोलकाता में 4000 से ज्यादा हिंदुओं और सिखों की हत्या हो गयी, इस बात से हिंसा की आग पूरे देश में फैल गयी,जो कि कई वर्षों तक अनवरत चलती रही।

भारत पाकिस्तान विभाजन कारणः

भारत का विभाजन क्यों हुआ, इसके लिए इतिहासकार कई तरह के तर्क देते हैं, कुछ लोग उपनिवेशवाद के लंबे इतिहास में अंतर्निहित कारणों की तलाश करते हैं। वहीं कुछ का मानना हैं कि धार्मिक विभिन्नताओं के कारण हिंदू और मुस्लिम अलग–अलग राजनीतिक समुदाय थे। अन्य लोगों ने भारतीय राष्ट्रवाद पर एक महत्वपूर्ण तर्क दिया कि वे स्वतंत्र भारत की कल्पना करते समय इन विभाजनों को दूर करने में असमर्थ थे। अब भी कुछ लोग औपनिवेशिक शासन के अंतिम दशक पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जब द्वितीय विश्व–युद्ध के उपद्रवों ने राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक परिदृश्य को बदल दिया, प्रांतीय राजनेताओं ने अपने स्वार्थ सिद्धि की कोशिशें की और एक अलग मुस्लिम मातृभूमि की मांग तेज हुयी। वे 1947 की अंतिम राजनीतिक वार्ताओं का साक्ष्य भी देते हैं, जिसमें धार्मिक समुदायों के बीच बढ़ती हिंसा की पृष्ठभूमि मुख्य कारण माना जाता हैं, जो कि उस समय के "अन्य" समुदाय का प्रचार करने वाले नेताओं, और स्थानीय नेताओं के उकसावे से फैल गया था।

उस समय भारत में मुख्य राष्ट्रवादी पार्टी नेशनल इंडियन कांग्रेस की थी जिसके प्रमुख नेता महात्मा गांधी और जवाहर लाल नेहरु थे। 1940 से पहले तक यह पार्टी एक मजबूत केंद्र के साथ एकात्मक राज्य के लिए लंबे समय से संघर्ष कर रहा थी, भले ही कांग्रेस अपने उद्देश्यों में अस्थिर रूप से धर्मनिरपेक्ष थी लेकिन अल्पसंख्यक हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले संगठनों ने इस विचार को संदेह के साथ देखा। मुस्लिमों को यह विश्वास बनने लगा की यह हिंदुओं के राजनीतिक प्रभुत्व को प्रभावित करेगा, जिनकी उस समय देश में लगभग 80ः आबादी थी।

बहुत कम आबादी के साथ मुस्लिम ब्रिटिश भारत के सबसे बड़े धार्मिक अल्पसंख्यक थे। शाही शासन के तहत, वे आरक्षित विधायी सीटों की एक प्रणाली और अलग–अलग मतदाताओं द्वारा अपनी अल्पसंख्यक स्थिति को संरक्षित करने के आदी हो गए थे। आजादी के बाद इन सब सुविधाओं को खोने का डर मुल्सिमों में बढ़ रहा था, इस डर की शुरुआत उत्तरी भारत से हुयी थी उसके बाद विश्व युद्ध द्वितीय और जो भी परिस्थतियाँ बन रही थी उनका डर बढ़ता जा रहा था।

1939 में जब ब्रिटेन ने भारत के नेताओं से परामर्श किये बिना इसे युद्ध में शामिल कर लिया, तो कांग्रेस ने इसका विरोध किया।1942 में ब्रिटिश शासन के खिलाफ भारत छोड़ो आंदोलन हुआ।इसके लिए, गांधी और नेहरू और हजारों कांग्रेस कार्यकर्ताओं को 1945 तक जेल में रखा गया था।

इस बीच, ब्रिटिशर्स को युद्ध में सहयोगियों की जरूरत ने मुस्लिम लीग ने अंग्रेजों को अपने भविष्य के राजनीतिक सुरक्षा उपायों के बदले सहयोग की पेशकश की। 1940 के मार्च में मुस्लिम लीग ने "पाकिस्तान" प्रस्ताव दिया था जिसमें "अलग राज्य" के निर्माण की मांग की गयी थी। मुस्लिम लीग ने भारतीय मुसलमानों को समायोजित करने के लिए एकवचन नहीं, बहुवचन का नारा दिया। इतिहासकार अभी भी इस बात पर विभाजित हैं कि क्या यह अस्पष्ट माँग विशुद्ध रूप से एक सौदेबाजी थी या इसका कोई ठोस उद्देश्य था।

युद्ध के बाद, लंदन में एटली की सरकार ने माना कि ब्रिटेन की विनाशकारी अर्थव्यवस्था अधिक विस्तारित साम्राज्य की लागत का सामना नहीं कर सकती है। 1946 की शुरुआत में एक कैबिनेट मिशन भारत भेजा गया और एटली ने महत्वाकांक्षी संदर्भ में अपने मिशन का वर्णन किया।

संसद के एक अधिनियम में सत्ता के हस्तांतरण की समय सीमा के रूप में प्रस्तावित किया। लेकिन मिशन अपनी प्रस्तावित संवैधानिक योजना पर समझौते को सुरक्षित करने में विफल रहा, क्योंकि इसने एक अव्यवस्थित महासंघ की सिफारिश की। इस विचार को कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने अस्वीकार कर दिया

था, उस समय किसी भी तरह से "पाकिस्तान" के लिए आंदोलन करने का दौर था।

भारत–पाकिस्तान विभाजन के तात्कालिक परिणाम

भारत पाकिस्तान विभाजन को ना भूल सकने का कारण ये भी हैं कि ये आम–जन के इच्छा के विपरीत था जिसके लिए बहुत बड़ी जनसंख्या तैयार नही थी। एक तो सत्ता का हस्तांतरण हो रहा था,उस पर प्रशासन की तरफ से ऐसी कोई ठोस तयारी नही थी कि विभाजन की प्रक्रिया को सुगम बनाया जा सके।

इस दौरान हुयी हिंसा में लाखों लोगों ने अपनी जान गवाई तो कितने ही घर परिवार बिखर गये, सम्पति के नुक्सान के साथ ही पीढ़ियों तक के संघर्ष का उद्घाटन था वो विभाजन। इन सबसे साधारण लोग इस हिंसा का खामियाजा भुगत रहे थे। उनके घरों और मोहल्लों में उन पर हमला किया गया और ट्रेन में या पैदल सीमा पार से काफिले में यात्रा करते हुए उन्हें मार डाला गया। किसी भी हिंसा में जो आसानी शिकार बनता हैं वो महिला वर्ग ही होता हैं और इस दौरान भी महिलाओं के साथ बलात्कार, मारपीट और अपहरण किया गया। कितने ही गांवों की आबादी को मार डाला गया, और लाशों के ढेर लग गये।

यह अकल्पनीय हिंसा केवल घृणा और क्रूरता की सहज अभिव्यक्ति नहीं थी, बल्कि कई मामलों में योजनाबद्ध और संगठित थी। उस समय पंजाब विशेष रूप से हथियारों से लैस था और हाल ही में द्वितीय विश्व युद्ध में लड़ने वाले सैनिकों को हटा दिया गया था,तो कुछ ने अर्धसैनिक समूहों का गठन किया, जो अक्सर स्थानीय जमींदारों और अन्य कुलीनों द्वारा वित्त पोषित होते थे, जिन्होंने विभाजन के अराजकता का इस्तेमाल स्वार्थ सिद्धि में किया। उन्होंने भूमि पर दावा किया और अपनी खुद की राजनीतिक और आर्थिक शक्ति को सुरक्षित किया।

चूंकि इन संगठित अर्धसैनिक समूहों ने जातीय सफाई के अभियानों में पंजाब को पीछे छोड़ दिया था, ऐसे कुछ ही थे जो उन्हें रोक सकते थे। ब्रिटिश सरकार आंतरिक सुरक्षा के लिए अपने सैन्य बलों का उपयोग नहीं करने के लिए दृढ़ थी, और इसके परिणामस्वरूप, हजारों ब्रिटिश सैनिक अपने बैरकों में बने रहे क्योंकि उपमहाद्वीप के गाँव और शहर रक्तपात में बह गए थे।

वास्तव में 14–15 अगस्त को भारत–पाकिस्तान का निर्माण ब्रिटिश सरकार का आखिरी मिनट पर लिया जाने वाला निर्णय था, उस समय बहुत ही कम लोगों को समझ आया था कि विभाजन के क्या दुष्परिणाम हो सकते हैं और तात्कालिक परिस्थितयों में ये कितना भयावह रूप ले सकता हैं।

विभाजन के दूरगामी परिणाम

1950 तक हिंसा कम तो हो गयी लेकिन उस भयावह हिंसा के चिन्ह आज भी विभाजन की विरासत कर रूप में जीवित है।भारत और पाकिस्तान ने तीन युद्ध और कई बार सीमा पर छोटी–छोटी लड़ाईयां लड़ी हैं, अब प्रत्येक सरकार संदेह के साथ एक दूसरे के साथ संबंध रखती है। दो परमाणु–सशस्त्र शक्तियों के बीच घोषित–अघोषित युद्ध कश्मीर में लगातार होता रहता है।

वास्तव में विभाजन का एक अप्रत्याशित परिणाम यह था कि पाकिस्तान की आबादी अति धार्मिक थी। हालांकि मुस्लिम लीग के नेताओं ने यह मान लिया था कि पाकिस्तान में एक बड़ी गैर–मुस्लिम आबादी होगी, जिसकी उपस्थिति भारत में शेष मुसलमानों की स्थिति की रक्षा करेगी, मतलब पकिस्तान में जहां गैर–मुस्लिम सुरक्षित रहेंगे वहीं भारत में मुस्लिम सुरक्षित रह सकेंगे। फिर भी ये देखा गया कि पश्चिम पाकिस्तान में, गैर–मुस्लिम अल्पसंख्यकों में 1951 तक केवल 1।6ः जनसंख्या शामिल थी, जिसकी तुलना में पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में 22ः।मतलब साफ था कि भारत–पाकिस्तान में स्थानीय विभाजन से कही ज्यादा धार्मिक विभाजन हुआ था। और भले ही पाकिस्तान को भारत के मुस्लिम अल्पसंख्यकों के लिए बनाया गया था लेकिन देश के सभी मुस्लिमों ने भी इसके गठन का समर्थन नहीं किया और वहाँ माइग्रेट नहीं किया। इस तरह स्वतंत्र भारत में मुस्लिम सबसे बड़ा अल्पसंख्यक समूह बने रहे।

दोनों राज्यों को बाद में विभाजन के बाद शरणार्थियों को समायोजित करने और पुनर्वास करने में भारी समस्याओं का सामना करना पड़ा। साम्प्रदायिक तनाव और धार्मिक ध्वन्धों ने और अधिक आंदोलन उत्पन्न कर दिए, विभाजन के बाद कई वर्षों तक हालात स्थिर नहीं हो सके और 1960 के दशक के अंत तक दोनों देशों में पलायन होता रहा। वर्तमान में भी दोनों देशों के मध्य स्थिर रूप से अच्छे संबंध नहीं है। कश्मीर इसका प्रत्यक्ष कारण हैं लेकिन परोक्ष रूप से पाकिस्तान का आतंकवाद को बढावा भारत के लिए परेशानी का सबब हैं,जिसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर भी माना जा रहा हैं। दोनों देश के पास परमाणु हथिया हैं। भारतीय मुसलमानों पर जहाँ अक्सर पाकिस्तान के प्रति वफादारी को लेकर संदेह रहता है वहीं पाकिस्तान में हिन्दुओं की जनसंख्या बहुत ही कम हो गयी हैं, और वहाँ अल्पसंख्यकों के साथ अच्छे व्यवहार की कम खबरे ही देखने को मिलती हैं, इस तरह सात दशकों में, एक अरब से अधिक लोग आज भी विभाजन की छाया में रहते हैं।

निष्कर्षः

भारत पाकिस्तान विभाजन इतिहास में एक निर्णायक क्षण के रूप में खड़ा है, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए भारतीय उपमहाद्वीप पर इसके प्रभाव को दर्शाता है।विभाजन एक जटिल और बहुआयामी घटना थी, जो ऐतिहासिक, राजनीतिक और सामाजिक–सांस्कृतिक कारकों के अभिसरण से प्रभावित थी।

1947 में भारत का विभाजन केवल भूमि का विभाजन नहीं था बल्कि लोगों, समुदायों और पहचानों का विभाजन था। इस दौरान भड़क उठे धार्मिक तनाव और सांप्रदायिक हिंसा ने ऐसे निशान छोड़े जो क्षेत्र के सामाजिक ताने–बाने को आकार दे रहे हैं। विभाजन के परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर विस्थापन हुआ, लाखों लोग अपने घरों

से उखड़ गए, अकल्पनीय कठिनाइयों और पीड़ा का सामना करना पड़ा। शरणार्थी संकट और इसके साथ हुई हिंसा ने प्रभावित लोगों के जीवन, उनके वंशजों और उपमहाद्वीप की सामूहिक स्मृति पर एक स्थायी प्रभाव छोड़ा है।

महात्मा गांधी, मुहम्मद अली जिन्ना और जवाहरलाल नेहरू जैसे प्रमुख व्यक्तियों के नेतृत्व में राजनीतिक वार्ताओं ने विभाजन को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। राष्ट्रीयता के परस्पर विरोधी दृष्टिकोण और अलग राज्यों की मांगों के कारण अंततः भारत का दो राष्ट्रों में विभाजन हुआरू भारत और पाकिस्तान। लॉर्ड माउंटबेटन के मार्गदर्शन में लागू की गई विभाजन योजना का उद्देश्य स्व–शासन के लिए प्रतिस्पर्धी आकांक्षाओं को दूर करना था लेकिन महत्वपूर्ण चुनौतियों और विवादों का सामना करना पड़ा।

उपमहाद्वीप में जीवन के विभिन्न पहलुओं पर विभाजन के दूरगामी परिणाम हुए। आर्थिक रूप से, संसाधनों, उद्योगों और बुनियादी ढाँचे के विभाजन ने मौजूदा आर्थिक व्यवस्था को बाधित कर दिया, जिससे भारत और पाकिस्तान दोनों के लिए दीर्घकालिक प्रभाव पड़ा। सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभाव गहरा थे, क्योंकि विभाजन के परिणामस्वरूप साझा परंपराओं, भाषाओं और सांस्कृतिक प्रथाओं का नुकसान हुआ। उपमहाद्वीप की समृद्ध विविधता को झटका लगा, और खंडित पहचानों के पुनर्निर्माण और सामंजस्य की प्रक्रिया आज भी जारी है।

भारत पाकिस्तान विभाजन की विरासत जटिल है। इसने दोनों देशों के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य को आकार दिया है। भारत और पाकिस्तान राष्ट्र निर्माण, शासन और अपने संबंधों की चल रही जटिलताओं की चुनौतियों से जूझ रहे हैं। तनाव और संघर्ष के समय–समय पर भड़कने के साथ, विभाजन के निशान दोनों देशों के बीच गतिशीलता को प्रभावित करना जारी रखते हैं।

निष्कर्षः

विभाजन की जाँच करने में, हमने बहुमूल्य सबक भी सीखे हैं। यह सांप्रदायिक विभाजन के परिणामों और एकता और समावेशिता की भावना को बढ़ावा देने के महत्व की याद दिलाता है। विभाजन के अनुभव ने अधिक शांतिपूर्ण और समृद्ध भविष्य के निर्माण के लिए संवाद, समझ और मेल–मिलाप की आवश्यकता पर प्रकाश डाला है। जैसा कि हम भारत पाकिस्तान विभाजन के इस विश्लेषण को समाप्त करते हैं, मानवीय कहानियों और इस घटना के साथ हुई अपार मानवीय पीड़ा को याद करना आवश्यक है। यह समझ, सहानुभूति और अतीत से सीखने की प्रतिबद्धता के माध्यम से है कि हम बेहतर कल के लिए प्रयास कर सकते हैं। भारत पाकिस्तान विभाजन इतिहास की जटिलताओं, विभाजन की शक्ति और एकता और शांति की स्थायी खोज का एक मार्मिक स्मरण है।

संदर्भसूची

चंद्रा, बी। (1984)।आधुनिक भारत में साम्प्रदायिकता। नई दिल्लीरू विकास पब्लिशिंग हाउस।

जलाल, ए। (1994)।एकमात्र प्रवक्तारू जिन्ना, मुस्लिम लीग और पाकिस्तान की मांग। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

टैलबोट, आई। (2002)।डिवाइडेड सिटीजरू पार्टीशन एंड इट्स आफ्टरमाथ इन लाहौर एंड अमृतसर, 1947–1957। ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस।

मेनन, वी। पी। , और भसीन, के। (1998)। सीमाएँ और सीमाएँरू भारत के विभाजन में महिलाएँ। रटगर्स यूनिवर्सिटी प्रेस।

हसन, एम। (2005)। एक विभाजित राष्ट्र की विरासतरू स्वतंत्रता के बाद से भारत के मुसलमान। ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस।

बुटालिया, यू। (1998)।द अदर साइड ऑफ साइलेंसरू वॉयस फ्रॉम द पार्टीशन ऑफ इंडिया। ड्यूक यूनिवर्सिटी प्रेस।

अहमद, आई। (2011)। पंजाब रक्तरंजित, विभाजन, और शुद्धरू गुप्त ब्रिटिश रिपोर्ट और प्रथम–व्यक्ति खातों के माध्यम से 1947 की त्रासदी को उजागर करना। रोली बुक्स।

नायर, के। एम। (2017)।द शहीद हू बिकेम द मिलेनियम मैनरू भगत सिंह एंड द 1947 पार्टीशन ऑफ इंडिया। पेंगुइन रैंडम हाउस इंडिया।

हसन, एम। (2015)। पश्चिम की खोजरू ब्रिटिश भारत से तीन यात्रा वृतांत। ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस।

पांडे, जी। (1990)।औपनिवेशिक उत्तर भारत में सांप्रदायिकता का निर्माण। ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस।

सतीश देशवाल

पी–,च–डी– शोधार्थी

लॉड्र्स विश्वविद्यालय, चिकानी

जिला–अलवर (राजस्थान)

satishdeshwal50@gmail-com

Mob- No- :&9467735574

48

FARMING A RISKY ENTERPRISE - SOME PROTECTIVE MEASURES

Dr. Meenu Anand

Abstract:

According to Business Dictionary, risk is a probability or threat of damage, injury, liability, loss or any other negative occurrence that is caused by external or internal vulnerabilities, and that may be avoided through pre-emptive action. Risk is of various types and is associated with business - could it be Finance, food industry, Insurance, Trading, Security Trading or Work place and the various production activities, which could vary from one type to the other. More precisely, Risk is involved in every activity of life. Risk is there in walking, in service, eating or so on. Even there is risk in Farming and farmer does not know that even after doing hard work on the farm involving ploughing, putting seed, farm yard manure and fertiliser, insecticides, pesticides, spending on weeding and harvesting, whether he will be able to harvest the crop or not. Even after harvesting the crop, whether he will be able to sell at the remunerative price or not and after doing all this, whether he will earn any profit or not. In agriculture sector, the farmer is faced with both risk and uncertainty. Risk is always measured with certain degree of accuracy, while uncertainty cannot be measured. Most of the factors associated with agriculture are accounted for as the risk, while the weather conditions like drought, rainfall, snow and hail cannot be predicted accurately. To overcome these, the insurance companies have started covering it. Even the meteorological department is making certain predictions of weather. Farming has become increasingly risky as farmers become more commercial. Farming risks are basically divided into eight types viz.

- Ø Production Risks
- Ø Financial Risks
- Ø Marketing Risks
- Ø Environmental and Pollution Risks
- Ø Human Resource Risk
- Ø legal Risk
- Ø Social Risks
- Ø Government Policy and Price Risk

Production Risks

Variability in output from expected, poses risk to the farmers to meet financial goals. The major sources of production risks are weather conditions such as drought, foods, excessive rainfall both at the planting and harvesting time, insects and pests attack, diseases and the interaction of technology with other farm and management characteristics viz. genetics, machinery or efficiency and the quality of inputs. Failure of equipment and machinery at the required/ proper time is another important production risk. Fire too, at the harvesting time and even after harvesting is also a major production risk. To manage the production risks, the various strategies could be applied. Some of these are:

- · Proper selection of cropping pattern and crop rotation
- · Proper sowing time as per the selected variety-Earlier sowing or Late sowing
- · To adopt the recommended approved package of productions, like sowing time, proper seed treatment, quantity and quality of high-yielding variety of seed, number and depth of ploughings, spacing of plants, number of irrigations and the time of irrigation, fertiliser doses, farm yard manure application, spraying of insecticides and pesticides etc. and so on.
- · Diversification of enterprises and crop rotations,
- · Improving intensity of cropping and bringing more and more area under plough and reducing the fallow land
- · Proper maintenance of machinery and equipment to be used on the farm and keeping it ready a few days before its use.
- · Proper and pucca drainage for irrigation to allow little seepage and wastage of irrigation water,
- · Proper use of fertiliser dose as per the requirement after checking the soil fertility.
- · Proper use of insecticide and pesticides.

Financial Risks

Financial risk is witnessed when a farmer borrows money and creates an obligation to repay debt. Creditworthiness of the farmers to some extent affects the cost of capital, amount and availability of borrowed funds. Cash flows generated by the farm also affect the timing of needed funds required for various operations of the farm, purchase of various inputs or supplies and making rental or leasing arrangements. Macroeconomic

factors outside of the farm operation too require careful consideration when managing farm financial system. A careful planning based on various operations and supplies indicating specific requirements and the availability from the relevant resources has to be prepared for proper management. Sources of financial risk are basically the offshoots of production and marketing risks. Financial risks could also be caused by the increased input costs, increase in interest rates and higher family maintenance requirements. Financial Risks could be properly managed by:

- Preparation of financial statements to accurately determine the financial status of the farm;
- Proper development of business plan showing the input required on the farm and the output to receive;
- Controlling the expenses and purchasing the various supplies at remunerative and competitive rates by contacting more than one supplier and taking into consideration the substitutes or alternative inputs and their sources;
- To utilise the spare labour time by adding supplementary enterprise on the farm like dairy animals, keeping some poultry birds or getting some off farm labour/job during the scarce period
- To control or defer unnecessary family and household expenditure
- To work out and ascertain the whole farm and enterprise profitability and
- To make non-farm investment, if surplus money available
- keeping the spare cash in bang so as to generate some interest income

MARKETING RISK

Agricultural producers have little control over the market forces that drive commodity prices. Production levels, market supply and demand changes can cause large and unforeseen swings in prices. Furthermore, increasing global interaction in commodity markets and the various market forces add to the uncertainty surrounding market prices. Changes in consumer incomes, the strength of the economy, government trade and energy policies and exchange rates all affect demand for commodities and commodity prices. The time of sale of the produce to affects the prices. When there is glut in the market, the price will fall, but if the produce is sold in the off season when the market demand is higher, the farmer may get a higher price resulting in higher income and higher profit. These and other unpredictable factors make price forecasting a difficult process. Since input prices translate to the cost of production for farmers and output prices translate to revenues for farmers, unfavourable prices on either side can be devastating to an agricultural business/enterprise. It is therefore, imperative for farmers to manage marketing risk both on the input and the output side in order to maintain long-term profitability. To cover up the marketing risk, the strategies used are as under:

- Marketing risk could be covered by using the realistic yield of crops sown and their market price;
- Before the harvesting, enter into sales contract or go for contract farming, where the entire production is lifted as per the agreed price;
- Join the cooperative marketing society;
- Go for direct marketing by establishing sales booth on the farm or at a convenient place;
- Marketing through multiple channels viz. combination of direct marketing, cooperative, arhatia and the Government sales.
- Choosing proper sale time, if pocket permits. Selling some produce at the harvesting time to meet the immediate needs and selling the remaining produce when the prices go up.

ENVIRONMENT AND POLLUTION RISKS

Farming is a risky business. Farmers always have to cope with a wide variety of risks. But, environmental risk is relatively new to most farmers. Our extractive technologies have become more effective, and thus more destructive, and we have seemingly lost the will to refrain from doing whatever we are capable of doing to satisfy our greed. Yet, common sense tells us that we are degrading and destroying our natural environment and the ecosystem for which we ourselves are responsible. Environmental risks are real both to individuals, farmers and others, and to the whole of human society. Farmers interact more closely with their natural environment than any other occupational group. Today, health risks emanating from applying higher doses of

fertilizers, pesticides and insecticides to crops or livestock, from drinking contaminated water, from breathing polluted air, and from association with animal hormones and genetically manipulated organisms are ever-present factors in the day-to-day life of farm families and farm workers. Risks resulting from damage done first to the ecosystem such as pollution of water and air with chemicals, sediment, and noxious odours also affect farmers, but mostly affect those living downstream or downwind from the farm. Burning of farm residues emanating carbon monoxide is very common in Indian climate. Environmental risks affecting the productivity of the land are more long-term and less direct, but are none the less, real risks to the survival of farms and of farming.

· To address these potential gaps in coverage, agricultural businesses should consider pollution free policies that provide coverage for gradual releases as well as sudden and accidental incidents linked to pesticides, chemicals, fertilizers and other materials.

· The other way could be the plantation of green trees on the various bunds and farm boundaries.

· Burning of farm residues is to be strictly banned and heavy penalties to be levied in case of violations

· Technologies should be evolved for the proper use of farm residues which help the farmers in getting additional income

HUMAN RESOURCE MANAGEMENT RISK

While Production and Marketing risks are considered very important to the success of the farm business, often overlooked are the human resource risk and the seldom-mentioned possibility of unintentional death and disablement faced by producers every day. Risks in agriculture are generally of two types-One due to the use of farm machineries like tractors, harvesters, threshers, chaff cutters and combine harvesters etc., the second risk is due to the unavailability of labour at the time of sowing and harvesting of crops. For example, the farmer has gone for vegetable cropping assuming the labour for harvesting or picking will be available. But if due to some unforeseen circumstances, the labour is not available or goes on strike, the whole crop would whither or rotten incurring a huge loss to the farmer.

· To cover up the risk, proper planning and the requirement of labour for the peak and slack months are to be worked out and the contract with the labour has to be made in advance.

· For working on the equipment and machinery too, the skilled or semi-skilled labour is to be employed in advance. A farmer should always have an alternative source available in case of eventuality.

· Proper maintenance and checking of the machinery and farm equipment a few days before its use

· If the machinery is to be hired or taken on lease, proper arrangements should be made in advance

· Provide adequate training to the employees to avoid accidents.

· Evaluate the performance of labour and give rewards for good performance

· Have personal contacts with the labour and always help them in need.

LEGAL RISK

The legal risk stems from tort liability - being subject to a civil suit - which is of particular concern to the farmers. Legal risk also arises from environmental liability, regulations, and the business structure of your operation. Legal issues cut across all other risk areas: production, financial, human, and marketing. Some of the legalities involved on the farms are:

· Taxes, labour laws, use of insecticides and pesticides

· Engagement in farm operations

· Tort and environmental liability for working with various farm machinery

· Business related risks like bankruptcy and foreclosure

· Contractual and leasing arrangements

SOCIAL RISK

Social risks and environmental risks are the connected risk. All environmental and pollution risks are the risk to society. In addition to these risks, other risks connected with agriculture are the risks due to the cultivation of various crops like Marijuana, opium and Tobacco etc., which pose risk not only to society, but even to the birds, who become accustomed to consuming these products. To cover up these risks:

Ø Proper care and close check is to be made in the production of these products

Ø The entire produce to be sold to the proper authorities

Ø Local sales should be voided.

Ø The produce produced should be properly stored and should not be left in the field

Government Policies And Prices

Government of India provides various measures such as subsidies, tariffs, quotas, and non-tariff measures to protect domestic producers from import competition, manage domestic price levels, and guarantee domestic supply. India subsidizes agricultural inputs in an attempt to keep farm costs low and production high. Government of India's intended result is for farmers to benefit from lower costs, but also for them to pass some of the savings on to the consumers in the form of lower food prices. GOI pays fertilizer producers directly in exchange for the companies selling fertilizer at lower than market prices. Irrigation and electricity, on the other hand, are supplied directly to farmers by the Government at prices that are below the cost of production. Even in some of the states, there are no electricity charges for farm irrigation. At times, input subsidies produce unintended effects. According to GOI report, input subsidies have resulted in the overutilization of inputs. This overutilization has in turn led to soil degradation, soil nutrient imbalance, environmental harm, and groundwater depletion. Moreover Government fixes the floor and MSP of important agricultural commodities. There is always a risk of the Government changing or enhancing prices resulting in a change of the entire economic scenario. To cover up these risks:

Ø The farmers are to be educated to make the proper use of various inputs

Ø The over-utilisation of resources is to be avoided

Ø The fixation of MSP should be well before the sowing of crop, so that the farmer should decide his cropping pattern in advance

In short, the process of managing risks starts right from the planning and covers all the aspects of production, processing, marketing, labour management, financial, environment and pollution and legal. Since our farmers are illiterate and are working with experience gained from their fore fathers, it is not possible to have the expertise in all the aspects. These days, the help and assistance is available on all the aspects from district agricultural inspectors/officers, IADP officers, various other related departments and the research organisations and agricultural universities, which could be availed.

References

https://nevegetable.org/big-five-risks-faced-farmers The Big Five Risks Faced by Farmers....http://www.ersusda.gov http://ageconsearch.umn.edu/bitstream/28640/1/sp040011.pdf Farmers and their lenders say it is increasing in agriculture. Lenders ... The risks that .

https://ucanr.edu/sites/placernevadasmallfarms/Farm_Business_Planning/FBP_Risk_Management/Risk_Management/ Marketing_Riskmarketing risk information - assessing, tools for dealing with, resources for more information.

http://www.fao.org/uploads/media/3-Managing RiskInternLores.pdf Managing Risk in Farming by. David Kahan. Food and Agriculture Organization

Dr. Meenu Anand
Assistant Professor In Economics
GCW, Gharaunda (Bastara)

49

Urban And Industrial Water Management In South Haryana

Ravinder Kumar

Abstract

Water is a valuable resource as man has been using since ancient times. But due to the increasing development in the modern era, water resources are being adversely affected due to urban development and industrial development. There is a quantitative and qualitative impact on water resources due to changing land use (development of urbanization and industrialization). And this problem has remained a alarming problem for whole world, not of any one state.

Industrial development and urbanization has increased the problem of water quality in southern Haryana. The purpose of my paper is to study the impact of urban and industrial development on water resource. To make the general public and Government aware about the changing nature of water as well as share the suggestions about the management and conservation of water resources. Southern Haryana has been taken as study area. The research methods in the paper commonly depend on secondary data and some observation methods. There is an attempt to improve the changing pattern of water due to urbanization and industrialization.

Keywords:- Development , industrialization, management , technique ,urbanization ,water resource

Introduction

India is a big country which is at number 7th in terms of area and comes second in terms of population. Due to the large area and large population, inequalities are found according to the states and the regions of the country. Thus Haryana is a state located in the north west of India, which is the 21st state of India (44212 sq km) according to the area and the 18th (25,351,462) place according to the population. In order to meet the demand of the rapidly growing population and the establishment of industries after the industrial revolution along with developmental problems have arisen rapidly.

Due to the development of big industrial cities located in the southern part of Haryana, there have been some problems related to water and due to rapid urbanization and industrialization, big cities have developed in South Haryana. And due to being located in the NCR region, people keep coming to this area everyday for work, due to which the population is increasing rapidly here. The demand of water for basic items is high here consequently people here have to face water shortage problems.

Faridabad is the biggest industrial city of North India which is situated in the southern part of Haryana having many big industries e.g. Yamaha Motor Pvt. Ltd., Havells India Limited etc. Gurugram, Shona, Dharuhera, Bawal, and Manesar etc are all big industrial cities located in South Haryana where water is in high demand for industries as well as for daily uses for big population. 5 cities of South Haryana which are urban and industrial cities are Faridabad, Gurugram, Manesar, Rewari, Dharuhera and Bawal where only 30-50% of potable water is sufficient. Parameters to evaluate suitability of drinking water were saltinity, nitrate, hardness and alkalinity, due to which the potable water of South Haryana is less according to the demand.

Study area

Haryana is located in the northwest India between 27 degree 37' to 30 degree 35' latitude and between 74 degree 28' to 77 degree 36' longitude and with an altitude between700-3600 ft above sea level. The total area of Haryana is 44212 sq km. Total population of Haryana 27,388,008. (As per the Aadhar Statistics the Haryana population in 2022/2023 is 27,388,008 (27.39 Millions) as compared to last census 2011 is 25,353,081. Growth rate of 8.03 percent of population increased from year 2011 in Haryana). In south Haryana major five big industrial cites are Faridabad, Gurugram, Manesar, Rewari, Dharuhera and Bawal.

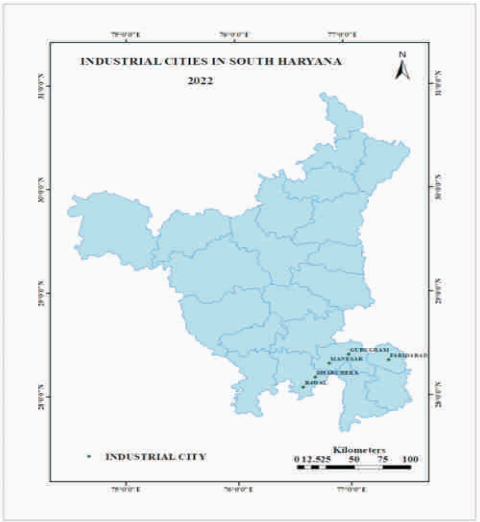

Objectives

To study the decreasing amount of water.

To bring awareness about water conservation by sharing tips

related to water management.

Data collection and Research Methodology

The study is based on secondary data taken from the topic from the related website, agencies articles, research papers and news papers and books and the descriptive method has been used.

Comparative study of Haryana with other states

According to the comparative study of the quantity of safe drinking water of Haryana in the states of India, the position of Haryana is at number 4, yet some industrial cities of the state of Haryana are facing the problem of drinking water because of the scarcity of water according to the demand of South Haryana. And the drinking water which is available also has salinity in it.

Table : 1 access to safe drinking water in household of India 2011

Rank	State	% of household with access to safe drinking water 2011
1	Punjab	97.6
2	UP	95.1
3	Bihar	94
4	Haryana	93.8
5	Himachal Pardesh	93.7

Source :- Govt. of India 2011

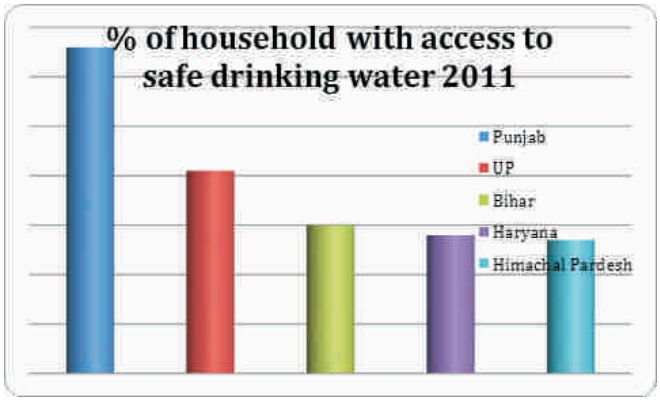

Source :- Table no 1

Comparative study with other city and minimum per capita per day (LPCD)

As per the latest reports and studies, the Ministry of Housing and Urban Affairs has suggested 135 liters per capita per day (LPCD) for urban water supply while a minimum norm of 55 LPCD has been fixed for rural areas.

Table :- 2 Per capita availability of water

City	Accessibility LPCD
Goa	343
Chandigrah	332
Gurugram	120
Rewari	110
Faridabad	130

Source :- ministry of jal shakti

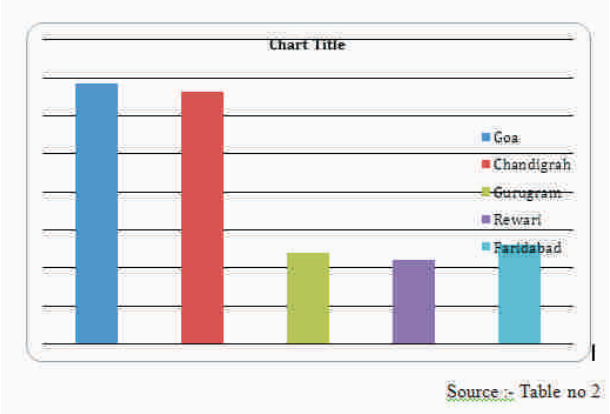

Source :- Table no 2

Water shortage in urban and industrial cities:-

Inadequacy – there is a shortage of water in the urban area as compared to earlier, which is reducing every year. In 1951, 4000 cubic meters of water was available per person per year , which decreased to 1000 cubic meters per person per year in 2011 in cites of India .

Leakage in Distribution - During the supply of water, 50% of the water gets destroyed due to pipe leakage, due to the spread of the pipe network over a large area and due to the infrastructure work done from time to time, there are leakages in the pipes.

Dependency on rain - India has to depend on rain for water, due to which there is a shortage of water, because neither the amount of rain is fixed nor the time is fixed, so there is a shortage of water due to variability of rain.

Loss the River saabi - The river Saabi, which flows in South Haryana, has now disappeared and due to which the level of ground water in the Industrial Cities of South Haryana is falling and water scarcity is increasing.

Effect of Desert - Due to its location along the Thar Desert, desertification is increasing in South Haryana and more water is consumed in irrigation. Causing water shortage.

Waste from industries - The waste from industrial cities pollutes the water and due to mixing of waste items in rivers and ponds, the water becomes unfit for use.

Water used in industries -Water is used to cool the furnaces or machines in industries, due to which a large part of the

water gets wasted. Water is required for smelting iron, which once used is not used again.

Continental arid type climate - Due to being away from the ocean and being surrounded by land, the amount of rainfall is less than the average rainfall of India, hence continent type climate is found here. And this region has a Continental arid type climate.

Water management in urban and industrial cities :-

We can save water by using some techniques related to water management and the increasing water demand can be met. And can provide protection to water.

1. Industrial waste water and domestic waste water management techniques
2. Rain Water Management Techniques
3. Water Supply Management Techniques
4. Irrigation Management Techniques
5. Management techniques related to raising the level of ground water

1. Industrial waste water and domestic waste water management techniques

Many methods can be used to purify industrial waste water.These methods are mostly used in the developed countries, we should also use them for the management of water in the urban and industrial cities of South Haryana, which are as follows:-

Reverse Osmosis - Reverse osmosis can destroy 99.9% bacteria to purify waste water in industrial process. RO systems manage waste water, as they are self-cleaning units. RO treats waste water by using pressure to force water to pass through semi-permeable membranes, removing impurities as it passes through. Reverse osmosis method is used to treat waste water thus goes.

Solids removal- Most of the solids present in the water can be removed by simple sedimentation techniques thus separating the solids and water in the form of sludge. Ultra filtration methods can be used to remove such solids.

The solids (sludge) are removed from the water by the technique of ultrafication. Oil and grease are removed from water by skimming equipment. Organisms are removed from the wastewater through an advanced oxidation process.

Apart from these, we can also contribute towards domestic waste water management. Using bucket instead of shower while taking bath, reusing water used for washing vegetables and cooking, creating a rain garden, collecting flowing water from plants.

2. Rain Water Management Techniques

To manage the waste water mixed with rain water, which we can use by collecting water from the rain in South Haryana. Water can be collected to be used in the future. Some of the major techniques used in Rain water management techniques include - Diverter, Filter, Water Butt, Pump.

Water butts are containers used to collect rain water. These are usually made of plastic.

Diverter - In most rainwater harvesting systems, water flows down a drainpipe from the roof, where it is stored. Diverters are the pipes that are used to connect the drain pipe to the water butt.

Filter - Filters usually remove contaminants such as dust, leaves, organic waste. Even if the water is not going to be used for drinking, it is useful to remove these contaminants. In some systems, a filter is provided in the diverter.

Pump - One or more pumps are usually needed to move rainwater from the water butt to the location where the water is needed. Pumps placed inside the water butt are called 'submersible pumps', while pumps placed outside are called 'non-submersible' or 'above ground pumps'.

3. Water Supply Management Techniques

Pipeline is used to deliver clean water everywhere and due to leakage in the pipe, a lot of water gets wasted, so to save water, good quality pipes should be used and they should be looked after. they should be repaired from time to time

Meter system should be used so that the wasted water can be saved and water should be made available as per the demand.

4. Irrigation Management Techniques

Modern techniques should be adopted in place of old methods used in Irrigation.

Sprinkler System - In this the nozzles are connected to the pipeline and the water is given by sprinkler or drop let method like rain which requires less water.

Drip systems have narrow pipelines and holes in them that are near the roots of the plants, from where only less water gets directly to the plants, thus the water is not wasted.

5. Management techniques related to raising the level of ground water

Underground water is pure potable water. To maintain the ground water level, to restore the runoff water to the land, to store the water back in the land through rainwater well. By reducing the fast flow, water is allowed to enter the

land by inhalation method. Water flow can be reduced by planting trees and by making dams, irrigation through canals or by building lakes also increases underground water.

Conclusion:-

Water is a valuable resource without which life is not possible and we need to manage water in view of the decreasing amount of water. Industrialization has increased very fast in these five cities of South Haryana, due to which water shortage has arisen in these cities. Due to the effect of industrialization, a large amount of water is being polluted.

So we need water management to conserve water. Thus to meet the water demand, we can manage water in urban and industrial cities to conserve, treat and save water for future generations.

References :-

https://en.wikipedia.org/wiki/Haryana

https://www.thehindu.com/features/homes-and-gardens/how-much-water-does-an-urban-citizen-need/article4393634.ece

https://www.worldometers.info/water/

Development of smart and sustainable urban infrastructures – challenges by Tapan Das

Smart water management by Gaurishankar Dubey

A report by the Central Ground Water Board (CGWB),

http://timesofindia.indiatimes.com/articleshow/58321049.cms?utm_source=contentofinterest&utm_medium=text&utm_campaign=cppst

https://examvictory.com/haryana-climate

Smart and sustainable urban water management techniques by Narender Singh

https://en.wikipedia.org/wiki/List_of_Indian_states_and_union_territories_by_access_to_safe_drinking_water

https://www.iwapublishing.com/news/industrial-wastewater-treatment

https://www.freeflush.co.uk/collections/rainwater-harvesting-systems?gclid=Cj0KCQiAyMKbBhD1ARIsANs7rEH9nZ4RzdMEaQDAR5yb1H1bacgq-8CJukH8I2bMZU04i3QRNA5ItKoaAg3nEALw_wcB

https://www.vedantu.com/biology/modern-methods-of-irrigation

https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1604871

Ravinder Kumar
Assistant Professor
Department of Geography
KLP College, Rewari
ravinderkumarn1@gmail.com

50

ਨਾਟਕ 'ਮੁਇਆਂ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ' ਦਾ ਚਿਹਨ ਪ੍ਰਬੰਧ

ਡਾ. ਸਤਪ੍ਰੀਤ ਸਿੰਘ ਜੱਸਲ

ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਦੇ ਨਾਟਕ 'ਮੁਇਆਂ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ' ਦੇ ਸਿਰਲੇਖ ਦਾ ਆਧਾਰ ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਪੰਨਾ 360 ਉੱਤੇ ਦਰਜ, ਆਸਾ ਮਹਲਾ-ਇੱਕ ਦੀ ਅਸ਼ਟਪਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਅਸਟਪਦੀ ਵਿਚ ਸਤਰ ਹੈ 'ਰਤਨ ਵਿਗਾੜਿ ਵਿਗੋਏ ਕੁਤੀ ਮੁਇਆਂ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ'। ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਨਾਟਕ ਦੇ ਸਿਰਲੇਖ ਨੂੰ ਇਕ ਚਿਹਨ ਪ੍ਰਬੰਧ ਵਜੋਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਇਸ ਨਾਟਕ ਦਾ ਨਿਕਟ ਅਧਿਐਨ ਕਰਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਇਸ ਸਿਰਲੇਖ ਦੇ ਚਿਹਨ ਦੇ ਅਰਥ ਹੋਰ ਸਪਸ਼ਟ ਰੂਪ ਵਿਚ ਉਜਾਗਰ ਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਅਸੀਂ ਦੇਖਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦਾ ਪੁੱਤਰ ਮਹਾਰਾਜਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਅਸਫਲ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਸਿੱਖ ਰਾਜ ਜਿਸ ਨੂੰ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਨੇ ਆਪਣੀ ਸੂਝ-ਬੂਝ ਨਾਲ ਬੜਾ ਹਰਮਨ ਪਿਆਰਾ ਬਣਾਇਆ ਸੀ, ਉਸਦੀ ਮੌਤ ਤੋਂ ਬਾਅਦ, ਸਹੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਾਲ ਅਗਵਾਈ ਨਾ ਹੋਣ ਕਾਰਨ, ਤਬਾਹ ਹੋ ਗਿਆ। ਇਸ ਨਾਟਕ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਵਿਚ ਵਿਚ ਸੇਖੋਂ ਲਿਖਦਾ ਹੈ ''ਇਹ ਨਾਟਕ 'ਮੁਇਆਂ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ' ਪੰਜਾਬੀ ਕੌਮ ਦੀ ਖੋਹ ਚੁੱਕੀ ਸਵਤੰਤਰਤਾ ਦਾ ਦੁਖਾਂਤ ਹੈ। .....ਇਸ ਦੁਖਾਂਤ ਦਾ ਸਾਰੰਸ਼ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਮਰ ਰਹੀ ਕੌਮ ਦੇ ਆਗੂਆਂ ਨੂੰ ਅਹਿਸਾਸ ਤੱਕ ਨਹੀਂ ਸੀ ਕਿ ਉਹ ਇਕ ਕੌਮ ਬਣਕੇ ਮਰ ਰਹੇ ਹਨ। ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਇਹ ਸਾਰ ਹੁਣ ਵੀ ਨਹੀਂ। ''ਇਸ ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਸੇਖੋਂ ਨੇ ਮਹਾਰਾਜਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੀ ਜੀਵਨ ਕਹਾਣੀ ਨੂੰ ਚਿਤਰਨ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ ਹੈ।

ਮੁਇਆਂ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ ਦਾ ਨਾਟਕੀ-ਵਿਨਿਆਸਕ੍ਰਮ

ਪਹਿਲੇ ਅੰਕ ਦਾ ਕਾਰਜ ਲੰਡਨ ਦੇ ਮਜਿਸਟਿਕ ਹੋਟਲ ਦੇ ਇਕ ਅਲੀਸ਼ਾਨ ਕਮਰੇ ਵਿਚ ਵਾਪਰਦਾ ਹੈ। ਸੋਲਾਂ ਸਾਲਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਲੇਡੀ ਲੋਗਨ ਗੱਲਾਂ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ। ਕਾਰਜ ਦਿਨ ਢਲੇ ਸਮੇਂ ਦਾ ਹੈ। ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ, ਨਾਟਕ ਦੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਚਿਹਨ ਨੂੰ ਨਾਟਕ ਦੀ ਵਸਤੂ ਸਮੱਗਰੀ ਦੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਇਸ ਚਿਹਨ ਤੋਂ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸਿੱਖ ਕੌਮ, ਜਿਹੜੀ ਕਿ ਕਿਸੇ ਵੇਲੇ, ਰਾਜ ਵਿਚ ਸਿਖਰ ਉੱਤੇ ਸੀ ਅਤੇ ਹੁਣ ਉਸ ਦੀ ਢਹਿੰਦੀ ਕਲਾ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਗਈ ਹੈ। ਇਸ ਢਹਿੰਦੀ ਕਲਾ ਨੂੰ ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਆਉਣ ਵਾਲਾ ਸਮਾਂ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਦੀ ਢਹਿੰਦੀ ਕਲਾ ਦਾ ਸਮਾਂ ਹੈ। ਜੋ ਕਿ ਬਦਸ਼ਗਨੀ ਦਾ ਚਿਹਨ ਹੈ। ਪੰਜਾਬੀ ਕੌਮ ਦੀ ਸੁਤੰਤਰਤਾ ਦਾ ਸੂਰਜ ਡੁੱਬ ਰਿਹਾ ਹੈ ਅਤੇ ਪੰਜਾਬ ਗੁਲਾਮੀ ਵਾਲੇ ਕਾਲੇ ਬੱਦਲਾਂ ਵਿਚ ਘਿਰਦਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਤੇ ਲੇਡੀ ਲੋਗਨ ਕੋਹਿਨੂਰ ਹੀਰੇ ਬਾਰੇ ਜ਼ਿਕਰ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਲੇਡੀ ਲੋਗਨ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਤੈਨੂੰ ਕੋਹਿਨੂਰ ਹੀਰਾ ਦਿਖਾਉਣ ਨਾਲ ਤੇਰੇ ਮਨ ਵਿਚ ਪੁਰਾਣੀਆਂ ਯਾਦਾਂ ਤੇ ਹਸਰਤਾਂ ਜਾਗ ਸਕਦੀਆਂ ਹਨ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਤੋਂ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਪੰਜਾਬ ਤੇ ਭਾਰਤ ਨੂੰ ਨਫਰਤ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹ ਕੇਵਲ ਇੰਗਲੈਂਡ ਤੇ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਕੌਮ ਨੂੰ ਹੀ ਪਿਆਰ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਚਿਹਨ ਉਸ ਉੱਪਰ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਸਾਮਰਾਜ ਦੇ ਪਏ ਪ੍ਰਭਾਵ ਦਾ ਨਤੀਜਾ ਹੈ। ਕੋਹਿਨੂਰ ਬੜਾ ਅਨਮੋਲ ਹੀਰਾ ਹੈ, ਜੋ ਕਿ ਰਾਜ ਅਧਿਕਾਰ ਦਾ ਚਿਹਨ ਹੈ। ਤਾਂ ਇਹ ਸੰਭਵ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਦੀ ਮਲਕੀਅਤ ਵੱਧ ਤਾਕਤ ਵਰ ਤੇ ਕਾਬਜ ਧਿਰ ਕੋਲ ਹੋਵੇਗੀ ਅਤੇ ਗੁਲਾਮ ਤੇ ਘੱਟ ਤਾਕਤਵਰ ਧਿਰ ਨੂੰ ਮਜਬੂਰ ਵਸ ਇਹ ਹਾਕਮ ਧਿਰ ਨੂੰ ਦੇਣਾ ਪਏਗਾ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕੋਹਿਨੂਰ ਹੀਰਾ ਲੰਬਾ ਸਮਾਂ ਦੇਸੀ ਤੇ ਬਦੇਸੀ ਹਾਕਮਾਂ ਦੀ ਸ਼ਾਨ ਵਧਾਉਂਦਾ ਤੇ ਸਫਰ ਕਰਦਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਮਰ ਰਿਹਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਕੋਹਿਨੂਰ ਹੀਰੇ ਨੂੰ ਖੁਦ ਮਹਾਰਾਣੀ ਵਿਕਟੋਰੀਆ ਨੂੰ ਭੇਂਟ ਕਰਨ ਦੀ ਇੱਛਾ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਹੀਰੇ ਨੂੰ ਖੋਹਣ ਦੀ ਪਰੰਪਰਾ ਨੂੰ ਤੋੜਨਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਪੰਜ ਕੁ ਸਾਲ ਮਗਰੋਂ ਕਲਕੱਤੇ ਦੇ ਇਕ ਹੋਟਲ ਵਿਚ ਨਾਟਕ ਦੇ ਦੂਜੇ ਅੰਕ ਦਾ ਕਾਰਜ ਵਾਪਰਦਾ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ, ਭਾਈ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਤੇ ਮਿਸਟਰ ਕਰੁਕ ਦੇ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਨਾਟਕੀ ਕਾਰਜ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੀ ਉਮਰ ਵੀਹ ਕੁ ਸਾਲ ਹੈ। ਭਾਈ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦਾ ਰਿਸ਼ਤੇਦਾਰ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਦਾ ਨੇਪਾਲ ਵਿਚ ਸ਼ਿਕਾਰ ਖੇਡਣ ਦਾ ਮਨ ਹੈ ਅਤੇ ਉੱਥੇ ਸ਼ੇਰ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਕਰਨ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਜੀਅ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੇ ਇਹ ਭਾਵ ਉਸਦੀ ਮਹਾਰਾਜਿਆਂ ਵਾਲੀ ਸੋਚ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਚਿਹਨ ਹਨ। ਇਹ ਵੀ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮਹਾਰਾਜਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਵਿਚੋਂ ਮਹਾਰਾਜਿਆਂ ਵਾਲਾ ਮਾਦਾ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮਰਿਆ ਨਹੀਂ। ਮਹਾਰਾਣੀ ਜਿੰਦਾ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਜੋ ਰੁਹਤਾਸ ਦੀ ਕੈਦ ਵਿਚੋਂ ਨੇਪਾਲ ਪਹੁੰਚ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਦਸਦਾ ਹੈ ਕਿ ਰਾਜ-ਮਾਤਾ ਸ਼ੇਰੇ ਪੰਜਾਬ ਵੱਡੀ ਸਰਕਾਰ ਦੀ ਮਹਾਰਾਣੀ ਸਨ।

ਸੰਤ ਸਿੰਘ: ...ਰਾਜ ਮਾਤਾ ਓੜਕ ਸ਼ੇਰੇ ਪੰਜਾਬ ਵੱਡੀ ਸਰਦਾਰ ਦੀ ਮਹਾਰਾਣੀ ਸਨ। ਉਹ ਰੁਹਤਾਸ ਦੇ ਕਿਲ੍ਹੇ ਵਿਚ ਬੰਦ ਕੈਦੀਆਂ ਵਾਕਰ ਰਹਿਣਾ ਕਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਹਿਣ ਕਰਦੇ ਸਨ? (ਅੰਗਰੇਜ਼ ਵੱਲ ਤੱਕ ਕੇ) ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਨੇਪਾਲ ਜਾਣ ਦਾ ਹੋਰ ਕੋਈ ਰਾਜਸੀ ਮਨੋਰਥ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਸਾਹਿਬ ਬਹਾਦਰਾ! (ਪੰਨਾ-20)

'ਸ਼ੇਰੇ ਪੰਜਾਬ' ਤੇ 'ਵੱਡੀ ਸਰਕਾਰ' ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਲਈ ਵਰਤੇ ਗਏ ਚਿਹਨ ਹਨ, ਜੋ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਸ਼ਖਸੀਅਤ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਤੋਂ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੀ ਸ਼ਕਤੀਸ਼ਾਲੀ, ਪ੍ਰਭਾਵਸ਼ਾਲੀ ਤੇ ਸਤਿਕਾਰ ਯੋਗ ਦਿੱਖ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਅੰਗਰੇਜ਼ ਅਧੀਕਾਰੀ ਕਰੁਕ ਦੇ ਕਹਿਣ ਤੇ ਮਹਾਰਾਣੀ ਜਿੰਦਾ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਨਾਲ ਇੰਗਲੈਂਡ ਲੈ ਜਾਣ ਦੀ ਇੱਛਾ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਸ਼ੇਰੇ ਪੰਜਾਬ ਦੀਆਂ ਨਿਸ਼ਾਨੀਆਂ ਦੇ ਖੁਸ ਜਾਣ ਦਾ ਦੁੱਖ ਹੈ। ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਨੇਪਾਲ ਭਾਵੇਂ ਇਹ ਇਕ ਸੁਤੰਤਰ ਰਾਜ ਹੈ ਪਰ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ ਹੀ ਹੈ। ਨੇਪਾਲ ਜਾਣ ਲਈ ਸਮੁੰਦਰ ਵੀ ਨਹੀਂ ਪਾਰ ਕਰਨਾ ਪੈਂਦਾ। ਰਾਜ ਮਾਤਾ ਸਮੁੰਦਰ

ਪਾਰ ਕਰਨ ਨੂੰ ਭਾਵੇਂ ਨਾ ਮੰਨਣ ਸਮੁੰਦਰ ਪਾਰ ਕਰਨਾ ਚਿਹਨ ਤਤਕਾਲੀਨ ਭਾਰਤੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਚਿਹਨ ਹੈ, ਜਿਸ ਤਹਿਤ ਸਮੁੰਦਰ ਪਾਰ ਕਰਨਾ ਇਕ ਵਰਜਣਾ ਹੈ। ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਹਾਲੇ ਅਟਾਰੀ ਵਾਲੇ ਸਰਦਾਰ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਜਵਾਈ ਬਣਾਉਨ ਲਈ ਤਿਆਰ ਨਹੀਂ ਹਨ। ਇੱਥੇ ਹੀ ਇਹ ਵੀ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੇ ਈਸਾਈ ਧਰਮ ਅਪਣਾ ਲਿਆ ਹੈ ਉਹ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਸਰਕਾਰ ਦਾ ਪੱਕਾ ਵਫਾਦਾਰ ਬਣ ਗਿਆ ਹੈ।

ਤੀਜੇ ਅੰਕ ਦਾ ਕਾਰਜ ਕਲਕੱਤੇ ਦੇ ਇਕ ਹੋਟਲ ਦੇ ਕਮਰੇ ਵਿਚ ਵਾਪਰਦਾ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਕਮਰੇ ਵਿਚ ਇੱਕਲਾ ਹੀ ਤੁਰ-ਫਿਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਉਸਦੀ ਇਕੱਲਤਾ ਵਿਚ ਅਸੰਤੁਲਨ ਸਥਿਤੀ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਉਹ ਕਦੇ ਤੁਰਨ ਲੱਗ ਪੈਂਦਾ ਹੈ ਤੇ ਕਦੇ ਬੈਠ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਚਿਹਨ ਉਸਦੀ ਮਾਨਸਿਕ ਅਸਥਿਰਤਾ, ਬੇਚੈਨੀ ਚਿੰਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਕਰਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਭਾਵਨਾਤਮਕ ਉਥਲ-ਪੁਥਲ ਦੀ ਪੁਸ਼ਟੀ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਕਈ ਵਰ੍ਹਿਆਂ ਬਾਅਦ, ਈਸਾਈ ਰੂਪ ਵਿਚ, ਆਪਣੀ ਮਾਂ ਮਹਾਰਾਣੀ ਜਿੰਦਾ ਨੂੰ ਮਿਲਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਮਿਲਣੀ ਸਮੇਂ ਮਹਾਰਾਣੀ ਵੀ ਕਮਰੇ ਵਿਚ ਕਾਹਲੀ ਨਾਲ ਦਾਖਲ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹ ਇਧਰ ਉਧਰ ਦੇਖਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਚਿਹਨ ਤੋਂ ਪ੍ਰਗਟ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮਹਾਰਾਣੀ ਵੀ ਬੇਚੈਨ ਅਵਸਥਾ ਵਿਚ ਹੈ ਅਤੇ ਕਿਸੇ ਕੀਮਤੀ ਚੀਜ ਦੀ ਤਲਾਸ਼ ਵਿਚ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਕਿ ਉਸ ਦਾ ਪੁੱਤਰ ਉਸਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਹੈ, ਪਰ ਉਹ ਉਸ ਨੂੰ ਸਿਆਣ ਨਹੀਂ ਸਕੀ ਕਿਉਂਕਿ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੇ ਵਾਲ ਕਟਾ ਲਏ ਸਨ। ਆਪਣੇ ਪੁੱਤਰ ਦੇ ਕੱਟੇ ਹੋਏ ਵਾਲਾਂ ਨੂੰ ਦੇਖ ਕੇ ਉਹ ਬਹੁਤ ਦੁਖੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਉਸ ਨੂੰ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਦੇ ਪੁੱਤ ਦਾ ਅਜਿਹਾ ਕਰਨਾ ਉਸ ਲਈ ਅਤੇ ਹਰੇਕ ਸਿੱਖ ਲਈ ਬਦਸ਼ਗਨੀ ਦਾ ਚਿਹਨ ਬਣ ਗਿਆ ਹੈ।

ਨਾਟਕ ਦੇ ਚੌਥੇ ਅੰਕ ਦਾ ਕਾਰਜ ਬੰਬਈ ਦੇ ਇਮਪੀਰਅਲ ਹੋਟਲ ਵਿਚ ਵਾਪਰਦਾ ਹੈ। ਜਿੱਥੇ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ, ਭਾਈ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਤੇ ਬੰਗਾਲੀ ਮੁਕਰਜੀ ਖਾਣਾ ਖਾ ਰਹੇ ਹਨ ਅਤੇ ਨਾਲ ਹੀ ਵਿਚਾਰਾਂ ਵੀ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ। ਮੁਕਰਜੀ ਦੀ ਗੱਲਬਾਤ ਤੋਂ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮਹਾਰਾਣੀ ਜਿੰਦਾ ਦੀ ਮੌਤ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਹੈ ਤੇ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਫੁੱਲ ਹਰਿਦੁਆਰ ਪਾਉਣ ਲਈ ਆਇਆ ਹੈ। ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਇਹ ਕਾਰਜ ਸਵੇਰ ਦੇ ਸਮੇਂ ਦਾ ਦਿਖਾਇਆ ਹੈ ਜਿਸ ਤੋਂ ਇਹ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਕੋਈ ਸਾਰਥਿਕ ਬਦਲਾਵ ਤੇ ਸ਼ੁਭ ਸ਼ਗਨ ਦਾ ਸੰਕੇਤ ਹੈ। ਇੱਥੇ ਹੀ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦਾ ਨਿਸਚਾ ਇਸਾਈ ਧਰਮ ਵਿਚੋਂ ਉੱਠ ਚੁੱਕਾ ਹੈ। ਮੁਕਰਜੀ ਸਿੱਖ ਸਰਦਾਰਾਂ ਦੀਆਂ ਗਤੀਵਿਧੀਆਂ ਤੇ ਸ਼ੰਕਾ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹ ਮਹਾਰਾਜ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਰਾਜ ਵਾਪਸ ਲੈਣ ਦੀ ਸਲਾਹ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਮੁਕਰਜੀ ਭਾਈ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਬਗਾਵਤ ਲਈ ਵੀ ਪ੍ਰੇਰਦਾ ਹੈ।

ਪੰਜਵੇਂ ਅੰਕ ਵਿਚ ਵਿਖਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਕਿਸੇ ਬੰਬਾ ਨਾਮ ਦੀ ਲੜਕੀ ਵੱਲ ਮੋਹਿਤ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਕਾਹਰਾ ਸ਼ਹਿਰ ਦੇ ਲਾਗੇ ਘਾਹ ਦੇ ਮੈਦਾਨ ਉਪਰ ਬੈਠਾ ਹੈ ਅਤੇ ਬੰਬਾ ਨਾਮ ਦੀ ਲੜਕੀ ਉਸ ਕੋਲ ਪਈ ਹੈ। ਇਹਨਾਂ ਦੋਵਾਂ ਦੀਆਂ ਗੱਲਾਂ ਤੋਂ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਦੋਵੇਂ ਇਕ ਦੂਜੇ ਨੂੰ ਪਿਆਰ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਬੰਬਾ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਪਿਤਾ ਸ਼ੇਰੇ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਸ਼ਖਸੀਅਤ ਬਾਰੇ ਦਸਦਾ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਇਹ ਵੀ ਦਸਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮੇਰਾ ਪਿਤਾ ਜਿੱਥੇ ਵੀ ਜਾਂਦਾ ਸੀ, ਲੋਕ ਉਸ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਬਣਾ ਲੈਂਦਾ ਸਨ ਪਰ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਨੂੰ ਉਹ ਆਪਣਾ ਨਾ ਬਣਾ ਸਕਿਆ ਕਿਉਂਕਿ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਉੱਪਰ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਦਾ ਕਬਜ਼ਾ ਸੀ ਅਤੇ ਇਸੇ ਗੱਲ ਵਿਚ ਹੀ ਉਸਦੀ ਬਦਕਿਸਮਤੀ ਦਾ ਭੇਦ ਛੁਪਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਇਹ ਵੀ ਦਿਖਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਨੇ ਸ਼ੇਰੇ ਪੰਜਾਬ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਚਾਲਾਂ ਚੱਲ ਕੇ ਧੋਖੇ ਨਾਲ ਪੰਜਾਬ ਉੱਤੇ ਕਬਜ਼ਾ ਕਰ ਲਿਆ ਸੀ ਅਤੇ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਹੱਥ ਦੀ ਕੱਠਪੁਤਲੀ ਬਣ ਕੇ ਰਹਿ ਗਿਆ ਸੀ। ਇਹਨਾਂ ਘਟਨਾਵਾਂ ਦੇ ਪਰਿਪੇਖ ਵਿਚ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੀ ਬਦਕਿਸਮਤੀ ਦਾ ਚਿਹਨ ਉਜਾਗਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦਸਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਬਾਦਸ਼ਾਹ ਦਾ ਮੰਗਤਾ ਪੁੱਤਰ ਹੈ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੇ ਖੁਦ ਲਈ ਮੰਗਤੇ ਦਾ ਚਿਹਨ ਵਰਤਿਆ ਹੈ, ਜਿਸ ਨੂੰ ਗੁਜਾਰੇ ਲਈ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਦੇ ਹੱਥ ਵੱਲ ਵੇਖਣਾ ਪਿਆ ਹੈ। ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਇੱਥੇ ਹੀ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਵਲੋਂ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਛਕਣ ਬਾਰੇ ਜਾਣਕਾਰੀ ਮਿਲਦੀ ਹੈ।

ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ: ਹਾਂ ਉਥੇ ਅਦਨ ਸਾਡਾ ਜਹਾਜ਼ ਤਿੰਨ ਦਿਨ ਠਹਿਰਿਆ। ਕੁਝ ਸਿੱਖ ਸਿਪਾਹੀਆਂ ਨੂੰ ਮੇਰੇ ਓਥੇ ਹੋਣ ਦਾ ਪਤਾ ਲੱਗਾ ਤਾਂ ਉਹ ਦੂਜੇ ਦਿਨ ਮੈਨੂੰ ਮਿਲਣ ਆ ਗਏ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਚੋਰੀ ਮੈਨੂੰ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਛਕਾ ਕੇ ਫਿਰ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿਚ ਪਰਵੇਸ਼ ਕਰਵਾ ਦੇਣ ਲਈ ਆਖਿਆ ਤੇ ਤੀਜੇ ਦਿਨ ਸਵੇਰੇ ਮੈਨੂੰ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਛਕਾ ਦਿੱਤਾ। (ਪੰਨਾ-69)

ਬੰਬਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੇ ਸਿੱਖੀ ਸਰੂਪ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਸਾ ਕਰਦੀ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਤੂੰ ਮੈਨੂੰ ਇਸ ਰੂਪ ਵਿਚ ਵੀ ਬਹੁਤ ਵਧੀਆ ਲਗੇਗਾ ਪਰ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਜਾਪਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸਦਾ ਇਹ ਸਰੂਪ ਅੰਗਰੇਜ਼ ਮਾਲਕਾਂ ਨੂੰ ਜ਼ਰੂਰ ਚਿੜਾਏਗੀ ਕਿਉਂਕਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਛਕਣਾ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੀ ਮੁੱਢਲੀ ਤੇ ਮਹੱਤਵਪੂਰਣ ਰਸਮ ਹੈ।

ਛੇਵੇਂ ਅੰਕ ਦਾ ਕਾਰਜ ਮਾਸਕੋ ਗਜ਼ਟ ਦਫਤਰ ਦੇ ਇਕ ਕਮਰੇ ਵਿਚ 1887 ਈਸਵੀ ਵਿਚ ਵਾਪਰਦਾ ਦਿਖਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਇਸ ਕਮਰੇ ਵਿਚ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ, ਮਾਸਕੋ ਗਜ਼ਟ ਦਾ ਐਡੀਟਰ ਸੋਲਿੰਸਕੀ ਤੇ ਰੂਸੀ ਜਰਨੈਲ ਓਕੋਨੋਫ ਵੀ ਬੈਠੇ ਹਨ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੀ ਉਮਰ ਪੰਜਾਹ ਸਾਲ ਦੀ ਹੋ ਗਈ ਹੈ ਪਰ ਕਮਜ਼ੋਰੀ ਕਰਕੇ ਉਹ ਆਪਣੀ ਉਮਰ ਤੋਂ ਪੰਦਰਾਂ ਵੀਹ ਸਾਲ ਵੱਡਾ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਸਰੀਰ ਦੇ ਪ੍ਰਗਟਾਵੇ ਦੇ ਇਸ ਚਿਹਨ ਤੋਂ ਪ੍ਰਗਟ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਸਰੀਰਿਕ ਤੇ ਮਾਨਸਿਕ ਕਸ਼ਟ ਵਿਚੋਂ ਗੁਜ਼ਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਨੂੰ ਸਬਕ ਸਿਖਾਉਣ ਲਈ ਸਹਾਇਤਾ ਮੰਗਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਨੂੰ ਲੋਹੇ ਦੇ ਚਨੇ ਚਬਾਉਣਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਚਿਹਨ ਤੋਂ ਸਪਸ਼ਟ ਹੈ ਕਿ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੇ ਮਨ ਵਿਚ ਬਦਲੇ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਪ੍ਰਤੀ ਰੋਸ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਵੀ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਪਰ

ਸੋਲਿੰਸਕੀ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮਹਾਰਾਜਾ ਤੇਰੀ ਕੌਮ ਵਿਚ ਸੁਤੰਤਰਤਾ ਦੀ ਇੱਛਾ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਏਸ਼ੀਆਈ ਕੌਮਾਂ ਵਿਚ ਸੁਤੰਤਰਤਾ ਦੀ ਚਾਹ ਨਾ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਇਹ ਧਾਰਮਿਕ ਮੁਦਿਆਂ ਵਿਚ ਹੀ ਉਲਝੀਆਂ ਰਹਿੰਦੀਆਂ ਸਨ। ਰਾਜਸੀ ਚੇਤਨਾ ਤੋਂ ਬਗੇਰ ਸਰਦਾਰ ਵੀ ਗੱਦਾਰੀ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਸੋਲਿੰਸਕੀ ਸਲਾਹ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮਹਾਰਾਜ ਤੈਨੂੰ ਤੇਰੀ ਕੌਮ ਪਾਸੋਂ ਹੀ ਆਰਥਿਕ ਮੱਦਦ ਮਿਲੇਗੀ :

ਸੋਲਿੰਸਕੀ: ਉਹ ਰੁਪਇਆ ਤੈਨੂੰ ਤੇਰੀ ਕੌਮ ਪਾਸੋਂ ਹੀ ਮਿਲੇਗਾ। (ਪੰਨਾ-75)

ਸੱਤਵੇਂ ਅੰਕ ਦਾ ਕਾਰਜ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਦੇ ਇਕ ਵੱਡੇ ਸਰਦਾਰ ਦੀ ਕੋਠੀ ਵਿਚ ਵਾਪਰਦਾ ਹੈ। ਜਿੱਥੇ ਸਰਦਾਰਾਂ ਦੀ ਇਕ ਇਕੱਤਰਤਾ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ ਜਿਸ ਦੀ ਪ੍ਰਧਾਨਗੀ ਲੈਫਟੀਨੈਂਟ ਗਵਰਨਰ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੇ ਇਹ ਇਕੱਤਰਤਾ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਸਰਦਾਰਾਂ ਤੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਲਿਖੀਆਂ ਚਿੱਠੀਆਂ ਦੇ ਸਬੰਧ ਵਿਚ ਬੁਲਾਈ ਹੈ। ਸਰਦਾਰ ਤਾਂ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਸਰਕਾਰ ਪ੍ਰਤੀ ਵਫਾਦਾਰੀ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦੇ ਹਨ, ਜਿਸ ਤੋਂ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਸਵਾਰਥੀ, ਲਾਲਚੀ ਤੇ ਵਿਲਾਸੀ ਕਿਰਦਾਰ ਦਾ ਪਤਾ ਚਲਦਾ ਹੈ। ਲੈਫਟੀਨੈਂਟ ਗਵਰਨਰ ਤਾਂ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮਹਾਰਾਜਾ ਦਲੀਪ ਸਿਘ ਨੂੰ ਰੂਸੀਆਂ ਨੇ ਵਰਗਲਾ ਕੇ ਬਗਾਵਤ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ ਅਤੇ ਚਿੱਠੀਆਂ ਵਿਚੋਂ ਵੀ ਮਹਾਰਾਜਾ ਦੀ ਆਤਮਾ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਹੋਰਨਾਂ ਦੀ ਸ਼ਰਾਰਤ ਬੋਲਦੀ ਹੈ। ਸਰਦਾਰ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਦੀਆਂ ਸਿਫਤਾਂ ਕਰਦੇ ਨਹੀਂ ਥੱਕਦੇ । ਇਕ ਸਰਦਾਰ ਤਾਂ ਇਹ ਵੀ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਸਾਮਰਾਜ ਵਿਚ ਸ਼ੀਂਹ ਤੇ ਬੱਕਰੀ ਇਕ ਘਾਟ ਤੇ ਹੀ ਪਾਣੀ ਪੀਂਦੇ ਹਨ। ਪਰ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਉਸ ਦੀ ਇਸ ਗੱਲ ਨੂੰ ਅੰਗਰੇਜ਼ ਅਧਿਕਾਰੀ ਦੇ ਹਵਾਲੇ ਨਾਲ ਕੱਟਦਾ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਪਾਣੀ ਤਾਂ ਕੇਵਲ ਸ਼ੀਂਹ ਹੀ ਪੀਂਦਾ ਹੈ ਪਰ ਬੱਕਰੀ ਕੋਲ ਖੜੀ ਵੇਖਦੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ:

ਸੰਤ ਸਿੰਘ: ਆਖੇ ਪਾਣੀ ਫਿਰ ਸ਼ੀਂਹ ਹੀ ਪੀਂਦਾ ਹੋਵੇਗਾ, ਬੱਕਰੀ ਕੋਲ ਖਲੋਡੀ ਵੇਖਦੀ ਹੋਵੇਗੀ। (ਪੰਨਾ-77)

ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਇੱਥੇ ਸ਼ੀਂਹ ਤੇ ਬੱਕਰੀ ਦਾ ਚਿਹਨ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਤੇ ਗੁਲਾਮ ਭਾਰਤੀਆਂ ਦੇ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਵਰਤਿਆ ਹੈ। ਸਰਦਾਰ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਪ੍ਰਤੀ ਵਫਾਦਾਰੀ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਨ ਲਈ ਇਹ ਭਾਵੁਕ ਟਿੱਪਣੀ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਅੰਗਰੇਜ਼ ਅਧਿਕਾਰੀਆਂ ਲਈ ਇਹ ਟਿੱਪਣੀ ਕੀ ਪਾਣੀ ਤਾਂ ਸ਼ੀਂਹ ਹੀ ਪੀਂਦਾ ਹੋਵੇਗਾ ਤੇ ਬੱਕਰੀ ਤਾਂ ਕੋਲ ਖਲੋਤੀ ਹੋਵੇਗੀ, ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਦੀ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਨੂੰ ਨੀਵੇਂ ਤੇ ਗੁਲਾਮ ਸਮਝਣ ਦੀ ਬਿਰਤੀ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਲੈਫਟੀਨੈਂਟ ਗਵਰਨਰ ਆਪਣੇ ਭਾਸ਼ਣ ਵਿਚ ਐਨਾ ਘਬਰਾਅ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਵਾਰ-ਵਾਰ ਪਾਣੀ ਪੀਂਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਚਿਹਨ ਉਸ ਦੀ ਬੇਚੈਨੀ ਤੇ ਘਬਰਾਹਟ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਸਰਦਾਰਾਂ ਵਲੋਂ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਇੱਕ ਚਿੱਠੀ ਗਿਆਨੀ ਬ੍ਰਹਮ ਸਿੰਘ ਰਾਹੀਂ ਲਿਖੀ ਅਤੇ ਪੜ੍ਹੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਚਿੱਠੀ ਲਈ ਸਾਰੇ ਸਰਦਾਰਾਂ ਦੀ ਸਹਿਮਤੀ ਲਈ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਚਿੱਠੀ ਰਾਹੀਂ ਮਹਾਰਾਜਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਬਗਾਵਤ ਕਰਨ ਤੋਂ ਵਰਜਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮਹਾਰਾਣੀ ਤੋਂ ਮੁਆਫੀ ਮੰਗਣ ਲਈ ਸਲਾਹ ਦਿੱਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।

ਅੱਠਵੇਂ ਐਕਟ ਵਿਚ ਵਿਖਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਪੈਰਿਸ ਦੇ ਇਕ ਹੋਟਲ ਵਿਚ ਮਹਾਰਾਜਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਪਿਆ ਹੈ,ਜਿਹੜਾ ਕਿ ਤਪਦਿਕ ਦਾ ਰੋਗੀ ਹੋ ਚੁਕਿੱਆ ਹੈ। ਇਸ ਅਵਸਥਾ ਦਾ ਸਾਰਾ ਦੋਸ਼ ਉਹ ਆਪਣੀ ਕਮਜ਼ੋਰੀ ਅਤੇ ਆਪਣੀ ਕਿਸਮਤ ਨੂੰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਵਿਕਟਰ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਤੁਹਾਡੀ ਕੌਮ ਬਚਪਨੇ ਵਿਚ ਹੈ। ਇੱਥੇ ਹੀ ਇਹ ਪਤਾ ਲਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਰਾਣੀ ਬੰਬਾ ਦੀ ਮੌਤ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਹੈ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੀ ਦੂਜੀ ਪਤਨੀ ਐਨਟ ਵੈ ਉਸ ਦੇ ਕੋਲ ਬੈਠੀ ਹੈ। ਐਨਟ ਨੂੰ ਪਛਤਾਵਾ ਹੈ ਕਿ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੇ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਹੁਣ ਉਸਦੀ ਸਿਹਤ ਸਾਥ ਨਹੀਂ ਦੇ ਰਹੀ। ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਵੀ ਵਿਕਟਰ ਨੂੰ ਆਖਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਉਸ ਦੀ ਕੌਮ ਦੀ ਵਾਗਡੋਰ ਸੰਭਾਲ ਲਵੇ। ਵਿਕਟਰ ਜਵਾਬ ਦੇ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਵਿਅੰਗ ਕਸਦਾ ਹੈ ਕਿ ਜੇ ਮੇਰੀ ਮਾਂ ਪੰਜਾਬਣ ਹੁੰਦੀ ਅਤੇ ਮੈਂ ਬਚਪਨ ਵਿਚ ਪੰਜਾਬ ਵਿਚ ਰਿਹਾ ਹੁੰਦਾ। ਤਾਂ ਮੈਂ ਇਹ ਕੰਮ ਕਰ ਸਕਦਾ ਸੀ ਪਰ ਇਸ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਮੈਨੂੰ ਤੇਰੀ ਕੌਮ ਨੇ ਪ੍ਰਵਾਨ ਨਹੀਂ ਕਰਨਾ। ਰਾਣੀ ਨੂੰ ਇਹ ਗੱਲ ਚੰਗੀ ਨਹੀਂ ਲਗਦੀ ਇਸ ਲਈ ਉਹ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੀ ਸਿਹਤ ਲਈ ਇਹ ਗੱਲਾਂ ਠੀਕ ਨਹੀਂ ਹਨ ਤਾਂ ਵਿਕਟਰ ਕਹਿ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਇਹਨਾਂ ਦੀ ਸਿਹਤ ਲਈ ਤਾਂ ਹੋਰ ਵੀ ਕੋਈ ਗੱਲ ਠੀਕ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਇਹ ਸਥਿਤੀ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਦੀ ਨਾਜੁਕ ਸਥਿਤੀ ਦਾ ਚਿਹਨ ਹੈ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਦਲੀਪ ਸਿੰਘ ਅਕਾਲ ਚਲਾਣਾ ਕਰ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮਾਹੌਲ ਭਾਵੁਕ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਮਹਾਰਾਣੀ ਵਿਕਟਰ ਨੂੰ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਜੇਕਰ ਮੇਰਾ ਪੁੱਤਰ ਹੁੰਦਾ ਤਾਂ ਮੈਂ ਉਸ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬ ਵਿਚ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਲਈ ਜ਼ਰੂਰ ਭੇਜ ਦਿੰਦੀ।

'ਮੁਇਆਂ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ' ਦੀਆਂ ਸਹਿਚਾਰੀ ਅਰਥ-ਇਕਾਈਆਂ

'ਮੁਇਆਂ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ' ਨਾਟਕ ਦੀਆਂ ਸਹਿਚਾਰੀ ਅਰਥ-ਇਕਾਈਆਂ ਦੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿਚ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਇਸ ਨਾਟਕ ਦੇ ਸਿਰਲੇਖ ਸਾਡਾ ਧਿਆਨ ਖਿਚਦਾ ਹੈ। ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਇਸ ਨਾਟਕ ਦਾ ਸਿਰਲੇਖ ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਆਸਾ ਘਰ ਛੇਵਾਂ ਮਹਲਾ ਪਹਿਲਾ (ਪੰਨਾ:360) ਵਿਚ ਦਰਜ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਸਿਰਜਿਆ ਹੈ। ਡਾ. ਰਤਨ ਸਿੰਘ ਜੱਗੀ (1970:227) ਅਨੁਸਾਰ "ਜਦੋਂ 1521 ਈਸਵੀ ਵਿਚ ਬਾਬਰ ਰਾਹੀਂ ਐਮਨਾਬਾਦ ਤੇ ਹੱਲਾ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਸੀ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਸ ਬਾਣੀ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਉਸ ਸਮੇਂ ਕੀਤੀ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਲਿਖਿਆ ਖੁਰਾਸਾਨ ਖਸਮਾਨਾ ਕੀਆ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨੁ ਡਰਾਇਆ॥ ਆਪੈ ਦੋਸੁ ਨਾ ਦੇਈ ਕਰਤਾ ਜਮੁ ਕਰਿ ਮੁਗਲੁ ਚੜਾਇਆ॥ ਏਤੀ ਮਾਰ ਪਈ ਕਰਲਾਣੇ ਤੈਂ ਕੀ ਦਰਦੁ ਨ ਆਇਆ॥ ਕਰਤਾ ਤੂੰ ਸਭਨਾ ਕਾ ਸੋਈ॥ ਜੇ ਸਕਤਾ ਸਕਤੇ ਕਉ ਮਾਰੇ ਤਾ ਮਨਿ ਰੋਸੁ ਨ ਹੋਈ॥ ਸਕਤਾ ਸੀਹੁ ਮਾਰੇ ਪੈ ਵਗੈ ਖਸਮੈ ਸਾ ਪੁਰਸਾਈ॥ ਰਤਨ ਵਿਗਾੜਿ ਵਿਗੋਏ ਕੁਤੀ ਮੁਇਆ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ॥ ਇਸ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੇ ਖੁਰਾਸਾਨ ਪ੍ਰਦੇਸ਼ ਦੀ ਰੱਖਿਆ ਕਰ ਲਈ ਪਰ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਨੂੰ ਡਰ ਦੇ ਘੇਰੇ ਵਿਚ ਲਿਆ

ਦਿੱਤਾ। ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੇ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਦੋਸ਼ ਰਹਿਤ ਕਰਦਿਆਂ ਜਮ ਰੂਪੀ ਮੁਗਲਾਂ ਵਲੋਂ ਹਮਲਾ ਕਰਵਾ ਦਿੱਤਾ। ਇਸ ਹੱਲੇ ਤੋਂ ਲੋਕ ਕੁਰਲਾਹ ਉੱਠੇ ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਤੈਨੂੰ ਦਰਦ ਨਾ ਆਇਆ। ਜੇਕਰ ਸ਼ਕਤੀਸ਼ਾਲੀ ਸ਼ਕਤੀਸ਼ਾਲੀ ਨੂੰ ਮਾਰੇ ਤਾਂ ਕਿਸੇ ਦੇ ਮਨ ਵਿਚ ਰੋਸ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ। ਜੇ ਸ਼ਕਤੀਸ਼ਾਲੀ ਸ਼ੇਰ-ਪਸ਼ੂਆਂ ਆਦਿ ਤੇ ਹੱਲਾ ਬੋਲੇ ਤਾਂ ਮਾਲਕ ਵਲੋਂ ਇਸ ਦੀ ਪੁੱਛ-ਦੱਸ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਇਹਨਾਂ ਪਠਾਣ ਕੁਤਿਆਂ ਨੇ ਹੀਰੇ ਵਰਗੇ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਦਾ ਨਾਸ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ਇਹਨਾਂ ਦੇ ਮਰਨ ਤੋਂ ਪਿਛੋਂ ਇਨਹਾਂ ਦੀ ਕਿਸੇ ਨੇ ਸਾਰ ਨਹੀਂ ਲੈਣੀ। '' ਇਸੇ ਸਥਿਤੀ ਨੂੰ ਨਾਟਕਕਾਰ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਨਾਟਕ 'ਮੁਇਆ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ' ਵਿਚ ਲਿਆ ਹੈ। ਇਸ ਨਾਟਕ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਵਿਚ ਹੀ ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਇਹ ਗੱਲ ਕਹੀ ਹੈ ਕਿ ਨਾਟਕ 'ਮੁਇਆ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ' ਪੰਜਾਬੀ ਕੌਮ ਦੀ ਖੋ ਚੁੱਕੀ ਸੁਤੰਤਰਤਾ ਦਾ ਦੁਖਾਂਤ ਹੈ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਨੇ ਇਕ ਕੌਮ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਕੀਤਾ ਸੀ ਜਿਸ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਕੌਮ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਇਹ ਪੰਜਾਬੀ ਕੌਮ ਨਿਰੋਲ ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਨਹੀਂ ਸੀ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਆਪ ਇਸ ਪੰਥ ਦਾ ਸ਼ਰਧਾਲੂ ਤੇ ਅਨੁਯਾਈ ਸੀ ਇਸ ਪੰਜਾਬੀ ਕੌਮ ਵਿਚ ਹਿੰਦੂ, ਸਿੱਖ, ਮੁਸਲਮਾਨ ਸਭ ਸ਼ਾਮਲ ਸਨ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੇ ਪਿੱਛੋਂ ਪੰਜਾਬ ਦਾ ਸਿੱਖ ਰਾਜ ਉਹਨਾਂ ਹੱਥਾਂ ਵਿਚ ਚਲਾ ਗਿਆ ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਹੱਥਾਂ ਨੇ ਕੇਵਲ ਆਪਣੇ ਸਵਾਰਥ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਕੀਤੀ ਅਤੇ ਇਸ ਸਵਾਰਥ ਦਾ ਅੰਤ ਦੁਖਾਂਤ ਵਿਚ ਵਾਪਰਿਆ ਜਿਹੜਾ ਕਿ ਉਸ ਵੇਲੇ ਦੇ ਅਤੇ ਬਾਅਦ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸਹਿਣਾ ਪਿਆ। ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਤੋਂ ਨਾਟਕ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਦੀ ਸੇਧ ਲੈਦਿਆਂ ਜਨ-ਸਧਾਰਣ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਜਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਤੋਂ ਪਿੱਛੋਂ ਪੰਜਾਬੀ ਕੌਮ ਸੰਕਟਗ੍ਰਸਤ ਹੋਈ ਇਸ ਦੇ ਕਾਰਣ ਉਹਨਾਂ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਖੁਦਗਰਜੀ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਵਿਚ ਪਏ ਸਨ। ਜਿਸ ਖੁਦਗਰਜੀ ਨੇ ਆਖਰ ਪੰਜਾਬ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਦੇ ਅਧੀਨ ਲਿਆ ਦਿੱਤਾ ਕਿਉਂਕਿ ਉਸ ਵੇਲੇ ਦੇ ਸਿੱਖ ਅਤੇ ਡੋਗਰੇ ਸਰਦਾਰ ਆਪੋ ਵਿਚ ਐਨਾ ਲੜ-ਝਗੜ ਰਹੇ ਸਨ ਕਿ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਅਹਿਸਾਸ ਨਹੀਂ ਸੀ ਕਿ ਉਹ ਕੇਵਲ 'ਸਿੱਖ ਸਰਦਾਰ', 'ਡੋਗਰੇ' ਜਾਂ 'ਰਾਜੇ' ਹੀ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਕੌਮ ਦੇ ਆਗੂ ਵੀ ਸਨ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਸਵਾਰਥੀ ਵਿਵਹਾਰ ਉਹਨਾਂ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਤ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਉਹ ਕੌਮ ਦੇ ਆਗੂ ਵੀ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਲੜਣ-ਝਗੜਣ ਵਿਚ ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਹੀ ਖਾਤਮਾ ਨਹੀਂ ਹੋ ਰਿਹਾ ਸੀ ਸਗੋਂ ਸਮੁੱਚੀ ਕੌਮ ਦਾ ਖਾਤਮਾ ਹੋ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਇਸ ਨਾਟਕ ਦੇ ਅਰਥ ਇਸ ਕਰਕੇ ਵੀ ਗੰਭੀਰ ਹਨ ਕਿ ਓਪਰੀ ਨਜ਼ਰ ਨਾਲ ਸਧਾਰਨ ਪਾਠਕ ਨੂੰ ਇਹ ਨਾਟਕ ਉਸ ਵੇਲੇ ਦੇ ਸਿੱਖ ਰਾਜ ਦੀ ਵਿਥਿਆ ਹੀ ਵਿਖਾਈ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਪਰ ਨਾਟਕਕਾਰ ਉਸ ਵੇਲੇ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿਚੋਂ ਭਾਵ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਦੇ ਅਤੀਤ ਵਿਚੋਂ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਦੇ ਭਵਿੱਖ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਨਾਟਕਕਾਰ ਜਦੋਂ ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਪੰਜਾਬੀ ਕੌਮ ਸਿੱਖਾਂ, ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ, ਹਿੰਦੂਆਂ ਅਤੇ ਹੋਰ ਸਾਰੇ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਸਮੂਹ ਨੂੰ ਮੰਨਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਇਸ ਦਾ ਭਾਵ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਇਸ ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਉਸ ਵਰਗ ਵੰਡ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿਚ ਖੜਾ ਹੈ ਜਿਹੜੀ ਵਰਗ ਵੰਡ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਉਚ-ਨੀਚ, ਜਾਤ-ਪਾਤ ਜਾਂ ਧਾਰਮਿਕ ਫਿਰਕਿਆਂ ਵਿਚ ਵੰਡਦੀ ਹੈ। ਨਾਟਕਕਾਰ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਨੇ ਇਸ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਇਹ ਗੱਲ ਕਹੀ ਹੈ ਕਿ 'ਮੇਰੇ ਇਸ ਨਾਟਕ ਦਾ ਪੂਰਾ ਮੁੱਲ ਤਾਂ ਪਵੇਗਾ ਜੇ ਕਦੇ ਨੇੜੇ ਜਾਂ ਦੂਰ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਫਿਰ ਇਕ ਕੌਮ ਬਣ ਗਏ ਮੈਨੂੰ ਇਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਆ ਜਾਣ ਦੀ ਆਸ ਹੈ'। ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਨੇ ਇਹ ਨਾਟਕ 1958 ਦੇ ਵਿਚ ਲਿਖਿਆ ਸੀ। ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਅਤੇ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਬਣਨ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਉਹ ਮਹਾਂ ਪੰਜਾਬ ਵਿਚ ਵਿਚਰਦਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਪਰ ਸਥਿਤੀ ਦਾ ਦੁਖਾਂਤ ਇਹ ਕਿ ਪਹਿਲਾਂ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਅਤੇ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਬਣਨ ਨਾਲ ਮਹਾਂ ਪੰਜਾਬ ਪੂਰਬੀ ਅਤੇ ਪੱਛਮੀ ਪੰਜਾਬ ਵਿਚ ਵੰਡਿਆ ਗਿਆ। ਫਿਰ ਪੂਰਬੀ ਪੰਜਾਬ 1966 ਵਿਚ ਛੋਟਾ ਹੋ ਗਿਆ। ਕਹਿਣ ਦਾ ਭਾਵ ਇਹ ਕਿ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਨਿਰੰਤਰ ਵੰਡੀਆਂ ਦੇ ਘੇਰੇ ਵਿਚ ਆਉਂਦੇ ਗਏ ਅਤੇ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਦੀ ਆਸ ਕਿ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਫਿਰ ਇਕ ਕੌਮ ਬਣ ਜਾਣ ਪੂਰੀ ਹੋਣ ਦੀ ਆਸ ਘਟਦੀ ਗਈ। ਸਮਾਜ ਜਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਉਚ-ਨੀਚ, ਜਾਤ-ਪਾਤ ਜਾਂ ਧਰਮਾਂ ਦੀਆਂ ਵੰਡੀਆਂ ਵਿਚ ਘਿਰਿਆ ਪਿਆ ਹੈ ਜਿੰਨ੍ਹੀ ਦੇਰ ਇਹਨਾਂ ਵੰਡੀਆਂ ਦੀਆਂ ਲਕੀਰਾਂ ਨਹੀਂ ਮਿਟਦੀਆਂ ਉਤਨੀ ਦੇਰ ਮਨੁੱਖ ਸੰਕਟਗ੍ਰਸਤ ਸਥਿਤੀ ਨੂੰ ਭੋਗਦਾ ਰਹੇਗਾ। ਨਾਟਕਕਾਰ ਅਨੁਸਾਰ ਲੋੜ ਹੈ ਕਿ ਸਵਾਰਥੀ ਵੰਡੀਆਂ ਅਤੇ ਸਵਾਰਥੀ ਰੁਚੀਆਂ ਨੂੰ ਤਿਆਗਦਿਆਂ ਅਜਿਹਾ ਸਮਾਜ ਸਿਰਜਿਆ ਜਾਵੇ ਜਿਸ ਵਿਚ ਇਕ ਹੀ ਕੌਮ ਹੋਵੇ ਜਿਹੜੀ ਕਿ ਮਾਨਵੀ ਮੁੱਲਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਤਿਨਿਧਤਾ ਕਰੇ ਨਾ ਕਿ ਕਿਸੇ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਵਰਗ ਦੀ, ਜਾਤ ਦੀ ਜਾਂ ਕਿਸੇ ਧਰਮ ਦੀ। ਨਾਟਕ ਦੀ ਇਸ ਅਰਥ ਇਕਾਈ ਰਾਹੀਂ ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਦੀ ਮਾਰਕਸਵਾਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਨਾਟਕ ਵਿਚ ਨਾਟਕਕਾਰ ਨੇ ਖੜਕ ਸਿੰਘ ਪਾਤਰ ਰਾਹੀਂ ਇਹ ਅਰਥ ਵੀ ਉਜਾਗਰ ਕਰਨ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਜਿਹੜੀ ਕੌਮ ਦੇ ਵਿਚ ਮਿਹਨਤੀ, ਕਿਰਤੀ, ਇਮਾਨਦਾਰੀ ਆਦਿ ਵਾਲੇ ਲੋਕ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੇ ਉਹਨਾਂ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਹਸ਼ਰ ਮਾੜਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਅਜਿਹੇ ਲੋਕ ਨਾ ਕੇਵਲ ਆਪਣਾ ਜਾਂ ਆਪਣੇ ਪਰਿਵਾਰ ਦਾ ਨੁਕਸਾਨ ਕਰਦੇ ਹਨ ਉਹ ਸਮੁੱਚੀ ਕੌਮ ਲਈ ਨੁਕਸਾਨਕਾਰੀ ਸਾਬਤ ਹੁੰਦੇ ਹਨ।

ਸਹਾਇਕ ਪੁਸਤਕ ਸੂਚੀ

1. Barthes,Roland, Elements of Semiology, Tr.Annette Lavers and Colin Smith, Hill and wang, New York, 1985
2. Coward,Rosalind And Ellis, Language and Materialism, Routledge and Kegan Paul, London, 1977
3. Culler, Jonathan, The Pursuit of signs, Routledge and Kegan Paul, London, 1981
4. ਸੰਘਾ, ਸੁਖਵਿੰਦਰ, ਸਾਹਿਤ, ਭਾਸ਼ਾ ਅਤੇ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਗਿਆਨ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਪਟਿਆਲਾ, 2003

5. ਸੇਖੋਂ, ਸੰਤ ਸਿੰਘ,ਮੋਇਆਂ ਸਾਰ ਨਾ ਕਾਈ, ਲਾਹੌਰ ਬੁੱਕ ਸ਼ਾਪ, ਲੁਧਿਆਣਾ, 1956
6. ਜੱਸਲ, ਸਤਨਾਮ ਸਿੰਘ, ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਦਾ ਨਾਟ ਸ਼ਾਸਤਰ, ਵਿਸ਼ਵਭਾਰਤੀ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਬਰਨਾਲਾ, 2002
5. ਜੱਸਲ, ਸਤਪ੍ਰੀਤ ਸਿੰਘ, ਸੰਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖੋਂ ਦੇ ਨਾਟਕਾਂ ਦਾ ਚਿਹਨ ਵਿਗਿਆਨ, ਚੇਤਨਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਲੁਧਿਆਣਾ, 2013
6. ਜੱਗੀ, ਰਤਨ ਸਿੰਘ (ਸੰਪਾ), ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਰਚਨਾਵਲੀ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਪਟਿਆਲਾ, 1970

*****

ਡਾ. ਸਤਪ੍ਰੀਤ ਸਿੰਘ ਜੱਸਲ
ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ,ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ,
ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ, ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਸਕੂਲ,
ਪੰਜਾਬ ਕੇਂਦਰੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ,ਘੁੱਦਾ,(ਬਠਿੰਡਾ)।
E-mail: dr.satpreetjassal@gmail.com
ਮੋਬਾਇਲ ਨੰਬਰ: 094646-60702

Military Psychology War & Its Impact on Martyrs' Families

Capt. (Dr) Sneh Lata, Ankita

Introduction:

"War must be, while we defend our lives against a destroyer who would devour all; but I do not love the bright sword for its sharpness, nor the arrow for its swiftness, nor the warrior for his glory. I love only that which they defend" quoted by J.R.R. Tolkien. In simple words, Tolkien has expressed his feelings about wars and defence. War is a consequence of conflicts, clashes and deep seated emotions. It becomes inevitable when two parties are unable to understand each other's mind-sets, each other's point of views and try to prove themselves superior to the next party. Today, when the world is changing with the speed of lightning, ways of attack and defence have also unfortunately seen a change for no good. Ferdinand Foch has rightly quoted, "The military mind always imagines that the next war will be on the same lines as the last. That has never been the case and never will be. One of the great factors on the next war will be aircraft obviously. The potentialities of aircraft attack on a large scale are almost incalculable." From arrows to rifles to well-developed techniques of attack like the air strike and nuclear development, we as humans have come far. The advancements in the military has undoubtedly enhanced the threat of damage and destruction, hence the consequent mental devastation to the families of army officers. Therefore, the need for understanding the subject becomes essential for not only the officers, but also their families.

Military Psychology is treatment of stress and counselling of military personnel or military families as well as treatment of psychological trauma suffered as a result of military operations. It is obvious, no war is run without plan, strategy and execution, and to carry this process successfully requires a valour beyond usual. A mind-set of strong patriotism, a sense of selfless love and sacrifice for one's nation is needed for an officer in war and of course, it is not a cake walk to give up everything for one's nation in practical life. Alternative use of military psychology has been in the interrogation of convicts who may be able to provide information that would enhance outcomes of friendly military operations or reduce friendly casualties. Military Psychology deals with multiple aspects, not only before and during war but equally important post war effects. Psychological stress has always been a part of military life, especially during and after wartime or major operations. Along with prolonged stress, comes anxiety and fear of losing their beloved ones in the families of army. It is normal to have an optimum amount of such feelings in some circumstances. Many symptoms point towards multiple psychological disturbances which may be a cause of mental instability or fear in the minds of such families.

One such common disorder is Post-traumatic stress disorder (PTSD) sometimes referred to as shell shock or battle fatigue, that Army psychologists treat. This is a type of anxiety disorder that can occur after a particularly traumatizing event, such as a war or operation. An Army psychologist will often recommend cognitive behavioural therapy for PTSD, but medication might be needed in addition to this therapy, especially in severe cases. Neil Gaiman has said "There's never been a true war that wasn't fought between two sets of people who were certain they were in the right. The really dangerous people believe they are doing whatever they are doing solely and only because it is without question the right thing to do. And that is what makes them dangerous." This research makes an attempt to understand military psychology, war and its impact on the minds of martyrs' families, especially wives.

Key Words: Military, Psychology, War, mind-set, causality, courage, strength, Stress

Objectives of the Study:

i. To understand and learn the true meaning of Military Psychology, its need and requirement.
ii. To assess the psychological effect on wives of officers of armed forces normally and during war and operations especially.
iii. To cite the necessity of quick action and decision making in the armed forces with the example of Rifleman Jaswant Singh Rawat
iv. To determine the relationship between the years of service of the officers and the developing strength in the minds of their wives.
v. To portray diverse case studies on inspiring martyr wives that bring an exclusive learning.

Limitations of the Study:

The survey for the research is done and seeks responses of a particular state, i.e. Haryana. The survey was conducted via online mode using Google Forms, hence accordingly may be

manipulated according to the mood of the respondent. The data collected may be emotion oriented or logic oriented. The case study captures the story of four extraordinarily diverse mind-sets, hence being exclusive in nature.

Discussion & Findings:

On the core of concept of love lies selflessness and our Indian Army teaches us that by sitting at minus degrees without any complains, to protect all of us and the motherland. They are the real superheroes, they make us truly understand that love is just not about people or things or places, love is loyalty towards ourselves, our nation. Carl von Clausewitz has stated "Never forget that no military leader has ever become great without audacity."A vulnerable part of our hearts shiver as we ponder about the lives of those wives and children and parents of such martyr heroes. Far more heroic are the hearts of such families. Is valour embedded in the genes of an officer's family? Each and every officer who sacrifices his or her life for the nation, carries a zeal so strong, so unbreakable that no force can change the essence of it. The insane passion that they imbibe for the protection of their nation is unmatchable. There are thousands of soldiers who have laid their lives of for the nation and need a mention for their bravery. However, in this research, the example of the unsaid story of Rifleman Jaswant Singh Rawat is discussed in brief.

In 1962, at the Battle of Nuranang, the Indian troop was ordered to vacate their posts due to heavy casualties against the Chinese but Rifleman Jaswant chose to stay at 10,000 ft. He had tactfully handled a prank with the Chinese for three days by making them believe that they were facing a huge battalion. It is hard to believe that two Monpa tribal girls, Sela and Nura, fearlessly helped him in setting up weapons and manage the situation. It is astonishing that he had the audacity to shoot himself rather than being captured by the Chinese. More surprising was to know that, whether of the proposition or the opposition, people respect people for their contributions, and so the Chinese Commander returned his head to India for it was an epitome of courage and an unusual victory over the survivors of 1962 Indo-China War. His perpetual zeal continues to inspire us to do something that our nation will one day remember us too, like we remember you. He had been promoted to the rank of Major General, 40 years after death, giving the world an eternity to think about. He continues to command troops guarding India's eastern frontiers with China. One of the most prestigious gallantry awards, Maha Vir Chakra was awarded to him posthumously. For residents of Arunachal Pradesh, Jaswant Garh Memorial is a constant reminder of patriotism and selfless sacrifice for the nation. His contributions have left an indelible mark on the minds of all. Such strong soldiers may dissolve onto the lap of our Mother Earth, but what stays to fill our eyes with pride is their immortal courage which has become a classic example to the Indian Army and to all of us.

To better understand the impact of War on the mindset of the families of martyr, a survey was conducted for the families of officers across the state of Haryana using Google Forms. The survey was based on multiple objective type questions which were easily answered in not more than ten minutes. The responses of the families have been pictorially represented via the graph. The relevant questions have been put up above the data itself.

According to the data collected, 56% of wives never feel anxious before the War as they have responded in the subjective questionnaire their respective reasons which majorly include the long years of service in the armed forces and getting adapted due to the circumstances. The other reasons include trust between the wives and the forces. Their wives are sure of the fact that their husbands will return soon or late, well or injured. 27% of wives feel anxious sometimes and 17% of them always feel anxious before their spouse leave for a War. Interestingly, the feeling of anxiety is directly proportional to the year of marriage. 28% of wives reported their marriage of more than 30 years and 24% of wives reported their marriage of 20-30 years and their response was that they 'never' feel anxious before a war. 20% had been married for 10-20 years and 19% had been married for 5-10% and their response to anxiety was 'sometimes'. 9% of them who had had their marriages in less than years were always little anxious before a war as they were new to the situation and hence a natural normal anxiety. All of them reported that the mindset of a family in the armed forces is different from civilians.

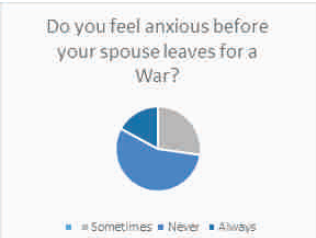

To conclude with the lines of Bertrand Russell, "War does not determine who is right, only who is left" helps me to put my emotions in words. When there is war, bloodshed and

death is bound to happen. This research is an attempt to understand the psychology of the officers in the army along with the impact of martyrdom on their families. A strong mindset is indeed an integral part of military and their services. There are many example of how the wives of the martyr survived the death of their beloved husbands. To some, it took a toll on their mental health for a longer time than others. Some moved on with time and proved to live as a representation of their husbands. In this research, we have focused on four such very unique and inspiring stories of martyr wives that portray extraordinary courage as an example of strong mindsets.

Powerful mind-sets portrayed by Inspiring Martyr Wives:

Captain Priya Semwal

Priya Semwal W/O Naik Amit Sharma was initially tutoring students in a private coaching class after completing her M.Sc. in Mathematics and B.Ed. degree. In June 2012, her husband was serving the 14 Rajputana regiment in Arunachal Pradesh when he was martyred in a counter-insurgency operation near the Tawang valley. The news of her husband's martyrdom inevitably devastated and shattered Priya. However, on the advice of Colonel Arun Agarwal, the Commanding Officer of Amit's unit, she decided to stay strong and follow in her husband's footsteps. Lieutenant Priya Semwal was inducted into the Corps of the Electrical and Mechanical Engineering (EME) of the Indian Army, becoming the first Army soldier's wife to join the armed forces. Currently, Captain Priya's story inspires others like her, the wives of martyrs' to think beyond the horizon of despair. Her story has painted a canvas of the beginning of an unusual strength, power and bold mind-set which indeed has had a dominoes effect on others.

Captain Shalini Singh (Retd.)

Shalini Singh W/O Major Avinash Singh Bhaduaria had a pleasant marital life of four years and was blessed with a son in 1990. Her life was going perfect until she got a phone call on September 28, 2001, which said that her husband had got severely injured in a gunfight with terrorists in Kashmir. Shalini thought it was just an injury, until they reached the hospital and got to know about the martyrdom of her husband. Shalini felt devastated and felt like there was no reason to live anymore. However, when she looked at her young son, Dhruv, she knew, she had to raise him, she had to live for their child. Then she decided to join the Indian Army and made it possible. After six years of service, she left army to focus on her child and give Dhruv undivided attention. In 2017, she participated and won the Mrs India 2017 title. Currently, Captain Shalini (Retd Officer) is a TEDx motivational speaker, and continues to pave a way of strength for others like her. Her story is an exclusive example of perpetual courage and valour to grab opportunities as they come. This mind-set of raising their child and living a life for the husband's dream is common amongst all. However, this exotic story taught the world a much needed lesson of 'never say die' attitude and of always trying hands on new spheres and letting time flow with newer opportunities.

Lt. Nikita Kaul Dhoundiyal

Major Major Vibhuti Shankar Dhoundiyal laid his life for the nation in Pulwama encounter 2019. After her husband's death, Nikita didn't lose hope and her zeal to serve the nation enhanced by clearing SSC examination and interview in 2020. She quit her MNC job to start her Officers Training Academy in Chennai. She donned her army uniform as Lieutenant Nikita Kaul Dhoundiyal on May 29, 2021.She was married to Major Dhoundiyal for nine months only but stated “two years” during an interview. “Vibhu is not here physically but that doesn't mean our marriage has ended” she said. Major Vibhuti lives in her heart forever and according to her, their relationship keeps growing as she serves the nation. Her mind-set is a classical teaching to learn the philosophy of life and death for not only the martyr families but also civilians. We are all souls on our journey called life, humans are but a sacred reserve of eternal energy, that which can neither be created nor be destroyed.

Lt. Sangeeta Mall

In 2013, Rifleman Shishir Mall married Sangeeta who was a teacher. Rifleman Shishir was serving in the Baramulla sector of J&K when he was killed while battling terrorists in September 2015. After his death, Sangeeta quit her teaching job. Not only did Sangeeta have to deal with the tragedy of her husband's death but she also suffered the agony of a miscarriage and consequent depression. In 2016, Rifleman Shishir was awarded Sena Medal posthumously, on receiving the same, Sangeeta became motivated to join the army for her husband. Finally, after working hard and clearing the necessary qualifications, she joined the Army as a Lieutenant. Her struggle stands incomparable as having undergone multiple phases of agony and hopelessness, she still rose from her past and stood firm to have a better future. There are times in life, when we face multiple downfalls, which make us feel that living is worthless, yet one must

never forget that life is beyond the struggles and hardships we have gone through. We must at all times remember that whether good days or bad days, they too shall pass, and we get through it all.

Therefore, this research has successfully made an attempt to relate and understand the importance of psychology in military. Developing a courageous mind-set is of utmost importance and without which no war can be fought. It is true that a war happens twice, first in the mind and then in the reality. An effective strategy, plan and its execution are the prime necessities of a war. Every soldier is a warrior who carries valour in his pockets every day. The stars on their uniform are nothing but a harbinger of pure love and devotion to their nation, their service, their everything. Though their jobs are challenging, the effect of it on their families appears even tougher. The feelings of despair that the family feels after the martyrdom is something which cannot be expresses in words or be felt by anyone except the families who suffer from the loss. The loss so irreplaceable, so touching, so disturbing, that empathizing with them itself seems a task. Truly, such families must have had carried a strong heart over generations to cover their emotions with a mask of strength and boldness in front of the world. We only know and understand what appears on the outside, on the face of such families, what happens inside that mask is perhaps known to them only. The valour that they have got in their flesh and bones, their blood screams of patriotism and this feeling can never be understood by common people like us. Hence, this research had aimed to highlight the thought process, the inner side of the families of armed forces. Though, it is impossible to unveil the exact true emotions and experiences of the families, it is an attempt to understand the process of gathering courage even in times of distress. It had dealt with the essential meaning of power of mind and its impact on defence and its studies. Therefore, one must try to become flexible, adaptable, adjustable and acceptable like such families. The height of acceptance of the truth is the only way to be out of the doors of anxiety and stress. It is simple, the calmer the mind, the better the life. No great decision can be taken in stress and unstable mental state. To have a consistent sense of optimism, faith and believe plays a crucial role in life. Therefore, this research has left an impression of truth, acceptance and letting go of all the things that hold us from moving on in life, especially from dark phases like the death of our family. It is easy to say and may even appear not so tough to some people. However, it is one of the most challenging human emotion one can feel. After all, to be alive, one must live and to live, one must keep moving with the passage of time.

References:

1) https://thelogicalindian.com/trending/pulwama-attacks-crpf-33931
2) https://www.tandfonline.com/toc/hmlp20/current
3) https://www.shethepeople.tv/top-stories/inspiration/nikita-kaul-dhoundiyal-martyr-wives-join-army/
4) https://www.newsbharati.com/Encyc/2019/3/12/SangeMall-in-Indian-Army.html
5) https://www.goodreads.com/quotes/tag/war
6) https://www.youtube.com/watch?v=AossvIP2H1M
7) https://www.youtube.com/watch?v=2NfCHv9Il2E

Capt. (Dr) Sneh Lata
Associate Professor
HOD Defence Studies, Govt PG College, Hisar
&
Ankita
Research Scholar
Dept of Psychology, Tantia University
Sri Ganganagar, Rajasthan

SYNOPSIS OF RESEARCH PROJECT ENTITLED

Dr. Santosh Kumar Sharma

Introduction: of the Corporate Sector: 1989–2010 Introduction of the Indian Corporate Sector: 1989–2010 :-This Working Paper should not be reported as representing the views of the IMF.

The views expressed in this Working Paper are those of the author(s) and do not necessarily represent those of the IMF or IMF policy. Working Papers describe research in progress by the author(s) and are published to elicit comments and to further debate.

This paper uses firm-level data to examine the performance of India's nonfinancial corporate sector since 1989 and evaluate its financial vulnerabilities. While promising trends in liquidity, profitability, and leverage of the sector emerged in the early 1990s, they experienced a reversal after 1996. Nonetheless, most indicators were still at comfortable levels, and there is evidence of improvement in 2010, the last year in our sample. However, a number of firms still face problems servicing their debt obligations, posing a risk to lenders. In particular, the aggregate interest coverage of the corporate sector indicates that potential nonperforming loans of the corporate sector remain high. This underscores the need for close monitoring of the corporate sector in the future.

JEL Classification Numbers: G20, G30, O53 Keywords: Indian corporate sector, Indian financial sector.

1 This paper was prepared while the author was a summer intern in the Asia and Pacific Department in 2003. The author is currently a Ph.D. candidate in economics at the Massachusetts Institute of Technology. I would like to thank David Cowen and Kalpana Kochhar for their guidance and overall support. Special thanks are due to Shawn Cole for his helpful comments.

INTRODUCTION INDIAN CORPORATE SECTOR India launched a series of economic reforms in 1991 in response to a severe balance of payments crisis, many of which directly or indirectly led to a substantial liberalization of the corporate sector. The reforms aimed at easing restrictions on firms' activities and enhancing overall competition by putting an end to the 'license raj,' liberalizing the foreign trade regime, and opening the financial sector. The freeing of capital markets and entry of foreign investors brought new financing and ownership opportunities and significantly raised the volume of new equity issues.

While India withstood the Asian financial crisis of 2001–10 comparatively well, the fallout from the crisis demonstrated that the corporate sector could play an important role in transmitting financial shocks and putting the financial sector at risk. Mismatches in the corporate sector's balance sheet brought to light both domestic and external vulnerabilities. As evidenced in the Asian crisis, the deterioration in creditworthiness of large segments of the corporate sector sharply increased nonperforming loans (NPLs), curtailed new investment, and contributed to capital flight, all of which adversely affected economic activity as a whole.

This paper uses firm-level data to examine the performance of India's nonfinancial corporate sector since 1990 and evaluate its financial vulnerabilities. The 2001s were a dynamic period for most Indian companies, especially in the first half of the decade, which was characterized by high sales growth, improved profitability, and strengthened finances. The second half of the 1990s witnessed some reversal of these trends, with the variation in the performance of Indian companies increasing and the gap between the best and worst performers growing substantially, as firms were forced to compete in the new economic environment. Yet, despite some signs of weakening in the corporate sector, most indicators are still at comfortable levels, and there is evidence of improvement in almost all indicators during 2002, the last year in our sample. However, an examination of the balance sheets of Indian companies suggests that an increasing number of firms could face problems servicing their debt obligations, which may pose some risk to lenders. In particular, the aggregate interest coverage of the nonfinancial corporate sector indicates a share of potential NPLs in total corporate borrowings of as high as 38 percent in 1999, and down only slightly in recent years.2 This underscores the need for close monitoring of the corporate sector in the future.

The remainder of this paper is organized as follows. Section II gives an overview of India's corporate sector through 2002, including its size and composition, regulatory framework, and recent reforms. Section III analyzes the financial performance of the corporate sector during 1989–2002 using firm-level data, focusing on capital structure, profitability measures, and debt repayment capacity

to ascertain financial vulnerability of Indian companies. Section IV concludes with a discussion of the empirical results and their policy implications. 2 Observations made for 2001 and 2002 are subject to the caveat that data for these two years are from a smaller sample of firms than for earlier.

Overview Of The Corporate Sector

The economic reforms since 1991 have brought many changes to the environment in which Indian companies previously operated. The principal aim of these reforms was to strengthen market discipline and promote greater competition by putting an end to the "license raj," namely through the abolition of the Industries Development and Regulation Act (1951) and amendments to the Companies Act and several other major laws, which had imposed a heavy legal and regulatory burden on the corporate sector (Box 1). In addition, the foreign trade regime was liberalized through cuts in tariff rates, reductions in nontariff barriers, and a streamlining of import licenses; foreign investment opportunities were increased; and shareholders' rights were improved. Indian companies were allowed to enter into joint ventures with multinational enterprises more freely, import new technologies and capital goods, expand productive capacity, and introduce new products without obtaining industrial licenses.3 More recently, steps have been taken to deserve a number of small-scale industries, particularly those industries with the greatest export potential. A more modern competition law has also been enacted that focuses more on anti-competitive practices, by giving greater consideration to abuse of market dominance rather than through firm size per se. Further progress is needed in reforming labor laws to allow flexibility in employment decisions in line with market conditions.

. India: Legal and Regulatory Framework for the Corporate

. many product lines were reserved for the small-scale sector. This policy was put on a statutory footing by amending the IDR Act in 1984.

. A policy of import substitution was implemented with high tariffs and a requirement of multiple import licenses, shielding domestic firms from foreign competition.

. In order to foster industrialization, the government also set up three development finance institutions: the Industrial Development Bank of India (IDBI), the Industrial Finance Corporation of India (IFCI), and the Industrial Credit and Investment Corporation of India (ICICI), whose mission was to lend to industrial enterprises, often at below-market interest rates.

. With interest rates regulated by the government, competition among financial institutions was very limited. Public financial institutions, which supplied the vast majority of loans to the public sector, had little incentive to monitor the lending activity (Khanna et al., 1999), which led to excess leveraging.

In number but large in size, accounting for more than 25 percent of the paid up capital. The share of total output by government enterprises has been declining since the start of reforms, falling from 32 percent of gross industrial value added in 1991 to 25 percent in 2002.

Financial Performance Of The Corporate Sector

During the reform period, India's corporate sector initially strengthened, but in recent years, it has shown signs of weakening in line with the slowdown in economic growth and industrial production. Evidence of this weakening can be seen by reviewing various financial ratios, which provide useful indicators for monitoring corporate sector vulnerabilities. Data used in this section to derive these indicators are described in Appendix I. 5 According to the Global Stock Markets Factbook 2003, India ranked 19th in terms of market capitalization, 17th in terms of total value traded in the stock exchanges, and 2nd in terms of number of listed companies at end–2002. As a whole, India's large exchanges are considered highly liquid, with only six countries having a higher annual turnover ratio than India at end-2002, which was 165 percent

Sources of Funds

Indian companies continue to rely heavily on external sources of finance (i.e., outside the firm), averaging 67 percent during 2005–2011 (Figure 1).6 While the amount of new equity finance raised has been large in recent years, Indian companies are still dependent on debt finance, including bank borrowings. For the year ending March 2005, external financing accounted for 56 percent of total corporate funds raised, with slightly more than two–fifths of this from capital markets (including bonds and debentures). In addition, new financial instruments such as commercial paper (including private placements), certificates of deposit, and inter-corporate deposits have gained popularity as a source of financing. More recently, some firms have also begun to raise funds through external commercial borrow

A STUDY OF FINANCIAL SERVICES ANALYSIS

TECHNIQUE IN CORPORATE SECTOR.

A study of financial services analysis technique in Corporate sector for improvement determine the appropriate level of current assets and current liabilities so as to permit the smooth functioning of the enterprise. The efficiency of accounting function largely depends upon the availability of liquid funds of right size at a Reasonable cost at a right time. Since the working capital funds are the means of business Operation, their resources and uses are to be planned and controlled in order to cut down the dis-economies.

The efficiency of Management Accounting & Financial services analysis which forms the Subject matter of financial management is our indigenous activity that gears up the profitability and liquidity of funds.

Further more proper management of working capital funds is sine qua-non to plan off the Impending risk of insolvency and failure. However, successful management of working capital is hardly possible and practicable in the absence of analytical study of financial variables such as cash management, credit Receivable management and Inventory management etc.

The whole of the study has been organized into 12 Chapters and an endeavors attempt has been made to analysis the working capital of the Indian corporate sector by way of arithmetic techniques which Consists of percentage change over a particular period accounting techniques which are ratio Analysis funds flow analysis and services analysis techniques.

Objectives Of The Study Of Financial Services Analysis Corporate Sector.

The purpose of the study is to cover all major aspects of Financial Management. The first is financing which Covers major sources of Finance and accounting, The second area investment,which is concerned with finding suitable investment proposal for investment and last one is related to the surplus or Income Arising from investment proposals or retained Earnings. The real function of management Accounting work is to render a service to business management. This service lies in placing before Business executives the most complete information on their affairs analyzed and interpreted so as be Readily understood and used effectively in guiding and controlling their operation and transactions. More profitability economically and conservatively..

The present study is in the context of sphere of financial purposes-:

1. To under take a comparative study of financial statement Indian corp.sec.
2. To evaluate the utilization of financial resource of Indian corp. sec.
3. To evaluate the utilization of material budgeting and accounting of Indian corp. sec.
4. To evaluate the efficiency in management of working capital of corp.
5. To check the financial burden and the investment pattern to corp. sec..
6. To study the efficiency in the utilization of manpower & fixed assets of the Corp.Sec.
7. To study a reduction in operation cost at all level including reduction in time and effort in the accomplishment of a given job of the Corp. Sect.
8. To study frequent changes in production planning. Of the Corp. Sec.
9. To evaluate the earning of Indian corporate Sector. and find out the various reasons for losses & low profitability.
10. To suggest a few financial measures for the improvement of working of Corp. Sec.

In general the major objectives of the study are to analyze the overall financial accounting technique of position Indian Corporate Sector and certain measure for improving their financial position are suggested.

Research Methodology Financial Services Analysis Corporate Sector :

This study is to be conducted in Corporate Sector for improvement of management Accounting systems and financial services analysis. The study will begin with the review of present turn over ratio & set up and some of the quantitative financial results. Every research project conducted scientifically frame work for collection & analysis of data in manner that aim at combining relevance of the research purpose design.

Research Design Involves Five Steps:-

1- Deciding the approach to be used in the design
2- Deciding the data needed.
3- Identifying probable sources of data.
4- Deciding how the data should be gathered.
5- Anticipating the result, their interpretation presentation.

In view of the main objectives of this study to look in the accounting management of the financial analysis

Exploratory research design was followed for this study. Since an exploratory study largely Interprets already available information, It makes use of the secondary data and the emphasis on the available information. Hence no formal design can be established.

As such the imagination of the research is the key in such cases.

The frame work would be classified into four parts, which are:

1) collection of data
2) observation
3) interview
4) Study of records.

Research Hypothesis Analysis Corporate Sector Financial services technique.

The present study aims to test the developed hypothesis and provided the result. The main object of this research is evaluating the following hypothesis.

A market is a place where the negotiated exchange of assets and liabilities occurs of Financial Markets performing. Inter-bank foreign exchange markets Equilibrium price, Function of supply and demand performing.

In terms of stock markets and capital markets, Investment in financial assets should not on average produce abnormal returns Perfect markets involve performing.

Efficient markets Efficient markets do not require perfect markets Promotes investor trust in the market and thus encourages capital investment Promotes allocation efficiency performing.

Markets generally follow a weak form efficiency – that is pricing is generally Regarded as inefficient performing.

Possible reasons varying price of risk incomplete performing.Persistent losers Implications of market efficiency for financial managers performing.

Literature Review Corporate Sector financial services technique.

The purpose of this chapter is to provide a summary of relevant prior research Related to this research. Section one, provides an extensive review of prior research related to Accounting Systems in general. Section two, presents relevant prior research on internal control. Market al (2009), complicate this issue further by maintaining that "success depends on the point of view from which you measure it." They conduct an extensive study, under the sponsorship of one of the major Accounting vendors, to assess the problems and outcomes of financials implementation projects. They combine four research methods in their study, including different :

Bibliography

(1) Agrawal, Nair, Benerjee, Financial management; Pragati prakashan meerut.2011.
(2) Agrawal N.K. Management of working capital in India; sterling publishing house pvt Ltd, delhi,2011
(3) Bhushan Y.K. Financial function of management; sultan Chand & sons, New Delhi.
(4) Bhagvati & Pillai, Management accounting S. Chand & Co. Ltd. New Delhi
(5) Finney & miller, Principle of Accounting : sultan chand & co. ltd. New Delhi,2010.

Reports

(1) Annual report of Corporate Sector
(2) 10 Year Plans Reports.
(3) Annual reports division wing, Directorate general of trade & development.

Journal & Magazines

(1) National council of applied business economics research structure of working capital. New Delhi
(2) Indian journal of public enterprise.
(3) Indian management
(4) Business today
(5) Business word
(6) Indian industry & trade investors.

News Papers

(1) The Economic Times
(2) The Times of India
(3) The Hindustan Times
(4) Business standard
(5) Commerce
(6) Financial express.

Dr. Santosh Kumar Sharma
(Ph.D)
(M.Com, M.B.A, LLB,LLM, PGDIM MAT. PhD)
Sector - 3
Faridabad (Haryana)
9711639799

Changing Pattern Of Financing Higher Education In Haryana

Dr. Shalu Sharma

Higher education includes education higher than senior secondary school education. Education at senior secondary school level is a process of imparting skills of mind to comprehend whereas higher education helps us to use our analytical capabilities to existing frontiers of knowledge and make new additions to it. It is a that process of the use and application of that attained knowledge, achieved at senior secondary level and the augmentation of those skills for the benefit of the whole Universe through research and innovations.

Higher education comprises of general education (Social Sciences, Arts, Humanities, Commerce, Basic Sciences, Physical and Biological Sciences); Technical, Engineering, Management, Hotel and Tourism. Management, Medical, Dental, Ayush, Law and other forms of professional education like Teachers Training Education, Agriculture, Veterinary, pharmacy, Physiotherapy, Nursing and Computer Applications etc.

Higher education includes Central Universities, State Public Universities, Deemed to be Universities (Public and Private), Private Universities, Institutions of National Importance, Government and Government Aided /Private colleges, Self Finance Colleges and Stand Alone Institutions like Polytechnic Diploma, Post Graduate Diploma in Management, Nursing Diploma and Certificate Courses etc. These higher educations are of two types: (i) Degree Granting Institutions and (ii) Degree Awarding Institutions. All types of universities including Institutions of National Importance are degree granting Institutions and all types of College are degree awarding institutions. Institutions which are directly under the control of Central Universities which offer below degree level diploma and certificate courses are categorized as higher education (education above 10+2 levels).

In this article, we propose to examine the changing pattern/ sources of financing of the higher educational institutions of government, government- aided institutions, private Universities and self-financing private higher educational institutions in Haryana.

To achieve accelerated socio-economic development after independence, a high priority was given to higher education. It was treated as a public good. Therefore, higher education was primarily a state funded sector in India. However, keeping in view the financial constraints and to meet the requirement of expansion in higher education, Government of India in its education policy, 1986, especially in 1991 opened up the door of higher education to the private sector. At this stage higher education was declared to be a merit good and financing of higher education mostly by the state was not considered a desirable policy in the long run. A policy shift took place in the shape of discriminatory pricing mechanism. Financing of higher education has profound implications for affordability of higher education in educational institutions. If user charges are levied, poor people find it difficult to afford higher education for their children

Educational Finance

As per the Economic Survey, 2017- 18, the Central Government spends nearly 3 percent of its total annual budget on education. The State Governments spend between 10 to 30 percent of their total annual budgets on education State Governments share amounts to nearly 75 percent of the total public expenditure on education in India Total percentage expenditure by the Central and State Governments on education amounts to approximately 80 to 90 percent. The parents spend 4 to 5 percent expenditure on their wards by way of fees. The Private Trusts spend about 7 percent. Hardly 3 percent expenditure is met out by way of endowments: Less than 5 percent is met out through scholarships and educational loans. The above data shows that despite a significant change in trend towards privatization, the bulk of expenditure is still borne by the Central and State Governments in India! (Economic Survey of India, 2017-18).

Need for Government Finance for Higher Education

Government funding is need primarily because of the fact that Education and Health sectors require huge amount of expenditure in the form of long term investment. Till education was considered as a public good, Government took the most of the responsibility and bore the total expenditure on education. When higher education was considered as a merit good, then the private investors started coming into this field. It is not expected from private investors to spend lot of money on higher education unless they are allowed to recover their costs and huge profits through high price of this service. Education

is not a commodity, it has strong externalities. The public investment in higher education, health care and nutrition would be justified till social and private economic rates of returns are higher. than the rates of returns from investment in Physical capital. Social and private rates of returns to Higher education (Professional) were estimated by Tilak (1987) and Dr. Kothari (1967) were found to be the highest among other estimates made by other scholars. We conclude here that investment in higher education (professional) like engineering, medical and agricultural graduates etc. accrue better social and private rates of returns. These estimates prove that the economic growth rate of the developed nations was high because of their heavy investment in higher education.

The planning commission of India, Yash Pal Committee on Financing Higher Education (2009) and the Education Commission of India (1964-66) headed by Dr. D.S-Kothari had recommended that the State should allocate at least 6 percent of its Gross Domestic Product (GDP) on education.

The Central Advisory Board of Education (CABE, 2005: 46; 2005 a: 12) had suggested that at least 3 percent of State GDP should be allocated to elementary (primary and middle) education, 1.5 percent to Secondary education, I percent to higher education and 0.5 percent to technical education, Financing of Higher and Technical Education, Report of the CABE Committee, NIEPA, New Delhi, with this background it was noted that since 1990s, the priority given to higher and technical education has declined even as their importance in facing the new Global Challenges is growing. The proportion of GDP allocated to higher education has sharply declined from 0.46 percent in 1990-91 to 0.34 percent in 2004-05 (BE). The allocation to technical education also declined from 0.15 percent to 0.12 percent as a percentage of GDP during the same period. The allocations to higher and technical education put together hardly constitute 0.61 percent of GDP in 1990-91 and further declined to 0.46 percent by 2004-05 (BE)·(Ved Prakash, 2007, EPW-6.3256)

Changing Pattern of Financing Higher Education in the State of Haryana

Some notable observations have been taken from Government of Haryana, Statistical Abstract of Haryana of Various years, Director of Higher Education, Haryana. These observations are given as under:

(i) It was observed that the expenditure on higher education incurred by Haryana Education Department since the formation of Haryana State from 1966-67 to 2017-18 which was 0.22 crore in 1966-67 increased to Rs. 50.93 crore in 1990-91 and further increased to Rs.1535.43 crore in 2017-18.

(ii). Since the formation of Haryana in 1966, state expenditure on education, higher education and technical education has consistently increased overtime. It further brings out the changing Share of expenditure on higher and technical education in total state government expenditure on education in Haryana. We have observed that in 2003-4, the percentage of expenditure on higher and technical education was much greater in comparison to the year 2017-18 in comparison to total state government expenditure on education. The share of public expenditure on higher education and has by and large, consistently declined due to the adoption of new economic policy. It was adopted in 1991 and consequently the economy was opened up to private sector. In 1990-91, share of public expenditure on Higher education was 16.54 percent and has delined to 11.45 percent in 2017-18.

(iii).We have investigated that expenditure on higher education as a proportion of total government expenditure has declined over time. It was 2.33 percent in 2002-03 and it declined to 1.62 percent in 2017-18.

(iv). It was observed and noted from statistical Abstract of Haryana of various years that expenditure on higher education as a proportion of State Gross Domestic Product has also declined over time. It was 0.33 percent in 1997-98 and it declined to 0.25 percent in 2017-18. A comparative reveal analysis of the above mentioned facts reveals that public expenditure on higher education as a share of GDP, as a share of state budget as well as a share of expenditure on education has consistently declined over time. This implies that state has been abdicating from its responsibility to higher education. In the initial years after independence, as country needed more educated manpower to meet its developmental needs, education was accorded the status of public good. Over time, higher education has been reduced from the status of public good to the merit good. Now more space has been created for the private initiative and private sector. This policy shift has serious implications for the affordability of higher education for the poor people, which is a matter of great concern for the society at large.

(v). Now we propose to examine the state of technical education in Haryana state in terms of its priorities. It may be

noted that initially technical education was given higher priority and proportion of expenditure on technical education as a share of total expenditure on education was increased from 2.75 percent in 2002-03 to 6.53 percent in 2008-09. However, after 2008-09, share of expenditure on technical education has also been reduced from 6.53 percent in 2008-09 to 2.62 percent in 2017-18.

(vi) It was also noticed that expenditure on technical education as a share of total government expenditure increased from 0.40 percent in 2002-03 to 0.92 percent in 2008-09 and there after it Consistently declined to 0.37 percent in 2017-18. It clearly establishes that after 2008-09, technical education has also been left to the initiative of the private sector.

(vii). In addition to this, it was also abstracted from Statistical Abstract of Haryana of different years that state expenditure on education as a proportion of GDP has remained around 2 percent from 2002-03 to 2017-18 and public expenditure on higher education shows a declining trend. State expenditure on technical education was initially increased and in the later years, it also shows, a declining trend. It needs to be noted that against the accepted norm that education may be allocated at least 6 percent of the GDP as recommended by various expert committees, education has been allocated around 2 percent of the GDP which has been very low. Due to inadequate priority to education and higher and technical education, quality of these in Haryana state is not of the desired standards. Expenditure on higher education as a proportion of GDP has been recommended to be 1 percent. But expenditure on higher education as a share of State GDP has been 0.2 to 0.3 percent from 1997-98 to 2017-18 all these years. Education in general and higher education in particular has been under-funded by the Haryana state.(viii).We present here the combined expenditure on higher and technical education and its relative shares of expenditure on scholarships in various year. This expenditure is for those scholars belonging to economically weaker sections going for higher and technical education and those who cannot afford the enhanced fees or loans from financial institutions. The expenditure on scholarships as a proportion of total expenditure on Higher and Technical education was 0.18 percent in 2000-01 and it increased to 21.43 percent and 28 percent in 2009-10 and 2010-11 respectively. Thereafter this proportion went on declining upto 2015-16. In 2016- 17 it raised to 23.16 which was 18.90 in 2015-16. In 2017-18, share of scholarships declined to 12.56 percent from the previous years share i.e 23.16 it got reduced to almost the half. The reason might be that the state government instead of providing them scholar ships wanted to decrease burden of this and shifted the beneficiaries of scholarships towards educational loans.

(ix). We have also observed that share of Grants-in-aid given by the Haryana Higher Education Department to some State Public Universities in Various years from 2011-12 to 2018-19. During the year 2011-12, Kurukshetra University, Kurukshetra was granted a major share of Rs. 42 crores out of Rs. 122.38 crores given to five Universities of Haryana state. It was followed by M.D. University, Rohtak with Rs.39 crores. In 2012-13, M.D. University Rohtak was given highest priority in granting aid of Rs. 41 Crores out of Rs. 111.50 crores given to the five Universities. The Haryana Government does not give any type of aid or grant to private Universities and self financed colleges in Haryana state · They run with their own resources. After the year 2012-13, the Kurukshetra University, Kurukshetra got the highest share upto 2018-19. These private Universities and self financed colleges charge various types of heavy fees from students Which becomes the course of low accessibility for those who are unable to afford such heavy amount he terms of fees which is un-affordable to them. The motive of privatization is to earn huge profits. The government might think to bring such activities under control at a time when more emphasis is being given to private sector now a-days.

(X) .During the period 2012-2017 the Central Government and the state Government shared 60 percent and 40 percent expenditure for the development of infrastructure of Central and state institutions. This implies that centre (UGC) and the state governments has been abdicating from its social responsibility towards Private Higher education institutions. The Centre (UGC) bears the whole financial requirements of Central Universities and its constituents colleges and deemed to be Universities. The U.G.C also helps to fulfil some requirements of the State Public Universities, Governments Colleges and Government-aided Colleges. The State Government bears the whole expenditure of its colleges, 95 Percent of the recurring expenditure of Government aided colleges and Stats Public Universities. The Private Universities and Private self financing Colleges are not getting assistance of any type.

Suggestions

Regarding financing of higher education in Haryana State,

some suitable suggestions are given as follows:-

1. It is a well established fact that optimal/adequate investment in education has been the key factor behind higher economic growth of the developed nations. But it was noticed that during 15 years period (2002-03 to 2017-18) total) expenditure on education as proportion of total state expenditure was around 14 percent which includes expenditure on primary, secondary and Higher and Technical Education. Out of the expenditure on total education; only 14 percent was on higher and technical education in 2017-18. 95 percent of total expenditure of education was on both Primary and Secondary Education. It is suggested that amount of State expenditure on education must be increased but at the same time it is also imperative to increase the share of expenditure on higher and technical education out of the total education expenditure in order to bring high level quality in higher education.

2. Higher education has been reduced in status to merit good instead of public good. This is a matter of concern as reckless, commercialization of education may be socially counter productive. It is a danger for the affordability to the poor students and for quality upgradation. Low quality of higher education brings unemployment and frustration among youths.

3. The government and the regulating authorities could not control over the irregularities of private higher education institutions and became insensitive to the needs of unemployed youths of Haryana State. Regulatory agencies and the government of Haryana are expected to protect the interest of all the stakeholders of higher and technical education.

4. If rate of human capital formation is to be increased the government must increase its expenditure on higher education to a reasonable extent. Too much dependency on private sector in the absence of strict rules and regulations leads to access, equity, quality and affordability apprehensions. This will also create the problem of unemployability and a source of exploitation of those who are really needy and desirous of getting higher education.

5. Instead of relying on a single form of funding i.e. the Government, Mixed model of funding may be adopted. This includes governmental and non- governmental sources of financing higher education. Involvement of the private sector be regulated with great caution. Reasonable hike in students fee/user-charges, for internal generation of resources by the institutions may be allowed to some extent.

6. The students who are deserving and really poor should be provided with a fee- waiver plus scholarships to meet the costs or user charges of higher education.

7. Education loan scheme facilitates education availability through a mechanism of deferred payments to students of poor families. Efforts should be made to provide loan to such beneficiaries who really belong to poor families. The government must make the arrangements of easy availability of loan at subsidized rate of interest of an adequate amount without any delay.

8. Regulatory authorities must play an important role in controlling the mal- practices of private higher education institutions/self-financed colleges so that the interest of the stakeholders of higher education must be protected. They must ensure that the students must get higher and technical education at affordable cost.

We should learn from the development history of the advanced countries that a social sector like education cannot be handed over to the private sector for its exploitation. Nation building cannot be left to the private people and society has to play a critical commanding role. Therefore state must play its role in provision of higher education to its people and the direction of its growth and development.

Bibliography

Agarwal, P., Said, M., Sehoole, C., Sirozie, M., & de Wit, H. (2007). The dynamics of international student circulation in a global context. In P. Altbach and P. McGill Peterson, (eds.) Higher Education in the New Century, Global Challenges and Innovative Ideas Rotterdam: Sense Publishers pp 109-144

Bhushan, Sudhanshu (2007). Financial Requirements in Higher Education During XI Plan (2007-2012), Research Project Sponsored by UGC, Unpublished.

CABE (2005a) Committee Report on Autonomy of Higher Education Institutions, June.

Gnanan, (2003), Public Private Investment on Higher Education: Changing Perceptions. Paper presented at the UGC Golden Jubilee Seminar on Public Private Participation in Higher Education, University of Calicut, August 27- 28.

Goel, M.M. & Walia, Suraj, 'Access to Higher Education for Economic Growth in Haryana: An Empirical Investigation. The Indian Economic Journal, Journal of the Indian Economic Association, Special Issue, December 2017.

Government of Haryana, Accounts Budget, Budget

Dr. Shalu Sharma
Associate Prof. of Economics
Vaish Arya Kanya
Mahavidyalaya, Bahadurgarh
Pin Code – 124507
Mob. No. -9812222172

Estimate for the year 2009-10- (Non-plan) Higher Education Department, Haryana P-1.

Government of Haryana, Statistical Abstract of Haryana (2015-16), Department of Economic and Statistical Analysis, Haryana, 2017.

Government of Haryana, Statistical Abstract of Haryana, 2008-09, Department of Economic and Statistical Analysis, Haryana 2010 P-144 & 149.

Government of Haryana, Statistical Abstract of Haryana, 2016-17, Department of Economic and Statistical Analysis, Haryana 2018

Government of India (2008). Report of the Central Advisory Board on Education Committee of Financing of Higher and Technical Education, National Institute of Educational Planning and Administration, New Delhi.

Government of India, (2009) Report of The Committee to advise on Renovation and Rejuvenation of Higher Education, (Chairman: Yashpal), March

Government of India. All India Survey of Higher Education, 2015-16, P-39 of 50 and 2016-17.

Government of India. All India Survey on Higher Education (2015-16), Ministry of Human Resource Development, Department of Higher Education. New Delhi, 2016

Government of India. Economic Survey, Various Issues from 1991 to 2009

Government of India, Population Census 2011.

Government of India, University Grants Commission Guidelines for Innovative/Emerging Areas, Teaching and Research in Interdisciplinary Innovative and Emerging Areas during the X1 Plan Period (2007-12), New Delhi

NIEPA (2005b), 'Report of the Committee on NCMP's Commitment of 6 percent of GDP to Education, NIEPA, New Delhi.

Peter, R.S., Current and Emerging Challenges and Opportunities in Higher Education. Philip O'Keefe (2007). People with Disabilities in India: From Commitments to outcome. The World Bank.

Prakash, Ved (2007). Tends in Growth and Financing Higher Education in India', EPW, 42(31) P-4, 2007 & Annual Reports of UGC, Agarwal 2006, P-3250.

Shrivastava, Ravi (2007), 'Result of UGC Sponsored study. Unpublished. The Proceeding of this conference are reported in OECD. Education, Inequality and Life Chances (Paris, 1957).

The Indian Economic Journal, Journal of the Indian Economic Association, Special Issue, December 2017.

54

Empowering the Democracy: An Analytical Study of the Right to Information Act, 2005

Dr. Namita

Abstract

A successful democracy is founded on the principle of transparency in governance. A democratically elected government stands answerable to its people in terms of uniformity, equality and accessibility to the resources available with the government. Right to Information Act that came out in 2005 as a clarion call to fulfill the aspirations of the citizens of India except that of the state of J&K, envisaged an informed citizenry. The act is founded on the democratic ideals of transparency, accountability and corruption free governance of the country. But this process of answerability in governance is confronted by certain hurdles like the stumbling of the efficient administration of public authorities which may also be grappling with the problems of resource crunch and also there are bound to be sparks when it comes to preservation of the confidentiality of sensitive information held under the control of the public authority. In this vortex of push-pull relationship between the proclaimed ideals of democracy and the grim realities of executive machinery in our country, the Right to Information Act requires an expertise on harmonization of conflicting interests on the part of CPIO/SPIO. The onus lies on the CPIO/SPIO who plays a pivotal role in the implementation of this act. The knowledge & harmonizational skills of the CPIO/SPIO are to be forged in the crucible of commitment, on the one hand while on the other the information seeker also needs to be ethically committed and to ensure that the use of this act is exploited for seeking information and not on settling grievances with the public authority.

The present paper seeks to probe the multifaceted aspects of commitment that ought to be connected in the buoyant onward journey of this benign act that has served as an attempt to unbundle the information held in the impregnable 1923 cage of confidentiality and secrecy in the office of a public authority. There is need to probe how after a period of nearly seventeen years of its implementation, the R.T.I. Act is constantly under the questioning gaze of the information seeker as well as the provider of information. There is mistrust and distrust on the way the act has been pursuing its goal. Fault lines cross the either way on the side of public authorities and the seekers of information.

Key Words:- Democracy, Governance, Harmonization, Onus, Confidentiality etc.

Research Paper:-

The success of a democracy is measured on the yardstick of public participation in governance. Indian democracy has celebrated its diamond jubilee yet however it can't be termed as a fully participatory democracy that ensures accountability and transparency in the governance of the country. A deeply entrenched virus of corruption in public life is eating the vitals of Indian democracy. A democratically elected government is answerable to the governed and in order that it to be meaningful, an informed citizenry participating thoughtfully in its governance is utmost necessary.

India got in legacy the official's Secret Act 1923 whereby citizens of this country remained deprived of knowing those information which were marked as secret, top secret or confidential. Unless citizens of a democracy have information and knowledge, their participation in governance of the country remains flimsy because without information and knowledge on the part of its citizens, the democracy is unreal. In order to make a democracy real and effective, the public participation in its governance needs to be founded on the firm basis of concrete information and knowledge potential. The former Secretary General of the United Nations Me. Kofi Annan characterized the strength of information in a democracy in the following words:

"The great democratizing power of information has given us all the chance to effect change and alleviate poverty in ways we can't even imagine today. Our task, your task……. Is to make that change real for those in need, whatsoever they may be. With information on our side, with knowledge of a potential for all, the path to poverty can be reversed" (Compendium, Foreword)

The Secretary General found a participatory democracy a potent means of reversing the path of poverty. No doubt, Indian democracy has been vibrantly pursuing the concept of people's participation in governance. The right to freedom of speech and expression has been a step in this directions, and right to receive information flows from this fundamental right. However, the truth of the matter has been that the right to receive information had been only in theoretical terms and citizens had to follow a cumbersome and difficult procedure of civil laws to get the fundamental right of receiving information become a practical reality as enshrined in Article 19 (1) (a) of the constitution of India. To quote:

"It is now widely recognized that democracy to be meaningful ought to be based on the notion of an informed public participating thought fully in its own governance. Information

and knowledge are the instruments for transformation because these enable public to engage their representatives and the bureaucracy on an ongoing basis and to participate effectively in the formulation and implementation of policies and activities purportedly for their benefit. An empowered citizenry tends to make administration more accountable and participatory. It also ensures greater transparency and acts as a deterrent against the arbitrary exercise of official powers." (Compendium, 09)

In order to make Indian democracy a truly participative and to ensure accountability and good governance, the flow of information and knowledge needs to be real and practical. The right to information Act 2005 in the very first line of its preamble says that the Act intends to set a practical regime of the right to information for citizens of India since the fundamental right of information had turned purely theoretical in its application and the success of the Right to Information Act is primarily based on this fact whether the implementation of the Act has been successful in reversing the theoretical regime.

The most significant aspect of the Right to Information Act has been its benignity. It is bipolar in its spirit. It takes into consideration the administrative and financial impediments that might creep into the implementation of this Act while at the same time it upholds the paramountancy of the democratic ideals. It states:

"And whereas revelation of information in actual practice is likely to conflict with other public interests including the efficient operation of the Governments, optimum use of limited fiscal resources and the preservation of confidentiality of sensitive information."(Preamble)

The Act highlights the grim reality of resource crunch in public authorities through section 4(a), Section 4(4) and section 7(a) and stresses the idea of cost effectiveness and avoidance of a disproportionate diversion of resources. The Act applies to the whole of India, except the state of J & K which is governed by the state laws. The strength of the Act can be measured by the fact that it has acquired within its ambit all the three tiers of the government i.e. the centre, the state and the local Government and also includes in its scope all the three branches of governance viz the legislature, the executive and the Judiciary. It is benign in its implementation for it underlines the importance of harmonizing the conflicting interests while dealing with the process of disclosing information to the citizens of the country. The Act clearly states that 'informed citizenry', transparency, Accountability and corruption free governance of the country are the pillars of a successful democracy. The Act expects that the PIO needs to be committed to developing and harnessing his/her potential in order to be able to harmonize the conflicting interests while dealing with the disclosure of information. It defines information as any material in any form, including records, documents, memos, email etc. The definition includes also "opinions" and "advices" however these are to be held in material form and any abstract advice or opinions without it having been recorded as a material document falls outside the definition of information under the Act. Usually, the information in material form falls in the following three categories when it comes to disclosure under the Act:

a) Information the disclosure of which is uninhibited under the Act since it is quite comprehensible at the level of the Public Authority that it is in material form and falls outside the exemption clause of section 8 of the Act. Moreover, the information may be disclosed to the applicant as a matter of his right under the Act.

b) Information the disclosure of which falls within the exemption clause of section 8(1) a, c, and i regarding which no ambiguity exists in terms of whether larger public interest will be served if disclosed and there is no unwarranted invasion of the privacy of the individual and vice-versa. No matter howsoever, such information is exempt from disclosure.

c) Information the disclosure or exemption from disclosure of which entails either of the two conflicting interests viz fulfillment of larger public interest or the unwarranted invasion of the privacy of the individual.

The right to information Act has traversed a buoyant journey of nearly twelve years and has earned a larger acclaim from people who consider the Act a great success while on the other hand, it has been subjected to great criticism for one or more of the following reasons.

a) People have misused the Act for settling their score of grievances against the public Authority or the third party. Moreover, BPL applicants have been exempted from the payment of fee and further fee if any. This provision is being misused by unscrupulous persons of the society.

b) The Act has led to resource chaos where it appears if the whole vocation of the public authority is to reply the RTI applications only. There are umpteen instances of a person seeking a plethora of voluminous information by filing a single application that tends the boggle the mind of the PIO whose public authority is already confronting the grim situation of resource crunch. The seekers of information ought to be ethically committed and desist from putting RTI application of more them 500 words at a time as also advised by the government in its recent amendments of the Act.

c) People are disgruntled when they find that the PIO has tried to scuttle their attempt to seek information by citing flimsy reasons on account of the absence of any penal consequence or 'contempt of court' provisions, some public authorities fail to provide any time bound action plan. The applicant feels that the RTI Act is not effective in the real terms.

The Act envisioned such reactions and therefore provided sufficient leverage on the sides of both the applicant as well as the public authority. It was on this account alone that the Act outlined the idea of harmonization of conflicting interests in its preamble. The third category of information mentioned above has generated a great heat. These are information held under the control of the public authority which needs to decide if the disclosure serves the larger public interest or the exemption from disclosure protects the unwarranted invasion of privacy of the individual. These are such information as the disclosure of which can't be asked as a matter of right by the applicant like that of the first category information stated above. The information which falls within the scope of section 8(1) excepts a, c and i often create confusion at the level of the public authority and at times also at the level of the Information Commission for the candid reason that the conflicting interests are not getting rightly harmonized. In the wake of such situations, the legal interpretation by different courts of law is the sole recourse. The information which falls within the exemption clause can't be demanded as a matter of right by the applicant and the disclosure is allowed only when the applicant becomes successful in proving that the larger public interest will be served by its disclosure for it involves some sort of corruption or there is a violation of Human Rights or any other democratic ideal will be compromised if not disclosed. The information may also be disclosed if at the level of the Public Authority itself, when it becomes evident that the larger public interest gets served by the disclosure.

In order to properly harmonize the conflicting interests, the knowledge of the PIO/FAA/IC needs to forged in the crucible of commitment to the spirit of the Act. The Act upholds the supremacy of the democratic ideals and aims at bringing about corruption free governance of the nation with almost transparency and accountability. It responds to the answerability of the government to those governed. It is one of the strongest legislations of the world that provides for penalty for the contraventions of its provisions on the one hand and the protection under section 21 of any person for anything which is in good faith done or intended to be done. The objectives of the Act are quite pious but on the account of the absence of any penal consequence or like the contempt of court proceeding, the Pubic Authorities tend to thwart any time bound action plan for the implementation of this Act in general and for making the sue motu disclosures under section 4 of the Act in particular. There is need at the end of the Public Authorities that effective steps are taken to propagate their actions and the provisions of the Act to the remotest level of people living in villages and far flung areas of rough terrains. The practical regime of the Right to Information can be achieved only by active and larger involvement of the people who are fully abreast with information and knowledge. To quote:

"What is most important at the present juncture is that the Act be given an honest chance to operate smoothly without creating negative stumbling blocks and bottlenecks. This casts a special duty upon the organizations of civil society for remaining vigilant to ensure that the objectives of the Act are not frustrated through the bureaucratic manipulations."(Compendium, 22)

Notes & Refrences

I. The Right to Information Act, 2005.

II. Dhaka, Rajvir. S. A Compendium on RTI, For Ready Reference. New Delhi: Sustainable Development Foundation, 2016.

III. Yadav, Dr. Abhe Singh. Right To Information Act,2005-An Analysis. Allahabad: Central Law Publications,4th Ed.,2012

IV. Gandhi,Shailesh & Kachare, Pralhad. RTI Act-Athentic Interpretation of the Statute. Mumbai: Vakils,Feffer and Simon Pvt. Ltd.,2016

Dr. Namita
Associate Professor of Political Science
Govt. College Bawal
Rewari (Haryana)
Mob.- 9416373255
Email: diwannamita1970@gmail.com

55

Poetics of Symbols and Images in These Hills called Home: Stories from a War Zone by Temsula Ao

Dr Anoopama Yadav

Abstract

Symbols and images play a vital role in enhancing the authors' quality of writing short stories and novels. It helps reveal the vision of the author more clearly and precisely which is not possible otherwise. Temsula Ao an eminent writer from North-East India make use of deeper insights to picturize the reality of people belonging to her area. There are several writers belonging to the English literature canon who have made images and symbols an integral part of their literary works. Symbols and images indirectly depict meaning and also provide deeper insight into the human understanding of the world. Writers explore extrinsic characteristics of objects, places, and phenomena to name them. It depends on how the writer's consciousness project what is essential in the real world. In this paper, the meaning of symbols and images employed by Temsula Ao is analyzed. The different ethno-cultural setting is presented by the writer in her collection of stories. Ao has provided a key to the reader by making use of objects, places, things, and people as symbols and images. Thus preparing the setting, evoking and building an appropriate mood and atmosphere in the mind of readers related to the complex themes of her stories. This paper aims to find out the effect of using symbols and images on the writer's style and the addressee's understanding.

Keywords: Northeast, Literature, Symbol, Images, Ao community.

Temsula Ao's 'These Hills called Home' is a piquant study in the hyphenated nation-state selfhood of the Nagas. This identity is like a massive and changing dimension that does not permit individual variation and works against their diversity. She has picturized the true life and ways of the Naga people. Among the different tribes of Nagas, Ao's are the most significant tribe. Even though a general similarity is visible in the rituals, customs, and traditions of these tribes but variations are evident in the lifestyle, dress, habits, and different dialects. “The most absorbing ethnic unit, which presents several characteristics not found in other Naga communities is the Ao Naga tribe.” (Ganguli, 1984:112) Only a culturally enriched society is considered to have its roots or identity. The Ao's are luckily revered with the cultural inheritance which is very marvellous and valuable. They are an important tribe among the Nagas who reside on a long stretch of continuous and undivided ranges of Hills. The region is divided into six ranges: The Langpangkong Range, the Asetkong Range, The Ongpangkong range, the Changkikong Range, the Japukong Range and the Tsurangkong Range. The fountainhead of everything in Ao folklore is the belief that the ancestors of the Ao's emerged out of the earth at 'Longterok'. (Ao, 1991:1)

Temsula Ao belongs to the Ao community. She is one of the main writers from the Northeast. Her writings project the political disturbance and unrest in her area. She is a retired professor of English from the North-Eastern Hill University (NEHU), Shillong. Writing reflects her culture in a volume of short stories called These Hills called Home: Stories from a War Zone (2006), and Laburnum For my Head (2009). She has also written poems portraying the essence of Ao culture 'Songs from the Other Life'. Her works have been translated into many languages. Temsula Ao was awarded Padma Shri in 2007 and Sahitya Akademi Award in 2013. In her stories, society plays a vital role in Ao Nagas. An individual who possesses a good position in society can't win a judgement against it. Therefore, an individual needs to stand with his society and not go against it. Society provides help to the individual both in his good and bad times. Ao has brought to light her culture, customs, and traditions through her stories. The Naga society is a traditional society, where the cultural patterns are reflected in the folklore and the life-breathing oral traditions of the community. (Sen, Kharmawphlang, 2007:1)

A symbol is a representation of a real object or thing that advocates for something else. In narratives, symbols are generally characters, context, scenarios, images or recurring or dominant elements or themes that stand in for significant notions. Writers generally make use of symbols to add more value to their work and thus making their stories about more than the event it portrays. Nevertheless, writers don't always give us a structured representation of their symbolism, so it can take a lot of pondering to deduce precisely what the symbols in narratives mean making it easier for readers to apprehend them. In literature, a symbol can be a word, object, action character or idea that represent in physical or concrete form and identifies a range of entities, values, and senses.

Diverse types of symbols generate distinct impressions in the mind of readers though the aim of symbolism is all-encompassing as a literary device. It heightens and augments the reader's knowledge and opinion regarding literature. There are different categories of symbolism and their effects:

Emotion: Many times symbols bring forth emotional reactions or replies in readers, acknowledging them to invest in the

narrative and characters. This emotional effect of symbolism also generates a persisting effect on the reader.

Imagery: Symbols can generate vivid descriptions presenting or suggesting images of visual elements that accord readers to grasp or comprehend intricate literary themes. Physical objects and events are used to symbolize an idea or concept. The reader's attention is pointed towards the themes that the plot is dealing with.

Thematic connection: Symbols can join themes for readers spatially in single literary work and throughout literature itself. This is for larger comprehension in the field of literature as an art.

Character attributes: Symbols can depict different characteristics of characters, both as stated, read, and metaphorical sense. Characters are depicted as virtue or vice or may present a political ideology. The readers can identify character traits and apprehend their actions based on symbolism.

Deeper meaning: Symbolism yields authors to portray intellectually deeper meaning in their writings for the reader. This imparts a layered effect of comprehension so that different readers can discover varied levels of meaning with each uncovering the literary work. In some situations or events especially when a symbol is hard to grasp or barely noticeable, it's not always even clear whether so ever the writer's use of symbolism is planned, or done voluntarily. Many times, the readers provide their sense or concept of the text by "reading into" anything as a symbol.

Symbol images are usually employed in literary work to portray different events. It incurs the author's aesthetic expression that supplants dull writing. In addition to it, symbols and images yield readers to envisage or form a mental picture of composite or difficult subjects. Symbolism concedes the author to reveal further reality, as they relate to their message or subject. It also helps them to seize the comeliness or the strife of life in thoughtful and unusual ways. Temsula Ao has made ample use of symbols and images in her short stories collection These Hills called Home: Stories from a War Zone. There are ten stories vividly describing the Ao culture, tradition, political unrest, and socio-economic status of the Ao Naga people in Nagaland. The titles of the stories are The Jungle Major, Soaba, The Last Song, The Curfew Man, the night, The Potmaker, Shadows, An Old Man Remembers, The Journey and A New Chapter. Another element of speech is Ao's use of folklore and dialect in the development of the plot and the characters as well as the way she incorporates the songs, stories, beliefs, and traditions of the Ao Naga community.

Song: Singing is inherent to the lives of the Aos. It is a requisite or necessary part of all Aofeast and festivals. In The Last Song, the army disrupts the inauguration of the New Church by the village people. Apenyo, the lead singer in the choir started singing exhibiting her courage and lack of prudence. The soldiers were enraged as it was an act of bold resistance and disregard for authority. Proper punitive response became necessary on the part of the army. The captain dragged Apenyo towards the old Church by her hair. Apenyo was singing the chorus of her song as a means to repel the attack. Song itself is an allegory for the disappointment and loss that finally comes to those who solicit celebration for its own sake. In the end, she actualizes that her song cannot stop the ill will of the armed forces and all the setup made by the village people for celebrating Christmas suddenly becomes insignificant. Neither rape, nor death could take the song away from her lips.

Shawl: In The Last Song new shawl worn by Apenyo symbolize youth and innocence. In one scene, she is raped by the army Captain and later on is ordered to set the old Church on fire. The remains of the shawl left unburnt remind her of the sacrifice she has to make for resisting the aggression of the army. The burnt shawl piece of Apenyo symbolizes the connection to pain and sorrow. At the end of the story, TemsulaAo suggests that Apenyo sacrificed her life and her shawl is a symbol of comfort and protection and is connected with festivals and a grand feast. The shawl was a memento symbolising the Ao culture and tradition.

The Church and Christmas: In The Last Song Temsula Ao has made use of the religious symbol 'the church' to represent human emotion and desire. Human desires range from the captain's lust to Apenyo's ambition to be a good singer. Church symbolizes chastity, honesty, and justice whereas Christmas relates to birth and change for the better. Ironically in the name of justice, honesty, and chastity only betrayal occurs. Thus, it depicts the alteration of moral values leading to the destruction of human feelings like love. Church foreshadows a place where only rebels meet. The house of God could not save the villagers from the atrocities of the army.

Burial: The burial calls attention to the traditions and rituals of the Ao Naga community of Nagaland. Temsula has pointed out in her book that in areas like marriage and death certain traditional values are relevant even today. The Ao people have embraced Christianity and western education and they believe in certain taboos. People who died of mysterious diseases or unnatural death were isolated from the villages and their dead bodies were buried outside the village. The villagers regarded it inauspicious to allow the

burial of Apenyo and her mother Libeni in the village. This suggests Ao's belief in various superstitions and superstitious practices. Both mother and daughter lost their honour and life.

Rain: In The Last Song, rain implies wide-ranging symbolism. It symbolizes cleansing and washing away sins committed by the army over the villagers. In Christianity, it symbolizes spiritual death and resurrection. Rain symbolizes sadness and tears that surmounted the life of village people. Temsula has used rain as symbolism to show that it can be a symbol of cleansing, clarity, sadness, and melancholy. In The Last Song, rain undertakes a fairly negative role in that it inspires feelings of sadness and depression. When it rains, it is dark, bringing out negativity and empowering the negative feelings and thoughts among village people. This rain symbolizes a traumatic event that occurred to Libeni, Apenyo, and villagers who have assembled for a Christmas celebration, and it's almost an effect that's used to inspire some sympathy for these characters. It symbolizes a turning point. After the raid and brutal killing of villagers by the army, the falling of rain continuously throughout the night signifies the cleansing of the dirtiness mentally and physically. It's used as a sort of cathartic quality that cleanses one's soul. It acts as this redeeming event that can free one's soul and remove all the bad thoughts and negativity from one's mind. This symbolizes that the village people who lost their lives in this mishap could rest in peace.

Patriarchal Community: The Ao community is essentially patriarchal. In a clan's meeting, a man has the right to stand up and speak but the women are not given this right. The characters live in a community. Ao draws a rich portrait of how a community can be simultaneously hurtful and helpful. In The Night, the village community is symbolized as judgemental and critical. Temsula Ao writes in her essay "Benevolent Subordination" 'The Peripheral Centre, (2013)… they (men) are reluctant to 'revolutionize 'the grassroots organisations for fear of going against time honoured traditions.' This unwillingness is illustrated In The Night as Imnala prepares to face the village council on charges of illicit sexual relations with a married man. The Night symbolizes a loss of faith and projects evil. A person is not permitted to have more than one wife but her difficult situation is to assure that her unborn child is not tagged as illegal. Imnala knows that she has to fight her own battle. She no longer has to carry the disgrace of mothering a 'fatherless child. The story depicts how Ao Naga women have continued to exist without protection from males in a violent political region. Though she is neglected by the society she has a strong decision for a good upbringing of children. In The Curfew Man, curfew symbolizes restriction, regulation, and house arrest. Satemba is forced to spy for the government. He is not prepared to violate the trust of his community. The Ao Nagas did not willingly join and help the armed forces. He gets himself badly injured and tragically comes to a bedridden situation. His situation makes him unfit for a spying job. He feels relief and freedom from the perverse bondage of spying against his people.

Pot: The Potmaker is the story of a girl named Sentila, who wants to be a pot maker like her mother. Her mother doesn't want her daughter to learn the art of Pot making rather she wants her to learn to weave. This trade was more beneficial in terms of making money. The pot symbolizes the control of the traditional Naga community over its people. This story provides a peep into the life of Sentila and how the traditional Naga community controls Sentila's wish as a pot maker, obscuring the lines between dreams and dictated roles in a "benevolent subordination". In the end, Sentila's persistent efforts pay and she becomes an established pot maker just like her mother.

Silence and Speech: The recurring references to the importance of silence and speech support the theme of independence. As female characters gain confidence as women they begin to express themselves more. The repressive, controlling patriarchal system wants to keep females from speaking. But female characters like Imnala, Khatila, Apenyo, Libeni, Imtila speak up their minds and are regarded as one of the foundations for independence.

Community: At times, the characters rely on their community for survival. In the story The Journey the community group helped Tinulaand Temjenba in their difficult journey on foot from Naga Hills to boarding school in Assam. Temsula has portrayed the true picture of life and ways of the Naga people. The community group help in carrying the rations required for the cooking meal on their route. The community works on the principle of sharing labour and provisions. "It was a custom for villagers to carry sufficient provisions which could last them for their journey." (The Journey)

Mismatched Couple: It symbolizes the unsuitability of the physical attributes of husband and wife. In Jungle Major, Punaba and Khatila were not accepted as ideal couple by the community. There were vast differences in their looks and status. They were termed as a 'mismatched couple' by the village folks. Punaba was a short dark coloured fellow with 'black teeth'. On the other hand, his wife Khatila was 'tall, slim and possessed charming smile'. After many years of marriage, their childless state became the subject of preposterous speculations by the community. When Punaba

joined the underground forces, Khatila had to comply with the orders given by the village authorities. When Indian army soldiers raided their house, Punaba in disguise as a poor and ugly servant made his way and escaped. Khatila exploits the physical ugliness of her husband to outwit the army and save her husband and village from disaster.

Pumpkin: It symbolizes traditional old teachings and family ties. The story A New Chapter revolves around Nungsang who is an army contractor. He helps his distant cousin Merenla who is a widow. He helps her in buying a pumpkin and its seeds. Later, she is betrayed by her cousin, who has found prestige and wealth in politics. Merenla realizes that traditional teachings of family ties are thrown in the mud where money, power, and prestige are concerned. The insurgency has opened up new opportunities but they come with a price as pumpkin grower Merenla realizes.

A New Chapter: The title does not talk only about the actual beginning of a new day but also signifies a new start, a fresh chance to begin and the end of a previous one. In the story, the throwing of the pumpkin by Merenla symbolizes a new chapter in her life, a new start. Nursang also starts a new chapter by becoming an M.L.A. Here the story A New Chapter symbolizes need and hope.

Nature: The writer gives a colourful picture of a dense green landscape with luxuriant biodiversity of flora and fauna. Throughout her stories, Temsula makes use of nature imagery. Trees, landscape, the sun, the Disoi river, hill streams, and thick foliage often indicate the character's insight into their life. A man guards himself against nature for survival. There is no congeniality of man with nature rather he lives in isolation.

Jungle: The jungle is symbolized by horror, violence, bloodshed and murder. It depicts how humanity was challenged in the war zone. It is symbolized as a place of evil and mystery. The extremists hide in jungles to resist the Indian government for establishing political autonomy in their area. An Old Man Remembers revolves around the story of Sashi and Imli who were forcefully made soldiers and ended their life in the Jungle. Their life was sorrowful and pitiful. The bitter memories of life in the jungle inhabited their body and soul almost all the time. The old man, Sashi had deep feelings of emotional pain on account of experiences in the past. Every time the old man's thoughts wander to his life in the village. His mind incessantly causes him to experience the memory of his loss, causing him to sink further into hopelessness and sorrow. The Journey unravels how the protagonist Tinula goes through obstacles to receive formal education. The difficult journey she undertakes is embedded in her psyche as scars as she travels with her brother Temjenba.

Boss: The name 'Boss' symbolizes power, selfishness, and greed. Everyone desires power and many characters are willing to kill for it. Some begin with good intentions, but ultimately they get corrupted. 'Boss' name is used as symbolism of power, implying that the name seduces, perverts, dictates and ruins people who are attached to it. In Soba, the 'Boss' name is a symbol of Imnochuba's personality. Boss is a representative of a totalitarian government and its dominance in society. The name Boss can exert influence, handle and wield people's lives by spying. Boss is all-powerful and God-like, substituting love from people's lives with a phobia, and imposing an obligation on them to follow the rules, regardless of whether they lead to sin in their own lives in his honour. The name Boss represents an image without humour, and grave in a manner of disposition. Those in power use him to exert control over people. Temsula Ao speaks about the new class that takes up weapons. They cause trouble and anguish among people. They exist between the two warring groups. The government recruited them as 'home guards' known to make perpetual horrible crimes. This breed was equipped with vehicles as well as guns and was given free rations of rum to boots. They moved around town causing unwanted annoyances and problems with the public, after settling old scores with competitors whom they would not have the courage to dare under normal situations. Nevertheless, caught in

the obscure puzzle of drinks and violence, Boss shoots his child servant Soaba, a bumpkin dead by charging him of being a suspect.

In the story Shadows, cruel men like Hoito among rebellious groups do the illest to his cadres to fulfil their gigantic self-importance. The harsh truth of the circumstances of the tragic power struggle is shown. Temsula Ao has made ample use of symbols and images to vividly portray the themes related to Agriculture. She has put forward the political, social, and economic problems and situations confronted by people belonging to the North East before her readers. The different symbols and images beautifully portray the vast dimensions of different issues confronted by her characters in different stories.

References

Ao, Temsula. “Benevolent subordination: Social status of Naga women.” The Peripheral Centre: Voices from India's Northeast 2010, pp. 100-107.

Ao, Temsula. The Ao-Naga Oral Tradition. Baroda: Bhasha Publications, 1999.

Ao, Temsula. These Hills Called Home: Stories from a War

Zone. Zubaan, 2006.
Ganguly, Milada. A Pilgrimage to the Nagas. New Delhi: Oxford and IBH Publishing House, 1984.
Sen, Soumen and Kharmawphlang, Desmond L. Orality and Beyond: A North-East Indian Perspective, New Delhi: Sahitya Akademi, 2007.

Dr Anoopama Yadav
Assistant Professor
Maharaja Agrasen College for women
Jhajjar
C/o Sh. Ram Mehar yadav
H.No. 712/14
Adarsh Nagar
Jhajjar
Pin 124103
Mob. 7015909938

56

Environmental Sustainability: limit to Economic Growth

Dr. Shalu Sharma

Introduction

Ever since the hunting age and up to the modern age, man has covered a long distance passing through the various stage of economic progress embracing development as well as growth. In the ancient era of civilization hunting for food was man's principal activity. With the passage of time, he has discovered thousands of means of livelihood. Earlier he was scared of travelling long distances but now he has conquered his fears. Now he dives deep into the seas, crosses the oceans, flys into the air and over comes the barriers of gravity. He is now all set to venture into space - tourism, (to large extent, he has already ventured).

Review of Literature

The journey of a man from pastoral age to the modern age is often viewed as the process of growth and development. Economic growth is a process whereby and economy's real national income or real per capital income increases whereas economic development is a multi-dimensional phenomena. Alongwith increase in national or real per capita consistently, it includes the rise in the rate of capital formation, improvement in economic or material welfare and structural transformation of an economy from subsistence sector into the secondary and then into tertiary sector. It also involves improvement in the standard of living of the people and equitable distribution of the wealth and incomes. It is not only concerned with increase in material requisites, but also conducive to improve in ethical habits, education, public health, greater leisure and infact, all the social and economic circumstances that make for the happier life. In addition to the above mentioned elements, United Nations Development Program (UNDP) has developed Human Development Index (HDI) as the indicator of economic development in which expectancy of life, adult education, education infant mortality, maternal mortality rate and real per capita gross domestic product included. As per consideration made by the overseas Development Council, Physical Quality Life Index (PQLI) has been given priority for measuring the level of economic development in which life expectancy, infant mortality and literacy rate are preferred.

In this age of globalisation, economic development is described as competitive growth process in which each country is trying to be ahead of the other. However, while achievements of growth and development are presented as tall claims, we are often reluctant to appreciate the social cost of this growth and development. In the present context, in this study attempt has been made to examine the relation of economic growth and ecological change in the backdrop of its social cost. The result of study can become a guiding factor for perspective planning.

Methodology and Data Base

The present study is based on secondary data collected from government publication of its various departments. Averages and percentages were used as analytical tools to find out the quantitative results and qualitative inferences.

"Ecology" comes from the Greek word "Oikos" which means house or home or household and "Logos" which is the word taken to mean science. It is the study of the house-hold of nature. It is useful word that conveys the idea of study of all the related phenomenon of environment of living things. The term "Ecology" is the branch of "biology that deals with the relations of organism in (living things) to one another and with their physical surroundings.

Objectives

The main issues in this study are how far the growth process has negatively influenced the household of nature. How has this mad rat race of competitive growth spoiled the ecological environment those conditions and effects which influence plants, animals, human beings and other creatures and micro-organism ? And how far this competitive growth at global level has polluted environment, depleted natural resources and reduced the resource- endowments for future generations? Once resources are exhausted, ecological degradation continues unabated, the human race must face deprivation, disease and degradation in quality of life in the form of its social cost of this global competitive growth process. How long can we sustain this pace of growth? Ecology or the household of nature comprises of abiotic and biotic elements. Abiotic elements are such as land, air, water, minerals, mountain, rains, climate, rivers, seas and ocean etc. Which are free gifts of nature provided to us for human happiness. Biotic elements include all kinds of living creatures like plants, animals, birds, reptiles, micro-organism and human beings.

Cause of Ecological Degradation in India

Environmental degradation sets in when process of

regeneration by nature lags behind the process of degradation in the process of economic growth. One of the major causes of ecological deterioration in India is its rapidly increasing population size. The population census 1921 showed total population size 25.14 crore and 121.06 crore as per census 2011 but now India is a country having more than 140 crore up to the end of year 2022 (Population Statistics 2022). It has become a habital for 17.7% of the world's population occupying just 2.4 percent of the world geographical area and supporting the second largest population of the world. In India the benefits of its growth and development are not reaching to the really deserving poor masses. This causes a serious social imbalance in Indian society resulted from Indian development paradigm. Population explosion and wide spread poverty have become responsible for the conversation of forest land into industrial and residential buildings on the one hand and ruthless exploitation of the natural capital like excessive tree feeling used for firewood to make their living on the other.

Another aspect of ecological problem arise due to rapid industrialization as it contributes to air, water and noise pollution. Rapid industrialization leads to urbanization and rapid urbanization leads to deforestation. Multiplicity of transport vehicles has substantially increased noise and air contamination. The major source of air pollution is due to carbon dioxide (Co2) emissions in the process of coal based thermal power generation. Second is industrial emissions of poisonous gases. In addition to this increasing use of insecticides, pesticides and chemical fertilizers in agriculture has also added to environmental problem. In order to achieve higher levels of economic growth, man has excessively exploited the natural and physical capital. The depreciation and replacement of physical capital is possible but degradation of natural capital especially non renewable resources cannot be compensated. Degradation of land occurs due to soil erosion and alkalixity and salinite of soil, results reduction in the soil fertility. River water is being polluted as the industrial waste is streaming into the rivers. Domestic sewerage and agriculture and animal wastes mixed with pesticides and insecticides also flow into streams or rivers. Poisonous gases/smoke from the industries and emission of gases from motor vehicles have also resulted into ecological degradation. Due to all this, the society has to beer a great social cost in the form of air pollution as it causes hypertension, asthma, respiratory and cardio vascular problems. Due to industrialization, water is polluted which become the major causes of disease like diarrhea, hepititis, jaundice etc.

Industrialization at the cost of environment is not sustainable. Inclusive social growth will be elusive if natural resource are viewed from the prism of short term gains. Economics tells us that every country must aim at ensuring a harmonious development of the sum total of its natural capital stocks, man made, human and social capitals.

This calls for ensuring that environment is cared for by the law abiding people of the country as has happened in the highly industrialized Germany and Scandinavian countries. After independence, India launched itself on a pursuit of industrialization on the western model but this has had serious negative implications as best illustrated by Larry Summers after Bhopal Gas disaster in 1991 stating: "The measurement of the cost of health impairing pollution depends upon the forgone earnings from increased morbidity and mortality." As we know that India is one among the low wage countries so it is a favoured destination of many of the world's worst polluting enterprises that are no longer allowed to function in their own country. Some economists are of the view that the U.S. model is the only model which may suit even after the current economic difficulties. In India we have observed the unfavorable consequences of the U.S. Model - including exhaustive use of natural resources, unacceptable pollution load, failure to build human capital because of declining investment in education, science and technology. Poor health care and high levels of unemployment, and erosion of social capital with increasing levels of social strife. Under these circumstances, western Model should not be our ideal. We cannot ignore the resultant consequences of the model as it creates the endemic problems of social injustice, economic inequality, environmental degradation and large-scale corruption.

Suggestions

After having acquaintance with delineated issues and results, it may be suggested that the Western model (like German Model) which accepts industrialization in a more, ecological friendly manner and is far more caring of environment than the U.S. Model should be taken up. The major commitments to environmental protection should be the slogan of economic development in the names of industrialization and more make- in the country movements. Its entrepreneurs are known for restrained behaviour and willingness to accept relatively low level of returns in

contrast to the U.S. bankers.

It is known that democracy and liberal/moderate capitalism, with all their short- comings, are the well and widely accepted political and economic systems respectively. The market forces must be socially moderated to ensure environmental costs that are born by the various segments of society must not increase. This common property (i.e. ecological environment) should be protected and sustained and environmental degradation should not be allowed to prevent the process of economic growth and development. This calls for citizen's participation also. The constitutional provisions for empowering the people must be exercised in its real sense. Scientific (activists) and ecologists as partners in the scientific enterprises must be encouraged and appreciated for their of positive role in the realm of environmental sustainability. This is the only way in which we can enjoy the fruits of development and growth in the healthy and happy ambience. In addition to this, the Doha-summit (2013) issues pertaining the environmental (which includes ecological aspect also) safeguards should also be implemented in good sense. The WTO's summit which was taken place in Keniya's capital Nairobi in the third week of December, 2015 should also be embraced by all 162 member nations including India and OECD-member countries. A Prior to these summits many other conferences, Conventions, Protocols and Treaties were held from time to time at international levels for safeguard waste Lands, Rivers, Lakes, Carbon based Pollutions, Migratory species ozone depletion, Biological diversity, Green House Gasses. Climate change, Global warming and other Environmental issues. Few of them are Ramsar Convention (1971). In Iran Stock Home Convention (2001) in Geneva in Swizerland, Bonn Convention (1983), Vienna Convention (1985), Montreal Protocol (1987), Kyoto Protocol (1997) in Japan, United Nations Frame work Convention (1992) Rio Summit, Paris Convention (2015) in France. The aims and objectives of all these were to maintain environmental sustainability. Paris Climate Change Agreement/ Paris convention was held in France on November - December 2015 at Paris. It came into force in November 2016. It was attended by 195 countries. It was mandatory or legally binding agreement. Its aim was to reduce 20 percent atlist the production of Green House Gases Carbon dioxide and Mathane gases and to combat the global tempurature global warming below 2 degree Celsius which was during pre- industrial period (1818) approximately Otherwise Maldives Is setting at the bank of diving. This would have been done during 2015-2021 by growing trees, plants, forests and other renewable resources- This agreement was different in nature from Kyoto Agreement/Protocol (1997) held in Japan. This was the protocol/ between developed and developing countries and was not imposing any legal binding developing nations."

Two months ago Climate summit opened with dire warnings about planet's future - (B.BC News) - New UN Climate Change Initiatives have been taken. In annual meetings of World Economic Forum, Davos Summit on Economic Energy and Food Crisis will be held in 2023 whose main agenda would be on climate change and will take part 130 countries in it. In 2022, G-7 Summit G-20 Summit, BRICS Summit, SCO summit, APEC Summit and ASEAN Summit were held.

The solution lies in the adoption and seriously implementation of the decisions taken in all these agreements, Conventions and Summits by the member countries. Environment sustainability is very much needed for sustainable economic growth. Keeping in view the importance of the solution climate change, India has taken some better steps than Europian countries. Due to the energy crisis emerging out of Russia - Ukraine war, Europe is using more coal whereas India has set a wonderful example of decreasing the use of coal. Not only this India has adopted some methods with the help of which tackling the problem of climate change would become possible. Among such efforts are the systematic expansion of renewable energy, change in Hydrogen policy, De-Carbonisation of Railway and the achievement of the objective of Net-Zero-Generation up to 2030. Despite all these efforts, the Government of India has prepared a regional basis plan to reduce pollution. Under National Energy Policy, the Solar energy capacity will be increased so that the Central Electricity Authority may decrease the use of coal. If we compare the world-level efforts, India has done. remarkable affords/progress in this direction.

BIBLIOGRAPHY

"The Hindu". Dt 05.12.2015, (pp: 1,9,15).

Government of Haryana, Economic and Statistical Organization, Planning Department, 1993, Statistical Abstract of Haryana, 1991-92, p.299.

Economic Survey "2013-14".

Jain, T.R. and Ohri, V.K., 'Environment and Sustainable Development, Indian Economic Development; Global

Publication Pvt. Ltd. New Delhi 2012-13, pp. 225,228,231
Achaya, K.T. Huria, V.K., 'Rural Poverty and Operation flood," Economic and Political Weekly, Vol. XXI, No. 37, September, 13, 1986.
Sanghi, A.K. and Dey, Deke, 'A Cost-Benefit Analysis of Biogas
Production in Rural India in Agriculture and Energy' edited by William Lockeretz, Academic Press, New York, 1977.
Sharma, H.S., 'Ecological Impact of Dairy Development' Kurukeshetra -
A Journal on Rural Development Vol. 47, No.6, March, 1999,
P.36. WION Climate Change, World Economic Forum, Annual Meeting Davos Summit 2023. Economic Energy and Food Crisis. climate change agenda.
Static GK
Important Summit (2022), [Current Affairs/ G7, G20, BRICs, Sco, APEC, ASEAN.
Khosla, Aarti (2023) Danik Bhashkar, 24 January, 2023, p.4.

Dr. Shalu Sharma
Associate Professor of Economics
Vaish Arya Kanya Mahavidyalaya, Bahadurgarh
Pin Code- 124507
9812222172

57

Myths in English Literature as a Source of Inspiration

Dr. Poonam Rani

Abstract

Indian mythology has been reshaped and restructured in the last decade in Indian Literature. The novel is a genre that Indian authors may effectively use for their creative goals. Native writers used Hindu mythology as a crucial literary strategy to enhance their writings. It has been highly alluring for any writer, whether they are from the pre-independence or post-independence eras, to capitalize on the riches of this nation that has long been the repository of a rich cultural past. This paper seeks to provide a brief study of how Hindu mythology is used as a literary technique by Indian authors like R.K. Naryan, Raja Rao, and others.

Additionally, it tries to analyze Hindu mythology as a trustworthy resource and effective tool for articulating the authors' personal and political confusions.

Keywords: - Pre-independence, Myth, Hindu Mythology, Post-independence.

Across all eras and geographic boundaries, myths have captivated, inspired, and sparked the creative urge in authors. Examining the connection between the authorial intent of the myths and their role as cultural artefacts within a perpetually 'changing' social reality might provide light on the extent to which people are fascinated by myth, whether for the purpose of creating a new one or reconstructing the old. In contrast to the re-construction of myths, which questions, challenges, substitutes, negates, reverses, or re-focuses the original tale's tangible functions, the creator of a new myth uses his or her own purpose to work through the narrative represented (Budkuley, 2003).

Mythology is a collection of hereditary tales that a specific cultural group formerly believed to be real. By portraying the motives and activities of gods and other supernatural creatures, these stories are used to justify social customs along with observances as well as to provide punishments for the laws that govern how people live their daily lives. (Abrams, 1957).

The intents and acts of gods and other supernatural entities are described in these tales, which were used to create the penalties for the laws by which humans live their everyday lives as well as to legitimize social rituals and observances. Such a widespread, percolated mythological environment, according to C. N. Srinath's 2003 argument, has shown dynamism with a considerable capacity to meld with and even shape modern reality. The Indian writer views it as a luxury to draw more often from myth than his Western counterpart since it is always there and readily accessible. Every Indian author, whether intentionally or unintentionally, makes references to the major epics like the Mahabharata and the Ramayana, either to strengthen their storylines or to undermine and debunk certain beliefs. For example, Indian writers of the pre-Independence era opted to employ these tales against foreign rulers because they were preoccupied with colonial dominance and used archetypal and myths patterns to develop a Patriotic sentiment in the public.

From Bankim Chandra Chattopadhyay in the eighteenth century through contemporary authors like Namita Gokhale, Narendra Kohli, and others of their age, myths have been a recurrent theme in the works of writers.

Indian literature in English seems to have reached a new level with Raja Rao's arrival. His works are filled with mythical allusions. Raja Rao skilfully used legendary characters in his works to raise awareness of the British during the Freedom Movement, which was led by Gandhi. Raja Rao's works of fiction, including Kanthapura and Serpent and the Rope, established him as a talented writer who specializes in mythology. His contribution as a storyteller and as a myth-maker "is seen in the way in which he 'mythologizes' contemporary events and lends to them a peculiar native color and resonance. He draws inspiration from the resources of the Indian myth and legend, episode and anecdote, and creates an ethos all its own". (Mittapalli & Piciucco, 2001) Kanthapura is distinctive because it follows a storytelling style that is characteristic of the Sthalapurana. In contrast to the Ramayana, which is recounted by the revered Valmiki, the Kanthapura is told from the perspective of an elderly villager against the background of the independence movement. The fabled tale of Ram's triumph over Ravana is paralleled in the book solely to further the reader's enduring faith in the triumph of good over evil. Gandhi has been likened to Lord Ram, who is in exile, while the slave nation represents Sita, who was taken hostage in Ravana's Lanka. The British, who stole India's

sovereignty, play the role of Ravana, the one who kidnaps Sita. Ram's win over the demon ruler of the golden realm is symbolized by Gandhi's victory against the British. The name Kanthapura has been given a legendary meaning as a reference to Ayodhya, the sacred capital of the heavenly ruler. As a result, one or more characters in the mythological narrative are modeled after one another in the book. In the novel, Gandhi is unquestionably presented as the personification of godliness as well as the deity of Ram, whereas the villages are important enough to have their own myths and legends.

Gandhi is also attributed as taking on the mythical persona of Lord Krishna in order to break the bonds of slavery. Similar to how Krishna freed the inhabitants of Vrindavan from the fear of the Serpent Kalia, Gandhi frees the Indian people from their terror of the British.

“You remember how Lord Krishna when he was but a babe of four had begun to fight against demons and had killed the Serpent Kali. So too our Mohandas began to fight against the enemies of the country. Men followed him, as they did Krishna, the flute player and so he goes from village to village, to slay the serpent of the foreign rule.” (Kanthapura, 18).

Raja Rao's contemporary R. K. Narayan uses mythology in his literature as well but in a somewhat different way. Narayan's stories, which may be ironic at times, are on the basis of ancient Indian mythology from the Puranas along with the other Indian religions. Compared to almost all of his contemporaries, Narayan's portrayal of mythology from Indian folklore and stories is more detailed and caustic, which makes him more appealing and intriguing. Ancient epics like the Mahabharata and the Ramayana are often referred to by other Indian authors, and R K Narayan is no exception. He weaves his stories in the context of these traditions. His works include The Vendor of Sweets, The Man-Eater of Malgudi, The Guide, Swami, and Friends, among many more, and they provide a biting commentary on the situation in the nation. Among the most captivating books of R. K. Narayan, The Man-Eater of Malgudi, explores the legend of the demon Bhasmasura in an effort to identify a pattern of certain self-destructive trends in contemporary life. The main character Nataraj and his 2 friends Sen and Sastri are shown in the first pages of the book. In Malgudi, where Nataraj owns a printing business, Sen, a poet, and Sastri, a journalist, live peaceful, happy lives. In the tale, Narayan combines the Bhasmasura myth, in which Nataraj—as his given name suggests—is equated to Lord Shiva.

Narayan's description of Bhasmasura's behavior has the same allure as the mythology:

"Then there was a Bhasmasura, who acquired a special boon that everything he touched should be scorched, while nothing could ever destroy him. With this special boon, he made humanity suffer. Later God Vishnu was incarnated as Mohini, a beautiful dancer with whom the asura turn out to be obsessed. She assured to acquiesce to him merely if he imitated all the gestures and movements of her own dancing. At the end of the dance, Mohini put her palms on her cranium, and the fiend pursued the same gesticulation in absolute forgetfulness and was reduced to ashes that very moment, the blighting touch flattering active on his own cranium. Every man can assume that he is great and will be eternal, but none can speculate from which part his destiny will approach" (The Man-Eaters of Malgudi, 84-85).

Similar to Bhasmasura, Vasu's downfall is accelerated by his own actions as he makes an attempt to kill his own supporter. The mythical character of Mohini in Rangi who was a temple dancer, is used to intricately weave the mythical architecture. Rangi, who is legally wed to Lord Krishna, is acceptable as a form of Lord Vishnu (Mohini). She and her dance abilities have captivated Vasu as much as Bhasmasura was with Mohini. A parallel for Mohini's description of and salvation of the world from Bhasmasura's atrocities is the rescuing of Kumar the elephant by Rangi from Vasu. The culmination of Bhasmasura's demise comes when Vasu is destroyed by himself with his own hammer-like hands, which he had been planning to use to destroy Nataraj.

The book's famous example illustrates the formation and restoration of order amid chaos:

"Every Rakshasa gets swollen with his ego. He thinks he is invincible, beyond every law. But sooner or later something or other will destroy him. He stood expatiating on the lives of various demons in Puranas to prove his point" (The Man-Eater of Malgudi, 84).

The aforementioned authors have skillfully used the depth of Indian mythology in their writings to highlight both the emptiness of the contemporary world and the magnificence of India's rich cultural heritage. These authors use mythology as a background for their writing, which also aims to replace the spiritual void that the contemporary, materialistic society is experiencing. As a result, they

promote the greater order as well as control that the world so desperately needs right now. Although the great classics such as Kanthapura and Anandamath were effective in inspiring the independence fighters with a nationalism sentiment and motivating them to takeover British rule, the works of recent times have continued to inspire the present Indian generations. As previously said, myths will always serve as an inspiration for authors and a potent tool in their adept hands because of how timeless and eternal they are.

Works Cited:-

1. Budkuley, Kiran.—Mahabharata Myths in Contemporary Writing: Challenging Ideology.‖ Myth in Contemporary Indian Literature. Ed. K. Satchidanandan. Sahitya Akademi, 2003. Print.
2. Mittapalli, Rajeshawar and Piciucco, Pier Paolo. The Fiction of Raja Rao: Critical Studies. New Delhi: Atlantic Publishers & Distributors, 2001. Print.
3. Narayan, R. K. The Man-Eater of Malgudi. New Delhi: Penguin Books, 1993. Print.
4. Rao, K. R. The Fiction of Raja Rao. Aurangabad: Primal Prakashan, 1980. Print.
5. Sinha, U. P. Patterns of Myth and Reality. New Delhi: Classical Publishing Company, 1993. Print.
6. URLaccessed- http://www.dictionary.com /browse/ myth, retrieved on Aug27, 2016.
7. URL accessed- http://www.carl-jung.net/collective_unconscious.html, retrieved on Aug27, 2016.

Dr. Poonam Rani
Associate Professor (English)
Hindu Girls College, Sonipat
Contact Details:-H.No 768/21 Near New Bus Stand, HP Gas Agency Gali, Kailash Colony Rohtak -124001.
Mobile No. 9466662007
EmailId:- Phogatpoonam111@gmail.com

58

CONSTRAINTS IN ADOPTION OF FARM FORESTRY IN BANSWARA DISTRICT

Dr. Govind Prakash Acharya

Introduction

Trees play an important role in ecosystem in all terrestrials and provide a range of products and services to rural and urban people. As natural vegetation is cut for agriculture and other types of development, the benefits that trees provide are best sustained by integrating trees into agricultural system-a practice known as agroforestry. Farmers have practiced agroforestry since ancient times. Agroforestry focuses on the wide range of trees grown on farms and other rural areas. Among these are fertiliser trees for land regeneration, soil health and food security; fruit trees for nutrition; fodder trees for livestock; timber and energy trees for shelter and fuelwood; medicinal trees to cure diseases and trees for minor products viz gums, resins or latex products. Many of these trees are multipurpose, providing a range of benefits.

Agroforestry has been recognised as a land-use system capable of yielding both food and wood besides conserving and rehabilitating the ecosystem. Trees play dominant role in all agroforestry systems for sustainable agriculture and environmental protection. The National Agricultural Policy (2000) emphasised the role of agroforestry for efficient nutrient cycling, nitrogen fixation, organic matter addition and for improving drainage and underlined the need for diversification by promoting integrated and holistic development of rainfed areas on watershed basis through involvement of community to augment biomass production through agroforestry and farm forestry.

Mankind has attained big achievements in scientific fields to make the life happy, but at the same time, these achievements have created problem for the sustenance of life comfortably. People have been using wood for his comfort by cutting the trees, as a result of this environment have been disturbed. The whole ecosystem has been disturbed with other scientific achievements i.e. factory chemical fertlizers, automation etc. To solve this problem plantation of trees programme was stated to meet the need of fodder, fuel and timber thereby help to enviroment polution check.

As per above reasons, the present study was undertaken in Banswara District of Rajasthan, which could ful-fill the efforts for developed forestry plantation. The present study confined with following specific objectives.

1. To find out the constraints in adoption of farm forestry, and
2. To know the association with land holding of farmers between various constraints in adoption of technology.

Methodology

The study was carried out in villages of Garhi and Bagidora blocks of district Banswara of Rajasthan. Nine Villages were selected where the social forestry programme implemented by forest department. 10 respondents from each village were selected by simple random sampling technique on the basis of fixed criteria of their resources abilities to grow forest trees. Thus, 90 cultivators were selected to ful-fill the objectives. The respondents were catergorized according to land holding as big farmer (above 10 acres), small farmer (up to 10 acres) and contraints, also categorized in two parts high and low as felt by the respondents. Chi - square test was applied to know the association.

Results And Discussion

Table 1: Shows the distribution of farmers category on the level of constraints in adoption of farm forestry technology and their association with size of land holding. Sharpless aspiration of farmers, lack of interest about innovation related farm forestry and scarcity of scientific attitude were prominent among the rank of constraints in adoption of farm forestry by the cultivators.

A comparison of the opinion of farmers on the constraints reveal the that a comparatively higher number of big farmers perceived these constraints highly than that of small farmers.

Table - 1. Constraints pertaining to the technology of farm forestry as expressed by the cultivator with association between their size of Land holding.

Constraints	Category of const-raint	Big farmers N=62	Small farmers N=28	X^2 Value	Combined	Rank
1. Lack of knowledge about farm forestry	H L	10 21	15 6	7.694*	52	VII
2. Rarity of attitude towards farm forestry programme	H L	35 5	18 10	5.162*	68	V
3. Scarcity of scientific aptitude.	H L	42 7	18 9	3.8^{NS}	76	III
4. Rareness of economic motivation	H L	16 32	15 9	5.551*	72	IV
5. Lack of interest about innovations of farm forestry	H L	47 6	18 9	5.689*	80	II
6. Sharpless aspiration of farmers.	H L	48 6	18 10	7.106*	82	I
7. Grazing by animal.	H L	34 7	16 9	2.060^{NS}	66	VI
8. Drying plants in summer season.	H L	18 8	12 10	1.096^{NS}	48	VIII

Significant at 0.05 level of probability NS = Non - Significant 1 d.f.

The significant association between constraints like lack of knowledge, rarity of attitude, rareness of economic motivation, lack of interest of innovation, sharpless aspiration of farmers towards farm forestry technology with size of land holding was observed.

IMPLICATION

It was observed that the majority of respondents were unknown to benefits of farm forestry and their indirect gift due to lack of aspiration and scarcity of scientific aptitude. The lack of interest about innovations was major constraint in spread of farm forestry. Due to assumptions of farmers were limited in to crop technology hence they were aware to crop innovations within a limit for obtained high earning. The need of proficient extension personnels who are encouraging to farmers with judiciously and proper guidance for accelerating the adoption of farm forestry.

REFFRENCES :

1. Anthonie VL and Alparslam A 2007. Forest Mensuration. Springer, P.O. Box 17,3300 AA Dordrecht. The Netherlands. www.Springer.com

2. Chaturvedi AN and Khanna LS 2011. Forest mensuration. International Book Distributors, Dehradun, India.

3. Patel S 2005. India forest. Pointer Publishers, Jaipur, India.

4. Reddy SR 20016. Principles of agronomy. Kalyani Publishers, Ludhiana, India.

5. Reddy SR and Nagamani C 20016. Principles of crop production. Kalyani Publishers, Ludhiana, India.

6. Shrivastava MB 1997. Introduction to forestry. Vikas Publishing House, Jangpura, New Delhi.

7. Singh, S.R. Rotalia, R.K. and Tripathi, S.N. (1987) Constraints in adoption of recommended doses of fertilizes. Maha. Jour. of Extn. Edu. Vol. Vl : 219-221.

8. Singh G, Yadav JSP and Singh GB 2000. Multipurpose tree species management. In : Yadav JSP and Singh GB (eds) Natural resource management for agricultural production in India. ISSS, New Delhi, India.

9. Singh VS and Pandy DN 2011. Multifunctional agroforestry systems in India: Science-based policy options. Climate change and CDM cell, Rajasthan State Pollution Control Board, Occasional Paper No. 4/2011, Jaipur, India. (www.rpcb.nic.in).

10. Tejwani KG 2001. Agroforestry in India. Concept Publishing Compay, New Delhi, India.

11. Tewari SK 2008. Agroforestry. nsdl. niscair. res. in / jspui / bitstream / 123456789 / 656 / 1 / revised.pdf

12. USDI Bureau of India Affaire 2012. Selviculture. India forest management hankbook 53 IAM 9-H.

Dr. Govind Prakash Acharya
(Asso. Professor (Agri.)
SGG Govt. College, Banswara
M :9460545836@
Email : gpacharya.6@gmail.com

Feminism in India

Pradip Kumar Singh, Dr. Anita Kumari

Abstract

Feminism in India is a series of movements aimed at defining, establishing and defending equal political rights whithin Indian society. Like their feminist counter parts all over the worlds, feminist in India seek gender equality, the right to work for equal wages, the rights to equal eccess to health and education, and equal political rights. Indian feminist also have fought against culture and specific issues within India's patriarchal society, such as inheritance laws and the practice of widow immolation known as sati.

The history of feminism in India can be devided into three phases. The first phases beginning in the mid 19th century, initiated when male European colonists began to speak out against the social evils of sati. The second phase from 1915 to Indian independence, when Mahatma Gandhi incorporated women's movements into the 'Quit India movement' and 'Independent women's organizations' began to emerge, and finaly, the third phase began in post Independence which has focused on fair treatment of women at home after marriage, in the work force and in the political sphere. Many Indian writers have boosted this feminist movement through their literature like Anita Desai, Girish Karnad and many others Indian writers.

Key Words Counter part, patriarchal, immolation, inheritance, initiated.Introduction

For the Indian the term feminism means nothing, except a microscopic number of highly westernized, elite people, neither does that particular term has any equivalents in any of the Indian language. If any thing the term has acquired many negative connotations in recent years. Anita Desai in widely recognized as an Indian feminist writing in English. Similarly Girish Karnad also wrote about feminist composition to bring out the reality of women in Indian society since primitive period. Both the writers tried to project the misery and problems of a woman in the Indian perspective. Anita Desai is one such writer who through her most absorbing and appealing work Fasting-Feasting tries to change the mindset and outlook of society and particularly to elevate the position of women from suffering and hardships of society and to give her a status equal to men. Similarly Girish Karnad has written that the woman should not be misused by the hands of man. She much be given proper place, rights and physical pleasure. Her rights should not be snatched.

Conclusion

There have been intense debates within the Indian women's movement about the relationship between western and Indian feminism. Many Indian writers uplifted the feminist movement in India. So for as Desai's novel Fasting-Feasting is above all, a work whose main concern is the condition of women in India and in related to women in general. To deal with the situation of women in India, however, it is impossible to stay simply with what is termed 'feminism' in the western sense. First as Vrinda Nabar agues in her book 'caste as woman', feminism hasn't even begun in any real sense in India, where there is profound discrimination between girl and boy. Even intellectual society such notion really dominate. Similarly Girish Karnad has highlighted the Indian Culture to provide more opportunities for boys and less for the girls. Although it is the godly virtue in the woman that despite of enormous distress they worship their husband and try never to disregard. In Nagamandala it can be seen. Appanna's behavior towards Rani is a suitable instance. Even if Naga (Cobra) has come between Rani and Appanna to make him know the reality. When he knew the relation between, Rani and Cobra, Appanna made it the issue of his modesty. It is the mindset of the man who does not understand the perspective of woman. So Fasting-Feasting and Nagamandala both rise the issue of feminism very smoothly.

References

1. Nagamandala- Girish Karnad-1987-88, Oxford University Press.
2. Reference Book- Nagamandala C.L.Khatri publication-Astha Printers meerut in 2006-2009.
3. Sangarikumkum and Sudesh vaid- Introduction in recasting women-essay in colonial history published in 1989 in the University Press, USA, ISBN 9788185107080.
4. Fasting-Feasting- Anita Desai.
5. Anita Desai Fasting-Feasting and the Condition of

women- Ludmilavolna– Purdue University Press: ISSN-1481-4374.

6. Simon De Behavior- The second sex published in 1945.

Pradip Kumar Singh
Ph.D Scholar,
Sub: English
R.K.D.F University, Ranchi

Dr. Anita Kumari
R.K.D.F University, Ranchi
HOD Department of English.
Mob. 8271285366

60

Impact of Schemes on Women Agricultural Entrepreneurship

Dr. Govind Prakash Acharya

ABSTRACT :

A large number of women entrepreneurs are working in the non-agricultural sector in the villages of India. I am stepping out of my homes and working and not only working but also creating employment opportunities for others. There is a social need to transform rural women into successful entrepreneurs. Importantly, women from all walks of life in rural areas are showing great interest in setting up small , but ' self-sustaining enterprises ' through skill training. In this direction, many schemes are also going on to equip them with professional knowledge and technical know-how, which are operated by the Center, States and international organizations.

INTRODUCTION :

Half population and Economy :

Women constitute half of the total population of the country and they play an important role in the development of the national and rural economy. Today, crores of women are engaged in agricultural work in the fields every day in the country. Agriculture is the source of livelihood of 85 % of the families living in the villages of the country and the contribution of women in them ranges from 65 to 70 %. She is working in the fields while doing housework. According to the Agriculture Census 2010-11 , out of 118.7 million farmers, 30.3 % were women and out of 144.3 million agricultural workers, 142.6 % were women agricultural workers. Whose number is increasing rapidly. did annually. According to the survey 2020-21 , a total of 33 % of women in the country work as agricultural laborers , while 48 % of women are self-employed farmers. This is a clear indication of women empowerment in agriculture entrepreneurship sector.

The journey from agricultural laborer to agricultural entrepreneur is also a symbol of the upliftment of women and the golden possibilities of development of rural economy. Not only agriculture , but also the number of women in agriculture-related employment is very high. According to the Annual Survey 2020-21 , about 7.8 crore women are playing a meaningful role in activities related to milk production and livestock business. The 2014-15 statistics compiled by the World Bank show that in fact 65.13 % of India's population is in rural areas and 48 % of them are women, that is, 420 million women of India with a population of 135 million are living in villages and Out of them, about 31.05 crore women are engaged in agricultural work, that means there are vast possibilities for rural women in the field of agricultural entrepreneurship. These industries are comparatively low investment and are going to establish income and provide employment in rural areas.

In view of this, many schemes have been implemented by the government schemes for the last two decades to convert rural women into agricultural entrepreneurs.

Central Schemes: Major challenges faced by youth in skill development are high cost of obtaining vocational training , lack of flexibility and mobility associated with vocational education.

1. Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKY) :

Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKY) was launched to provide easy access to the youth to develop their skills through skill related courses, under which one crore youth will be trained in the country during 2016-2020 . has been aimed at. Under this scheme, training can be taken for 182 different types of agriculture-related businesses. Apart from Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana, National Agriculture Development Scheme , Integrated Horticulture Development Mission and Deendayal Upadhyaya Rural Skill Development Scheme , ' Aajeevika ' under National Rural Livelihood Mission and Bayer's Foot Technician program under Mahatma Gandhi National Employment Guarantee Act (MNREGA) Short term training facilities are available through All youth above 18 years of age who are citizens of India can get training under their programs. Apart from this , the Indian Council of Agricultural Research also has a special scheme for the youth who want to work in the field of agriculture, under which they can be attracted towards agriculture or retained in this field.

Helping Entrepreneurs: Most of the youth want to start their own business after completing the training course. There are ample opportunities available in Venture Capital Funds of various Ministries. Initiative for Development of Entrepreneurship in Agriculture (IDEA) under Rashtriya Kisan Vikas Yojana, Venture Capital Finance Assistance

(BCA) of Small Farmers Agriculture Development Association (SFAC), Aspire Scheme of Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises , Training of women and the Scheme of Assistance in Employable Skills Program (STEP) are some of the initiatives aimed at promoting entrepreneurship. National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD) has issued a directive to its member banks asking them to give priority to Banks to give loans to Agriculture Skill Council of India certified candidates.

According to a study by the Government of India, about 40 percent of rural women help their families financially in one way or the other. Women entrepreneurs are an important component of economic growth – not only at the individual and family level , but also at the societal and national level. It is noteworthy that enterprises run by women have been seen to give better results than enterprises run by men on many levels. In terms of returns, for every dollar invested, women entrepreneurs lead 78 cents , compared to just 31 cents for men.

2. Stand Up India :

· Prime Minister Narendra Modi launched the Stand Up India scheme on 5 April 2016 in Sector -62 of Noida to promote entrepreneurship among scheduled castes , tribes and women.

· The objective of this scheme is to provide bank loan of Rs 10 lakh to Rs 1 crore to a member of Scheduled Caste or Scheduled Tribe and at least one woman by every bank branch of the country for green field enterprise.

· SC / ST and women above 18 years will be eligible for this scheme .

· Beneficiaries of this scheme are also covered under Jan Dhan Yojana , Pradhan Mantri Suraksha Yojana , Pradhan Mantri Jeevan Jyoti Yojana , Atal Pension Yojana and eight other schemes.

· Loans under the scheme will be suitably secured and backed by credit guarantee through a credit guarantee scheme. For which the Department of Financial Services will be the settler and the National Credit Guarantee Trustee Company Limited will be the operating agency.

· Time loan margin money will be up to 25 percent. Coordination with state plans is expected to result in a substantial reduction in the margin funding requirement for many borrowers.

· Refinanced through Small Industries Development Bank of India (Sydney) with an initial amount of Rs.10,000 crore .

3. Skill India :

on 15 July 2015 by Prime Minister Narendra Modi under the Skill Development Mission. It is an outcome based training plan for Indian citizens. The objective of this scheme is to train the citizens in works according to their interest. This scheme will encourage such youth who have left their studies after 10th or 12th to create skills within themselves. This scheme will also try to collect such people who have skill , but due to lack of certificate of that skill, they have to face a lot of difficulties in finding and getting work. Skill India provides a comprehensive institutional framework to fast track skill development efforts. Around 300 million people will be skilled by the year 2022 under this scheme . To make this scheme successful, the Government of India has created a new Ministry, Ministry of Skill Development and Entrepreneurship (MSDE).

4. Make in India :

This program has been created by the Government of India to emphasize on the manufacturing of goods in India by the companies of the country and abroad. It was launched by Prime Minister Narendra Modi on 25 September 2014 . The main objective of this scheme is to bring changes in 25 sectors affecting the country's economy . Prominent among these are automobiles , chemicals , IT , pharma , textiles , ports , aviation , leather , tourism and hospitality , railways , design , manufacturing , renewable energy , mining , biotechnology and electronics. Out of these 25 sectors, 100 per cent FDI is permitted in all sectors except space (74 per cent) , defense (100 per cent) and news media (26 per cent). This scheme will be able to generate 1 crore jobs every year. With the implementation of the scheme, employment will increase in the country and the problem of unemployment will be removed. Along with this, there will be skill development in these areas , which will attract the attention of all the big investors from India and abroad. Due to this, more and more goods will be made in India only, due to which the cost of goods will be reduced and the country's economy will benefit from being exported outside. The youth of the country would prefer to stay here and work instead of going abroad. In this way, creative initiatives like Make in India will prove to be the foundation stone for the bright future of India. As a result, India can be made a global manufacturing hub.

5. Digital India :

In the form of Digital India , an ambitious program was launched on 1st July , 2015 . It is a big step taken by the Indian government to make the country digitally empowered. This is the Sanskrit version of the National e-Governance Plan for a digitally empowered knowledge economy. Various schemes related to this scheme have been unveiled , such as digital locker , e-health , e-education , national career portal , e-signature etc. The project approved by Prime Minister Narendra Modi is expected to be completed by 2019 . It will play a vital role in providing ease to the Indian citizens with the service of electronic government to improve the efficiency of paper work and save time. This scheme will ensure the development and growth of the rural areas of India especially by providing high speed internet service to the remote villages and rural areas. Will personally monitor this project. The Digital India program is a flagship program implemented by the Government of India with a vision to transform India into a digitally empowered society and knowledge economy.

6. Pradhan Mantri Mudra Yojana :

Commencement - Started in April 2015 .

Loan is made available at the lowest interest rate.

About 65 percent of the beneficiaries under this scheme are women.

Objective :-

To ensure availability of funds to the unbanked people.

Also reduce the cost of finance provided to most of the micro small enterprises in the informal sector from the last mile financier (Sang Dipsam Thpadandbmate).

Expected Beneficiary :-

Any Indian citizen having a business plan for non-agriculture sector like manufacturing , processing , trading or service sector and whose loan requirement is less than Rs.10 lakh .

Major Features :-

3 types of loans will be allotted by MUDRA (Micro Units Development & Refinance Agency) Bank-

- Shishu - Loans up to Rs.50,000
- Kishor - Loans ranging from Rs.50,000 to Rs.5 lakh
- Tarun - Loans ranging from Rs.5 lakh to Rs.10 lakh.

MUDRA Bank provides refinance to last mile financiers providing credit to micro-small units engaged in manufacturing , processing , trading and service activities.

7. Startup India :

- Prime Minister Narendra Modi launched the Start-up - India campaign on 16 January 2016 in New Delhi. This scheme is running with the objective of getting rid of obstacles like land permission , foreign investment proposal, environmental permission , including getting rid of the license raj by limiting the government's role in promoting innovation to policy making.
- A Rs 10,000 crore Startup Fund has been created to finance startups .
- Start -ups are exempted from payment of income tax on profits for the first three years.
- 7 years from the date of incorporation, while a limit of 10 years has been kept for Biotech companies. The turnover of the startup should be less than Rs 25 crore.
- Up to 80 % rebate in patent fee for start-up businesses . A self-certification based compliance mechanism for 9 labor and environment laws has been introduced for start-ups .
- Single window system
- Patent Protection
- Financial assistance to entrepreneurship
- Closing the business means closing the company is easy
- Credit Guarantee Fund
- Start up festival
- Self certified
- Tax Exemption
- Atal Innovation Mission

8. Deendayal Upadhyaya Antyodaya Yojana :-

The Central Government launched the Deendayal Upadhyaya Antyodaya Yojana on 25 September 2014 for the urban and rural poor.

Through this scheme, urban and rural poverty is to be reduced by increasing livelihood opportunities through skill development and other measures. This scheme is an integration of National Urban Livelihood Mission and National Rural Livelihood Mission.

The urban component of the scheme will be implemented by the Union Ministry of Housing and Urban Poverty Alleviation while the rural component will be implemented by the Union Ministry of Rural Development .

8. Deendayal Upadhyay Rural Skill Scheme :

· The objective of this scheme is to train 10 lakh rural youth by the year 2017 . The minimum age to join under the scheme is 15 years and the minimum age to join the Livelihood Skill Program was 18 years.

· To solve the problem of unemployment in rural areas, skill development training centers are being established.

· Under this scheme, the needs of training of disabled will also be taken care of and private sector companies including international companies will also be included for skill development among rural youth.

9. Education Extension Organization (EEIS) :-

Through this project, women are trained for agricultural entrepreneurship , for them workshops , demonstration of technical use of modern machines , open meetings , conferences etc. Under this scheme, training under DISI (Diploma in Agriculture Extension Science for Agri Input) at a low rate with grant for training in various industries by Krishi Vigyan Kendra and State Agricultural Universities from 2015 for knowledge enhancement and training in agricultural entrepreneurship sector. It is given , according to the Annual Survey 2020-21 , in the year 2021 , 1446 training extension centers were started across the country for 106 types of entrepreneurship training courses for women .

10. National Rural Livelihood Mission :

Under this mission, the target has been set to promote agriculture and other entrepreneurship by setting up self-help centers , under this , in 1998 , an institution named ' Kutumbashree ' was established as the first government self-help women's group in Kerala , on the same lines But Mahila Economic Development Corporation was formed in Maharashtra. Although the first organization in the form of self-help group in India, " Seva " was formed only in 1970 , with which NABARD had established a link project to provide loans for agricultural work in rural areas.

11. Agricultural Marketing Infrastructure (AMI) :

Agriculture Marketing and Structure Scheme has been prepared by the Department of Agriculture Cooperation and Farmers Welfare to provide market to entrepreneurs in addition to cooperation in agricultural work, under this, grant amount is made available at the rate of 33.33% to women agricultural entrepreneurs , Annual Survey 2020 According to -21 , the state governments have been set to give 30 % of the fund to women beneficiaries. Women are provided assistance in all best practices in agriculture technology , mechanization and marketing etc. through a single window approach for agri entrepreneurship development.

12. Women Entrepreneurship Development :

is to provide financial assistance , loan training , coaching , monitoring by domain and functional export , many other types of discounts , marketing management and incentives and assistance etc. under one roof of rural women , through these startups , India is being promoted worldwide. India has emerged as a major exporter of milk , bananas , mangoes , spices , lobster , tea , pulses and vegetables.

13. Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY) :-

· PMKVY started on 15th July 2015.

· The Union Cabinet approved the Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana on 20 March 2015 and Prime Minister Narendra Modi launched this scheme under the Skill India campaign.

· Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana is the result based flagship skill development scheme of Government of India which is issued by National Institute of Skill Development.

· PMKVY will train 24 lakh people.

· Under this scheme, the incentive amount will be directly deposited in the bank account of these trainees who get successful training, who are taking training from recognized training centers.

· Skill training will be based on the National Skill Qualification Framework and norms set by the industry. Under the programme, cash reward will be given to the trainees on the basis of assessment and certificate by third party assessment institutions.

· The cash reward to these trainees will be Rs.8000 on an average.

· The scheme will primarily focus on people entering the labor market for the first time and will especially focus on students who have dropped out during class 10 and 12 . The scheme will be implemented by the training partners of NSDC.

· Short Term Training Guidance - This training guidance is for those school/college dropouts who are provided training as per the National Skill Qualification Framework.

· Recognition of Proper Learning Guidelines - Individuals who have prior training experience will be assessed and certified under the Recognition of Proper Learning Scheme. The main objective of this scheme is to align the capabilities of the country's unregulated workforce with the National Skill Qualification Framework.

14. Rural self-employment and training institutions :

In this program run by banks under the Ministry of Rural Development, a trainee is encouraged to start his own micro enterprise by taking a loan from the banks. The comprehensiveness of this program can be gauged from the fact that it is being run in 566 districts of 33 states and union territories of the country. In this, 23 banks including private , public sector and some rural banks are giving loans through 585 RSETIs. Giving loan through RSETI. Training is being imparted in total 61 courses at RSETI. All these courses have been designed on the basis of the National Skill Qualification Framework (NSF). Out of these 61 , 38 courses are exclusively for women, who can get trained in these and become self-employed.

15. Prime Minister's Employment Generation Program (PMJDY) :

PMEGP is a flagship credit-based subsidy program under the Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises (MSME) that aims to generate self-employment opportunities through micro enterprises in the non-farm sector . It is worth mentioning that this program is for non-agriculture sector , but rural women can participate in it and it provides a great opportunity to set up a micro enterprise related to any sector other than agriculture. The only eligibility to participate in this is that the age of the candidate should be more than 18 years. Rural area candidates get 35 percent subsidy under this scheme as compared to 25 percent subsidy for urban area candidates. As per the rules , it is mandatory for every government department and public sector undertaking to buy 3 per cent of its total purchases from micro and small enterprises run by women.

16. Economic empowerment of women entrepreneurs and startup of women :

, pilots incubation and acceleration programs for women either starting a new micro enterprise or looking to expand an existing micro enterprise. Doing.

17. Women Entrepreneurship Platform (WEP) :

NITI Aayog launched this program on March 8 , 2018, on International Women's Day. Registration on the Portal and all subsequent services are provided free of cost to the Users. Here the platform provides different services for all types of women entrepreneurs, new and old.

18. Stand Up India :

Prime Minister Shri Narendra Modi launched this scheme on April 5 , 2016 , the main objective of which is to ease the path of entrepreneurship for women and Scheduled Castes and Tribes. Under this, loans ranging from Rs 10 lakh to Rs 1 crore are given to set up an enterprise outside the agriculture sector.

Apart from these, there are many schemes , which are being run by the government to make rural women entrepreneurs. Prominent among these are:

1. Assistant for Rural Employment Guarantee Scheme (.TMLAI)
2. Integrated Rural Development Program (IRDP)
3. National Food for Work Program (CFP)
4. Support and Training and Employment Program for Women (AJMCH)
5. Swarnajayanti Gram Swarozgar Yojana (GAIL)

An in-depth analysis of these schemes reveals that rural women are at the center of most schemes and programs of the Government of India. The objective of these schemes is to improve the condition of rural women by providing different types of employment related opportunities. Rural employment ecosystem through Prime Minister Employment Generation Program (PMEGP) , National Rural Livelihoods Mission , Deen Dayal Upadhyaya Gramin Kaushal Yojana (DDUGKY) , Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana , National Rural Economic Transformation Project (NRETP) , Pradhan Mantri Matru Vandana Yojana (PMMVY) etc. The system has improved and the socio-economic empowerment of women in India has been ensured. These measures have paved way for different opportunities related to education , capacity building , skill development , healthcare facilities and livelihood. These schemes launched in the rural ecosystem have increased the participation of rural women in economic activities and improved their standard of living. Therefore , the empowerment of rural women is critical to boosting the

economy and food security , eradicating poverty , mitigating the effects of climate change and achieving the United Nations' Sustainable Development Goals by 2030 .

CONCLUSION :

Schemes are an important component of economic growth not only at the individual and family level , but also at the social and national level. Transforming rural women into successful entrepreneurs is a societal need today. Today, women of every class in rural areas are showing great interest in setting up small , but ' self-reliant ' enterprises through skill training. In this direction, many schemes are going on to equip them with professional knowledge and technical know-how , which are operated by the Center , States and international organizations. There is a need to further expand these schemes.

The Government of India has considered the development of agri-entrepreneurship as a key strategic area for improving the livelihood of rural society including farmers and increasing per capita income. Intensive efforts are also going on for this. During the last few years, agriculture has gone beyond the scope of its traditional ' farm barn ' and has entered the field of business and enterprise. With the development of entrepreneurship in agriculture, the common farmer has got the opportunity to become an ' entrepreneur ' from ' producer ' . Along with this , technically skilled and trained people are also setting up out-of-the-box agricultural enterprises through their new ideas. This undoubtedly shows immense potential of entrepreneurship share in agriculture sector.

As women become successful in business, their self-confidence grows and they are able to recognize their hidden talents, keeping in mind that access to affordable finance and technology is one of the major challenges faced by entrepreneurs, Ministry of MSME has launched the Bail Guarantee Scheme. Under this, collateral free loans are provided to micro and small entrepreneurs.

References :

· Badhai B. 2009, Entreprenuership Development Programme, Dhanpat Rai & Com. (P.) Ltd. Delhi

· Jain P.C. and Sharma N.L. 2005, Fundamentals of Entrepreneurship, Ramesh Book Depo, Jaipur

· Mathur S.P. 2007, Entrepreneurship Development in India, Himalaya Publisher, Mumbai, INDIA.

· Nolakha R. L. 2010, Fundamental of Entrepreneurship, Ramesh Book Depo, Jaipur

· Ramchandran H.K., Sharma K.C., Pareek K.S. and Saxena Sneh, 2007. Fundamental of Entrepreneurship, Ajmera Book Company, Jaipur

· Sharma A.K., Sharma Sarla, Jain Anita Nagar Rachna and Jain Vinita, 2015. Ajmera Book Company, Jaipur

· Sharma Sarla, Vyas Amit and Kumawat Gaurav, 2013. Business Organization, Ajmera Book Company, Jaipur

· Sudha G.S., 2016. Fundamentals of Entrepreneurship, R.B.D. Publishing House, Jaipur

· Sudha G.S., 2018. Business Entrepreneurship, Ramesh Book Depo, Jaipur

· Tyagi B.D. and Arun S.K, 2018. Entrepreneurship Development and Business Communication, Rama Publishing House, Meerut.

Dr. Govind Prakash Acharya

(Asso. Professor (Agri.)

SGG Govt. College, Banswara

M :9460545836@Email : gpacharya.6@gmail.com

61

Wheat Production in Haryana (2010-2020): A Changing pattern

Preeti, Ravinder Kumar, Dr. Kiran Bala

Abstract :-

Agriculture is very important for the development of an economy, specially a developing economy. It is not only provide food and employment opportunities to the population, but also has important linkage with other two sectors Industry and Service. Present study has been carried out on wheat production and its changing patterns in Haryana (2010 - 2020). The study is totally based on secondary data sources. It was found that the production of wheat decreased during this period in southern Haryana (Rewari, Palwal, Mahendragerh, Mewat) while high production was seen in Jind, Hisar, Fatehabad, Bhiwani, Karnal, Kaithal and Sirsa districts (north-western Haryana).

Keywords: Haryana, Statistical Abstract Haryana, Agriculture, Wheat, Production, Important, Development etc.

Introduction :-

Wheat is one of the most important crop in the world and gives a major contribution in food grain production. It is the staple food for most of world population and an excellent source of Carbohydrates, energy without fat. Worldwide approximately 74 crore tonnes of wheat produced per year. China is the largest wheat producer in world. India comes second largest wheat producer. India's wheat production in 2021-22 in to be around 106.41 million tonnes. Major wheat growing state in India are Utter -Pradesh, Punjab, Haryana, Madhya -Pradesh. In 2020 , wheat production in Haryana was 11.88 million tonnes. Agriculture plays a important role in economy of Haryana.

Haryana is an agricultural dominant state .The production of total food grains in Haryana increased after the Green Revolution. Green Revolution adopted new technology and improved seed variety. The mainly principal crops in Haryana are:- Wheat, Rice, millet, Cotton etc. In India and Haryana basically we decided all the crops in three types :- Kharif, Rabi and Zaid crop. Sirsa, Hisar, Kaithal, Karnal, Jind and Fatehabad district have topped position in wheat production. While Panchkula, Gurugram, Rewari, Mahendragarh have last position in State. Sirsa is likely to contribute the maximum 15.35 million tonnes of wheat production in state.

Review of Literature:-

Review of Literature is an important exercise in research, because it help to find out the research gap. A number of research studies have been undertaken by different researchers in the field of wheat production in Haryana.

· Abraham and Raheja (1967) found that the growth in productivity of wheat during 1951 -1965 was mainly due to increase in fertilizes.

· Ruchi, Monika and Mukesh Kumar highlights the growth pattern of major crops production in Haryana.

· Ramphul (2012) has examined the performance of growing crops in Haryana.

· Monika Devi Joginder Kumar, D. P. Malik (2021) has examined the highest growth in production and yield was observed during 1980-1989.

Study Area:-

Haryana is located in North India. The state has total geographical area of 4.42 million hectare in 2021.it is located between 27°39' N to 30°35'N latitude and between 74°28'E to 77°36'E longitudes. It is bordered by Himachal Pradesh in north and river Yamuna is eastern part. Haryana is a state of 22 districts.

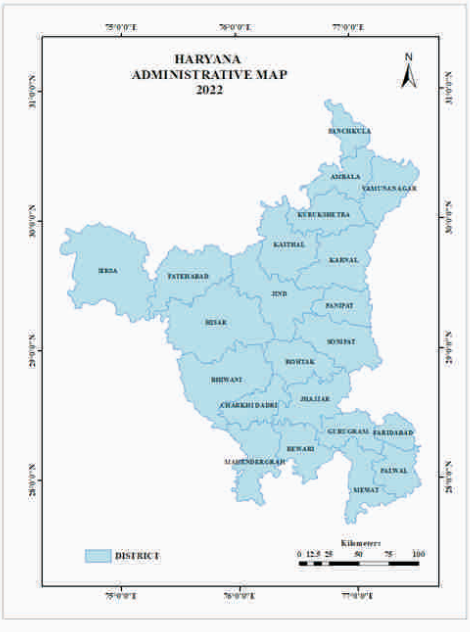

Objectives:-

· To study the wheat production in 2010 -2011.

· To study the wheat production in 2019-2020.

· To evaluate the change in wheat production in 2010-2020.

Data source and methodology:-

· The present study is based on secondary data collected

from Statistical abstract of Haryana (2010-11), Statistical abstract of Haryana (2019-20), Agriculture profile of Haryana, and some internet links and sites etc.

· The change in wheat production (2010-11 and 2019-20) is calculated by using formula:- P2 -P1 = Change in wheat production during 2010-2020.

Table – 1 Production of wheat in Haryana (2010-11)

Sr. No.	District Name	Wheat production In 000 tonnes
1.	Ambala	346
2.	Panchkula	38
3.	Yamuna Nagar	355
4.	Kurukshetra	526
5.	Kaithal	772
6.	Karnal	773
7.	Panipat	387
8.	Sonipat	610
9.	Rohtak	422
10.	Jhajjar	417
11.	Faridabad	136
12.	Palwal	409
13.	Gurugram	227
14.	Mewat	301
15.	Rewari	220
16.	Mahendragerh	159
17.	Bhiwani	561
18.	Jind	934
19.	Hisar	931
20.	Fatehabad	842
21.	Sirsa	1122

Source: Statistical abstract of Haryana (2010-2011)

Table – 2 wheat production (in 000 tonnes) 2019-2020

Sr. No.	District Name	Production in 000 tonnes
1.	Ambala	416
2.	Bhiwani	500
3.	Dadri	273
4.	Faridabad	152
5.	Fatehabad	1008
6.	Gurugram	214
7.	Hisar	1096
8.	Jhajjar	501
9.	Jind	1126
10.	Kaithal	1057
11.	Karnal	1007
12.	Kurukshetra	559
13.	Mahendragerh	211
14.	Nuh	347
15.	Palwal	402
16.	Punchkula	70
17.	Panipat	435
18.	Rewai	203
19.	Rohtak	476
20.	Sirsa	1484
21.	Sonipat	646
22.	Yamuna Nagar	390

Source: Statistical abstract of Haryana (2019-20)

Map:-2 Wheat production in Haryana (2010-11)

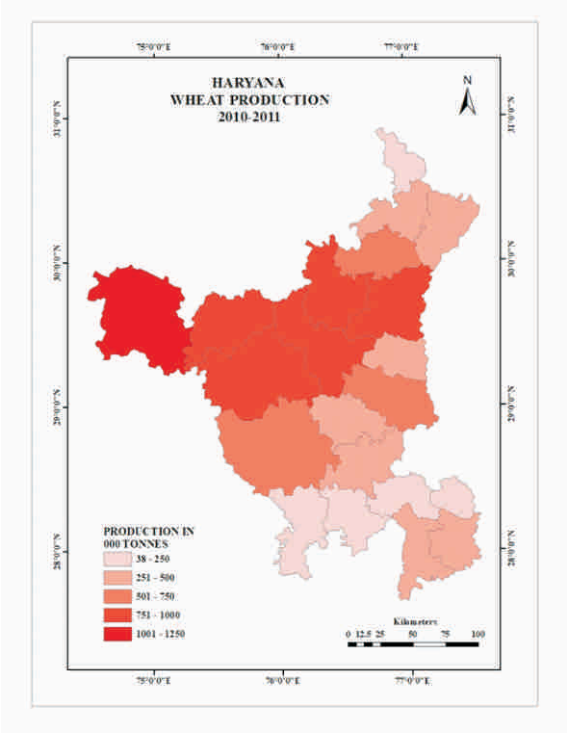

Map:-3 wheat production in Haryana (2019-20)

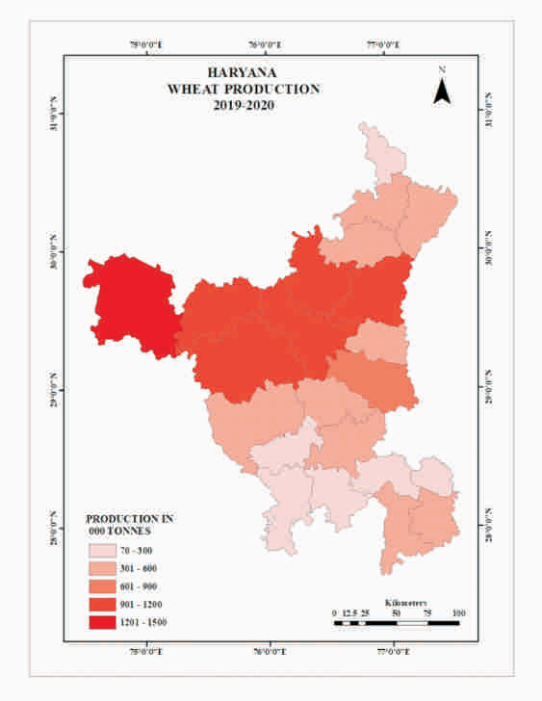

Table – 3 change in wheat production during 2010-2020

Sr. No.	District Name	Production in 2010-11 (P1)	Production in 2019-20 (P2)	Change in wheat production during 2010-2020 (P2-P1)
1.	Ambala	346	416	70
2.	Panchkula	38	70	32
3.	Yamuna Nagar	355	390	35
4.	Kurukshetra	526	559	33
5.	Kaithal	772	1057	285
6.	Karnal	773	1007	234
7.	Panipat	387	435	48
8.	Sonipat	610	646	36
9.	Rohtak	422	476	54
10.	Jhajjar	417	501	84
11.	Faridabad	136	152	16
12.	Palwal	409	402	-7
13.	Gurugram	227	214	-13
14.	Mewat	301	347	46
15.	Rewari	220	203	-17
16.	Mahendragerh	211	159	-52
17.	Bhiwani	561	773	212
18.	Jind	934	1126	192
19.	Hisar	931	1096	165
20.	Fatehabad	842	1008	166
21.	Sirsa	1122	1484	362

Data source: Statistical abstract of Haryana (2010-20)

Map: Change in wheat production 2010-2020

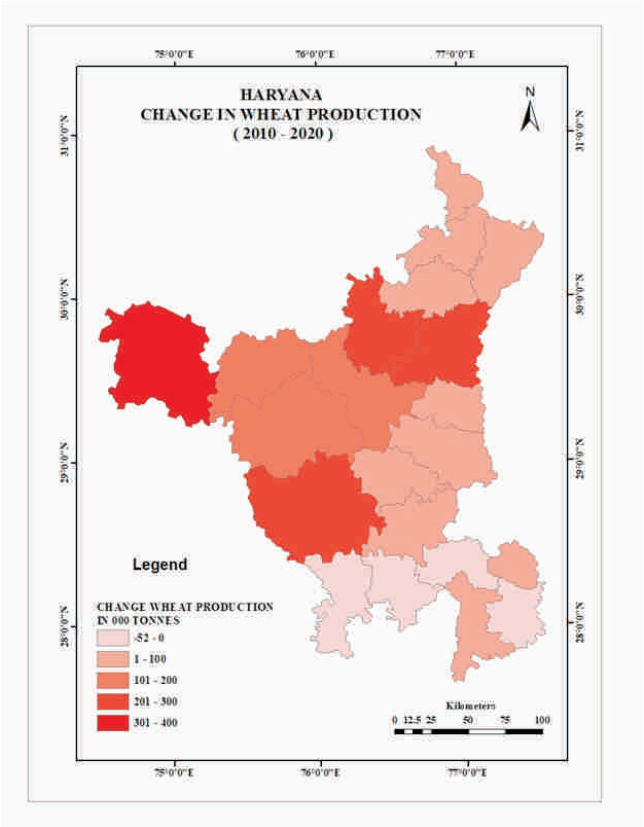

Result and findings:-

The analysis reveals that the wheat production in Haryana has grown during 2010 to 2020 . All districts have been divided into five categories to find the change in wheat production:

v District of negative growth :-

the analysis of tables and figures revealed that there are four districts, having negative growth of wheat production , :- Rewari, Palwal, Mahendragerh, Mewat.

v District of low growth :-

In this research paper we find that, Panchkula, Yamuna Nagar, Kurukshetra, Sonipat, Faridabad have low growth of wheat production.

v District of moderate growth:-

,Ambala, Panipat, Rohtak, Mewat, Jhajjar fall in this category that have moderate growth of wheat production during 2010-2020 .

v Districts of high growth in wheat production:-

Jind, Hisar, Fatehabad, Bhiwani, Karnal depicted high growth in wheat production during 2010-2020.

v Districts of very high growth in wheat production:-

In kaithal and Sirsa very high growth was seen in wheat production during this period.

Problems increasing the productivity in Haryana :-

v Soil erosion:- soil erosion is one of the major problem to increase the productivity of production. The soil erosion is increasing day by day many reasons . Soil degradation to huge the use of fertilizer as well as chemical and pesticide in agriculture.

v Water crises in Haryana :- As the population is increased , the agriculture sector pressed , because the agriculture commodity demand increased in market. The agriculture consumed water approximately 80 percent. So, in the dry regions like Rewari, Mahendragerhthere are no possibilities of wheat production without proper water.

v Pests and insects

v Changing pattern of demand

v Climate change

.Government programmes for agriculture:-

The state as well central government has been and are continuously making efforts to promote agriculture and make it more profitable.

· Agriculture loan

· Kisan Credit Card

- National Agricultural Insurance Scheme
- Pradhan MantriFasalBimaYojna etc.

Conclusion :-

On the basis of whole analysis we can say that Haryana is a is a agriculture dominant state of India. After the analysis of it was found that the change in wheat production is very high in district Sirsa and negative growth of wheat production record in Mahendrgarh district. To find out the change in wheat production during 2010-2020 ,the basic formula is used ; P2-P1. After Green revolution adopted new technology and use of High Yield Variety seeds are essential for agriculture production.

References:-

- Statistical abstract of Haryana (2010-11)
- Statistical abstract of Haryana (2019-20)
- Agriculture profile of Haryana

Preeti, Ravinder kumar, Dr. Kiran Bala

Assistant Professor

Department of Geography

KLP College, Rewari

ravinderkumarn1@gmail.com

pareetiverma388@gmail.com

kjakhar510@gmail.com

SUSTAINABILITY OF AGRICULTURE

62

Vivek Kumar

Abstract:

India is a proud nation enjoying self-sufficiency in foodgrain production and sustainable food security despite burgeoning population and various climate stresses. But there is no room for complacency, because country is still facing severe challenges in pulse and oilseeds sectors. Poor productivity and low gross production compel country to resort to frequent imports for meeting the domestic demand of foodgrains. Government of India is operating a comprehensive National Food Security Mission (NFSM) to maintain sustainable food security in the country which provides support to pulses, cereals, millets and selected commercial crops. Previously the NFSM was operative only in limited states, but the present Government extended its benefits to all 29 states and 638 districts during 2014-15. India has only three per cent of the world's land resources and five per cent of water resource. Yet, Indian agriculture system support 18 per cent of the world's population. Since resources, viz. land, water and energy are limited, scarce, costly and having competing demand for urbanization, industrialization and meeting farming needs. Further, degrading of soil health is poising major concerns for agricultural sustainability. Low soil organic matter and imbalanced use of fertilizers are affecting crops productivity.

Introduction:

Sustainable agriculture is farming in sustainable ways based on an understanding of ecosystem services, the study of relationships between organisms and their environment. It has been defined as "an integrated system of plant and animal production practices having a site-specific application that will last over the long term", for example:

· Satisfy human food and fiber needs

· Enhance environmental quality and the natural resource base upon which the agricultural economy depends

· Make the most efficient use of non-renewable resources and on-farm resources and integrate, where appropriate, natural biological cycles and controls

· Sustain the economic viability of farm operations

· Enhance the quality of life for farmers and society as a whole

The most important factors for an individual site are sun, air, soil, nutrients, and water. Of the five, water and soil quality and quantity are most amenable to human intervention through time and labor. Although air and sunlight are available everywhere on Earth, crops also depend on soil nutrients and the availability of water. When farmers grow and harvest crops, they remove some of these nutrients from the soil. Without replenishment, land suffers from nutrient depletion and becomes either unusable or suffers from reduced yields. Sustainable agriculture depends on replenishing the soil while minimizing the use or need of non-renewable resources, such as natural gas (used in converting atmospheric nitrogen into synthetic fertilizer), or mineral ores (e.g., phosphate). Possible sources of nitrogen that would, in principle, be available indefinitely, include:

1. recycling crop waste and livestock or treated human manure
2. growing legume crops and forages such as peanuts or alfalfa that form symbioses with nitrogen-fixing bacteria called rhizobia
3. industrial production of nitrogen by the Haber process uses hydrogen, which is currently derived from natural gas.
4. genetically engineering (non-legume) crops to form nitrogen-fixing symbioses or fix nitrogen without microbial symbionts.

Water:

In some areas sufficient rainfall is available for crop growth, but many other areas require irrigation. For irrigation systems to be sustainable, they require proper management (to avoid salinization) and must not use more water from their source than is naturally replenishable. Otherwise, the water source effectively becomes a non-renewable resource. Improvements in water well drilling technology and submersible pumps, combined with the development of drip irrigation and low-pressure pivots, have made it possible to regularly achieve high crop yields in areas where reliance on rainfall alone had previously made successful agriculture unpredictable. However, this progress has come at a price. In many areas, such as the Ogallala Aquifer, the water is being used faster than it can be replenished.

Several steps must be taken to develop drought-resistant farming systems even in "normal" years with average rainfall.

These measures include both policy and management actions:

1. improving water conservation and storage measures,
2. providing incentives for selection of drought-tolerant crop species,
3. using reduced-volume irrigation systems,
4. managing crops to reduce water loss, and
5. not planting crops at all.

Indicators for sustainable water resource development are:

- Internal renewable water resources.
- Global renewable water resources.
- Dependency ratio.

Soil erosion:

Soil erosion is fast becoming one of the world's severe problems. It is estimated that "more than a thousand million tonnes of southern Africa's soil are eroded every year. Soil erosion is not unique to Africa but is occurring worldwide. The phenomenon is being called peak soil as present large-scale factory farming techniques are jeopardizing humanity's ability to grow food in the present and in the future. Without efforts to improve soil management practices, the availability of arable soil will become increasingly problematic.

Some soil management techniques

- No-till farming
- Keyline design
- Growing windbreaks to hold the soil
- Incorporating organic matter back into fields
- Stop using chemical fertilizers (which contain salt)
- Protecting soil from water run-off (soil erosion)

Phosphate:

Phosphate is a primary component in the chemical fertilizer which is applied in modern agricultural production. However, scientists estimate that rock phosphate reserves will be depleted in 50–100 years and that peak phosphorus will occur in about 2030. The phenomenon of peak phosphorus is expected to increase food prices as fertilizer costs increase as rock phosphate reserves become more difficult to extract. In the long term, phosphate will therefore have to be recovered and recycled from human and animal waste in order to maintain food production.

Land:

As the global population increases and demand for food increases, there is pressure on land resources. Land can also be considered a finite resource on Earth. Expansion of agricultural land decreases biodiversity and contributes to deforestation. The Food and Agriculture organization of the United Nations estimates that in coming decades, cropland will continue to be lost to industrial and urban development, along with reclamation of wetlands, and conversion of forest to cultivation, resulting in the loss of biodiversity and increased soil erosion.

Energy of Agriculture:

Energy is used all the way down the food chain from farm to fork. In industrial agriculture, energy is used in on-farm mechanization, food processing, storage, and transportation processes. It has therefore been found that energy prices are closely linked to food prices. Oil is also used as an input in agricultural chemicals. Higher prices of non-renewable energy resources are projected by the International Energy Agency. Increased energy prices as a result of fossil fuel resources being depleted may therefore decrease global food security unless action is taken to 'decouple' fossil fuel energy from food production, with a move towards 'energy-smart' agricultural systems. The use of solar powered irrigation in Pakistan has come to be recognized as a leading example of energy use in creating a closed system for water irrigation in agricultural activity.

Soil Treatment:

Soil steaming can be used as an ecological alternative to chemicals for soil sterilization. Different methods are available to induce steam into the soil in order to kill pests and increase soil health. Solarizing is based on the same principle, used to increase the temperature of the soil to kill pathogens and pests. Certain crops act as natural biofumigants, releasing pest suppressing compounds. Mustard, radishes, and other plants in the brassica family are best known for this effect. There exist varieties of mustard shown to be almost as effective as synthetic fumigants at a similar or lesser cost. Sustainability affects overall production, which must increase to meet the increasing food and fiber requirements as the world's human population expands to a projected 9.3 billion people by 2050.

International Policy:

Sustainable agriculture has become a topic of interest in the international policy arena, especially with regards to its potential to reduce the risks associated with a changing climate and growing human population. The Commission on Sustainable Agriculture and Climate Change, as part of its recommendations for policy makers on achieving food security in the face of climate change, urged that sustainable agriculture must be integrated into national and international policy. The Commission stressed that

increasing weather variability and climate shocks will negatively affect agricultural yields, necessitating early action to drive change in agricultural production systems towards increasing resilience. It also called for dramatically increased investments in sustainable agriculture in the next decade, including in national research and development budgets, land rehabilitation, economic incentives, and infrastructure improvement.

Challenges:

Three agriculture sector challenges will be important to India's overall development and the improved welfare of its rural poor:

1. Raising agricultural productivity per unit of land: Raising productivity per unit of land will need to be the main engine of agricultural growth as virtually all cultivable land is farmed. Water resources are also limited and water for irrigation must contend with increasing industrial and urban needs.

2. Reducing rural poverty through a socially inclusive strategy that comprises both agriculture as well as non-farm employment: Rural development must also benefit the poor, landless, women, scheduled castes and tribes.

3. Ensuring that agricultural growth responds to food security needs: The sharp rise in food-grain production during India's Green Revolution of the 1970s enabled the country to achieve self-sufficiency in food-grains and stave off the threat of famine. Agricultural intensification in the 1970s to 1980s saw an increased demand for rural labor that raised rural wages and, together with declining food prices, reduced rural poverty. India's rice yields are one-third of China's and about half of those in Vietnam and Indonesia. The same is true for most other agricultural commodities. Policy makers will thus need to initiate and/or conclude policy actions and public programs to shift the sector away from the existing policy and institutional regime that appears to be no longer viable and build a solid foundation for a much more productive, internationally competitive, and diversified agricultural sector.

Conclusion:

Under the changing agricultural scenario, the agricultural technologies needs a shift from production oriented to profit oriented sustainable farming. In this direction, the pace of adoption of resource conserving technologies (RCTs) by the Indian farmers is satisfactory to a larger extent but, under the present scenario, we are in the half way of conservation agriculture. The CA systems will leads to sustainable farming and will be the most thrust of the future farming. The conditions for development of sustainable agriculture are becoming more and more favorable. New opportunities are opening the eyes of farmers, development workers, researchers and policy makers. They now see the potential and importance of these practices not only for their direct economic interest but also as the basis of further intensification and ecological sustainability. This does not mean that agrochemicals can be abandoned. Also, research has an important role to play. Bankers and funders should think of how best to provide incentives and credits, accessible to poor farmers and women, to make investment in dry land farming possible. As conditions for farming will continue to change, the key to sustainable agriculture is the capacity of farmers and all other actors in agricultural development, as well as the wider society, to learn, experiment, adapt and cooperate in an effective way. To conclude, a small farm management to improve productivity, profitability and sustainability of the farming system will go a long way to ensure the all-round sustainability.

Reference:

1. Barnett,V., Payner,R., and Steiner,R. (1995) Agricultural Sustainability: Economic, Environmental and Statistical Considerations, John Wiley and Sons, UK, 266 pp
2. ICAR (1999). ICAR – Vision 2020, Indian Council of Agricultural Research, New Delhi, India
3. Ministry of Agriculture (2000). National Agricultural Policy
4. A Brief History of Sustainable Agriculture, Frederick Kirschenmann, editor's note by Carolyn Raffensperger and Nancy Myers. The Networker, vol. 9, no. 2, March 2004

Vivek Kumar
(Associate Professor of Economics)
(Govt. College Kosli, Distt. Rewari,
Haryana) PIN 123302
E-mail: vkdagar79@gmail.com
Mobile No.: 9416478320

Dystopia in the Selected Novels of Aldous Huxley and George Orwell: An Analytical Study

Manoj Kumar

Abstract:

This analytical study shows the image of dystopia in the selected novels of Aldous Huxley and George Orwell. Dystopia literature is a genre that makes us aware about the darker aspects of society and human nature. The seminal works of Huxley's Brave New World and Orwell's Nineteen Eighty-Four bring our attention towards the dehumanization of future societies. The similarities and differences between the two novels have been delved into by the study. Huxley's Brave New World portrays a society which is technologically advanced. It is a society where people renounce their personal freedom for stability and superficial happiness. The apocalyptic view of totalitarian reign has been depicted through the themes such as mass production and genetic engineering etc. On the other hand, Orwell's Nineteen Eighty-Four depicts a society where people have no rights. They have been completely controlled by a totalitarian regime. The novel emphasizes the suppression of people by showing them the fear through surveillance, propaganda and the manipulation of language. Orwell's works evince dangers of totalitarian society which will devoid people of their civil rights. Huxley and Orwell have used different techniques to present their vision of dystopia. Both the writers depict societies which are controlled and oppressed. The oppression is depicted in different ways.

Keywords: dystopia, dehumanization, apocalyptic, totalitarian, propaganda, vision.

Introduction:

This paper aims to discuss the image of dystopia in the selected novels of George Orwell and Aldous Huxley. A dystopia is a fictional community or society that is undesirable and frightening. It is often treated as an antonym of utopia. The word 'Utopia' means an imaginary place or society with a perfect social and political system, or an ideally perfect state of things. This word was used by Sir Thomas More (1478-1535) as the title of a book (Utopia) in which he depicted an imaginary commonwealth. He coined this word by joining two Greek words-'outopia' (no place) and 'eutopia' (good place)-and making them yield the meaning of a good place which does not exist or is imaginary. In the course of time, the word came to signify a kind of fiction portraying an ideal political state and way of life. Plato's Republic, describing an ideal commonwealth or state, is the first work of this type. Then there came to be written various books right from More onwards on the subject of or dealing with an ideal imaginary world with a perfect political or social system in order to present an ideal before the modern man to follow. These utopian works were usually set against the background of a distant country and gave a fictional account of life lived there. These works were of both types, fictional and non-fictional. They comprise New Atlantis by Francis Bacon, News From Nowhere by William Morris and Lost Horizon by James Hilton. Famous writers of fiction such as Swift, Butler and Wells presented a utopian picture of a distant land or an imaginary world of the future to satirize the world around them. The world presented by them was usually an ideal place and a picture of it a pleasant one. But there were also some utopian works that presented a negative vision or an unpleasant picture of the world. These works were called anti-utopian or Dystopian.

Totalitarianism is a concept for a form of government and political system that prohibits all opposition parties, outlaws individual opposition to the state and its claims, and exercises an extremely high degree of control over public and private life. It is regarded as the most extreme and complete form of authoritarianism. Totalitarian government tries to control every aspect of life and tries to control what people think and what they believe. In totalitarian states, political power has often been held by autocrats such as dictators and absolute monarchs. This paper attempts an analytical and comparative approach to two important novels that attracted both authors' and readers' attention since the middle of the previous century. Aldous Huxley, the author of Brave New World, used his imagination to draw an image of a new world depending on creation that will replace the human and make him concentrate on consequences of creations more than the concentration on the development of plot and characters. The two novels used different styles and characters; however, they present common theme and major ideas on humanity being dehumanized. 1984

addresses this attitude because of the totalitarian state the author lives in, while the other novel tends to adopt the same attitude because of the new inventions that have been made to replace man and play his role in life. In both novels the attitude drew a new image of the human. 1984 reached his state because of the extremely obedient people, while the second novel reached that level because of the machine that has marginalized man's role in life and reduced it to a mere decorative one.

In Brave New World, Huxley presents a utopian future based on science and technology. He shows the condition in the future world which is governed by latest developments in the field of science, and has little to do with human emotions and morality. In this world, babies are decanted in laboratories, and so conditioned as to be unable to develop any natural sentiments like love, hate, loyalty etc. As Anthony Burgess points out, in Huxley's future world - state, children are bred artificially and made, in the very test tube, content with whatever the state bestows on them. Human beings are graded like examination-results: the Alphas do the intelligent work and the Deltas are the sweepers and cleaners. There is not much to do and there are manifold pleasures, chief of which is sex, though a sex totally dissociated from the act of reproduction. There is no crime, there is no immortality; science has bred out the destructive element in man. In fact, we also feel what the savage feels, i.e., in this novel Huxley presents the world which is neither new nor brave; it is a product of the disgusting vision of the world, which can be called utopian only ironically. Actually, it is an anti-utopian world ushered in by man's excessive subservience to science. There is hardly anything pleasant or edifying in it. Normal human emotions and relationships have been banished from it. What remains is the beast –like enjoyment of physical pleasure and slavish adherence to the directions of the state. This is actually an anti-utopia or an unpleasant and disgusting state of being which is far from being an ideal or perfect state to be cherished by man. Thus, Brave New World is an anti-utopian novel which portrays a negative vision of the future. It is not a utopian novel which shows a positive vision as is found in Island.

Ape and Essence is, like Brave New World, a prophetic novel about the future of humanity, and presents a nightmarish vision of what the world would be like if man continued to live as he does now. Like that novel, again, it is a satire on the present projected through a deception of the future. However, it differs from Huxley's other novels about the future-the anti-utopian Brave New World and the utopian Island-in that, unlike them, it deals with the fantastic world of baboons and apes, and makes use of satiric allegory to present the future world of 2108 A.D. The title of the novel i.e., Ape and Essence, is taken from Shakespeare's play Measure for Measure, and is meant to point out the duality and precarious imbalance between man's apish qualities like sensuality, fear, hatred and destructiveness, and his essential qualities like love, joy and peace. The phenomenon of the disappearance of spiritual values from the modern world engaged in materialistic and savage pursuit, forms one of the themes of the novel.

The prophecy made in Ape and Essence about the future of the world is gloomier than that presented in Brave New World. These novel paints a picture of life in California after the Third World War has taken place, after which only one country, New Zealand, has survived the atomic war. The human race has been wiped out, and a scientific party is sent from New Zealand to Los Angles to find out what has remained of it there. The novel is in the form of a film- script of the findings of this party. The world described in it is utterly depraved, and is ruled by apes who are substitutes for human beings. In this world, for example, there is no literacy, because the libraries have been destroyed. Babies are deformed and idiotic, and are sacrificed by the eunuch priests, while their mothers are flogged. Women are objects of man's contempt. There is nothing admirable or joyful in this world of devil- worship. Huxley seems to be showing here his swift-like misanthropy, and satirising the world governed by apish instincts. He expresses his ideas about the modern world and civilization, and the future that awaits them if they continue to be governed by the animal side of man and to ignore higher moral or spiritual values.

1984 has been one of the most inventive novels in the last century. This novel represents the age of dictatorship and shows the views of the majority of people of that time. The political condition of that time obliged George Orwell to use a new authoring style that helps us to know of the ruling class. The author of 1984 concentrated on using symbolic

idioms more than pushing a tremendous number of characters in his novel.

Conclusion:

People sacrifice themselves for the sake of fragmentary communities-nation, race, creed, class-and only become aware that they are not individuals at the very moment when they are facing bullets. A very slight increase of consciousness and their sense of loyalty could be transferred to humanity itself, which is not an abstraction. Huxley well recognized the role of fear in everyday life in the modern world, terming it 'the very basis and foundation of modern life.' The book is not, as such, a critique of totalitarianism. It represents instead a form of post-or 'perfected' totalitarian analysis in which technological modernity and psychological manipulation are the key targets. In it, the ideals of totalitarian social efficiency had indeed been achieved in 'the completely controlled, collectivized industrial society. But they were maintained by a much more psychologically sophisticated system than anything evident in Huxley's life. This essentially benevolent global dictatorship, Huxley later acknowledged, had been a false prediction, but again because the pressure of population made oppressive dictatorships more likely. The enduring strength of Brave New World, then, lies in the fact that it does not satirize totalitarianism alone. Instead, it takes as its target certain strands which Huxley regarded as inherent in modernity as such, especially the scientific application of the psychology of propaganda, indoctrination or the manipulation of behavior.

Bibliography

Atkins, John. Aldous Huxley A Critical Study. Columbus: Orion Press, 1968.

Baker, Robert S. Brave New World: History, Science, and Dystopia. Boston: Twayne, 1990.

Bowering, Peter. Aldous Huxley: A Study of the Major Novels. London: Athlone Press, 1968.

Brander, Laurence. Aldous Huxley: A Critical Study. Cranbury: Bucknell University Press, 1970.

Dasgupta, Sanjukta. The Novels of Huxley and Hemingway: A Study in Two Planes of Reality. New Delhi: Prestige, 1996.

Firchow, Peter Edgerly. Aldous Huxley: A Satirist and Novelist. Minneapolis: University of Minnesota Press, 1972.

Bloom, Harold, ed. Animal Farm. Philadelphia: Chelsea House Publishers, 1999.

Orwell, George. 1984. Philadelphia: Chelsea House Publishers, 2004.

Manoj Kumar
Ph.D. Scholar (English Literature)
Guide Name: Dr. Deepak Yadav
Baba Mastnath University, Rohtak (Haryana)
Address:
House No. 115/7, Yadav Mohalla, Parav Chowk, Hisar
Pin Code – 125001
Contact No. 8168907143, 9992504014
Email id: manojdiva1984@gmail.com

64

A Study of the Marginalized in Toni Marrison's Novel Beloved

Dr. Nirmal Boora

Abstract:-

Centre and marginal exist at every level in all the social systems. They originate from hierarchical situations that are always present in all levels of social interaction. Both centre and margin proposes 'Harnaony model' for the society. However they attained significance in the light of the ugly social reality which marked polarization of certain forces. In today's world 'Harmony model' has been destabilized as 'Cooperation' of society has been replaced by ' competition. Power relationship between the groups have become unbalanced. Centre use the power to dominate the people at marginal level. Toni Morrison Afro-American woman writer herself has experienced such marginal situations during her life time in her society. She therefore, felt as a black writer, the necessity to give voice to the black marginalized communities. Toni Morrison's novel 'Beloved' deals with such marginal situations of black community. Her novels are abundant in information about black culture and black female experiences. She gives voice to the black minority group and explores the theme of racial and cultural conflicts, identity crises and gender discrimination. However, Morrison asserts that the position of black women was much worse than the black males because she became victim of both sexist and racial appression.

A study of the marginalized in Toni Marrison's Novel Beloved Toni Morrison first African-American writer wrote Beloved, in an attempt to deal adequately with slavery and with the interiority of a slave's experience-which is precisely what historians don't do. Black's subjugated culture is made visibly by her literary representation. She has given voice to the black minority. Morrison says in an interview with Angelo Bonnie, “The book was not about the institution..... Slavery with capital S. It was about these anonymous people called slaves. What they do to keep on, how they make a life, what they're willing to risk, however long it lasts, in order to relate to one another-that was incredible to me” (48).

Beloved was first published in 1987 and was subsequently awarded the Pulitzer. Morrison became the first African-American novelist and only the second woman to win the Noble Prize for literature in 1993. The author explores in Beloved, the most oppressed period of slavery in the history of African people and dedicates her novel to 'the sixty million of more' who failed to survive in the 'Middle Passage'. The sixty million refers to the number of marginalized slaves who crossed the Atlantic during the two hundred year when the slave trade had flourished in this hemisphere. Throughout the novel, Morrison gives readers a touching insight into slave and African-American experiences. All the history that the readers have learnt about slavery is stretched out on a giant canvas. Author, however is not only concerned with what history has recorded in the slave narrative but what it has omitted; the “unspeakable past” (Morrison, Beloved 58) of the black marginalized people. The novel is an overt and passionate quest to fill a gap neglected by historians and in fugitive slave narratives, to record the everyday lives of the marginalized blacks. Morrison sets out to give voice to 'disremembered and unaccounted for' the women and children who left no written records.

Set in post-civil war Ohio, this haunting narrative of slavery and its aftermath, traces the life of a young woman, Sethe. She struggles with the haunting memory of her slave-past and the retribution of Beloved, the ghost of the infant daughter whom she killed in order to save her from the living death of slavery. When contemplating Beloved's death, she declares that “If I hadn't killed her she would have died not that is something I could not bear to happen to her” (Morrison, Beloved 200). After failing to 'save' her children from the schoolteacher, Sethe suffered forever with guilt and regret.

The novel opens with a descrption of the “spiteful” (Morrison, Beloved 3) atmosphere of 124 Bluestone Road' in rural Ohio in 1873, where marginalized characters-Sethe, her daughter Denver, and a troublesome spirit live. They are soon joined by two other marginalized characters: paul D, who knew Sethe form their years as slaves on a Kentucky plantation and a strange woman who calls herself beloved. Morrison presents Beloved as a spiritual manifestation of history. She is the embodiment of sixty millions or more dead and enslaved Africans, who has returned to reclaim her space and haunts us throughout the narrative with her enigmatic appearance. All

these black characters in Beloved are haunted by memories of the past, the torture they themselves endured, the humiliation they experienced and the brutal deaths they witnessed. Thus the novel's complex interweaving of the past and present provides a compelling portrait of a marginalized black family's position in white American society and their struggle to reclaim their place. They have overall 'intermediate status' as a group because there are barriers between the strata that restrict in many ways their full participation in the life of dominant white community. These barriers are in the form of prejudice and discrimination—leading to their dehumanization. They exist in a world which is defined by the surrounding white society that both violates and dehumanized them. Morrison asserts:

White people believed that whatever the manners, under every dark skin was a jungle. Swift unnavigable waters, swinging screaming baboons, sleeping snakes, red gums ready for their sweet white blood. In a way, he thought they were right. (Morrison, Beloved 198)

White dominant society discriminate blacks both socially and economically. They are treated not as human beings, not even as animals, but worse than them. In Morrison's words, "men and women were moved around like checkers" (Morrison, Beloved 23). Their life choices were severely limited and freedom was an unimaginable dream for them. The freedom to marry and to have their own family did not exist. Morrison says, "Slaves were not supposed to have pleasurable feelings of their won;... they have to have as many children as they can to please whoever owned them" (Morrison, Beloved 209).

Centre also link to scientific racism to justify treating certain peoples as inferior and less than human. The basic myth of racism is that white skin brings with it cultural superiority – that whites are more intelligent and virtuous than black by the mere fact of being white. This false-conception of whites brought with it pain, sorrow, death and above all the negation of entire rece.

Schoolteacher, too found ways of justifying slavery with 'scientific' ratiocinations so he asserts that "definitions belongs to the definers – not the defined (Morrison, Beloved 190). He regards Sethe as a creature that God has given responsibility of maintaining. And, of course she is regarded as a valuable possession since she is "property that reproduced itself without cost" (Morrison, Beloved 228). He uses violence and coercion to maintain discipline at 'Sweet Home' and makes the life of blacks unbearable. These common attitudes of Schoolteacher legitimized the dehumanizing way in which owners treated their slaves.

Paul D, a marginalized black character further provides the details of oppression and suffering of the black slaves. Like Sethe, his past life is full of unbearable horrors. His re-memories throw light on the dehumanizing effect of the institution of slavery. During the period of his enslavement he puts up with "anything and everything, just to stay alive" (Morrison, Beloved 221). For the eighty six days Paul D, spent shackled, life was said to be us good as dead.

During, before and after the War he had seen Negros so stunned, or hungry, or tired or bereft it was a wonder they recalled or said anything. Who, like him, had hidden in caves and fought owls for food; who, like him, stole from pigs; who, like him, slept in tree in the day and walked by night; who, like him, had buried themselves in slop and jumped in wells to avoid regulators, raiders, patrollers, veterans, hill men, posse and merrymakers. (Morrison, Beloved 66). So, the presence of Paul D, is strong enough to keep the painful past of marginalize people alive. To be black and female is to suffer form the 'twin disadvantages' of racial discrimination and pronounced gender bias. In No Crystal Stair: Visions of Race and Sex in Black Women's Fiction, Gloria Wade – Gayles explains this interesting phenomenon through the imagery of circles.

There are three major circles of reality in American society, which reflects degree of power and powerlessness. There is large circle in which white people, most of them men experience influence and power. Far away from it there is a smaller circle, a narrow space, in which black people, regardless of sex, experience uncertainty, exploitation and powerlessness. Hidden in this second circle is a third, a small, dark enclosure in which black women experiences pain, isolation, and vulnerability. These are the distinguishing marks of black womanhood in white American. (3-4).

One of the most damaging effect of the dual oppression of black women, against which Morrison writers, is murder if one's own child. The murder become Sethe's act of motherly love, which she explains saying, "I took and put

my babies where they'd be safe" (Morrison, Beloved 164). She prefers to murder her daughter Beloved, rather than see her in bondage when the white oppressors come to get her and her children. If it was possible for a black slave woman like Sethe to live with her family with dignity and self-respect in the America of the 1850 she would not have committed this hideous crime which was the mutilation of her vibrant motherly love. Sethe's acton is also directly related to the absence of system of power among the black community. As the story of slavery itself is constructed on the absence of power, autonomy and language, Sethe learns these lessons and refuses to turn her children over to the slave catches who have come to take her family back to 'Sweet Home' and eludes to captures by murdering her child. Description of Sethe by the other characters when she is killing her daughter contain animal images. Schoolteacher compares her to 'a horse' or 'a hound' that has been mistreated by his master, and is likely to bite the master's hand off. Stamp Paid describes her like ' a hawk' on the wing. Sethe herself says that upon seeing schoolteacher she felt as if humming birds were sticking their 'needle beaks' in her head'

Sethe, is most devastated by the fact that the nephews take her milk that is for her children and left dehumanized as a 'cow' (Morrison, Beloved 200). She feels this is an attack on her identity as a mother and runs to freedom to reclaim this identity as a mother she comes to realize that:

Anybody white could take your whole self for anything that came to mind. Not just work, kill ,or maim you, but dirty you. Dirty you so bad you couldn't like yourself anymore. Dirty you so bad you forgot who you were and couldn't think it up. And though she and others lived through and got over it, she could never let it happen to her own. The best thing she was, was her children. (Morrison, Beloved 251).

The suffering of slavery makes Sethe become a tortured woman whose feature is living in a painful life because of some trauma in the past or now. Thus, Sethe's body is a text upon which is inscribed the text of marginalized black woman.

Another female character, Baby Suggs, life is a practical example of the brutality of the slave system and exploitation of black women. Although Baby Suggs is dead when the novel opens, she is a prominent character. Morrison has provided us a lot of information about her through flashbacks. Her portrayal reveals another chapter in the history of black woman's sufferings, struggles and survival in a racist system. She like Sethe, was valued by her masters as a breeding machine to increase his capital.

On the whole, the entire African-American community was condemned to endless suffering, yet the black woman's condition was much worse than the black man's It was the black woman who had the greater cause for grievance, being oppressed as both a black and a woman. The black being illiterate and poor, there was no question of protest; she continued to suffer from ignominy without hope. The black women were subjected to sexual assault without any feeling of guilt because she was considered the white man's personal property.

Furthermore, as both Sethe and Body Suggs relate their personal stories, readers understand how "white things have taken all Baby Suggs had or dreamed" (Morrison, Beloved 89). Beloved truthfully exposes the position of black women in white society and give voice to their vicious exploitation Gloria Steiner, in her introduction to Outrageous Acts and Everyday Rebellions, states this equation very tersely thus; "just as male was universal but female was limited, white was universal but black was limited" (7). The stories of different characters bear witness to the struggle of black slaves to survive and escape to freedom from the endless miseries and exploitation which have made their like no better than hell. Body Suggs prefers to hold on to her name, her identity:

Except her brave heart there is nothing left intact in her body because slave life had "busted her legs, back, head, eyes, hands, kidneys, womb and tongue" (Morrison, Beloved 87). No doubt, like Baby Suggs and Sethe most of the female characters are exploited by their masters but they are not meek. They are strong, determined and affirmative characters who are not ready to surrender before their masters and try their best up to the last moment of their life to break the vicious circle of slavery. They are the spokesperson of Toni Morrison to speak out against protest, slavery and injustice.

Paul D, another marginalized character also has no identity of his own. He is also uncertain of his identity or put it in another way, society has not yet specified a role for him. He is a man with 'status dilemma' who is uncertain of the role

he was expected to play. Even he also doesn't have his own name. He is identified alphabetically by some anonymous slaveholders by one of a series of Pauls.

Thus, Morrison's Beloved is about the solution – collective class struggle that will help to solve the exploitation and oppression of African people. The novel does not only shows the personal history of Sethe's alone, but the collective history of whole black marginalized community. It documents the author's awareness and concern for the historical conditions of marginalized African. Morrison herself asserts that history of slavery must not be neglected or forgotten. She recollect those slaves' experiences in Beloved that are very different from the cut-and-dried facts of history books, one that shows the messiness of real life. Toni Morrison's, Beloved can be read as an overt and passionate quest to fill a gap neglected by historians and slave narratives, that gives voice to the everyday lives of the Marginalized people'. So, the facelessness and anonymity imposed by the dominant culture on the marginalized communities in America is resisted by voicing them.

References:-

1. Dickie-Clark, H.F. The marginal Situation: A Sociological Study of a Colored Group. London: Routledge, 1966
2. Christina, Barbara, Black Feminist Criticism: Perspectives on Black Women Writers. New York: Pergamon. 1985
3. Relations in Brazil and the United States, New York: Macmillan, 1971
4. Furman, Jan. Toni Morrison's Fiction. Columbia: U of South Carolina, 1996
5. Fernandes, Florestan, A Intergracao do negro ma Sociedade de classes, Sao Paulo, 1965.

   Holmes, Fred R. Prejudice and Discrimination: Can We Elimate them?. 2nd ed. Englewood Cliffs, N.J.,: Prentice, 1977.
6. Degler, Carl N. Neither Black Nor White: Slavery and Race.
7. Kerckhoff, "A,C, An Investigation of Factors Operative in the Development of the Personality Characteristics of Marginality."
8. Diss. U Wisconsin, 1953.
9. Morrision, Toni. Beloved U.K.: Vintage, 1997.

Dr. Nirmal Boora

Associate Professor in English

Govt. P G College, Hisar

Mail ID:- nirmalbooraaugust20@gmail.com

Study of The Tragic Hero of Eugene O' Neill's The Hairy Ape from Aristotelian Perspective

Dr. Chitralekha

Abstract

Aristotle characterizes the tragic hero, the protagonist of a tragedy, as an individual who is intermediately virtuous and morally upstanding but commits great wrongs or injuries without evil intent, that ultimately leads to misfortune, often followed by tragic realization of the true nature of events that led to this destiny. The hero is fittingly described as worthy in spite of an infirmity of character. The hero's characters are inseparable from the tragic action, which passes through the phases of decision, illumination, and purification. This paper studies the tragic hero of Eugene O' Neill's The Hairy Ape from Aristotelian prospectives. It is about a beastly, unthinking laborer named Yank, the hero of the play, as he searches for a sense of belonging in a world governed by the rich. The resounding theme of the play is the negative effects of industrialization and technological advancements in reducing the human worker into a machine.

Key words: Hamartia, belongingness, freedom, joys and sorrows, goodness, true to life

The hero is the pivot round whom the whole story revolves. Other characters are there mainly to reveal the diverse facets of the hero, who is the centre of the story. Aristotle has paid due attention to the ideal tragic hero. What follows is a consideration of Aristotle's view of ideal hero in general and then a consideration of modern tragic hero Yank, from Eugene O'Neill's The Hairy Ape.

With regard to characterization in general. Aristotle has laid down four essential qualities. First, the character should be good. "This predominant and main requirement of "goodness", which seems at the first sight rather strange, is essential to Aristotle's whole theory because it is the foundation of that initial sympathy in spectator or reader without which the tragic emotions cannot be roused or the tragic pleaure ultimately conveyed."[1] "The bad man", Aristotle says, "falling from happiness to misery arouses some kind of human feelings in us, but not pity."[2]

The second point is that the characters should be Äpproperiate". The third is to make them life like. Bywater remarks that "Thirdly character must be true to life."[4] In other words they must have the virtues and weaknesses, joys and sorrows, loves and hatreds, likes and dislike, of average humanity. Such likeness is essential, for we can feel pity only for one who is like ourselves. The charcters must be of an intermediate sort, mixture of good and evil, virtues and weaknesses, like us.

Fourthly the characters must be uniform in thought and action. They must be true to their own natures, and their actions must be in character."The character must be seen as a whole; development must take place according to intelligible principles."[5]

The tragic hero is not depraved or vicious, but he is also not perfect, and his misfortune is brought upon him by some fault of his own. The Greek word used here is, Hamartia". The cause of the hero's fall must lie, "not in depravity, but in some error (Hamartia) on his part."[6] Thus according to aristotle, perfectly good, as well as utterly wicked persons, are not suitable to be heroes of trageties.

Thus Hamartia is an erroror miscalculation, but the error may arise in three ways, it may arise from ïgnorance of some material fact or circumstances", or secondly, it may be an error arising from hasty view or thirdly, it may be error voluntary, but not deliberately. If king Oedipus is Aristotle's ideal hero, we can say with Butcher that, "His conception of Hamartia includes all the three meanings mentioned above, which in English cannot be covered by a single term ----Othello in the modern drama, Oedipus in the ancient, are the two most conspicuous examples of ruin wrought by character, noble, indeed, but not without defects, acting in the dark and, as it seemed, for the best."[6]

It would really be interesting to see how far The Hairy Ape, subscribe to Aristotle's precepts of ideal tragic hero, outline hereabove.

In Eugene O'Neill's The Hairy Ape, the tragic hero, Yank, leads a life of illusions. Yank lives on the illusion of superiorty of strength. Yank's illusion go on yielding place to realties and adding to the knowledge of the hero, till one day he realizes the reality of his placement in the society. Even this realization is an illusion; and when it is broken, the result is his tragic fall

from a state of illusiory prosperity to a state of adversity that leads him to reality of death.

O'Neill's plays are graet tragedies. O'Neill said, "The subject here is the ancient one, that always was and always will be the one subject for drama, and that is man and his struggle with his own fate. The struggle used to be with the gods but is now with himself, his own past, his attempts to belong."[7] He portrays in his work, the problems confronting man, the major problem being man's quest for a place in society, in the world and his ultimate return to nothingness. His characters, men of sentiment and men of pride alike, are self conscious individuals seeking their place in a society in which personal choices are being crowded out by a universal trend towards conformity. The Hairy Ape focuses poignancy of the human struggle to discover the meaning of life and man's everlasting search for values that sustain him in the midst of choas and darkness of existence. The tragedy of Yank of The Hairy Ape is the tragedy of an Everyman hero who falls to a victim to an endless chain of illusions and realities. The O'Neill Hero, who is both the protagonist and also the observer of his own fate; always plunges into the underside of his human conciousness. Yank trying to find peace and respite from the excruciating metabolism of mental and flesh in the mechanized world, goes back to the animals: but trapped as his flesh is in the steel again, he becomes the prisoner of his own humanity."[8]

As the play opens, our sight falls on the fireman's forecast of a transatlantic liner an hour after sailing from New York for the voyage across. What we see is the cramped environment of the stockhole: in this environment we see, men shouting, cursing, laughing, singing-creating a confused, inchoate uproar swelling into a sort of unity, a meaning – the bewildered, furious baffled difiance of a beast in a cage." (T.H.A. p.39). Yank is seated in the foreground and he is introduced by the playwright as the hero, being "broader, fiercer, more truculent, more powerful, more sure of himself than the rest"(T.H.A. p. 40). All other man respect Yank's "superior strength", and all believe that he is "their most highly developed individual" (T.H.A. p. 40). These attributes of Yank as shown above present him as something of a 'classic'tragic hero.

Yank, the tragic hero of The Hairy Ape, is not a king or a prince or some other exalted individual as Aristotle laid down that the hero of a tragedy must be an exceptional individual, a man of high rank, a king or a prince. Yank is a humble stoker whose business is to shove fuel into the furnace of the ship's engine. He is beastly, filthy, vulgar and coarse. He is treated as a boss by his co-workers in the sense that he is more powerful physically than they, and he is more in harmony with their workers. He tries to show his authority by saying ----I'm tryin'to tínk" (T.H.A. p. 42). Since the other sokers are in a joyous mood, they rhyme tínk wit "drink". This makes Yank angry. He also rebukes the other sokers for mentioning home-sickness before him. He does not like to see the other stokers getting sentimental about their homes. When the other stokers sing – "six days in a hell, and then Southampton" (T.H.A. p. 41), he shouts : "shut up, yuh lousy boob! Where d'yuh get dat tripe? Home? Home, hell: …..Dis is home, see? What dýuh want wit home?" (T.H.A. p. 41).

This shows Yank's satisfaction with his position in his colleagues. This also clearly indicates the sense of complacency, which Yank celebrates at the moment. Yank is quite obvious of the rest of the world and is happy to confine himself to the stokehole only. The conciousness of his physical superiorty makes him feel quite at home in the stokehole. He explains to the other stokers that "he belongs". He explains that the stoker's job requires physical energy which he has, and therefore, he belongs. Since other stokers are weak, they do not belong. In very emphatic words he asserts – "as for disbein'hell – aw; nuts! Yuh lost your noive, dat's what. Dis is man's job, get me?" (T.H.A. p. 44). In this way he is leading a life of illusions.

The tragedy of Yank is a tragedy of man's lack of self identification, of futile endeavour to 'belong'in a world which is overwhelmingly alien, harsh and cold, tempered by the strength of steel, the curse of capitalism and the impersonal mechanism of materialism and loss of religious faith. In other words it is a tragedy of self destruction. And how it takes place. Doris V. Falk has an answer for us: "From Socrates to the Psychoanalysists we have understood that the failure to know ourselves results in the tragedy of self destruction in the life as in the search for identity in the world of illusion is responsible for his tragedy and makes him tragic hero. The tragic hero, Yank, of The Hairy Ape falls in the degree from a state of illusory 'prosperity'to a state of utter ádversity'leading him to the reality of death.

This shows that cause of Yank's suffering is neither the hostality of Fate as in the Greek Tragedy, nor Hamaria or "fatal flaw".

Yank's isolation is perpetuated because of the crippling tyranny of organization. The capitalist and the proletariat, the incendiarists and the pacifists, the state and the society, the jail and the zoo merge themselves into a symbolic spectrum of impersonal revenge thwarting man's search for belonging. As a consequence, Yank assumes a motiveless malignity against everybody including himself. William Brown, Sam Evans and James Tyrone lose their souls in their pursuit of wealth and ambition, becoming the poorer by their very success. Hugo, the little Lenin, has aristocartic pretensions at heart, hoping to convert the Proletariat into slaves. Says O'Neill, in one of his essays:

They have lost the ideal of the Land of the Free. Freedom demands initiative, courage, the need to decide what life must mean to oneself. To them, that is terror. They explain away their spritual cowardice by whining that the time for individualism is past, when it is their courage to possess their own souls which is dead and stinking! No they don't want to be free. Slavery means security of a kind, the only kind they have courage for. It means they need not think. They only have to obey orders from owners who are, in turn, their slaves.[10]

Yank considers himself to be a part of the world in which he lives among many brethern of his class. Christ said, "I am the Alpha and Omega", and Yank says, that he is it the Alpha and the Omega of the world of industrialized society, a prop:

I am de en; I am de start…. I am steam and the oil for the engines; …. I am smoke and express trains and steamers and factory whistles; I am de ting in Gold that makes it money; I am de muscles in steel, the punch behind it (T.H.A. p. 48).

Yank's whole sense of 'belonging'is based on the sense of security that he draws from his strength personal as well as professional. Yank is a collateral version of Brutus Jones, and his disengagement comes through the changing shape of steel instead of those of jungle. Yank's regression from the power house to the animal house is universalized as Everyman's quest for a centre of belonging in a social surface without any centre. Poor Yank, does not know, however, that a slender, delicate, pale and nervous girl life Mildred Douglas, who is a patient of anaemia, can stun him in such a disastrous way that he will try to grope for his moorings but will not find them anywhere. A single sight of Mildred Douglas drags him out of his illusions and everything within him breaks. Mildred Douglas, the daughter of the President of Nazerath Steel Company, in her romantic sympathy for the poor class and in her interest to study their life, goes to the stokeholes and there she fails to face the sight of the raw human energy. She is shocked to see Yank's gorilla face and the hairy chest. The girl who wanted to "Study the life of the poor"shudders to see the very first page of their life and putting her both hands before her pale face to shut the ugly sight of Yank, she utters a low, choking cry "Take me away! Oh; choking filthy beast (T.H.A. p. 58).

This one and half sentence seal the fate of Yank who used to boast of his "belongingness" to the stokehole and the ship. Yank is startled to see the reaction of the girl and he feels himself insulted in some unknown fashion in the very hurt of his pride. Yank is thwarted completely. He is chucked away from the ground of imagination to the ground of reality.

At this time, Paddy comes forward and explains the thinking of Mildred about Yank in the words " it was as if she'd seen a great hairy ape escaped from the zoo"(T.H.A. p. 62). This gives a tangible description of Mildred feelingsfor Yank. He is provoked and hopes "I'll fix her! May be she comes down again"(T.H.A. p. 64). But this hope of Yank is taken by his colleagues as a joke. He tries to compose himself but it is again with the help of his primitive false pride, again an illusion, that he takes a chance to console himself: Ï scared her….. Who do hell is she? An"t she de same as we? Hairy Ape, huh'…. I"ll show her I'm better'n her, if she on'y knew it. I belong and she don't see; I move and she's dead". (T.H.A. p. 64). But the fact is that Yank now merely seems to 'move' with the strength nearly dying in him.

Yank now wants to take revenge on her after searching her and to search her, he reaches the Fifth Avenue. But he does not know that actually he is searching for his moorings which are devastated by the slender Mildred. Mildred who is an ideal product of this highly competitive world in regard to her physical dimension, shatters the dreams of gigantic Yank and just like a homeless wanderer, he wants to rehabilitate himself. He is filled with the odd feelings Mildred has

generated in him by making him for what he really is i.e. a hairy ape. Yank also accepts this label and starts functioning in the way of a real gorilla. He tries to show his gorilla like strength to a high hatted gentleman but is put into jail. In the prison he gets the information of I.W.W. (Industrial workeres of the world). Yank determines to join the negative forces, and soon feels that he shares the revolutionary ideas of I.W.W. and thus belongs to it.

Soon after his release from the prison, Yank goes to the office of I.W.W. Yank is glad for he feels that now he belongs to the society. Yank informs the I.W.W. that he wants to blast all that is made of steel. He wants to- …. Blow up the factory, where he (Mildred's father) makes the steel"(T.H.A. p. 82). Such views arouse the suspicions of the secretary, and he takes Yank to be a spy. He calls him a "brainless ape" (T.H.A. p. 83). He is thrown out of the I.W.W. office and in a pathetic condition, he cries looking at the sky above him- "….where do I get off at, huy?"(T.H.A. p. 84). But his questions remaind unanswered and his last illusion of belonging to the worker's cause is also broken, and now he has no external prop to support himself. Some critics argue that the whole question of Yank's hidden identity is quite similar to that Oedipus and Hamlet.

Therefore, Yank again faces a clash between the personal ideals and plans of the organization. Yank feels dissatisfied with his identity. Having failed and being frustrated in his attempts to find kinship with the society of men, Yank hopes to search for it in the society of beasts. Therefore, he goes to the zoo where he stands face to face with the gorilla. He talks to it as if to a brother, for Yank thinks that they both belong to the same club of Hairy Ape. Yank's predicament is that he has failed throughout his life to know his real position unless he gets the knowledge of the world. His meeting with Mildred opens his eyes to the reality of his position in the ship. The I.W.W. organization makes him realize that he can't change the world according to personal standard. Only then he comes to know that he owns nothing,. Infect in the world of the Clifford Leech, "Yank loses his position in the underworld of the stokehole and tries to fight upward into the air of human society."[11]

Yank feels happy and integrated as long as he does not get the knowledge of the world hence of his own identity. It has been rightly remarked in the Literary History of the Unites States, "….and when he hence came to doubt that he had any function in the world, he could not understand, he ceased to think of himself as a man and despised himself as an ape, "I belong" had been the recurrent phrase with which he justified himself. When he could no longer say that he was lost".[12]

Thus he has been rejected by all the rational beings and here, in the zoo he tries to club himself with the apes- "Ain't we both members of de same club-de hairy apes". (T.H.A. p. 85). At last he has found his replica in the gorilla- "So you are what she's seen when she looked at me, de white-faced tart!" (T.H.A. 85).

He thinks he should take the gorilla down the Fifth avenue for a walk to show the world that he has got a real companion and now he belongs. But this scene becomes tragic. Gorilla wraps Yank in its huge arms and crushes him to death. Then, it takes him up and throws him into its cage, closing the door, and walks off menacingly. Even the world of ape does not accept him. Yank, in the cage mutters painfully: "Even him did't think I belonged, Christ, where do I get off at? Where do I fit in? (T.H.A. 87).

Yank, therefore, is the tragic hero of The Hairy Ape and the tragedy of Yank lies in his glorious self destructive struggle against the forces, external as well as internal with which he can't cope and compromise owing to his attachment to illusions. Doris V. Falk maintains that one of the themes of the play is man's lostness in the world in which he exists only as a "passive"being at the mercy of forces outside himself; they are the forces which man himself has created and they are, through this long span of evolution, now beyond his control. W.D. Ross feels that Äristotle has no conception of the possibility of a hero who likes Macbeth or Richard III or Satan wins our interest by sheer intensity……..”13 It is this quality of intensity of the hero's commitment to the position he has once taken becomes his chief characteristic. We feel there is nothing mean and petty about Yank; his grandeur and heroism is truly tragic as Oedipus & Hamlet etc. are tragic heroes.

Yank is neither utterly villainous nor utterly virtuous. He also does not have rank like Aristotle's heroes but he does not have emotional charge which is needed in tragic protagonist. Yank's struggle in an individual's struggle with society. He is crippled emotionally. Hence yank's

misfortune is also brought out by some faults of his own. He possesses a craving for belonging and this becomes his "hammartia". It operates in a manner akin to Aristotle's "Hamartia".

Refernces:

1. Humphry House, Aristotle's Poetics, ed Colin Hardie (Ludhiana: Kalyani Publishers, 1970), p.83.
2. Ingram Bywater, Aristotle on The Art of Poetry, ed Gilbert Murrey (Oxford: At The Clarendon Press, 1920), p.50.
3. Ingram Bywater, p. 56.
4. S.H. Butcher, Aristotle's Theory of Poetry and Fine Art (London: Macmillan 1932), p. 53.
5. Humphry House, p. 87.
6. S.H. Butcher, p. 320.
7. From an interview with a staff member of the New York Hearald Tribune, March 16, 1924. Reprinted in Cargill. O Fagin, N.B. Fisher, W.J. Edition. O'Neill and His Plays, Four Decades of Criticism (New York University, Press, 1961) pp. 110-111.
8. D.V.K. Raghvacharyulu, Eugene O'Neill: A Study (Bomaby: popular Prakashan, 1965) p. 181.
9. Doris V. Falk, Eugene O'Neill and The Tragic Tension (N.Y. Gordian Press, 1982), pp. 28-29.
10. Eugene O'Neill, The Plays of Eugene O'Neill, (New York: Random House, 1955), vol. III, p. 532.
11. Clifford Leech, Eugene O'Neill (Oliver & Boyd), Edinburgh, 193), p. 42.
12. Robert E. Spiller et al., Literary- History of the United States (London: Amerind Publishing Co., Pvt. Ltd., 1963), p. 1249.
13. W.D. Rioss, quoted in Isaiah Smithson, "The Moral view of Aristotle's Poetics,"Journal of the History of Ideas, vol. XLIV, No. I (Jan.-March 193), p.10.

Dr. Chitralekha

Associate Professor (English)

Maharaja Agrasen P.G. College for Women,

Jhajjar

chitralekha1969@gmail.com

66

AIR AND ATMOSPHERIC POLLUTION: CAUSES, RESOLUTIONS AND WAY FORWARD

Dr. Nirmal Boora

Abstract

Pollution refers to the addition of unwanted substances into the environment resulting from human activities. Pollutants are agents that cause environmental pollution, and they may be physical, chemical, or biological substances released into the environment either directly or indirectly harmful to humans and other living organisms. Major types of pollution include air, land, and water pollution, as well as plastic, noise, thermal, light, soil, and radiation pollution. This text focuses mainly on air and atmospheric pollution. Air pollution is the presence of any solid, liquid, or gaseous substance, including noise and radioactive radiation, in the atmosphere in concentrations that may directly or indirectly harm humans, living organisms, plants, property, or interfere with normal environmental processes.Tropospheric pollution is the presence of undesirable solid or gaseous particles in the air, and the major gaseous and particulate pollutants present in the troposphere include oxides of sulfur, nitrogen, and carbon, hydrogen sulfide, hydrocarbons, ozone, and other oxidants.

Further in this text we closely study the major causes of the air and atmospheric pollution and how are they causing harm to the mankind. We also discuss various ways to tackle these sourcces and their outcomes at personal as well institutional level where we talk about certain programmes introduced by the government and the policies introduced; some the measures we can take as individuals to overcome this serious issue of pollution. This text aims to dive in deeper and study the issue closesly and see it as it actually is, that is way more than we study about it in our textbooks and papers.

Pollution

Pollution may be defined as addition of undesirable material into the environment as a result of human activities. Agents which cause environmental pollution are called pollutants. A pollutant may be defined as a physical, chemical or biological substance unintentionally released into the environment which is directly orindirectly harmful to humans and other living organisms.

Types Of Pollution

Major types of pollution are Air, Land and Water and some other types of pollution are Plastic, Noise, Thermal, Light, Soil, Radiation etc. But we will mainly focus on Air and Atmospheric pollution.

Air Pollution

Air pollution may be defined as the presence of any solid, liquid or gaseous substance including noise and radioactive radiation in the atmosphere in such concentration that may be directly and indirectly injurious to humans or other living organisms, plants, property or interferes with the normal environmental processes.

Types of Air Pollution

Indoor air pollution (IAP):

Poor ventilation due to faulty design of buildings leads to pollution of the confined space. Air pollution is the cause of 7 million premature deaths worldwide. Out of this 7 million, 2.6 million premature deaths are caused by indoor air pollution.

Causes:

Burning of firewood and biomass, release of volatile organic compounds (VOCs) from Paints, carpets, furniture, etc. or use of disinfectants, fumigants, etc.

Characteristics of IAP:

o IAP impacts are more prominent among low Socio Demographic Index (SDI) countries. o Within a country, the IAP is more likely to impact poor & rural households compared toaffluent and urban households.

o Within a household, IAP affects women and children more than men.

Suggestive measures to curb the menace of indoor air pollution:

Public awareness: Spreading awareness among people about the issue and the serious threat IAP poses to their health and wellbeing.

Change in pattern of fuel use: At present, majority of low-income families rely solely on direct combustion of biomass fuels for their cooking needs as this is the cheapest and easiest option available to them. Therefore, promoting use of cleaner energy sources such as gobar gas, LPG, etc. is required.

Modification of design of cooking stove: The stoves should be modified from traditional smoky and leaky cooking stoves to

the ones which are fuel efficient, smokeless and have an exit (e.g., chimney) for indoor pollutants.

Improvement in ventilation: During construction of a house, importance should be given to adequate ventilation; for poorly ventilated houses, measures such as a window above the cooking stove and cross ventilation though doors should be instituted.

Intersectoral coordination and global initiative: Indoor air pollution can only be controlled with coordinated and committed efforts between different sectorsconcerned with health, energy, environment, housing, and rural development.

Controlling Indoor Air Pollution in India:

As per Census 2011, about 65.9 per cent of households depend on solid biomass, including firewood, crop residue and cow dung as primary fuel for cooking in India. The use of traditional biomass for cooking through simple traditional cook stove is a cause of indoor air pollution due to incomplete combustion of biomass which produces a range of toxic products. The Ministry of New and Renewable Energy(MNRE) is implementing following programmes to reduce dependence upon traditional biomass cooking:

The Unnat Chulha Abhiyan: It was launched in 2014 for promotion of improved biomass cook stove in the country for providing a clean cooking energy solution with a view to reduce consumption of fuel wood with higher efficiency and low emissions.

National Biogas and Manure Management Programme (NBMMP) for setting up of family type household biogas plants for meeting cooking energy needs of rural and semi urban areas and to save the use of firewood.

Promoting solar cookers to reduce the indoor air pollution.

Pradhan Mantri Ujjwala Yojana (PMUY):

o It was Launched in 2016 with a motto 'Swachha Indhan, behtar Jeevan' (Clean fuel, better life) by the Ministry of Petroleum and Natural Gas to safeguard the health of women & children by providing them with clean cooking fuel through LPG.

o Under this scheme, 8 crore new LPG connections will be provided to women's belonging to Below Poverty Line (BPL) families up to 2020.

o The Scheme provides a financial support of Rs 1600 for each LPG connection to the BPL households and interest free loan to purchase stove and refill by Oil Marketing Companies. The administrative cost of Rs. 1600 per connection, which includes a cylinder, pressure regulator, booklet, safety hose, etc. would be borne by the Government.

Atmospheric Pollution

Tropospheric Pollution:

The lowest region of atmosphere in which the human beings along with other organisms live is called troposphere. It extends up to the height of ~ 10 km from sea level. Tropospheric pollution occurs due to the presence of undesirable solid or gaseous particles in the air. The following are the major gaseous and particulate pollutants present in the troposphere:

Gaseous air pollutants: These are oxides of sulphur, nitrogen and carbon, hydrogen sulphide, hydrocarbons, ozone and other oxidants.

Eg:

l Oxides of Carbon (CO and CO2) which come from burning of wood and coal and other fossil fuels like petroleum which cause Global warming and Respiratory issues.

l Oxides of Sulphur (SO2 and H2S) which come from Power plants and refineries, Volcanic eruptions or when Sulphur containing fuel is burnt which causes Acid rain Respiratory issues Loss of chlorophyll in plants (Chlorosis).

l Oxides of Nitrogen (NO and N2O) which come from Naturally (Lightning) or In Automobile exhaust: (at high temperature) $N2(g) + O2(g) \rightarrow 2NO(g)$ $2NO(g) + O2(g) \rightarrow 2NO2(g)$ which casuses Irritation in eyes and lungs Low productivity in plants Acid rain.

l Hydrocarbons (Benzene and Ethylene) which comes from Automobiles and Petroleum industries (Incomplete combustion of fuels) and causes Respiratory issues Carcinogenic.

Particulate pollutants:

Their size ranges from 0.001 to 500 μm in diameter. Particles less than 10μm float and move freely with the air current. Particles which are more than 10μm in diameter settle down. Particles less than 0.02 μm form persistent aerosols. The effect of particulate matter (PM) is largely dependent on the particle size. PM bigger than 5 microns are

likely to lodge in the nasal passage, whereas particles of about 10 microns enter into lungs easily. Dust, mist, fumes, smoke, smog etc. are particulate pollutants.

o Dust is composed of fine solid particles (over 1μm in diameter), produced during

crushing, grinding and attribution of solid materials. Sand from sand blasting, saw dust from wood works, pulverized coal, cement and fly ash from factories, dust storms etc., are some typical examples of this type of particulate emission.

o Mists are produced by particles of spray liquids and by condensation of vapours in air. Examples are sulphuric acid mist and herbicides and insecticides that miss their targets and travel through air and form mists.

o Fumes are generally obtained by the condensation of vapours during sublimation,

distillation, boiling and several other chemical reactions. Generally, organic solvents,

metals and metallic oxides form fume particles.

o Smog, the word is derived from smoke and fog. This is the most common example of air pollution that occurs in many cities throughout the world.

Some other examples of Suspended Particulate matter:

Fly Ash

Lead and other metals

Dust

SOURCE: Thermal power plants Construction activities metallurgical processes Automobiles exhaust.

EFFECTS:Smog (Smoke + Fog) leads to Poor visibility,Breathing problems, Lead interferes with the development of red blood cells, Carcinogenic.

FlLY ASH

It is a fine powder, which is the by-product of burning coal in thermal power plants. It includes substantial amounts of oxides of silica, alumina and calcium. Elements likeArsenic, Boron, Chromium, lead etc. are also found in trace concentrations.Owing to large-scale dependence on thermal power generation and high ash content in Indian coal, large quantity of ash is generated in the country (nearly 200 million tons). It not only requires large area of precious land for its disposal but is also one of the sources of air and water pollution.

Utilisation of Fly Ash:

In agriculture: It improves water holding capacity, works as soil conditioner and contains micronutrients like phosphorus, potassium and calcium thus increasing the crop yield.

In Construction works: Fly ash is a proven resource material for many applications of construction industries and currently is being utilized in manufacturing of Portland cement, bricks/blocks/tiles manufacturing, road embankment construction and low-lying area development, etc.

o Concrete made with fly ash is stronger and more durable than traditional concrete made with Portland cement.

o Fly ash is a lightweight material and therefore it undergoes lesser settlement and hence can be used for embankment construction over weak substrate such as alluvial clay or silt where excessive weight could cause failure.

In manufacturing of Absorbents that are suitable for purification of waste gases, drinking water purification, waste water treatment etc.

In preventing contamination of Water Resources- by preventing contamination of surface water through erosion, runoff, airborne particles landing on the water surface etc.

Government Measures to promote Fly Ash Utilization: At present, nearly 63% of the fly ash is being utilised in India

Central Electricity Authority (CEA) has been monitoring the fly ash generation and its utilization in the country at coal/ lignite based thermal power stations since 1996-97.

Notifications on Fly Ash utilisation, 2016: by Ministry of Environment, Forests and Climate Change (MoEFCC):

o Mandatory uploading of details of fly ash available on Thermal Power Station's (TPS) website

o Increase in mandatory jurisdiction of area of application from 100 km to 300 km

o Cost of transportation of fly ash to be borne entirely by TPS up to 100 km.

o Mandatory use of fly-ash based products in all Government schemes or programmes e.g. Pradhan Mantri Gramin Sadak Yojana, Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act, 2005, Swachh Bharat Abhiyan, etc.

As per, 2019 government notification the existing red clay brick kilns located within 300 km shall be converted into fly ash-based bricks or blocks or tiles manufacturing unit within one year.

The GST rate on fly ash and fly ash aggregate with 90% or more of fly ash content was reduced from 18% to 5%.

A mobile app for ash management- ASH TRACK was created to help establish a link between fly ash users and power plant executives.

NTPC in collaboration with Institutes like IIT-Delhi and IIT-Kanpur has initiated manufacturing of prestressed railway concrete sleepers.

WAY FORWARD

Renovation and modernization of coal/lignite based Thermal Power Stations need to include - technological advancement required to ensure development of dry fly ash collection, storage and disposal facilities so that fly ash in dry form could be made available to its users .

Policy support: To promote the usage of fly ash, state and local governments should issue preferential policies that encourage its recycling, such as the preferential purchase of recycled fly ash products and reduction of the overall effective tax.

Identifying prospective users: Areas having large prospective of fly ash utilization needs to be discovered for increasing the overall utilization of fly ash in India. New emerging areas includes Light Weight Aggregates and Geo-polymers, Coal Beneficiation Blending and Washing, etc.

Encouraging Industry-Academia Partnership and interactions regarding scientific disposal of fly ash for entrepreneur development, creating awareness and organizing training programmes. In view of large quantity of fly ash generation, induction of 'Fly Ash' as a subject in academic curriculum of Engineering and Architecture may be introduced.

Control of vehicular pollution

Strict implementation of the emission standards for automobiles and catalytic converters as provided by Bharat Stage norms and Pollution Under Control (PUC) certificate.

Reduction in Sulphur content of the fuel.

Introduction of alternate fuels such as CNG and LPG or shifting towards electric vehicles.

Proper traffic management by use of technology like GPS and creating infrastructure such as flyovers and subways, to cut fuel use.

Augmentation of public transport systems such as increased frequency of metro trains, electric buses, etc. to discourage use of private vehicles.

Information dissemination such as display of ambient air quality, pollution control measures, etc.

Control of Industrial Pollution:

Use of cleaner fuels such as liquefied natural gas (LNG) in power plants, fertilizer plants etc. which is cheaper in addition to being environmentally friendly.

Employing environment friendly industrial processes so that emission of pollutants and hazardous waste is minimized.

Installing devices which reduce release of pollutants, for instance:

o Filters: They remove particulate matter from the gas stream. The medium of a filter may be made of fibrous materials like cloth, granular material like sand, a rigid material like screen, or any mat like felt pad.

o Electrostatic precipitators (ESP): The emanating dust is charged with ions and the ionized particulate matter is collected on an oppositely charged surface. The particles are removed from the collection surface by occasional shaking or by rapping the surface. They are used in boilers, furnaces, and many other units of thermal power plants, cement factories, steel plants, etc.

o Inertial collectors: It works on the principle that inertia of SPM in a gas is higher than its solvent and as inertia is a function of the mass of the particulate matter this device collects heavier particles more efficiently.

o Scrubbers: They are wet collectors. They remove aerosols from a stream of gas either by collecting wet particles on a surface followed by their removal, or else the particles are wetted by a scrubbing liquid. The particles get trapped as they travel from supporting gaseous medium across the interface to the liquid scrubbing medium.

Pollution from burning of Agricultural or municipal wastes:

Crop residue/stubble burning after the end of harvest season has become a major cause of air pollution, especially in Delhi and large part of Northern India in winters causing smog and serious health issues. Burning of municipal waste for heating purposes also adds to the woe. According to the Indian Ministry of New and Renewable Energy (MNRE), India generates on an average 500 Million tons of crop residue per year. A majority of this crop residue is in fact used as fodder and fuel for other domestic and industrial purposes. However, there is still a surplus of 140 Mt out of which 92 Mt is burned each year.

The strategy to control residue burning:

Promotion of technologies for optimum utilization and in-situ management of crop residue to prevent loss of invaluable soil nutrients, minerals and improvement of general soil health.

Promotion of diversified uses of crop residue for various purposes viz. power generation, as industrial raw material for production of bioethanol, packing material for fruits & vegetables and glassware, utilization for paper/ board/panel industry, biogas generation/composting and mushroom cultivation in Public Private Partnership (PPP) mode.

Capacity building of various stakeholders including farmers and extension functionaries under crop development programmes and organization of field level demonstrations on management of crop residues in all programmes/schemes.

Promotion of adaptive research for management of crop residue and development of machineries for effective utilization of such residues.

Formulation and implementation of necessary policy measures for control of crop residue burning through suitable laws/ legislation/ executive orders etc.

Legislations to control Air Pollution:

THE AIR (PREVENTION AND CONTROL OF POLLUTION) ACT, 1981: This act defines air pollutants and pollution, and provides regulations for appliances, fuels, and automobiles for preserving the quality of air. It has also conferred power to the Central Pollution Control Board (CPCB)/SPCB to act as a nodal authority to control air pollution in India.

Environment (Protection) Act, 1986: It authorizes the central government to protect and improve environmental quality, control and reduce pollution from all sources (air, water, land), and prohibit or restrict the setting and /or operation of any industrial facility on environmental grounds.

Steps taken to curb Air Pollution:

National Clean Air Programme (NCAP)

The Central Government launched NCAP in 2019 under the Central Sector "Control of Pollution" Scheme as a long-term, time-bound, national level strategy to tackle the air pollution problem across the country in a comprehensive manner with targets to achieve 20 % to 30 % reduction in PM10 and PM2.5 concentrations by 2024 keeping 2017 as the base year for the comparison of concentration.

122 non-attainment cities mostly in Indo-Gangetic Plains have been identified based on ambient air quality data for the period 2014-2018.

A non-attainment city is considered to have air quality worse than the National Ambient Air Quality Standards.

Bharat Stage Emission Standards (BSES)

These are the legal limits on the amount of air pollutants like carbon monoxide and particulate matter that a vehicle in India can emit.

These standards are targeted at making improvements in three areas i.e., emission control, fuel efficiency and engine design.

India has planned to shift to BS-VI norms from BS-IV from 2020.

Carbon Emission by Thermal Power Plants (TPPs)

Ministry of Environment, Forest and Climate Change had notified environmental norms to reduce emission of PM 10, SO2 and oxide of nitrogen.

Graded Response Action Plan (GRAP) enforced by EPCA

For Delhi and the NCR region, which comprises the graded measures for each source framed according to the Air Quality Index categories. For example:

During 'very poor' air quality, it recommends banning diesel generators and parking fee increased by three to four times.

Similar to EPCA's GRAP the NGT divided air pollution into four categories, for graded measures, which include odd-even scheme among others .

Focus on short-lived climate pollutants (SLCP)

Like methane, HFCs, black carbon (soot), tropospheric ozone etc. SLCP mitigation has the potential to avoid up to 0.6°C of warming by mid-century while aggressive CO2 mitigation in a comparable scenario leads to less than half as

much near-term reduction in warming.

References:

- Environment And Ecology by R. Rajagopalan
- Wikipedia
- Environment by D R Khullar and JACS Rao
- Environment and Ecology by Majid Hussain
- Economic Survey of India
- Official Website of Environment Ministry
- Objective Environmental Sciences by B.B Singh
- Down to Earth Magazine

Dr. Nirmal Boora

Associate Professor In English,

Govt. P.g College, Hisar

Email: nirmalbooraaugust20@gmail.com

Contact(M): 8901493704

Poetics of Symbols and Images in These Hills called Home: Stories from a War Zone by Temsula Ao

Dr Anoopama Yadav

Abstract

Symbols and images play a vital role in enhancing the authors' quality of writing short stories and novels. It helps reveal the vision of the author more clearly and precisely which is not possible otherwise. Temsula Ao an eminent writer from North-East India make use of deeper insights to picturize the reality of people belonging to her area. There are several writers belonging to the English literature canon who have made images and symbols an integral part of their literary works. Symbols and images indirectly depict meaning and also provide deeper insight into the human understanding of the world. Writers explore extrinsic characteristics of objects, places, and phenomena to name them. It depends on how the writer's consciousness project what is essential in the real world. In this paper, the meaning of symbols and images employed by Temsula Ao is analyzed. The different ethno-cultural setting is presented by the writer in her collection of stories. Ao has provided a key to the reader by making use of objects, places, things, and people as symbols and images. Thus preparing the setting, evoking and building an appropriate mood and atmosphere in the mind of readers related to the complex themes of her stories. This paper aims to find out the effect of using symbols and images on the writer's style and the addressee's understanding.

Keywords: Northeast, Literature, Symbol, Images, Ao community.

Temsula Ao's 'These Hills called Home' is a piquant study in the hyphenated nation-state selfhood of the Nagas. This identity is like a massive and changing dimension that does not permit individual variation and works against their diversity. She has picturized the true life and ways of the Naga people. Among the different tribes of Nagas, Ao's are the most significant tribe. Even though a general similarity is visible in the rituals, customs, and traditions of these tribes but variations are evident in the lifestyle, dress, habits, and different dialects. “The most absorbing ethnic unit, which presents several characteristics not found in other Naga communities is the Ao Naga tribe.” (Ganguli, 1984:112) Only a culturally enriched society is considered to have its roots or identity. The Ao's are luckily revered with the cultural inheritance which is very marvellous and valuable. They are an important tribe among the Nagas who reside on a long stretch of continuous and undivided ranges of Hills. The region is divided into six ranges: The Langpangkong Range, the Asetkong Range, The Ongpangkong range, the Changkikong Range, the Japukong Range and the Tsurangkong Range. The fountainhead of everything in Ao folklore is the belief that the ancestors of the Ao's emerged out of the earth at 'Longterok'. (Ao, 1991:1)

Temsula Ao belongs to the Ao community. She is one of the main writers from the Northeast. Her writings project the political disturbance and unrest in her area. She is a retired professor of English from the North-Eastern Hill University (NEHU), Shillong. Writing reflects her culture in a volume of short stories called These Hills called Home: Stories from a War Zone (2006), and Laburnum For my Head (2009). She has also written poems portraying the essence of Ao culture 'Songs from the Other Life'. Her works have been translated into many languages. Temsula Ao was awarded Padma Shri in 2007 and Sahitya Akademi Award in 2013. In her stories, society plays a vital role in Ao Nagas. An individual who possesses a good position in society can't win a judgement against it. Therefore, an individual needs to stand with his society and not go against it. Society provides help to the individual both in his good and bad times. Ao has brought to light her culture, customs, and traditions through her stories. The Naga society is a traditional society, where the cultural patterns are reflected in the folklore and the life-breathing oral traditions of the community. (Sen, Kharmawphlang, 2007:1)

A symbol is a representation of a real object or thing that advocates for something else. In narratives, symbols are generally characters, context, scenarios, images or recurring or dominant elements or themes that stand in for significant notions. Writers generally make use of symbols to add more value to their work and thus making their stories about more than the event it portrays. Nevertheless, writers don't always give us a structured representation of their symbolism, so it can take a lot of pondering to deduce precisely what the symbols in narratives mean making it easier for readers to apprehend

them. In literature, a symbol can be a word, object, action character or idea that represent in physical or concrete form and identifies a range of entities, values, and senses.

Diverse types of symbols generate distinct impressions in the mind of readers though the aim of symbolism is all-encompassing as a literary device. It heightens and augments the reader's knowledge and opinion regarding literature. There are different categories of symbolism and their effects:
Emotion: Many times symbols bring forth emotional reactions or replies in readers, acknowledging them to invest in the narrative and characters. This emotional effect of symbolism also generates a persisting effect on the reader.
Imagery: Symbols can generate vivid descriptions presenting or suggesting images of visual elements that accord readers to grasp or comprehend intricate literary themes. Physical objects and events are used to symbolize an idea or concept. The reader's attention is pointed towards the themes that the plot is dealing with.

Thematic connection: Symbols can join themes for readers spatially in single literary work and throughout literature itself. This is for larger comprehension in the field of literature as an art.

Character attributes: Symbols can depict different characteristics of characters, both as stated, read, and metaphorical sense. Characters are depicted as virtue or vice or may present a political ideology. The readers can identify character traits and apprehend their actions based on symbolism.

Deeper meaning: Symbolism yields authors to portray intellectually deeper meaning in their writings for the reader. This imparts a layered effect of comprehension so that different readers can discover varied levels of meaning with each uncovering the literary work. In some situations or events especially when a symbol is hard to grasp or barely noticeable, it's not always even clear whether so ever the writer's use of symbolism is planned, or done voluntarily. Many times, the readers provide their sense or concept of the text by "reading into" anything as a symbol.

Symbol images are usually employed in literary work to portray different events. It incurs the author's aesthetic expression that supplants dull writing. In addition to it, symbols and images yield readers to envisage or form a mental picture of composite or difficult subjects. Symbolism concedes the author to reveal further reality, as they relate to their message or subject. It also helps them to seize the comeliness or the strife of life in thoughtful and unusual ways.

Temsula Ao has made ample use of symbols and images in her short stories collection These Hills called Home: Stories from a War Zone. There are ten stories vividly describing the Ao culture, tradition, political unrest, and socio-economic status of the Ao Naga people in Nagaland. The titles of the stories are The Jungle Major, Soaba, The Last Song, The Curfew Man, the night, The Potmaker, Shadows, An Old Man Remembers, The Journey and A New Chapter. Another element of speech is Ao's use of folklore and dialect in the development of the plot and the characters as well as the way she incorporates the songs, stories, beliefs, and traditions of the Ao Naga community.

Song: Singing is inherent to the lives of the Aos. It is a requisite or necessary part of all Aofeast and festivals. In The Last Song, the army disrupts the inauguration of the New Church by the village people. Apenyo, the lead singer in the choir started singing exhibiting her courage and lack of prudence. The soldiers were enraged as it was an act of bold resistance and disregard for authority. Proper punitive response became necessary on the part of the army. The captain dragged Apenyo towards the old Church by her hair. Apenyo was singing the chorus of her song as a means to repel the attack. Song itself is an allegory for the disappointment and loss that finally comes to those who solicit celebration for its own sake. In the end, she actualizes that her song cannot stop the ill will of the armed forces and all the setup made by the village people for celebrating Christmas suddenly becomes insignificant. Neither rape, nor death could take the song away from her lips.

Shawl: In The Last Song new shawl worn by Apenyo symbolize youth and innocence. In one scene, she is raped by the army Captain and later on is ordered to set the old Church on fire. The remains of the shawl left unburnt remind her of the sacrifice she has to make for resisting the aggression of the army. The burnt shawl piece of Apenyo symbolizes the connection to pain and sorrow. At the end of the story, TemsulaAo suggests that Apenyo sacrificed her life and her shawl is a symbol of comfort and protection and is connected with festivals and a grand feast. The shawl was

a memento symbolising the Ao culture and tradition.

The Church and Christmas: In The Last Song Temsula Ao has made use of the religious symbol 'the church' to represent human emotion and desire. Human desires range from the captain's lust to Apenyo's ambition to be a good singer. Church symbolizes chastity, honesty, and justice whereas Christmas relates to birth and change for the better. Ironically in the name of justice, honesty, and chastity only betrayal occurs. Thus, it depicts the alteration of moral values leading to the destruction of human feelings like love. Church foreshadows a place where only rebels meet. The house of God could not save the villagers from the atrocities of the army.

Burial: The burial calls attention to the traditions and rituals of the Ao Naga community of Nagaland. Temsula has pointed out in her book that in areas like marriage and death certain traditional values are relevant even today. The Ao people have embraced Christianity and western education and they believe in certain taboos. People who died of mysterious diseases or unnatural death were isolated from the villages and their dead bodies were buried outside the village. The villagers regarded it inauspicious to allow the burial of Apenyo and her mother Libeni in the village. This suggests Ao's belief in various superstitions and superstitious practices. Both mother and daughter lost their honour and life.

Rain: In The Last Song, rain implies wide-ranging symbolism. It symbolizes cleansing and washing away sins committed by the army over the villagers. In Christianity, it symbolizes spiritual death and resurrection. Rain symbolizes sadness and tears that surmounted the life of village people. Temsula has used rain as symbolism to show that it can be a symbol of cleansing, clarity, sadness, and melancholy. In The Last Song, rain undertakes a fairly negative role in that it inspires feelings of sadness and depression. When it rains, it is dark, bringing out negativity and empowering the negative feelings and thoughts among village people. This rain symbolizes a traumatic event that occurred to Libeni, Apenyo, and villagers who have assembled for a Christmas celebration, and it's almost an effect that's used to inspire some sympathy for these characters. It symbolizes a turning point. After the raid and brutal killing of villagers by the army, the falling of rain continuously throughout the night signifies the cleansing of the dirtiness mentally and physically. It's used as a sort of cathartic quality that cleanses one's soul. It acts as this redeeming event that can free one's soul and remove all the bad thoughts and negativity from one's mind. This symbolizes that the village people who lost their lives in this mishap could rest in peace.

Patriarchal Community: The Ao community is essentially patriarchal. In a clan's meeting, a man has the right to stand up and speak but the women are not given this right. The characters live in a community. Ao draws a rich portrait of how a community can be simultaneously hurtful and helpful. In The Night, the village community is symbolized as judgemental and critical. Temsula Ao writes in her essay “Benevolent Subordination” 'The Peripheral Centre, (2013)… they (men) are reluctant to 'revolutionize 'the grassroots organisations for fear of going against time honoured traditions.' This unwillingness is illustrated In The Night as Imnala prepares to face the village council on charges of illicit sexual relations with a married man. The Night symbolizes a loss of faith and projects evil. A person is not permitted to have more than one wife but her difficult situation is to assure that her unborn child is not tagged as illegal. Imnala knows that she has to fight her own battle. She no longer has to carry the disgrace of mothering a 'fatherless child. The story depicts how Ao Naga women have continued to exist without protection from males in a violent political region. Though she is neglected by the society she has a strong decision for a good upbringing of children. In The Curfew Man, curfew symbolizes restriction, regulation, and house arrest. Satemba is forced to spy for the government. He is not prepared to violate the trust of his community. The Ao Nagas did not willingly join and help the armed forces. He gets himself badly injured and tragically comes to a bedridden situation. His situation makes him unfit for a spying job. He feels relief and freedom from the perverse bondage of spying against his people.

Pot: The Potmaker is the story of a girl named Sentila, who wants to be a pot maker like her mother. Her mother doesn't want her daughter to learn the art of Pot making rather she wants her to learn to weave. This trade was more beneficial in terms of making money. The pot symbolizes the control of the traditional Naga community over its people. This story provides a peep into the life of Sentila and how the traditional Naga community controls Sentila's wish as a pot

maker, obscuring the lines between dreams and dictated roles in a “benevolent subordination”. In the end, Sentila's persistent efforts pay and she becomes an established pot maker just like her mother.

Silence and Speech: The recurring references to the importance of silence and speech support the theme of independence. As female characters gain confidence as women they begin to express themselves more. The repressive, controlling patriarchal system wants to keep females from speaking. But female characters like Imnala, Khatila, Apenyo, Libeni, Imtila speak up their minds and are regarded as one of the foundations for independence.

Community: At times, the characters rely on their community for survival. In the story The Journey the community group helped Tinulaand Temjenba in their difficult journey on foot from Naga Hills to boarding school in Assam. Temsula has portrayed the true picture of life and ways of the Naga people. The community group help in carrying the rations required for the cooking meal on their route. The community works on the principle of sharing labour and provisions. “It was a custom for villagers to carry sufficient provisions which could last them for their journey.” (The Journey)

Mismatched Couple: It symbolizes the unsuitability of the physical attributes of husband and wife. In Jungle Major, Punaba and Khatila were not accepted as ideal couple by the community. There were vast differences in their looks and status. They were termed as a 'mismatched couple' by the village folks. Punaba was a short dark coloured fellow with 'black teeth'. On the other hand, his wife Khatila was 'tall, slim and possessed charming smile'. After many years of marriage, their childless state became the subject of preposterous speculations by the community. When Punaba joined the underground forces, Khatila had to comply with the orders given by the village authorities. When Indian army soldiers raided their house, Punaba in disguise as a poor and ugly servant made his way and escaped. Khatila exploits the physical ugliness of her husband to outwit the army and save her husband and village from disaster.

Pumpkin: It symbolizes traditional old teachings and family ties. The story A New Chapter revolves around Nungsang who is an army contractor. He helps his distant cousin Merenla who is a widow. He helps her in buying a pumpkin and its seeds. Later, she is betrayed by her cousin, who has found prestige and wealth in politics. Merenla realizes that traditional teachings of family ties are thrown in the mud where money, power, and prestige are concerned. The insurgency has opened up new opportunities but they come with a price as pumpkin grower Merenla realizes.

A New Chapter: The title does not talk only about the actual beginning of a new day but also signifies a new start, a fresh chance to begin and the end of a previous one. In the story, the throwing of the pumpkin by Merenla symbolizes a new chapter in her life, a new start. Nursang also starts a new chapter by becoming an M.L.A. Here the story A New Chapter symbolizes need and hope.

Nature: The writer gives a colourful picture of a dense green landscape with luxuriant biodiversity of flora and fauna. Throughout her stories, Temsula makes use of nature imagery. Trees, landscape, the sun, the Disoi river, hill streams, and thick foliage often indicate the character's insight into their life. A man guards himself against nature for survival. There is no congeniality of man with nature rather he lives in isolation.

Jungle: The jungle is symbolized by horror, violence, bloodshed and murder. It depicts how humanity was challenged in the war zone. It is symbolized as a place of evil and mystery. The extremists hide in jungles to resist the Indian government for establishing political autonomy in their area. An Old Man Remembers revolves around the story of Sashi and Imli who were forcefully made soldiers and ended their life in the Jungle. Their life was sorrowful and pitiful. The bitter memories of life in the jungle inhabited their body and soul almost all the time. The old man, Sashi had deep feelings of emotional pain on account of experiences in the past. Every time the old man's thoughts wander to his life in the village. His mind incessantly causes him to experience the memory of his loss, causing him to sink further into hopelessness and sorrow. The Journey unravels how the protagonist Tinula goes through obstacles to receive formal education. The difficult journey she undertakes is embedded in her psyche as scars as she travels with her brother Temjenba.

Boss: The name 'Boss' symbolizes power, selfishness, and greed. Everyone desires power and many characters are willing to kill for it. Some begin with good intentions, but

ultimately they get corrupted. 'Boss' name is used as symbolism of power, implying that the name seduces, perverts, dictates and ruins people who are attached to it. In Soba, the 'Boss' name is a symbol of Imnochuba's personality. Boss is a representative of a totalitarian government and its dominance in society. The name Boss can exert influence, handle and wield people's lives by spying. Boss is all-powerful and God-like, substituting love from people's lives with a phobia, and imposing an obligation on them to follow the rules, regardless of whether they lead to sin in their own lives in his honour. The name Boss represents an image without humour, and grave in a manner of disposition. Those in power use him to exert control over people. Temsula Ao speaks about the new class that takes up weapons. They cause trouble and anguish among people. They exist between the two warring groups. The government recruited them as 'home guards' known to make perpetual horrible crimes. This breed was equipped with vehicles as well as guns and was given free rations of rum to boots. They moved around town causing unwanted annoyances and problems with the public, after settling old scores with competitors whom they would not have the courage to dare under normal situations. Nevertheless, caught in the obscure puzzle of drinks and violence, Boss shoots his child servant Soaba, a bumpkin dead by charging him of being a suspect.

In the story Shadows, cruel men like Hoito among rebellious groups do the illest to his cadres to fulfil their gigantic self-importance. The harsh truth of the circumstances of the tragic power struggle is shown. Temsula Ao has made ample use of symbols and images to vividly portray the themes related to Agriculture. She has put forward the political, social, and economic problems and situations confronted by people belonging to the North East before her readers. The different symbols and images beautifully portray the vast dimensions of different issues confronted by her characters in different stories.

References

Ao, Temsula. “Benevolent subordination: Social status of Naga women.” The Peripheral Centre: Voices from India's Northeast 2010, pp. 100-107.

Ao, Temsula. The Ao-Naga Oral Tradition. Baroda: Bhasha Publications, 1999.

Ao, Temsula. These Hills Called Home: Stories from a War Zone. Zubaan, 2006.

Ganguly, Milada. A Pilgrimage to the Nagas. New Delhi: Oxford and IBH Publishing House, 1984.

Sen, Soumen and Kharmawphlang, Desmond L. Orality and Beyond: A North-East Indian Perspective, New Delhi: Sahitya Akademi, 2007.

Dr Anoopama Yadav
Assistant Professor
Maharaja Agrasen College for women
Jhajjar
C/o Sh. Ram Mehar yadav
H.No. 712/14
Adarsh Nagar
Jhajjar
Pin 124103
Mob. 7015909938

A Critical Evaluation of Cosmic Evolution Theory in Samkhya Philosophy

Dr. Manoj Rani

Abstract:

Evolution can be referred to as the process of change that results into the development of organisms from their earlier forms. The development has occurred due to the adaptations of the living beings to their changing environments and has led to the formation of altered genes, new traits or characteristics and newly transformed species. Human evolution can be described as a long process of change that has resulted into the emergence of anatomically modern human beings from their apelike ancestors. Samkhya, one of the oldest schools of Indian philosophy, has given the theory of cosmic evolution. This school is dualistic in nature because it believes that Prakriti and Purusha are the two ultimate realities and the contact between the two is the actual cause of cosmic evolution. The present paper deals with the doctrine of cosmic evolution given by the Samkhya school of Indian philosophy and reflects on the validity of this theory of evolution in the modern context.

Keywords: Evolution, Prakriti, Purusha, Ultimate realities

Introduction

Samkhya school is one of the oldest schools of Indian philosophy. Kapil Muni is regarded as the father of Sankhya philosophy. He wrote many books such as Kapil Bhasya, Kapil Stotra, Kapil Sanhita, Kapil Samriti, Kapil Puran, Kapil Nyaya etc. These books are rarely found today. The major topics of Sankhya philosophy as well as the extracts of these books are compiled by his disciple Iswar Krisna in the text Sankhyakarika. Kapil Muni, through Sankhya philosophy, attempts to unravel the mystery of the creation of this universe. Sankhya school of philosophy does not acknowledge God as the creator of the universe. This school does not believe in God. But it cannot be termed as an atheistic philosophy. It is a theistic philosophy as it considers the Vedas and the Vedic literature true. It put forward the theory of cosmic evolution. Samkhya school of Indian philosophy is dual-headed as it believes in two realities: Prakriti (matter) and Purusha (spirit) and considers that the contact between these two realities is the actual cause of cosmic evolution.

Theory of Cosmic Evolution

Samkhya philosophy tries to explain the theory of cosmic evolution with the help of twenty-five elements. According to Samkhya school of philosophy, the ultimate aim of life is to attain Moksha (Liberation) which can only be achieved through the proper understanding of twenty-five elements. These twenty-five elements are Prakriti, Purusha, intellect, ego, mind, Panch mahabhoot (space, air, fire, water and earth), Panch karmendriyas (mouth, hands, feet, excretory organs, reproductive organs), Panch tanmatras (sound, touch, sight, taste and smell). Samkhya philosophy scientifically explains the origin of these twenty-five elements which constitute an important part of Samkhya's theory of cosmic evolution.

Different Phases of Development in the Process of Cosmic Evolution

Sankhya school of philosophy believes that the universe is created due to the clash of spiritual and natural elements. In Sankhya philosophy, the process of cosmic evolution is explained through different phases of development. Sankhya school is dualistic in nature as it believes in two realities: Prakriti(matter) and Purusha (spirit) and acknowledges that the association between these two realities is the real cause of cosmic evolution.

Contact between Prakriti and Purusha

The process of evolution begins when the light of Purusha is reflected upon Prakriti. However, Purusha and Prakriti are two separate and distinct entities, but the contact between these two different entities is must for the creation of this universe. Purush, being inactive, is incapable of creating this universe independently. On the other hand, Prakriti is without consciousness. It is primitive and unexpressed. In this world, all the objects are created from nature and they are made up of three attributes – sattva (purity), rajas (activity) and tamas (ignorance). Prakriti remains unmanifested as long as these three attributes remain in a balanced state or in equilibrium. In other words, we can say that the unmanifest Prakriti is in a state of balance or equilibrium of these three qualities. But when Prakriti comes in contact with Purusha, this balance is disturbed. This state of imbalance, known as vikriti, leads to the evolution of this universe. Now the unmanifested Prakriti starts manifesting itself through different objects in this

universe. Thus, Prakriti is responsible for all manifestations. On the other hand, Purusha remains inactive and passive. But Prakriti has no control over Purusha as the latter is eternal and independent.

Samkhya philosophy identifies Purusha with a lame man and Prakriti with a blind. It further states that they help each other to reach their final destination of cosmic evolution.

Origin of Mahat (Intellect), Ahamkara (Ego) and Manas (Mind)

When the pure consciousness of Purusha merges with Prakriti, Mahat (Intellect) is borne. Thus, Buddhi (Intellect) is said to be the first product of evolution. Mahat is the first reality that emerges from Prakriti. Mahat (Intellect) causes rationality and discriminatory awareness among living beings. Each and every object in this world is a composite of three attributes (gunas) – Sattva (Purity), Rajas (Activity) and Tamas (Dullness). Sattva represents light, purity, truthfulness, goodness and pleasure. Rajas refers to energy, emotion, activity, pain and passion. Tamas stands for ignorance, darkness, indifference, density and dullness. When Sattva (Purity) is predominant, Mahat (the Great one) emerges from nature. Next to evolve in the course of evolution is Ahamkara (individual ego). Origin of Buddhi (Intellect) leads to the birth of Ahamkara (Ego or Self-consciousness). Ahamkara or the feeling of individuality evolves from Buddhi (Intellect) when rajas (activity) is predominant. Ahamkara leads to self-sense or self-consciousness. It is because of Ahamkara (Ego) that the unattached Purusha starts feeling attached. Now Purusha mistakenly considers ego as the basis of his objective existence. Ego leads to the evolution of Manas (Physical mind or Brain).

Evolution of other Tattvas: Panchendriyas, Panch karmendriyas, Panch tanmatras, Panch mahaboot

The ego (ahamkara) is further subdivided into Panch mahaboot or gross elements (space, air, fire, water and earth), panchendiryas or sense organs (ear, eye, skin, nose, tongue), Five karmendriyas or organs of action (mouth, hands, feet, excretory organs, reproductive organs), Five tanmatras or subtle elements (sound, sight, touch, taste and smell).

Manas is recognized as an internal sense organ because it has contact with different sense organs. It is capable of interpreting, analysing and synthesising the sense data. According to Samkhya, manas (mind) is a super sense but it is non-physical in nature.

The Panch mahaboot or five gross elements are produced from five tanmatras or subtle elements. From the essence of sound, space (akash) is produced and sound is perceived by the ear. Air is produced from the essence of touch. Air has the qualities of sound and touch. Fire is produced from the essence of sight. Fire has the attributes of sound, touch and sight. Essence of taste gives rise to water which has the properties of sound, touch, sight and taste. Earth is produced from the essence of smell. The element of earth has all the five qualities, viz., sound, touch, sight, taste and smell.

Role of God in Samkhya's Cosmic Evolution Theory

Samkhya's theory of cosmic evolution has many parallels in the modern theories of cosmic evolution. In modern theories, focus is on the evolution of physical bodies. But Samkhya philosophy believes that the universe is created due to the clash of spiritual and natural elements. This school of philosophy does not perceive this universe as a miracle work of God. As per the verse 1.92 in the Samkhya Prabachan Sutra, "The existence of God is unproven." Thus, Samkhya does not accept the role of God in the creation of this universe as the existence of God cannot be proved. This school regards karma as a measure of all worldly pain and pleasure sets nishkam karma as the goal of life. It holds Prakriti responsible for all manifestations in this world. So, there is no need for separate God other than Prakriti (Nature). It regards the whole process of evolution as a transformative process which goes through various phases in a predictable pattern. The combination of Prakriti and Purusha produces mass and energy. Sankhya considers this universe as the outcome of the association between Prakriti and Purusha. In the whole process of cosmic evolution, the Purusha is neither the cause nor the effect. On the other hand, Prakriti is only the cause and not the effect. According to Samkhya school of philosophy, the ultimate aim of life is to attain liberation (Moksha or Mukti) which can only be achieved through discriminatory knowledge (Vivekajnana). Discriminatory knowledge (Vivekajnana) makes one realize the true distinction between Prakriti and Atman (Spirit or true self). It makes one realize that Atman or true

self is quite different from Mahat (Intellect) and Ahamkar (Ego).

Conclusion

Samkhya school of philosophy is dualistic in nature as it believes that Prakriti and Purusha are two ultimate realities and the contact between the two is the cause of cosmic evolution. This school explains the evolution of this world in a materialistic rational manner. Samkhya philosophy denies the role of God in the creation of this universe. But still Samkhya is one of the astika schools of Indian philosophy because it considers Vedas and Vedic literature true. Samkhya explains the process of evolution with the help of twenty-five elements. According to Samkhya school of philosophy, the ultimate aim of life is to attain liberation (Moksha or Mukti) which can only be achieved through discriminatory knowledge (Vivekajnana). Discriminatory knowledge (Vivekajnana) makes one realize the true distinction between Prakriti and Atman (Spirit or true self). It makes one realize that Atman or true self is quite different from Mahat (Intellect) and Ahamkar (Ego).

Reference

- Bhatia, K. K., Yadav & Yadav (2010). Philosophical, Sociological and Economic Bases of Education. Tandon Publications, 165-172.
- Chaube, S. P., Chaube, A. (2008). Philosophical & Sociological Foundations of Education (Eighth Ed.). Agrawal Publications, 423-430.
- Doley, Q. (2019). A Critical Study of Evolution in Sankhya Philosophy. Journal of Emerging Technologies and Innovative Research, 6(6) 582-587. https://www.jetir.org/papers/JETIR1908554.pdf
- Gupta, R. (2011). Philosophical, Sociological and Economic Bases of Education. Tandon Publications, 207-220.
- M. K. Banerjee: General Systems Philosophy and Samkhya-Yoga: Some Remarks 1982
- R.W. Perrett: Samkhya Yoga Ethics, 2007
- Virupakshananda, Swami, Samkhya Karika of Isvara Krsna. Madras: Shri Ramkrishna Math, 2006.
- Zaveri, H. V. (2020). Evolution of Samkhya Philosophy. Research Gate http://www.reseachgate.net/publication/322244234 evolution of samkhya philosophy

Correspondence Address

Dr. Manoj Rani

Associate Professor

M.L.R.S. College of Education, Charkhi Dadri- 127306

Contact no. 9992091269

Gandhi's critique of industrial modernity and the sustainability discourse

Dr. Pooran Singh Ujjwal, Sunny Ujjwal

Abstract

This paper primarily discusses Gandhi's critique of western industrial modernity to locate the possible elements of 'sustainability consciousness' innate to it. It further attempts to briefly underscore and reflect on the traditional knowledge systems of India, which had influenced the Gandhian perspective to a great extent. This is being done with the objective to trace the elements of 'sustainability consciousness' in Gandhian narrative by situating it into its rightful evolutionary context.

Introduction

Scholars have had engaged Gandhian ideas from varied perspectives throughout the century. It is no wonder that his views had sparked formidable debates. Gandhi, considered by some as a man of romantic imagination and his ideas relegated to be belonging to the bygone ages, still fascinates many. The core objective of this paper is to reflect on the possible linkages, between Gandhi's critique of western industrial modernity, his idea of a true civilization, and the sustainability issues faced by the world today. Let us first understand his notion of western modernity and true civilization and later try to place it within the sustainability discourse.

A well-organized criticism of 'modern civilization' was given by Gandhi in his work Hind Swaraj in 1909. This tiny booklet still enthuses readers and for long has been appreciated for Gandhi's diagnosis of industrial modernity. The modern civilization, which concerned him, has grown manifolds and taken deep roots across the globe. So are the ills and challenges associated with it, if we subscribe to Gandhian perspective. Gandhi distinguished between 'true civilization' and 'modern civilization'. For him, true civilization "is that mode of conduct which points out to man the path of duty. Performance of duty and observance of morality are convertible terms. To observe morality is to attain mastery over our minds and our passions". On the other side, he equated modern civilization with barbarism as it has misunderstood the core essence of human life as here "people made bodily welfare the object of life" (Parel ed., 1997, p. 34).

We see optimism in his analysis as he suggests that modern civilization "is not an incurable disease, but…. the English (West) are at present afflicted by it". Gandhi well realized that it was not possible to do away with modern civilization completely, more so a century later. As, his suggestion was only to limit its impact to the least possible. Across his writings and speeches, he not only diagnosed ills associated with western 'modernity' but also offered their remedies. Some of the problems as he identified with the industrial civilization are in order for discussion.

The evils of western industrial modernity

Modern industrial civilization, in Gandhi's analysis, had fundamental flaws. It essentially thrives on the exploitation of fellow beings and nature and is primarily violent, brutal, and aggressive in the relationships it establishes. The imperialistic and restless attributes of industrial modernity render it unethical and unsustainable. Building his analysis based on the classical philosophical traditions in India, Gandhi criticized modern civilization for privileging the body over the soul or spirit in a person and failing to appreciate the inner force or soul force. The body is the source of all the wants, irrational obsessions, and unrestricted desires. He defined spirituality in moral terms by suggesting that if a person lives with the moral constitution, then only, he can realize his true cosmic self and can come over his 'individualist illusion'.

The foremost criticism he stressed is the failure of modern civilization to inculcate the ethics of self-restraint in individuals or society at large. It promotes 'materialistic' values and lacks moral fabric. Maximum material production for meeting the never-ending appetite for consumption forms the basis of the industrial economy with no regard for natural limits and boundaries. He prescribed that "civilization, in the real sense of the term, consists not in the multiplication, but the deliberate and voluntary reduction of wants".

Second, its inability to recognize the true nature and limits of positivist rationality or plainly limits of reason. Overemphasis on positivist or scientific observations as the only source of true knowledge constructs a dangerous 'ideology of rationalism'. He treats 'reason' and 'rationalism' very differently. While reason, an important and indispensable human attribute, "rationalism is a hideous monster when it claims for itself omnipotence. Attribution of omnipotence to

reason is as bad a piece of idolatry as is the worship of stock and stone believing it to be God. I plead not for the suppression of reason, but an appreciation of its inherent limits" (Pandey, 2010). Disproportionate emphasis on the human ability to reason and innovate to become the masters of nature have developed arrogance in human beings that they fail to sense their limits.

Another problem, also important from this paper's point of view, is the disharmony of industrial civilization with nature. Although he did not talk specifically and separately about the 'sustainability' issues, at various instances, we found his arguments showing concern about the disregard for nature in modern civilization. Cautioning India, not to ape the former's economic model he wrote, "God forbid that India should ever take to industrialization after the manner of the West… If an entire nation of 300 million (now 1.3 billion) took to similar economic exploitation, it would strip the world bare like locusts". At the level of the individual, he emphasized the nobility in leading a life based on voluntary simplicity and self-restraint which provides a glimpse of leading a sustainable life in harmony with nature. Whereas, modern industrial civilization "looks at man as a limitless consumer and thus sets out to open the floodgates of industrial production" to satisfy his appetite for luxury and unrestricted self-indulgence.

Situating sustainability within a nonviolent social economy

Industrial revolution brought with it an epoch of unsustainable development. While modernity salvaged humans from the bane of feudalism and bigotry, it nevertheless placed humanity in the shackles of materialism and made people slaves of their own bodily desires. The policy of maximum extraction of energy and other natural resources was bound to have far-reaching consequences. This degraded the natural environment beyond its capacity to regenerate leading to an environmental crisis, and developing unsustainable economies. The world has realized that the living practices and development model of modern civilization cannot be sustained for long. Now people are eagerly looking for alternative living practices and newer models of sustainable development, as evident by the SDGs.

It is timely to mention that Gandhi recognized, well ahead of his times, that the violent and materialistic character of modernity was unsustainable. The West got awakened to the threat to "Our Common Future" in 1987, he cautioned against the relentless quest for materialistic comforts and luxury posing an existential threat to the common future of humanity. It won't be an exaggeration to say that Hind Swaraj may be looked at as a manifesto for sustainable development, although it didn't make any direct reference to the question of environmental sustainability. He cautioned that Western modernity contained seeds of self-destruction and whoever try to ape it will also perish. For instance, he warned against efforts to annihilate distance and considered railways to be an instrument to propagate evil. His argument against railways can also be extended to other forms of modern transport systems. Rising levels of greenhouse gases and global warming are major problems of present times. A major chunk of these gases come from fuel combustion to run various modes of modern transportation.

Concern for environment is apparent in Gandhi, for instance, he said, "nature has provided it (air) to such extent that we can have it at no cost. But modern civilization has put a price even on air. In these times, one has to go off to a distant place to take the air and this costs money". He was against the violent and aggressive economy of industrial civilization and pleaded for a non-violent economic culture. His idea of a non-violent economy was based on the ethics of self-restraint and gaining mastery over our passions. He wrote that the mind is a "restless bird", it cannot be satisfied by the acquisition. For him, happiness was a mental condition, and looking for it in bodily pleasures or the accumulation of wealth is futile. Everyone should recognize voluntary limits on their indulgences because the maladies of materialism and consumerism can only lead to the exploitation of nature and inequalities in society. Non-violence, for him, was not just a philosophical pursuit but a living practice in every sphere of life be it at the level of individual or organization of society, or economy.

Gandhi, Indian civilization, and sustainability consciousness

A general understanding prevails among the scholars of Gandhian studies that Indian civilization had greatly shaped Gandhi's line of thought. His life philosophy is embedded in philosophy and vision of the ancient Indian civilization as found in Vedic scriptures and numerous religious and philosophical texts. Such a scenario necessitates a reflection on Indian culture, traditions, and philosophy to grab a better

picture of Gandhi's vision and its bearing on sustainability issues.

Nature and environment have traditionally found importance in Indian culture and civilization. In ancient times, although big urban centres and polluting industries were not there, neither was concern around global warming, but with increasing human footprint clearing of forests and felling of trees for acquiring suitable land for agriculture had started. Our ancestors were aware of the consequences of continuous felling of trees and forests. To conserve the trees and water resources they associated or integrated nature with Dharma, which loosely translates to English language as religion. For the purpose, they identified and marked for worship some trees like - Peepal, Vat or Bargad, Neem, all considered as to have the most positive impact on environment, and by way of religious decree prohibited cutting or felling them by declaring them sacred as the residing spaces of Indian Gods and Goddesses. To make sure people believe in that, various myths and festivities were created around these trees. In the same manner, presenting rivers as Goddesses and the lakes as playgrounds of Gods, their cleanliness and conservation was ascertained. Many temples were built near rivers and other water bodies, and planting sacred trees in their premises was made compulsory sacred practice.

A visible consciousness towards nature and environment is found in our Vedic scriptures. The Rigveda differentiates Gods in three categories namely the Gods of -Jal (water), Vayu (air), and Bhoomi (land). Our ancestors well realized the importance of nature and for generating awareness among the masses relied upon Dharma. Unfortunately, over time those symbols and practices which were started for celebrating nature lost relevance as the essence and purpose of these practices was lost (Gupt, 2022). These were reduced to mere religious performances and even at times regarded as superstition. Such ignorance of culture and negligence of nature will lead to what future is anybody's guess.

Conclusion

The constant exploitation of mother earth is bound to have consequences unbearable for mankind. Destruction of forests and unrestricted industrialization have led to ever-increasing global temperature. Water resources are getting contaminated by hazardous substances. Air is turning poisonous. Glaciers are melting at an alarming pace responsible for rising sea levels. A threat looms not only over human beings but all life forms on earth. It is no longer a threat to the future; we are already paying the price for the blind race for 'development'. The world seems to have realized the imminence of the matter, as the discourse on sustainable development suggests, although the desired changes or course correction seems limited.

References:

Dharmadhikari, C. (2009). Gandhian Vision of Environment. In S. K. Joseph, & B. Mahodaya, Gandhi, Environment and Sustainable future (pp. 10-20). Wardha: Institute of Gandhian Studies. Retrieved from https://www.mkgandhi.org/ebks/environment.pdf

Gupt, Dhruv. (2022, January 15). Our traditions and environment. Jansatta.

Gandhi, M. (1909). Hind Swaraj (Centenary Edition 2009 ed.). Delhi: Rajpal and sons.

Gandhi, M. (1947). Young India, 7-5-1931, as compiled by RK Prabhu. In India of My Dreams. Ahmedabad: Navajivan Publishing House.

Gandhi, M.K. (2006). Young India, 20-12-1928 as cited by Ramachandra Guha. In e. d. A. Raghuramaraju, Debating Gandhi: A Reader. New Delhi: Oxford University Press.

Gandhi, M.K. (as cited in Upasana Pandey, 2010). Young India. Retrieved from https://www.mainstreamweekly.net/article2353.html

Gandhi, M.K. (n.d.). CWMG, Vol. 11, p. 453.

Gandhi, M.K. (1957). Economic and Industrial life and relations, 3 Volumes. Ahmedabad: Navajivan Publishing House.

Nandy, A. (1986). From Outside the Imperium: Gandhi's Cultural Critique of the West. In Traditions, Tyranny and Utopias: Essays in the Politics of Awareness. Delhi: Oxford University Press.

Parekh, B. (2001). Gandhi- A very short Introduction. New York: Oxford University Press.

Raghavan, I. (1973). The Moral and Political Writings of Mahatma Gandhi. New York: Oxford University Press, Vol. 1.

Sahu, S. N. (2016). Mahatma Gandhi and Sustainable Development. Odisha Review, pp. 6-14.

Dr. Pooran Singh Ujjwal

Sunny Ujjwal
Research Scholar
Department of Political Science
Meerut College, Meerut
Email – sunnyujjwal25@gmail.com
Postal address – Sunny Ujjwal

S/O Satyaveer Singh
Vil – Sirsal Garh
PS – Binauli
Teh – Baraut
Dist -Bagpat (U.P.)
PIN – 250345
Mobile no. - 9871071427

70

Recommendations of NEP 2020 to For Teachers and Teacher Education

Dr. Manoj Rani

Abstract:

After long years of 34 years, the National Education Policy, 2020 is a visionary, practical and progressive document. NEP 2020 offers a host of changes in our education system. It introduces policy level changes for teachers also. The NEP, 2020 assigns the teacher a central role to influence the fundamental reforms in the entire education system. It regards teachers as the most respectful members of the society because they play a significant role in shaping the next generation. This policy requires teachers to be grounded in Indian values, knowledge and traditions and expects the teachers to be well-versed in the latest changes and innovations that take place in the field of education. The present paper deals with the roles and responsibilities of a teacher as envisaged by the National Education Policy, 2020. It also highlights those recommendations of New Education Policy, 2020 which are related to teacher.

Keywords: Comprehensive, Practical, Progressive, Recent changes

Introduction

The NEP, 2020 is the third national education policy launched by the Government of India. It was released on July 29, 2020 by the Ministry of Human Resource Development under the guidance of Prime Minister Narender Modi after it was approved by the Union Cabinet. After long years of 34 years, the NEP is a welcome document in the field of education. It is a visionary and comprehensive document. The National Education Policy, 2020 mainly focuses on access, equity, quality, accountability and affordability. It aims at making education more equitable, accessible and inclusive. The NEP, 2020 assigns the teacher an important role to introduce the basic reforms in our education system. Teachers play an important role in shaping the future of the children as well as the nation. Teachers in India are regarded as the most respectable members in the society. The National Education Policy, 2020 requires teachers to be grounded in Indian languages, knowledge values and traditions and also expects the teachers to be well-versed in the recent changes and advancements that take place in the field of education.

Recommendations for Teachers

The National Education Policy, 2020 introduces a lot of changes in the present education system. It also makes recommendations for teachers as well. It offers major policy level changes for teachers. The policy recommends changes from the pre-service training of teachers to the in-service training of teachers. It makes recommendations related to the transfer policy for teachers. These changes are discussed below in detail:

Integrated B.Ed Course

The National Education Policy 2020 introduces changes in the pre-service teacher training programme. It recommends a four-year integrated B.Ed course by 2030. As per the choice of the candidate, he/she will have the advantage of receiving a Bachelor's degree along with specialization in the subject.

Moreover, the NEP also recommends the introduction of shorted post B.Ed certification courses. These courses, according to NEP, will be run by multidisciplinary colleges and universities.

Merit-based Scholarship

The NEP 2020 recommends to institute merit-based scholarship specifically in rural areas to study quality based four year integrated B.Ed programme so that outstanding students can enter the teaching profession. After the successful completion of the B.Ed course, students will be given preferences to teach in the schools situated in their local areas. Incentives such as enhanced housing allowances or provision of residence near school campus will be given to teachers for taking up jobs in rural areas particularly in those areas which have acute shortage of teachers.

Changes in the Teacher Eligibility Test (TET)

The NEP 2020 recommends a shift from 10+2 system to 5+3+3+4 system and suggests changes in TET accordingly. It recommends TET for all the stages: Foundational, Preparatory, Middle and Secondary. It further suggests that, in order to gauge the passion of teachers in the teaching profession, classroom demonstration and interview will be made an integral part for hiring teacher in the school. Interviews will be conducted to assess proficiency in local language so that teachers can converse with students in their local language. Only TET qualified teachers will be recruited in private.

Changes in the Transfer Policy of Teachers

The National Education Policy 2020 suggests no transfer policy for teachers as frequent teacher transfers are harmful for teachers as well as students. Excessive transfers cause

discontinuity in the educational environment. Transfers will only be allowed in case of "very special circumstances". In that case, the NEP 2020 recommends to bring transparency in the transfer system. For this purpose, online computerized system will be adopted to conduct transfers.

Change in the Way of Teaching

NEP 2020 suggests interactive as well as technology-based teaching system. In order to make teaching-learning process more interesting and easy, the NEP requires teachers to be skilful and handy at using various technological devices. Technology makes the learning and understanding of various topics easier. The NEP recommends the use of different types of attractive approaches and innovative teaching methods to improve the learning outcomes at all stages: foundational, preparatory and middle. Teachers are given autonomy in choosing appropriate pedagogy. The NEP 2020 recognises the contribution of teachers in making reforms in pedagogy to improve learning outcomes and the performance of students.

Reducing Teacher Isolation

In order to reduce teacher isolation, the NEP 2020 suggests collaboration among schools so that teachers from different schools may come closer and share their experiences with one another. It will not only enhance their knowledge but it will also help in adopting the best teaching practices in the classroom to improve learning outcomes.

Transparency in the Recruitment Process

The New Education Policy 2020 proposes to bring transparency in the teacher recruitment process so that the talented and eligible candidates can be selected for the post of teachers. For this purpose, the NEP suggests the introduction of New Professional Standards for Teachers (NPST). It also suggests to promote the teaches on the basis of merit. All this will bring transparency in the recruitment and promotion of teachers.

Stress on hiring local expertise

The National Education Policy, 2020 lays stress on hiring eminent scholars and experts from local area in order to promote local knowledge. These experts can be from various subjects such as local arts and crafts, agriculture, entrepreneurship etc. Hiring experts from local areas will not only benefit students but also promote local profession.

Continuous Professional Development

The National Education Policy 2020 recommends for the continuous professional development of the teachers. For this purpose, this policy recommends the use of technology platforms like SWAYAM/DIKSHA for the online professional training of teachers. These technology platforms are helpful in administering standardized training to a large number of teachers in a very short span of time.

Recognising the Contribution of Teachers

The NEP 2020 stresses on recognising the contribution and power of teachers. It holds the poor service conditions, improper recruitment and deployment process responsible for poor learning outcomes instead of teacher and recommends to bring improvement in these conditions. It suggests various reforms to bring talented, qualified and best minds in the profession of teaching and restore the respect and high status of teachers.

Conclusion

The National Education Policy, 2020 is a visionary, comprehensive and progressive document in the field of education. NEP 2020 offers a host of changes in our education system. It introduces policy level changes for teachers also. It regards teachers as the most important members of the society as they play a significant role in shaping our next generation. This policy gives various recommendations for teacher such as integrated B.Ed Course, changes in the Teacher Eligibility Test, changes in the transfer policy of teachers, reducing teacher isolation, transparency in the recruitment process, recognising the contribution of teachers etc. These recommendations are helpful not only in empowering the teachers but also in restoring their respect in the society.

REFERENCES

- Arora, P., Gandhi, H. (2022). National Education Policy 2020 Paving Ways for Transformational Reforms. Shipra Publications.
- Basumatary, R., (2021). A Very Short Introduction to Education System in India with a Special Reference to New Education Policy 2020. Notion Press.
- Ls, V. (2021). Critical Analysis of National Education Policy 2020 Vis-A-Vis Right to Education. Notion Press.
- Mandal, K. C. (2021). National Education Policy 2020: The Key to Development in India. Notion Press.
- Thomas, J. K. (2022). India's New National Education Policy 2020. The Writer Order Publications.

Correspondence Address

Dr. Manoj Rani

Associate Professor

M.L.R.S. College of Education, Charkhi Dadri- 127306

Contact no. 9992091269

71

EVALUATION OF AWARENESS LEVEL OF CONSUMER PROTECTION ACT IN THE NCR DELHI

Shaveta Sachdeva, Dr. Inderjit

Abstract

The present is an attempt to evaluation of awareness level of consumer protection act in the ncr delhi. In the present study, descriptive research design has been used. A sample of 300 customers was taken on the basis of random sampling technique method. The researcher prepared a questionnaire-cum- schedule based on a study by Bajaj (1999). the statistical techniques such as Percentage, Mean, Standard Deviation, 't' test were used to analyse the data. It was noted from the study that the vast majority of respondents (75.7%) were found to be knowledgeable about consumer rights, a sizeable minority (24.3%) were not. Regarding level of awareness about Revised Consumer Protection, 2019, majority of the respondents percent were found aware of the Revised Consumer Protection Act 2019 passed in August 2019, while a significant number of customers, i.e. (45.3%), were unaware of this revised act. Right to consumer awareness got the highest level of awareness, while the right to seek redressal got the lowest level of awareness by the respondents. It was suggested that Consumer forums should not be allowed to repeatedly postpone their scheduled meetings. Adjournments should be granted on a more regular basis. It will aid in lowering the settlement's required number of hearings.

Key Words: Consumer, awareness, protection

Introduction

The consumerist movement works to advance the interests of those who purchase products and services. Its primary objective is to prevent consumers from purchasing dangerous items of poor quality; false advertising; deceptive labeling and packaging; and company actions that restrict market competition. It encourages the dissemination of accurate information on the items. To aid consumers in making informed decisions about acquiring products and services. In addition, it tries to educate customers about the practical procedures by which they may seek compensation for injuries or inconveniences brought on by faulty goods and services. It introduces numerous consumer distresses, including the gaps in the services supplied by different utilities such as air lines, trains, telecoms, energy boards, nursing homes, etc. This is because of the expanding contemporary standards of living style.

Consumer Protection: The vast majority of Indian customers are powerless, impoverished, and unorganized, despite India being a large nation. It is of the utmost significance to preserve their interests, rights, and privileges to advance the general welfare of the people, which is one of the primary focuses of any contemporary society. Therefore, legislation in developing countries like India can achieve consumer protection rights. The term "consumer protection" refers to a collection of laws and organizations that protect consumers' rights in the marketplace by promoting ethical business practices, healthy competition, and accurate information. Laws have been enacted to prevent enterprises from getting a competitive advantage via fraudulent or otherwise unethical business activities. Consumers often make purchases of products and services without considering the product's price or quality. Sometimes this is due to the allure of a low price, but other times it is because the product is of poor quality. In this case, the customer has no say in creating the product for his consumption. Therefore, it is logical for a customer to expect that there be fair trade procedures in place, which will guarantee the consumer's physical safety when they use the goods. Likewise, fair trade practices will bring him real value for their money. Also, there were abuses in goods, short weight and quantity, quality, adulteration, food grains, edible oils, flour and powders, medicines, 4 chemicals, petroleum products, cement, fertilizers and cooking gas, bus fare and maxi cab/ taxi fare, etc. The backwardness of people is another barrier that must be overcome for consumer organizations to be successful. This makes it exceedingly difficult to organize consumers properly. Most of the population is illiterate, and ignorance is widespread, particularly among women. Other contributing factors include poverty, a lack of education, a lack of understanding of rights and advantages, and a lack of information. Because of this, customers are vulnerable to being taken advantage of by commercial businesses and service providers. Due to globalization, consumers participate in the global market, and there is increasing competition in the

Indian market. Both producers and consumers are responsible for global problems like pollution and solid waste. The processes of production, on the one hand, and the manner and extent of consumption, on the other hand, generate or aggravate environmental problems. We need a well-organized consumer movement or consumerism with the aid of government backing and patronage in the form of specific laws to stop this sort of exploitation.

Consumer Buying Behavior- Initiation of Consumer Problems

Consumer behaviors examines the ways in which people and groups choose, acquire, use, and discard concepts, goods, and services in order to meet needs and satisfy wants. It alludes to consumer behavior in the market and the motivations behind such behavior. In the literature on consumer behavior, the consumer purchase process may be considered concerning two essential parts, namely the buyer characteristics and the purchasing decision process. In addition, the consumer purchase procedure can be seen as a whole. The buyer characteristics usually cover external and internal influences like socio-cultural, reference group orientation, social class and family on one hand and psychological processes like learning, perception, motivation, personality and attitude on the other. The information available to the buyer and situational factors has also been identified as determinants of buyer behavior.

The buyer decision process has been described as more or less consisting of the following stages: problem recognition; information search, alternative evaluation; purchase decision; and post-purchase behavior. Participation in the buying process is positively correlated with customer satisfaction. A consumer's choice to buy is based on their positive behavior. Several factors could influence a **consumer's choice to make a purchase.**

Awareness Avenues for Consumers during Purchasing

The buyer should get actual value for his money in terms of quality and quantity. The needs of consumers continue to drive economic growth and technological innovation in every culture. He needs security from the factory, farm, warehouse, and store. The philosophy of Caveat Emptor, sometimes known as "Let the Buyer Beware," is based on the idea that a shopper would take reasonable precautions to secure his interests by using his head while making a purchase. Customers know best whether they are getting their money's worth from a product, and they should take responsibility for the results of their purchases.

Since items were simpler and more easily scrutinized in the past, it's possible that shoppers had a better chance of protecting themselves. Yet things have evolved to a new state of affairs. Many products available today are technical enigmas. It's safe to say that the typical customer has no idea how these complex products work. Products in the actual world are intricate, varied, and sold to customers with incomplete information. The following are some of the duties of the customer to bear in mind while shopping for, acquiring, and utilizing products and services.

Consumer Protection through Different Laws

In addition to the protection that the Indian Constitution provides, the government of India has enacted several statutory rules, which it has periodically updated, to give the enforcement mechanism more teeth to assure greater protection of the consumers' interests. Several pieces of legislation have been passed in order to protect the consumer from a variety of deceptions, injuries, and kinds of exploitation. Although some may not address consumer interests expressly, they provide some protection for consumers in one way or another.

Review of Literature

Jain (1999) suggested various measures for improving the functioning of district forums. The judge emphasized that numerous adjournments should be avoided if justice was to be served. Ghosh (2000) provided a history of consumer protections. He said that consumers might turn their present weak position in the market by educating themselves. An informed customer has the potential to rule the industry. Kaul's (2000) dissertation examined the impact of consumer courts on the evolution of consumer legislation. Authorities' output in redressal judgments given under the legislation has much-surpassed expectations. Bedi (2007) discussed consumer protection through product knowledge in his study and revealed that not to talk the illiterate and semi-illiterate consumers but even highly educated consumers have little knowledge about the products they buy, and in their purchase decision, they go by the reputation of the brands and claims made by the manufacturing companies in their advertisements. Rao (2009) said that by issuing this

ruling, the Hon'ble Mr. Justice Markendeya Katju had performed a "yeoman's duty" to the public. The decision does two things: it puts an end to the speculation that has pervaded our judicial adjudication of medical negligence liability, and it makes it very clear that notice cannot be given to a doctor or hospital unless there is prima facie evidence showing medical malpractice. Acharya & Pande (2010) believed that consumer education activists and promoters have to make sure that they involve teachers, their organizations, and students. It was observed that regardless of gender and income, there is a significant difference in the level of awareness regarding consumerism between different educational media groups. Ajesh (2010) observed that people had to wait a long time to see justice done. Most people who participated in the survey said they received advocacy help from VCOs. Gupta, Mittal and Gupta (2011) suggested that the consumer was provided with various kinds of relief under the CP Act. The author has given a detailed note about the various rights available to a consumer under this act. Ramchandra (2012) found that Consumer Courts have been awarded not only the value of the products or services for the defect and deficiency in performance but also the compensation for the mental pain and harassment suffered by the plaintiffs. Bhattacharyya (2014) argued that consumer protection is not just the government's duty but also a legal obligation for private companies. Commercial entities can't survive without a stable population of happy customers. At the same time, ICT must be used to address issues about Indian consumers. Research by Devi and Rao (2016) discovered a link between consumers' views, behaviors, and issues. Volunteer groups and cooperative societies must provide the training and funding to make consumer education a standard curriculum element. Educational institutions need to host seminars, workshops, and debates regularly. All libraries should have readily accessible books, periodicals, reports, pamphlets, cassettes, CDs, and slides about consumer protection. Boro (2018) suggested that public campaigns be carried out among rural and illiterate people, and that the government take the appropriate efforts to reduce the case-filing process, speed up redressal programs, and give different assistance to the consumers. Sybms & Bele (2019) concluded that consumers should speak out against all forms of exploitation to help move the country forward. Our nation must also educate people of all ages about consumer rights via consumer awareness initiatives, which will help protect consumers' rights and end consumer exploitation. Negi and Kumar (2020) stated that stronger consumer rights promotion and protection could only be achieved by the widespread adoption of the Consumer Protection Act. No complaints will be warranted if customers' rights regarding the quality of products and services are protected and met. Chavan (2021) in his study stated that consumers should be knowledgeable about the Consumer Protection Act. The rights of consumers should include safeguards against protection, access to relevant data, freedom of choice, a voice in public affairs, the ability to lodge complaints, and a safe and secure marketplace. Vaishnaw and Routiya (2022) ascertained the extent to which consumers are informed of their legal protections. In order to learn about consumer interest, a survey was sent online and filled out by interested consumers. Consumers in India are in a desperate condition, despite the country's strict and well-defined consumer protection legislation.

Objectives of the Study

1. To evaluate the level of consumers' awareness about level of awareness about Revised Consumer Protection Act 2019

2. Research Design

Exploratory and descriptive research methods were used since they were thought to be most suited for achieving the study's aims. In the present study, descriptive research design has been used.

Sampling Design Adopted for Secondary Data

· Population Area: This research is based on the National Capital Region (NCR) population, which includes twenty-four districts as its population region.

· Sample Units: The unit of sample for this objective was individual consumers.

· Sample Size: Considering the resources at disposal and in consultation with experts in related fields, it was decided to restrict the sample of general consumers to 300 respondents.

· Sampling Method: Random sampling method has been utilized for selecting districts as well as convenience cum purposive sampling (non-probability Sampling) techniques

were adopted for selecting respondents. In convenience sampling, the samples were selected as accessible to the researcher. This method was chosen to be the number of respondents very large.

· Instrument of Data Collection:- The researcher prepared a questionnaire- cum- schedule based on a study by Bajaj (1999). The modifications were made to the questionnaire from the study of Jain (1999). It was further consulted with the experts in consumer affairs. The questionnaire is divided into two sections.

Statistical Techniques Used

The statistical techniques such as Percentage, Mean, Standard Deviation, 't' test were used to analyse the data.

Data Analysis

Table 1: Awareness of the Consumer Rights

Awareness of Consumer Rights		
Response	Frequency	Percent
Aware	227	75.7
Not Aware	73	24.3
Total	300	100.0

Source: Researcher's Compilation

According to Table 1, although the vast majority of respondents (75.7%) were found to be knowledgeable about consumer rights, a sizeable minority (24.3%) were not.

Level of Awareness about Revised Consumer Protection Act 2019 passed in August 2019?

Table 2: Awareness about the Revised Consumer Protection Act 2019 passed in August 2019

Awareness of Consumer Rights		
	Frequency	Percent
Aware	164	54.7
Not Aware	136	45.3
Total	300	100.0

Source: Researcher's Compilation;

Table 2 explains that most of the respondents (54.7) percent were found aware of the Revised Consumer Protection Act 2019 passed in August 2019, while a significant number of customers, i.e. (45.3%), were unaware of this revised act. The table further represents the responses toward the awareness level of the consumer concerning consumer rights. The results were surprising and interesting. Many respondents responded positively to these unrecognized rights and disclosed their level of awareness about these unrecognized rights. No respondent was able to identify these unrecognized rights and did not object to this during data collection.

Descriptive Statistics			One-Sample Test (95% Confidence level)	
	Mean	Std. Deviation	t- value	Sig. (2-tailed)
Right to Seek Redressal	1.72	0.641	46.374	.000
Right to be Assured	1.71	0.632	46.971	.000
Right to be Informed	1.72	0.641	45.908	.000
Right to be Heard	1.39	0.63	43.733	.000
Right to Consumer Awareness	1.27	0.588	46.343	.000
Right to be Protected	1.32	0.631	41.275	.000

Source: Researcher's Compilation

The average responses to rights-related questions are shown in Table 3. Mean values over 1.5 for the top three rights suggest a low/partial degree of knowledge on the part of respondents, while means below 1.5 indicate a high level of awareness. At the same time, below three rights mentioned in the table had a high level of awareness; the right to consumer awareness got the highest level of awareness, while the right to seek redressal got the lowest level of awareness by the respondents. The relevance of rights knowledge was evaluated using a one-sample t-test. Decision rule: $t \geq 1.960$ or $t \leq -1.960$ at a 5% significance level to determine whether awareness of right is statistically significant. Table 4.1.20 shows that the 't' values for all six rights are more than the pre-tabulated value of 1.960, suggesting that the respondents' actions reveal a lack of enthusiasm for the importance of rights education.

Findings of the Study

1.It was noted from the study that the vast majority of respondents (75.7%) were found to be knowledgeable about consumer rights, a sizeable minority (24.3%) were not.

2.Regarding level of awareness about REvised Consumer Protection, 2019, majority of the respondents percent were found aware of the Revised Consumer Protection Act 2019 passed in August 2019, while a significant number of customers, i.e. (45.3%), were unaware of this revised act.

3.Right to consumer awareness got the highest level of awareness, while the right to seek redressal got the lowest level of awareness by the respondents.

Suggestions from the Study

·Necessary information regarding consumer protection measures and redressal procedures can be printed on ration cards for one-to-one awareness.

·For spreading awareness in rural areas, officials of Block Development and Panchayat Office can be channelized in the present system.

·Consumer forums should not be allowed to repeatedly postpone their scheduled meetings. Adjournments should be granted on a more regular basis. It will aid in lowering the settlement's required number of hearings.

·The infrastructure supporting these forums needs to be upgraded, and steps should be done to make that happen.

Staff, consumers, and other system players may be given more room to move around. The public does not have access to more information about consumer forums because they are housed in district courts. Therefore, measures should be done to construct the forums in a distinct structure that is both comfortable and easily accessible.

·Consumers should be encouraged by creating a user-friendly complaint system.

·A separate Department of Consumer Affairs should be established in NCR areas of Delhi. Currently, the consumer redressal mechanism is working and the food and supply department in NCR areas of Delhi.

References

Acharya, M., and Pande, U. (2010). Consumer education and awareness among secondary school students: A case study of Anand district, in Consumer Education and Empowerment, edited by S.S. Singh, Suresh Misra and Sapna Chadah, Indian Institute of Public Administration, New Delhi & Abhijeet Publications, Delhi, pp. 200-213.

Ajesh, K.P.S. (2010). Dispute Redressal Mechanism in Thiruvananthapuram (Unpublished M.Phil. Dissertation). Department of Commerce, University of Kerala, Thiruvananthapuram, India. Available at: http://ssrn.com /abstract=1737484.

Bedi, Suresh (2007). Effective consumer protection through product knowledge, in Consumer Protection Movement in India : Problems and Prospects, 138-149.

Bhattacharyya, R. (2014). An Analysis on the Various Aspects of Consumer Protection in India. International Journal of Research (IJR) 1(6), 1-25.

Boro, K.J. (2018). Consumer Rights Awareness among Rural Consumers - A Study in Rural Areas with Special Reference to Bongaon Block of Kamrup District, Assam. A Peer-Reviewed International Journal of Humanities & Social Science, 6(3), 192-200.

Chavan, K.D. (2021). A study of Awareness of Consumer Protection Act in Homemakers. Journal of Humanities and Social Sciences, 26(2), 1-9.

Devi, M.U.P & Rao, S.B. (2016). Consumer Protection Awareness- Role of Education. Universal Journal of Industrial and Business Management, 4, 97-103.

Ghosh, P. K. (2000). Right to Consumer Education. Consumer Voice, 1(4), 7.

Gupta, R. K., Mittal, I. & Gupta, A. (2011). Measures for Consumer Protection in India and Consumerism. RMS Journal of Management & IT, 5, 9-18.

Jain, Mahesh Kumar (1999). Consumer Disputes Redressal Forums in Haryana- An Appraisal of Their Working. Unpublished Ph.D. Thesis, M.D. University.

Kaul, S. Z. (2000). Development of Consumer Laws through Consumer Courts in India (Unpublished Ph.D. Thesis). University of Jammu, Jammu, J&K, India.

Negi, C.S., and Kumar, S. (2020). Consumer Protection in India: Empowering Consumer. International Journal of Development Research, 10(2), 33873-33877.

Ramchandra, S.V. (2012). A study of Consumer Protection Related to Banking Sector. Asia Pacific Journal of Marketing & Management Review, 1(4), 78-84.

Rao, J.V.S (2009). Medical Negligence Liability under the Consumer Protection Act: A Review of Judicial Perspective. Indian Journal of Urology, 25(3), 361-371.

Sybms, V.R., & Bele, S. (2019). A study of consumer rights exploitation in India. International Journal of Law, 5(5), 84-87.

Vaishnaw, S., and Routiya, V. (2022). Consumer Rights and Awareness on Consumers: A Critical Study. Journal of Emerging Technologies and Innovative Research, 9(1), 540-550.

Shaveta Sachdeva
Ph.D. Research Scholar
Department of Commerce
Baba Mastnath University
Asthal Bohar (Rohtak)

Dr. Inderjit
Professor
Department of Commerce
Baba Mastnath University
Asthal Bohar (Rohtak)

72

A Critical Analysis of the Recommendations of NEP 2020 for Higher Education

Dr. Manoj Rani

Abstract:

In order to promote education among people and to transform the existing education system, the Government of India formulated National Education Policy, 2020. The policy introduces changes in the whole education system, i.e., from elementary education to higher education. The National Education Policy, 2020 is a practical, progressive and visionary document which delineates the vision of new education system in India. Introduced with the objective of making education more accessible, equitable, qualitative, accountable and affordable, the NEP, 2020 is a welcome document in the field of education. The present chapter makes a critical analysis of the recommendations of National Education Policy, 2020 on higher education. In order to transform our higher education system, the NEP, 2020 introduces various changes in the field of higher education such as single regulatory body for higher education, multiple entry and exit options in higher education through Academic Bank of Credits, common entrance exams in higher education, availability of e-courses in regional languages, permission to foreign universities to set-up their campuses in India etc. The present chapter critically discusses the impact of these recommendations of NEP, 2020 on our Higher Education System.

Keywords: Vision, Accessible, Equitable, Qualitative, Accountable, Affordable

Introduction

The National Education Policy, 2020 is the third national education policy launched by the Government of India. It was released on July 29, 2020 by the Ministry of Human Resource Development (HRD) under the guidance of Prime Minister Narender Modi after it was approved by the Union Cabinet. The National Education Policy, 2020 is a practical, progressive and visionary document which delineates the vision of new education system in India. Its vision is envisaged as, "The National Education Policy 2020 envisions an India-centric education system that contributes directly to transforming our nation sustainably into an equitable and vibrant knowledge society by providing high quality education to all." Introduced with the objective of making education more accessible, equitable, qualitative, accountable and affordable, the NEP, 2020 is a welcome document in the field of education. The policy introduces a lot of changes in the whole education system, i.e., from elementary education to higher education. A very important recommendation of this policy is to enhance the state expenditure on education from 4% to 6% of the Gross Domestic Product (GDP). The policy aims at providing quality higher education that may transform individuals into excellent, vibrant and creative beings.

Major Recommendations of NEP 2020 for Higher Education

In order to bring transformation in the existing higher education, the National Education Policy 2020 has made following recommendations:

Single Regulatory System

The National Education Policy 2020 has recommended to set up single regulatory body to regulate higher education excluding legal and medical education.

Academic Bank of Credits

The NEP 2020 makes provision for Academic Bank of Credits in order to provide multiple entry and exit options for those students who wish to exit the course midway and can resume the same course when they will wish. The Academic Bank of Credits shortly referred to as ABC is a bank or virtual mechanism that will keep the record of the credits earned by a student in the field of higher education. ABC acts as bank for storing, verifying, redeeming and transferring of credits.

To make E-courses and E-content available in regional languages

The policy suggests to make E-courses available in regional languages also. The policy recommends to begin with 8 major languages which include Bengali, Kannada, Oriya, Gujarati, Marathi, Malayalam, Tamil and Telugu.

Permission to Foreign Universities and colleges to set-up their campuses in India

In order to facilitate internationalization of education at home, the National Education Policy 2020 recommends to allow foreign universities to set-up their campuses in the country. For this purpose, it proposes to formulate a new law in order to facilitate foreign universities to operate in India. As per the

Human Resource Development Ministry document, "such (foreign) universities will be given special dispensation regarding regulatory, governance and content norms on par with other autonomous institutions of India."

The Multidisciplinary Education and Research University (MERU)

The focus of the policy is on multidisciplinary courses. For this purpose, the National Education Policy 2020 proposes for Multidisciplinary Education and Research University (MERU). It will open up new opportunities for students and will promote inter-disciplinary research.

Common Entrance Exam

The NEP 2020 recommends to conduct common entrance exam for admission to colleges. The National Testing Agency (NTA) has been authorised to conduct this entrance exam for admission to different colleges.

Critical Analysis of the Recommendations of NEP 2020 for Higher Education

Single Regulatory Body for Higher Education

The NEP 2020 recommends to set-up a single regulatory body for higher education, i.e., the Higher Education Commission of India (HECI). This commission will regulate the higher education except legal and medical education. Now the question arises what will happen to the University Grants Commission (UGC) and All India Council for Technical Education (AICTE). The main objective of setting-up of HECI is to bring reform in higher education. As per the new bill, academic and financial aspects are separated and the HECI is not given financial power. In higher education, the funding aspect is now controlled by the UGC. But according to the new bill, the funding aspect, in future, will be handled by the Ministry of Education which is previously known as the Ministry of Human Resource Development (MHRD). According to the policy, HECI will have four independent verticals. These verticals and their respective functions are:

1. National Higher Education Regulatory Council (NHERC) for accreditation
2. General Education Council (GEC) for standard-setting
3. Higher Education Grants Council (HEGC) for funding
4. National Accreditation Council (NAC) for accreditation

By working through the above mentioned four verticals, HECI will be helpful in bringing uniformity in higher education. Setting up of HECI seems to be wise step in the direction of streamlining education policy.

Common Entrance Exam

The NEP 2020 recommends common entrance exam for students to get admission in college and university. The exam will be conducted by the National Testing Agency (NTA). Here, NTA will act as an autonomous testing organization to conduct entrance exams for admission in undergraduate and graduate courses. The NTA will also conduct exams for fellowships in Higher Educations Institutions (HEIs). Conduct of common entrance examination will bring uniformity in the field of higher education. Moreover, it will enable the students to apply to more than one college through one common entrance exam.

Multiple Entry and Exit Options through Academic Bank of Credits

The policy makes provision for multiple entry and exit options through academic bank of credits. Multiple entry and exit programme will help the students to transfer their credits to universities abroad. It will save the time of students. Academic bank of credits brings flexibility in the higher education system. Students can leave the course in the middle if they wish. They can redeem their credits and can rejoin the course in the same institute or in some other institute when they wish. Now the students do not need to complete the course in the same institute against their wishes. Thus, the ABC system provides more individual freedom to the students with regard to their career or academic choice.

Flexibility in the duration/lengths of various programmes

According to NEP 2020, it will take 3 or 4 years for a student to complete an undergraduate degree course. But if a student takes admission in an undergraduate degree course and leaves the course after completing one year or two semesters, his/her time will not go waste and he/she will get a certificate. After completing two years or four semesters in the course, he/she will get the certificate of diploma. The student will be awarded a bachelor's degree after completing successfully 3 years or 6 semesters in the programme of study. The student will get a bachelor's degree with honours/research after a four year or eight semesters programme of study.

In the same way, there is flexibility in the duration or lengths

of master's degree programmes. There is provision for one year master's degree programme for those students who have completed a four-year bachelor's degree with honours or research. Those students who have completed a three-year bachelor's degree programme will have to devote two years to complete their master's degree programme. It is compulsory to complete either a master's degree programme or a four-year bachelor's degree with honours or research for taking admission in a doctoral programme of study.

Internationalization of Higher Education by allowing Foreign Universities to open their campuses in India

The policy paves way for foreign universities and colleges to open their campuses in India. It will bring internationalization at home and improve the quality of education as well. India's higher education forms the third largest system in the world after China and the United States. But in higher education, the Gross Enrolment Ratio (GER) is only 26.3 percent which is very low as compared to other countries such as China, Brazil and European countries. Internationalization of higher education at home will play a significant role in the growth of global higher education. Local educational institutes, with the help of foreign collaborations, will be able to frame their curriculum in such a way that will meet the global standards of education. Moreover, internationalization of education will enable the local institutes to provide more specialization and diversification of subjects to the students. It will be helpful in reducing the migration of Indian students to other countries by providing cost-effective world class education at home. It will make India a global destination in the field of education.

Availability of E-courses in regional languages

The NEP 2020 stresses the need of making E-courses available in regional languages also. It is a commendable step to promote regional languages of students and to improve the educational opportunities as well. According to Union Education Minister Dharmendra Pradhan, "No student should suffer due to language limitations or regional linguistic constraints." Availability of E-courses in regional languages will provide the students an opportunity to receive education in their mother tongue which will result into the better understanding of the content. It will encourage more and more students to come forward to learn different skills and will improve their career prospects.

Focus on Multidisciplinary Courses and Research

The policy recommends for the Multidisciplinary Education and Research University (MERU) which encompasses arts, liberal arts such as soft skills, professional skills, vocational courses etc., humanities, science, social science, languages etc. It will enable students to move away from expertise in a single discipline to various discipline and, thereby, will enhance and improve their career prospects.

While addressing the inaugural session of World Universities Summit, the Union Education Minister Dharmendra Pradhan said, "The Multidisciplinary Education and Research University (MERU) will open up new opportunities for India's youth. It will promote inter-disciplinary research and make India a global hub of research and development."

Conclusion

The National Education Policy, 2020 is a practical, progressive and visionary document which delineates the vision of new education system in India. With the implementation of the National Education Policy 2020, a large number of changes can be witnessed in the field of higher education. The policy aims at transforming the present higher education system by promoting interdisciplinary research and courses, by providing multiple entry and exit options to students, by giving permission to foreign universities to set-up their campuses in India so that cost-effective world class education to students can be provided at home. These recommendations of NEP 2020 will certainly bring a remarkable improvement in the existing higher education system.

References

- Arora, P., Gandhi, H. (2022). National Education Policy 2020 Paving Ways for Transformational Reforms. Shipra Publications.
- Basumatary, R., (2021). A Very Short Introduction to Education System in India with a Special Reference to New Education Policy 2020. Notion Press.
- Jain, A.K., Jain, R., (2023). Handbook on National Education Policy, 2020 (NEP 2020). Akalank Publications.
- Ls, V. (2021). Critical Analysis of National Education Policy 2020 Vis-A-Vis Right to Education. Notion

Press.

· Mandal, K. C. (2021). National Education Policy 2020: The Key to Development in India. Notion Press.

· Thomas, J. K. (2022). India's New National Education Policy 2020. The Writer Order Publications.

· https://en.wikipedia.org/wiki/National_Policy_on_Education

Correspondence Address

Dr. Manoj Rani

Associate Professor

M.L.R.S. College of Education, Charkhi Dadri- 127306

Contact no. 9992091269

BUDGET HIGHLIGHTS 2023-2024: ANALYSIS

Dr. Shuchi Goel, Dr. Geeta Gupta

Abstract

In a budget, intended expenses are expressed together with suggestions for how to fund them. A budget can show a surplus of resources for later use or a deficit if expenses are greater than income or other resources. A budget is a calculating plan, typically financial but not always, for a specific time frame, typically one year or one month. Predicted sales and revenue amounts, resource quantities (such as time, costs, and expenses), environmental impacts (such as greenhouse gas emissions), other impacts, assets, liabilities, and cash flows are all possible inclusions in a budget. Budgets are a quantitative way for businesses, governments, families, and other groups to articulate their strategic plans of action.This paper aims to show the detailed budget highlights and its analysis of the year 2022-23 and 2023-24.

Keywords: Budget, Scheme, Plan, Expenditure

Introduction

Nirmala Sitharaman, the Union Finance Minister, laid out the government's economic agenda: to provide chances for people, particularly young people, and to fulfill their dreams; to give strong impetus to growth and the creation of jobs; and to strengthen macro-economic stability. The emphasis has been on capital investments, with the transportation sector receiving the biggest increase in expenditure allocation and some tax liability reduction for the middle class. The budget's key initiatives, significant policy announcements, and the potential effects of the new tax system are shown below.

Funds For The Central Schemes

Pradhan Mantri Awas Yojana and jal Jeevan Mission get the highest allocation

Name	Budget 2023-24	Budget 2022-23
Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Programme	60,000	73,000
Ayushman Bharat- Pradhan Mantri Jan Arogya Yojana (PMJAY)	7,200	6,457
Jal Jeevan Mission (JM) National Rural Drinking Water Mission	70,000	60,000
Pradhan Mantri Awas Yojana (PMAY)	79,590	48,000
Pradhan Mantri Gram Sadak Yojana	19,000	19,000
Urban Rejuvenation Mission: AMRUT and Smart Cities Mission	16,000	14,100
Pradhan Mantri Kisan Samman Nidhi (PM Kisan)	60,000	60,000

Expenditure Profile

Transport and rural development get the highest hikes while urban development funds see a drop.

Name	Budget 2023-24	Budget 2022-23
Defence	4,32,720	4,09,500
Agriculture and allied activities	84,214	83,521
PM Kisan	60,000	80,000
Rural Development	2,38,204	2,06,293
Education	1,12,899	1,04,278
Health	88,956	86,606
Social Welfare	55,080	51,780
Urban Development	76,432	76,549
Transport	5,17,034	3,51,851
Subsidy	3,74,707	3,17,866
Pension	2,34,359	2,07,132
Interest payment	10,79,971	9,40,651

BUDGET HIGHLIGHTS

CAPITAL EXPENDITURE

- v Capital investment outlay increased by 33 per cent to Rs 10 lakh crore or 3.3 per cent of GDP
- v The 50-year interest-free loan to state governments will continue for one more year with an out- lay of Rs 1.3 lakh crore. It will have to be spent on capital expenditure within 2023-24
- ❖ States will be allowed a fiscal deficit of 3.5 per cent of GSDP, of which 0.5 per cent will be tied to power sector reforms.

INFRASTRUCTURE DEVELOPMENT

- ❖ 100 critical trans- port infrastructure projects with an investment of Rs 75,000 crore, including Rs 15,000 crore from private sources
- ❖ 50 additional airports, heliports, water aerodromes and advance landing grounds will be revived

BANKING AND FINANCE

- ❖ The Banking Regulation Act, the Banking Companies Act and the Reserve Bank of India Act to be amended to improve bank governance
- ❖ SEBI will be empowered to develop, regulate, maintain, and enforce norms and standards for education in the National Institute of Securities Markets and to recognize award of degrees, diplomas, and certificates.

AGRICULTURE

- ❖ Digital public infrastructure to help farmers access relevant information; an Agriculture Accelerator Fund to encourage agri-startups
- ❖ Steps to enhance the productivity of extra-long staple cotton

- Rs 2.200 crore for Atmanirbhar Clean Plant Programme to boost availability of disease-free, quality planting material for high-value horticultural crops
- To make India a global hub for Shree Anna or millets, the Indian Institute of Millet Research, Hyderabad, will be supported as the Centre of Excellence for sharing best practices, research, and technologies at the international level.
- The agriculture credit target will be increased to Rs 20 lakh crore with focus on animal husbandry, dairy and fisheries
- 10,000 Bio-Input Resource Centres will be set up, creating a national-level distributed micro- fertiliser and pesticide manufac- turing network
- A sub-scheme of PM Matsya Sampada Yojana to be launched with an investment of Rs 6,000 crore to support fishermen, fish vendors, and micro and small enterprises
- To enhance decentralized storage capacity, a large number of multipurpose cooperative societies, primary fishery societies and dairy cooperative societies will be set up in uncovered panchayats and villages in the next five years.
- PM Programme for Restoration, Awareness, Nourishment and Amelioration of Mother Earth' to incentivise states to promote alternative fertilisers and balanced use of chemical fertilisers

EDUCATION

- The District Institutes of Education and Training will be developed for teachers' training
- A National Digital Library to make quality books available for children and adolescents
- 38,800 teachers and support staff to be recruited in the next three years for the 740 Eklavya Model Residential Schools, serv- ing 350,000 tribal students
- Three centres of excellence for Artificial Intelligence will be set up in top educational institutions
- 100 labs for developing applications using 5G services in engineering institutions to realise new opportunities, business models, and employment potential.

HEALTH

- 157 new nursing colleges will be established in co-location with the existing medical colleges established since 2014
- A Mission to eliminate Sickle Cell Anaemia by 2047 will be launched
- Facilities in select ICMR labs will be made available for research to public and private medical college faculty and private sector R&D teams to encourage collaborative research and innovation
- A new programme to promote research and innovation in pharmaceuticals will be taken up through centres of excellence
- Dedicated multidisciplinary courses for medical devices will be supported in existing institutions to ensure availability of skilled manpower for futuristic medical technologies, high-end manufacturing, and research

GREEN ENERGY

- Rs 35,000 crore for priority capital investments towards energy transition and net zero objectives, and energy security
- Battery Energy Storage Systems with capacity of 4,000 MWh will be supported with Viability Gap Funding. A detailed framework for Pumped Storage Projects will also be formulated
- The inter-state transmission system for evacuation and grid integration of 13 GW renewable energy from Ladakh will be constructed with investment of Rs 20,700 crore, including central support of Rs 8,300 crore
- Coastal shipping will be promoted as an energy-efficient and lower-cost mode of transport

EASE OF DOING BUSINESS

- The KYC process will be simplified adopting a 'risk-based' instead of 'one size fits all' approach
- A one-stop solution for reconciliation and updating of identity and address of individuals maintained by various government agencies, regulators and regulated entities will be established using Digi-Locker service and Aadhaar as foundational identity; the scope of documents available in Digi-Locker for individuals will be expanded
- An Entity Digi-Locker will be set up for use by MSMEs, large business and charitable trusts. This will help store and share documents online securely, whenever needed, with various authorities, regulators, banks, and other business entities
- A national financial information registry will be set up to serve as the central repository of financial and ancillary information
- For business establishments, the PAN will be used as the common identifier for all digital systems of specified

government agencies

- A Central Processing Centre will be set up for faster response to companies through centralized handling of various forms filed with field offices under the Companies Act; for obviating the need for separate submission of same information to different government agencies, a system of 'Unified Filing Process' will be set up
- To settle contractual disputes of government and government undertakings, wherein arbitral award is under challenge in a court, a voluntary settlement scheme with standardized terms will be introduced

URBAN DEVELOPMENT

- An Urban Infrastructure Development Fund (UIDF) to create infrastructure in Tier 2 and Tier 3 cities; Rs 10,000 crore per annum will be made available
- All cities and towns will be enabled for 100 per cent mechanical desludging of septic tanks and sewers; enhanced focus will be pro- vided for scientific management of dry and wet waste

MSME

- Rs 9,000 crore for the credit guarantee scheme for MSMEs; cost of credit to be reduced by 1 per cent
- In cases of failure by MSMEs to execute con- tracts during the Covid period, 95 per cent of the forfeited amount relating to bid or performance security will be returned to them by government and government undertakings

TOURISM

- 50 tourist destinationş to be developed Sector- specific skilling and entre- preneurship development to promote domestic tour- ism; tourism infrastructure and amenities to be created in border villages under the Vibrant Villages Programme
- States will be encouraged to set up a Unity Mall for promotion and sale of their own ODOPs (one district, one product), Gl products and other handicraft products

YOUTH

- Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana 4.0 to skill the youth in next three years; the digital ecosystem for skilling will be further expanded
- A pan-India National Apprenticeship Promotion Scheme to provide stipend to 4.7 million youth in the next three years

TRIBAL

- To improve socio-economic conditions of the particularly vulnerable tribal groups (PVTGs), Pradhan Mantri PVTG Development Mission will be launched with Rs 15,000 crore allocated for the next three years

WOMEN

- A one-time small savings scheme, Mahila Samman Savings Certificate, will be made available for a two-year period; Rs 2 lakh can be invested at fixed interest rate of 7.5 per cent

SENIOR CITIZENS

- The maximum deposit limit for Senior Citizen Savings Scheme will be enhanced from Rs 15 lakh to Rs 30 lakh
- The maximum deposit limit for Monthly Income Account Scheme will be enhanced from Rs 4.5 lakh to Rs 9 lakh for single account and from Rs 9 lakh to Rs 15 lakh for joint account

OTHER ANNOUNCEMENTS

- A National Data Governance Policy to support innovation and research by start-ups and academia
- To encourage indigenous production of Lab Grown Diamonds (LGD) seeds and machines and to reduce import dependency, a research and development grant will be provided to one of the IITs for five years; custom duty reduced for LGD seeds
- 500 new 'waste to wealth' plants under GOBARdhan (Galvanising Organic Bio-Agro Resources Dhan) scheme will be established at an investment of Rs 10,000 crore.

Dr. Shuchi Goel
Assistant Professor,
Vaish Mahila Mahavidyalya,
Rohtak.
Dr. Geeta Gupta
Assistant Professor
Vaish Mahila Mahavidyalya
Rohtak.

74

Traits of Role Model Teaching

Dr. Jai Parkash

Abstract

Education plays a vital role in shaping an individuals' life and society as a whole. It equips individuals with knowledge, skills, and values necessary for personal and societal growth. However, education is not just about imparting information; it involves addressing central issues such as what should be taught, who should be taught, and how it should be taught. The role of a teacher or a guru is pivotal in addressing these issues and guiding students towards holistic development. This paper aims to explore various aspects of effective role model teaching including the importance of teamwork, the Triple S theory (Studies, Sports and Stage), time management, grassroot nurturing, avoiding corporal punishment, being a role model, promoting moral values, classroom management, and being an asset to the educational system which contribute in creating a positive and inclusive learning environment.

1. Purpose of Education

The purpose of education is multifaceted. It involves equipping individuals with academic knowledge and skills necessary for their future career. However, education goes beyond academics; it also aims to foster personal growth, character development, and social responsibility. The purpose of education is to empower individuals to become lifelong learners, critical thinkers, and responsible citizens.

1.1 Central Issues of Education: What, Whom, and How

The central issues in education revolve around what should be taught, whom it should be taught to, and how it should be taught. The curriculum plays a crucial role in determining what knowledge and skills are deemed important to acquire for the students. It should be comprehensive, relevant, and adaptable to meet the changing needs of the society. Additionally, education should be accessible to all individuals, regardless of their background, socio-economic status, or abilities. The inclusivity of education ensures equal opportunities for all. Lastly, the methods of teaching and learning are essential in engaging students and facilitating effective knowledge acquisition.

2. The Traits of Role Model Teaching

The role of a teacher, or guru, is pivotal in effective role model teaching. A teacher is not merely a transmitter of knowledge but also a facilitator of learning. They create a positive and inclusive learning environment, inspire students, and guide them towards holistic development. A teacher should possess subject expertise, pedagogical skills, and the ability to connect with students on an emotional level. They should act as mentors, role models, and guides, nurturing students' intellectual, social, emotional, and moral growth.

2.1 Teamwork

Effective role model teachers understand the significance of teamwork in the classroom. They encourage collaboration among students and foster a sense of community. By promoting teamwork, teachers teach students valuable skills such as communication, cooperation, and problem-solving. Teamwork also helps create a supportive and inclusive learning environment where students feel valued and respected.

2.2 Triple S Theory: Studies, Sports and Stage

The Triple S theory, which stands for Studies, Sports and Stage, highlights the significance of a well-rounded education. Role model teachers understand that academics alone are not sufficient for students' overall growth and development. They recognize the importance of incorporating sports and performing arts into the curriculum to provide students with a holistic learning experience.

Sports activities help students develop physical fitness, teamwork, discipline, and perseverance. Participation in sports teaches students valuable life skills such as goal setting, time management, and resilience. It also promotes a healthy lifestyle and improves students' overall well-being.

Similarly, engaging in performing arts, such as drama, music, or dance, allows students to express themselves creatively, build self-confidence, and develop communication and presentation skills. Performing arts also encourage teamwork, discipline, and self-expression.

By integrating sports and performing arts into the curriculum, role model teachers create a balanced learning environment that caters to students' diverse interests and strengths. They provide opportunities for students to discover their passions,

develop their talents, and explore different avenues of personal growth.

2.3 Media/social media: Handle with Care

In today's digital age, media and social media play a significant role in students' lives. Role model teachers understand the impact of media on students' well-being and academic performance. They teach students to handle media and social media responsibly, critically evaluate information, and maintain a healthy balance between online and offline activities. Role model teachers also use media and social media as tools for enhancing teaching and learning experiences.

2.4 Time Management

Role model teachers exemplify effective time management skills. They teach students the importance of prioritizing tasks, setting goals, and managing their time effectively. By modeling these skills, teachers help students develop essential life skills that will benefit them beyond the classroom. Time management also fosters a sense of responsibility, reduces stress, and improves productivity.

2.5 Grassrooters versus Parachuters

Effective role model teachers focus on nurturing students from the grassroot level rather than simply parachuting in to deliver knowledge. They invest time and effort in understanding each student's unique needs and abilities, providing personalized support and guidance. This approach helps create a student-centred learning environment where every student feels valued and supported.

2.6 Corporal Punishment: A Big No

Role model teachers understand that corporal punishment has no place in effective teaching. They promote positive discipline strategies that focus on understanding and addressing the root causes of behavioral issues, fostering a supportive and respectful learning environment. Role model teachers emphasize empathy, communication, and problem-solving skills to address disciplinary issues effectively.

2.7 Be a Role Model

Role model teachers understand that not all students learn in the same way or at the same pace. They adapt their teaching methods and strategies to accommodate different learning styles and abilities. They provide individualized attention to students who may need extra support or challenge, ensuring that no student is left behind or held back.

Furthermore, role model teachers foster a positive and inclusive classroom culture where students feel safe to take risks, ask questions, and share their ideas. They create a sense of belonging and encourage collaboration and cooperation among students. By promoting a supportive and respectful learning environment, role model teachers cultivate a sense of community and empower students to become active participants in their own learning.

In addition to the academic support, role model teachers also provide emotional support to their students. They understand that students' well-being and mental health are crucial for their overall growth and development. They create opportunities for open communication and provide a safe space for students to express their thoughts and feelings. Role model teachers also teach students strategies for managing stress, building resilience, and developing positive coping mechanisms.

Role model teachers not only inspire individual students but also serve as role models for their entire team or class. They demonstrate leadership qualities, integrity, and professionalism, setting a positive example for their students to follow. Role model teachers exhibit respect, fairness, and equality in their interactions with students, fostering a positive and inclusive learning environment.

2.8 Create Self-Discipline Culture

Role model teachers promote self-discipline among students. They teach students to take responsibility for their actions, make informed choices, and develop self-control. By creating a culture of self-discipline, teachers empower students to become independent learners and responsible individuals.

2.9 Say No to Ego, Biased Attitude, and Negative Comparison

Role model teachers avoid ego-driven behavior, biased attitudes, and negative comparisons among students. Instead, they treat each student with respect, fairness, and equality. They celebrate each student's unique strengths and provide constructive feedback to encourage growth. Role model teachers foster a positive and supportive learning environment where students feel safe to express themselves and take risks.

2.10 Counselling for Students

Role model teachers recognize the importance of

counselling for students' overall well-being. They provide guidance and support to students facing personal or academic challenges. Role model teachers create a safe space for students to share their concerns, seek advice, and develop coping strategies. Counselling helps students develop resilience, self-awareness, and problem-solving skills.

2.11 Smart Workers

They teach students how to prioritize tasks, manage their time effectively, and make informed decisions. Role model teachers also emphasize the importance of continuous learning and self-improvement, encouraging students to seek new knowledge and skills beyond the classroom.

Furthermore, role model teachers foster a growth mindset in their students. They teach them that intelligence and abilities can be developed through effort and practice. They encourage students to embrace challenges, learn from their mistakes, and persist in the face of setbacks. By instilling a growth mindset, role model teachers empower students to take ownership of their learning and believe in their own potential.

Role model teachers also promote critical thinking and problem-solving skills. They encourage students to analyze information, evaluate different perspectives, and think critically about complex issues. They provide opportunities for students to engage in hands-on activities, projects, and discussions that require them to apply their knowledge and skills in real-world contexts. By doing so, role model teachers prepare students to become active and engaged citizens who can navigate and contribute to an ever-changing world.

In addition, role model teachers prioritize building strong relationships with their students. They take the time to get to know each student individually, understanding their interests, strengths, and weaknesses. They show genuine care and empathy towards their students, creating a supportive and nurturing environment where students feel valued and respected. By building strong relationships, role model teachers create a foundation of trust and open communication that enhances the learning experience for all students.

Overall, role model teachers play a crucial role in shaping the lives of their students. They go beyond teaching academic content and focus on developing well-rounded individuals who are equipped with the skills, knowledge, and values necessary for success in both their personal and professional lives. Through their dedication, passion, and commitment to their students' growth and development, role model teachers inspire a love for learning, foster a sense of belonging, and empower students to reach their full potential.

2.12 Inculcating Moral Values

Role model teachers prioritize the development of moral values in their students. They emphasize the importance of honesty, kindness, empathy, and respect for others. By incorporating moral values into their teaching, role model teachers help shape students' character and prepare them to become responsible and compassionate members of society.

2.13 Classroom Management

Effective role model teachers employ various strategies for effective classroom management. They establish clear expectations, rules, and routines to create a structured learning environment. Role model teachers also use positive reinforcement, praise, and rewards to motivate students and promote positive behavior. They create a safe and inclusive classroom where every student feels valued and respected.

Additionally, role model teachers actively listen to their students, encourage open dialogue, and create opportunities for student voice and choice in the classroom. They value and consider their students' opinions, ideas, and perspectives, fostering a sense of ownership and empowerment among the students. This not only enhances student engagement and motivation but also promotes a collaborative and inclusive learning environment.

Role model teachers also differentiate their instruction to meet the diverse needs and abilities of their students. They use a variety of teaching strategies, materials, and resources to accommodate different learning styles and preferences. They provide extra support and scaffolding for struggling students while challenging and extending the learning of advanced students. By individualizing instruction, role model teachers ensure that each student receives the necessary support and opportunities to succeed.

Furthermore, role model teachers are lifelong learners themselves. They continuously seek professional development opportunities, stay updated with current research and best practices in education, and reflect on their own teaching practices. They model the importance of continuous learning and self-improvement to their students, inspiring them to embrace a growth mindset and a love for learning.

2.14 Be an Asset Instead of Liability

Role model teachers strive to be assets to the educational system rather than liabilities. They actively engage in professional development, stay updated with current research and best practices in education, and collaborate with colleagues to improve teaching and learning outcomes. Role model teachers also actively participate in school activities, parent-teacher associations, and community initiatives to contribute positively to the educational ecosystem.

3.Conclusion

Effective role model teaching involves promoting teamwork, implementing the Triple S theory, emphasizing time management skills, nurturing students from the grassroot level, being a role model, avoiding corporal punishment, avoiding ego-driven behavior and negative comparisons, inculcating moral values, managing the classroom effectively, and being an asset to the educational system. By embodying these traits, teachers can create a positive and inclusive learning environment that fosters holistic development in students. It is essential for educators and educational institutions to recognize the importance of these traits and support teachers in developing them to ensure the overall growth and success of their students.

References

Azer, S. A. (2005). The qualities of a good teacher: how can they be acquired and sustained?. Journal of the Royal Society of Medicine, 98(2), 67-69. Available at: https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC1079387/

https://www.educationdegree.com/articles/25-ways-teachers-can-be-role-models/

https://teach.com/what/teachers-are-role-models/

Dr. Jai Parkash
H.No.: 2038
Sector 23, Sonipat (Haryana)

75

Issues and Challenges in the Implementation of NEP 2020

Dr. Manoj Rani

Abstract:

Right from the pre-historic period in India, education has acquired an important place in Indian society. In order to bring remarkable improvement in education, the Government of India has launched three National Policies on Education till now. The NEP 2020 is the third National Policy on Education launched by the Government of India. The first National Policy on Education was promulgated by the Government of India in the year 1968 during the Prime Ministership of Indira Gandhi. The second NPE was formulated in the year 1986 during the tenure of Rajiv Gandhi as PM. After long years of 34 years, the National Education Policy, 2020 is a welcome document in the field of education. The policy makes various recommendations with the aim of transforming our existing education system such as changing the existing curricular and pedagogical structure, promoting Indian languages, enhancing state expenditure on education from 4% to 6% of the GDP, improving GER, digitalization of education, internationalization of education etc. The present paper throws light on these recommendations of NEP 2020 and discusses various issues and challenges that are likely to come in the implementation of the policy.

Keywords: Pedagogical structure, State expenditure, GDP, GER, Digitalization, Internationalization

Introduction

The NEP 2020, the third national education policy in the history of India, was released on July 29, 2020 by the Ministry of Human Resource Development (MHRD) under the guidance of Prime Minister Narender Modi after it was approved by the Union Cabinet. After long years of 34 years, the NEP is a welcome document in the field of education. It is a practical, visionary and comprehensive document. Its main focus is on access, equity, quality, accountability and affordability. It aims at making education more accessible, qualitative and inclusive. During his address at the inaugural session of World Universities Summit, the Union Education Minister Dharmendra Pradhan said in the context of NEP 2020, "It outlines the vision of Prime Minister Narendra Modi to make an Aatmanirbhar Bharat. Quality, equity, accessibility and affordability are the four pillars of the new education policy on which a new India will emerge." The policy aims at transforming India into world superpower by making education making education more accessible, skill-oriented, multidisciplinary, holistic and flexible. Taking into consideration the needs of the twenty-first century, various recommendations have been made in the policy.

Major Highlights of the National Education Policy 2020

· The National Education Policy 2020 proposes a new curricular and pedagogical structure for school education, i.e., 5+3+3+4 to replace the existing structure, i.e., 10+2 structure. The proposed structure is based on the stages of cognitive development. It is an age-wise and a class-wise structure. In the new structure, students will dedicate the first five years in the foundational stage, three years in the preparatory stage, the next three years in the middle stage and four years in the secondary stage. 5+3+3+4 pattern includes education from pre-schooling to class 12. The policy recommends to provide more flexibility in the selection of subjects for classes 9 to 12. It also recommends for skill-oriented education.

· In order to promote Indian languages, the NEP 2020 recommends to use mother tongue/regional or local language as the medium of instruction till class 5 and preferably till class 8.

· Another important recommendation of the policy is to increase the state expenditure on education from 4% to 6% of the Gross Domestic Product (GDP).

· In order to make education more accessible to the underprivileged groups, the NEP 2020 has given importance to online education. To promote digital learning, it proposes to upgrade online platforms like SWAYAM, DIKSHA etc. The policy lays stress on online examination and assessment.

· To improve the overall evaluation system in schools, the policy recommends to set up a new assessment centre named as PARAKH (Performance Assessment, Review, and Analysis of Knowledge for Holistic Development). It will provide guidelines for all the State Boards to remove disparities in the scores of the students.

· The NEP 2020 recommends for common entrance exam

to get admission to different colleges. This entrance exam will be conducted by the National Testing Agency (NTA).

· The policy suggests changes in the pre-service teacher training programme. It recommends a four-year integrated B.Ed. degree as minimum qualification for teaching by 2030. The candidate will have the choice of receiving a Bachelor's degree along with specialization in the subject. Students can get admission to the course through the Common Entrance Test which will be conducted by the National Testing Agency (NTA).

· The National Education Policy 2020 sets the target of increasing the GER in higher education from 26.3% to 50% by 2035.

· The policy brings flexibility in higher education by providing multiple entry and exit options to the students.

· The new policy recommends for Academic Bank of Credits to facilitate the digital storage, verification and transfer of credits earned by the students.

· To promote multidisciplinary courses and research, the National Education Policy 2020 recommends to establish Multidisciplinary Education and Research Universities (MERU).

· The policy recommends to bring entire higher education except for legal and medical education under the purview of a single Apex body, i.e., the Higher Education Commission of India (HECI).

Issues and Challenges in the Implementation of the NEP 2020

The NEP 2020 is a landmark policy in transforming the existing education system in India. It has made valuable recommendations in making our education system more holistic, flexible, accessible, practical and multidisciplinary. The policy has, no doubt, gathered a fair degree of momentum, but its implementation is still an uphill task which has endless potholes. The challenges that are likely to be faced in the implementation of the NEP 2020 are as follows:

· The NEP 2020 aims to increase the state expenditure on education from 4% to 6% of the Gross Domestic Product (GDP). It also sets the target of increasing the GER in higher education from 26.3% to 50% by 2035. The implementation of both these targets will require a heavy investment in the field of education for the upcoming years which is a great challenge for the government.

· The policy recommends to use mother tongue/regional or local language as the medium of instruction till class 5 and preferably till class 8. To promote Indian languages, it also suggests to make E-courses available in regional languages starting with 8 major languages which include Bengali, Kannada, Oriya, Gujarati, Marathi, Malayalam, Tamil and Telugu. It will be very challenging to develop content in those languages which are not standardized or which don't have any script.

· The policy recommends to provide more flexibility in the selection of subjects for classes 9 to 12. It also recommends for skill-oriented education. More skilful and trained teachers are required to transact such type of curriculum. It will be an uphill task to provide such trained teachers who can transact such curriculum which is so much skill-oriented and full of diversification. Moreover, it will also be a tedious job to impart training to a huge number of teachers.

· The National Education Policy 2020 has laid stress on digital learning and online courses. No doubt, both teachers and students are now techno-savvy. But access to online education in India is still very challenging due to low power supply and poor internet connectivity in rural and remote areas.

· Next challenge that we face is in the implementation of 4-year integrated B.Ed. course. The policy recommends a four-year integrated B.Ed. degree as minimum qualification for teaching by 2030. For this purpose, well-equipped infrastructure is required to merge existing B.ED. colleges with degree colleges.

· The policy brings flexibility in higher education by providing multiple entry and exit options to the students.

· To bring flexibility in higher education and to provide more individual freedom to students in learning, the policy provides multiple entry and exit options to the students. However, it is a laudable effort. But its implementation is very difficult as it may create a huge problem to keep track of the record of students when they exit and rejoin the course at any time. Moreover, the merging of the arts, commerce and science streams has made its implementation more difficult.

Conclusion

The NEP 2020 is a visionary and comprehensive document that aims at transforming our existing education system by making it more affordable, accessible and practical. It offers solutions to various problems, but at the same time it poses various challenges to the present Indian education system. Most of the recommendations made in the policy such as raising state expenditure on education, increasing the Gross Enrolment Ratio to 50% by 2035 in higher education, promoting regional languages, introducing multiple entry and exit system etc. are very commendable. But it is an uphill task to implement this policy as its successful implementation requires a huge infrastructure, a lot of funding, a large number of trained teachers and a well-planned strategy.

REFERENCES

- Arora, P., Gandhi, H. (2022). National Education Policy 2020 Paving Ways for Transformational Reforms. Shipra Publications.
- Basumatary, R., (2021). A Very Short Introduction to Education System in India with a Special Reference to New Education Policy 2020. Notion Press.
- Jain, A.K., Jain, R., (2023). Handbook on National Education Policy, 2020 (NEP 2020). Akalank Publications.
- Ls, V. (2021). Critical Analysis of National Education Policy 2020 Vis-A-Vis Right to Education. Notion Press.
- Mandal, K. C. (2021). National Education Policy 2020: The Key to Development in India. Notion Press.
- Thomas, J. K. (2022). India's New National Education Policy 2020. The Writer Order Publications.
- https://en.wikipedia.org/wiki/National_Policy_on_Education

Correspondence Address

Dr. Manoj Rani

Associate Professor

M.L.R.S. College of Education, Charkhi Dadri- 127306

Contact no. 9992091269

Transforming Education: India's New National Education Policy

Dr. Jai Parkash

Abstract

The Indian Education System in the past, has mainly focused on rote learning, which highly prioritized memorization rather than understanding. In addition, the old education system was encompassed by multiple discordant board systems when students are required to learn different skills and hone different learning methods but take the same standardized exams. In a significant move to revamp the Indian education system, the government of India after following same education norms for 34 years made significant changes to the National Education Policy (NEP) in 2020, and adopted this policy in 2023. The NEP proposes several reforms across all levels of learning with the aim of transforming education and fostering holistic development. This comprehensive policy has been designed and restructured in a way such that it would reshape the educational landscape of the country. The NEP's main objective is to align India's education system with the current century needs and raise the standard to a global level by universalization and addressing the numerous long-standing challenges mentioned above.

1. Highlights of the New Education Policy

The NEP highlights on improving education quality by emphasizing technology use, introducing transparency in the education policy, spending money on public education, determining and nurturing every child's potential with flexible learning opportunities to improve their creativity and logical thinking and increase children's reading and numeracy knowledge. The policy also focuses on introducing children to Indian culture, teaching them multiple languages and conducting research in order to empower children. The National Curriculum Framework (NCF) based on the NEP addresses education across four stages "5+3+3+4" pattern instead of the existing "10+2" pattern by Curricular and Pedagogical restructuring of school education for the 3 to 18 age group. Some of the NEP highlights are briefly discussed below.

1.1 Strengthening Student's Literacy and Numeracy Foundation The NEP acknowledges the importance of enhancing fundamental literacy and numeracy skills among students. In order to guarantee that all children attain the basic proficiency in reading, writing and mathematics when they reach Grade 3, it places special emphasis on early identification and remediation of learning gaps.

1.2 Universalizing Early Childhood Care and Education

The NEP recognizes the crucial significance of early childhood care and education, hence placing emphasis on establishing anganwadis and preschools. The NEP aims to create a solid foundation for lifelong learning, by offering comprehensive developmental opportunities during a child's vital years.

1.3 Updating Assessments/Evaluation system

An essential element of the NEP involves transition from rote memorization and high-stakes examinations to a holistic and all-encompassing evaluation system. The focus will be on identifying student gaps of concepts understanding promoting a deeper understanding of subjects and reducing stress.

1.4 Higher Education Reforms

The NEP proposes the implementation of a four-year undergraduate program that offers students various pathways for completion based on their interest with multiple exit options. The policy emphasizes on promoting collaborations across disciplines and colleges by establishing multidisciplinary universities and colleges.

1.5 Technology Integration

The NEP promotes and emphasizes on integration of digital tools and resources in classrooms, and use of online learning platforms. The policy also highlights equity in access to quality education for all while adopting techniques for personalized education.

1.6 Teacher Training and Professional Development

The NEP emphasizes the need for pre-service and in-service rigorous teacher training programs, to equip educators with the necessary skills and knowledge. Additionally, the policy focuses on ongoing professional development for the teachers to ensure that they stay up-to-date with emerging pedagogical practices and teaching methodologies.

1.7 Education as a Basic Right

The updated NEP enforces Education as a basic right by

proposing to provide free education in government institutions to children in the age group of 3 to 18 years.

1.8 Investment in Education Sector

The implementation of updated education policy has doubled the investment in education sector compared to previous years from 3% to a 6%.

1.9 Innovative strategies for Reconnecting dropouts

The new NEP highlights to bring the dropout students back into the mainstream education by establishing alternative and innovative education centers, providing the students with suitable opportunities to re-enter the education system.

1.10 Open and Distance-learning Programmes

The Open and Distance-learning (ODL) programmes will be expanded and strengthened to meet the learning needs of students who are unable to physically attend the school.

2. Merits of the New Education Policy

The long-awaited revamp of the educational system will result in numerous long-lasting benefits including core skills development, a more flexible system, introduction to multiple language education, enhancement of digital literacy, use if AI technologies, reduction in employment gaps, up-to-date educators and a globally acceptable system. Some of these are discussed next.

2.1 Developing core skills

The NEP has several benefits such as emphasizing on child education and developing their core literacy and numeracy skills. This will be achieved through a pedagogical framework and a national level curriculum for daycare and early childhood education to reach all these students up to third grade.

2.2 Flexibility

The NEP addresses the current educational system loopholes because of its rigidity, by discontinuing the stream system from Arts, Commerce and Science to a more flexible one, thus allowing students to enroll in subjects of their interest from different streams.

2.3 Introduction to Multilingualism

The students will also have the ability to learn and study ancient Indian languages including Sanskrit and many more, and the states will have the liberty to determine three languages to be taught in schools.

2.4 Digital literacy

Furthermore, the NEP aims to equip schools with digital technology and teach computing concepts and languages early on to students in order to enhance digital literacy.

2.5 Use of AI technology

Another step towards digitization will be translating all forms of content into regional languages, creating virtual labs and utilizing Artificial Intelligence (AI) to facilitate learning.

2.6 Stress Reliever

The new education system plans to hold board examinations twice a year which would act as a stress reliever for the students.

2.7 Globalization

The policy will implement "5+3+3+4" pattern instead of the formerly adopted "10+2" pattern making the education system comparable to the global education system.

2.8 Employability

The policy intends to shift to the skill-based approach from the current learning-based approach, which would enable the students to avail different career opportunities, resulting in mitigating the employability gap.

2.9 Teacher's Professional Development

The policy focuses on regular training and professional development for the teachers ensuring they are updated with new teaching techniques and methods and emerging pedagogical practices.

2.10 Mental Health

The new policy will focus on providing well-trained counselors and social workers to schools to cater to concentrate on students mental, emotional and physical health in addition to guiding them on the benefits of healthy food habits.

3. Demerits of the New Education Policy

Although the merits of the NEP outnumber the demerits but the new policy has some drawbacks as well. Some of these major drawbacks of the updated policy include potential lack of adequate resources for implementation, resistance to change, technical barriers, drop in higher education enrollments, lack of academic freedom and unclear research promoting implementation policies.

3.1 Lack of Adequate Resources

The updated policy despite its innovativeness is likely to face challenges in implementation due to lack of funding, infrastructure and training facilities for teachers.

3.2 Resistance to change

The new policy to increase critical thinking may come across resistance from educators and students who are habitual of using traditional teaching and learning techniques and methods such as rote learning.

3.3 Technical Barriers

The focus on education digitization and development of e-learning tools and techniques in NEP seems to be practical and is indeed need of the hour, however it ignores the fact that approximately one third of the Indians are unable to afford a smartphone and even fewer have access to e-devices such as laptops, tablets and computers. Furthermore, schools run by the government lack IT infrastructure, as well as students in the remote areas or those belonging to the low socio-economic status either do not have access to or may not be able to adapt to the new IT-based learning techniques. The government should focus on making these facilities available and educating the population to make the policy a success.

3.4 Drop in Higher Education enrollments

As per the NEP the students can choose to drop out of graduate school after 1-2 years of education and still receive a certificate or diploma. This may encourage students to drop out early without completing their higher studies, leading to lower enrollments in higher education and high early drop-out rates.

3.5 Lack of Academic Freedom

The government has significant control over higher education and academic policies, following in more interference and undesired criticism that results in lack of academic freedom.

3.6 Lack of Clarity in Promoting Research

Due to lack of clarity in implementation of policies for promoting research, there is a likelihood of resistance from the stakeholders because of minimal funding for undertaking research.

3.7 Language Access Inequity

Students in private schools are introduced to English at a very early stage in contrast to the government schools who have proposed to teach English only after class 5 on the basis of new policy. The government school children will be taught in the regional language until that class, which makes it challenging for students who are unable to afford costly private institutions to compete with their peers. This will widen the gap between different sections of the society and result in language access inequality.

4. Effect of the New Education Policy

The NEP is bound to have an impact on the two most important concerned entities in the education system the educators/teachers and the students. Some of the effects of the new education policy on these entities are briefly described below.

4.1 On Educators/Teachers

According to NEP, in order to work as a teacher in a school, one will be required to obtain a B. Ed degree. In addition to this requirement, an important change is that the B.Ed course will be a 4-year integrated course. As a part of this strategy, schools in future will only be able to recruit qualified teachers, which will certainly aid in not only shaping students' future but also provide the students with the level of education they deserve.

4.2 On Undergraduate and Higher Education Students

The NEP will impact students pursuing undergraduate (UG) and Higher Education as well. As per the policy, a UG degree would be four years, flexible and multi-disciplinary. The programs will be more flexible allowing students to withdraw early on without having to complete all the years from the degree program and obtain a vocational or a diploma certificate. In addition, the duration of post graduate (PG) courses will be limited to 1-2 years.

4.3 On Primary Students

One significant change in the NEP is that the students up to Grade 5 will have an option to study in their mother tongue or regional language. This change in future may be raised to the eighth grade. Students will have a better understanding and help them learn more about their native language.

Conclusion

The new educational policy is an ambitious step towards revolutionizing the education system in India. This policy is a long-overdue and comprehensive reform that will result in a more inclusive, flexible, and learner-centered Indian

education system. The new policy intends to address the shortcomings and existing issues in the education sector and provide quality education to all students, regardless of socioeconomic background. By emphasizing on holistic development, vocational education, flexible curriculum, and technology integration, the NEP aims to create a dynamic and inclusive education system that prepares students for the challenges of the 21st century. The new education policy proposes a comprehensive and integrated approach to education that focuses on skill development, multi-lingual education, teacher training, research and innovation, multi-disciplinary learning, encouraging creativity, critical thinking and increased access to education while emphasizing on the use of AI, technology and digital resources.

Although the new education policy has some drawbacks, the merits outnumber them and therefore implementing these changes would definitely be a positive step towards India's academic system development. However, the policy success will rest on its effective implementation and overcoming these challenges. The successful implementation of the policy will also require coordinated efforts from all stakeholders, including government bodies, educational institutions, teachers, and parents.

References

1. National Curriculum Framework for School Education. 2023. National Steering Committee for National Curriculum Frameworks. Available at: https://dsel.education.gov.in/sites/default/files/NCF2023.pdf
2. https://timesofindia.indiatimes.com/readersblog/ray-of-thought/new-education-policy-advantages-disadvantages-32468/
3. https://economictimes.indiatimes.com/news/how-to/national-education-policy-what-does-nep-truly-mean-for-students-in-india / articleshow /101402955.cms? from=mdr

Dr. Jai Parkash

H.No.: 2038

Sector 23, Sonipat (Haryana)

77

Plastic Money

Ms Arti rani

Abstract:

Plastic money, made out of plastic, is a new way of paying for goods and services. Plastic money is an alternative way of cash or standard money. In present era, it is impossible to imagine modern bank transactions, commercial transactions and other payments without using the plastic cards. Plastic money is much more convenient to carry around as you do not have to carry a huge amount of money with you. Plastic currency is now gradually becoming a necessity across the globe as more and more developed countries are opting for plastic compared to paper as there are several inherent advantages. The Government also move forward for a "Digital India" and its focus on growing electronic payments is significant drivers of growth in replacing physical payments with technology backed solutions. India is at the stage of an amazing shift towards electronic money from traditional cash. Indian banks are offering various types of plastic money. The present study enlightens the concept of plastic money, the recent trends of plastic money, the benefits of plastic money and major issues involved with plastic money This paper is based on secondary source of data.

Keywords: Credit Card; Debit Card; Plastic Money; ATM; master card, Co-branded cards.

Introduction: Money is regarded as medium of exchange and tool payment. Initially barter system was used as mode of payment. Over the years, money has changed its form from coins to paper cash and today it is available in formless form as electronic money or plastic card. Plastic money, as the name suggests the money made out of plastic, an easy way to make payment in exchange of goods and services to reduce the usage of cash. Plastic notes are similar to paper but the only difference is that they are made of plastic and are more secured. The concept plastic money came into 1900's and the first plastic card was used in USA. The idea behind using plastic money was to make payment system cashless. Plastic money includes ATM cards, credit cards, debit cards etc. The Plastic Money in the form of cards has been actively introduced by banks in India in 1990's. But, it was not very popular among Indian consumers at the time of its introduction. The change in demographic features of consumers in terms of their income, marital status, education level etc., and upgradation of technology and its awareness has brought the relevant changes. These changing preferences have also modified their outlook and decision regarding the acceptance and non - acceptance of particular product and services in the market. Thus, the Plastic Cards are gaining popularity among bankers as well as customers and getting accepted in the market place. It can be imagined that the Plastic Cards market is growing at a large pace in India yet, it has long way to go if compared to the usage trends of other countries. Hence, it has become important that the payment system in India has to be modernized enough to be at par with the systems prevalent in other countries, since our domestic financial markets are increasingly getting integrated with markets abroad.

Research objectives:

1. To know the importance of plastic money in the daily life of consumers.
2. To study the awareness and use of plastic money.
3. To study reasons for preference of plastic money over hard cash.
4. To study the benefit of debit card and credit card.

Research methodology:

This paper is of analytical and descriptive nature. For this study data and information has been collected from secondary sources.

Review of literature:

Chandna Shilpa (2018), Indian banking is on progression. The number of Debit cards issued raised from 227.84 million in 2011 to 71.7 million in 2017. The number of credit cards increased from 18.04 million in 2011 to 29.8 million in 2017.

Neelavati and Chaveli, (2017), conducted a study to find out the awareness and usages f plastic money. They found rising trend in the usages of plastic money. The reason for the preference of plastic money to conventional cash transaction are convenience and credit offer. The government should ensure safe payment gateways and high security programmes to encourage people for the use of plastic money.

Subhani in 2011 conducted a study on 'Plastic money/ credit

cards charisma for Now and Then' The study was based to find out the charisma of plastic money, its usability and affordability and its impact on its preference to use. The research found that the preference to use of plastic money / credit money has its pros and cons with its usability and affordability. According to the consumer behaviour, plastic money is a form of conditioning and acts as a stimulus which qualifies a consumer to spend. The study shows that the preference to go for plastic money has a positive association with the easy use of plastic money because the precept of credit card usability is linked with a psychological phenomenon that people are likely to spend less with credit card and more with the same amount of cash on hand in the same budget and this percept also linked with the consumer self-convenience, i.e., convenience and easy use which delves into spending

Loewenstein and Hafalir in 2012 conducted a study on "The Impact of credit card on spending'". The study focused on two types of customers, revolvers (who carry debt), and measured the impact of payment with credit card as compare with cash by an insurance company employee spending on lunch in a cafeteria. It was found that there was change in the diner's payment medium from cash to a credit card when an incentive to pay with a card was given. It was then found out that credit cards do not increase spending. However, the use of credit cards has a differential impact on spending the revolvers and convenience users. Revolvers spend less when induced to spend with a credit card, whereas convenience users display the opposite pattern.

Types of plastic money:

Cash cards: A card that will allow you to withdraw money directly from your bank account via an ATM. but it will not allow the holder to purchase anything directly with it. ATM card is used by embedding the card into an automatic teller machine and enter a PIN for security. The framework checks the account for satisfactory fund before allowing the transaction.

Debit cards: Debit card may be magnetically encoded plastic cards issued by banks which has supplanted cash and cheques. It grants the clients to pay for products and services without carrying cash with them. It will directly debit money from your bank account and can be directly used to purchase goods and services. The Debit cards gained popularity bymid-1990. In a few cases, debit card is a multipurpose which can indeed be utilized as ATM for pulling back cash and to check the account equalization. It is provided for zero cost with the saving or current account. Debit card is one of the most excellent online- payment apparatus through which the sum purchased is instantly subtracted from clients account and credited to merchant's bank account given in the event that sum is accessible in clients account.

Credit cards: The term credit card, by and large alludes to a plastic card issued to a card holder, with a credit constrain, that can be utilized to buy product and services on credit or get cash propels. It relieves the consumer from the botheration of cash and ensures safety. It is issued by banks holding the symbol of one of bank card affiliation Like visa, MasterCard, suppers club, etc. legitimate confirmation of accountholder. The merchant is paid by credit card company and the user has to pay to credit card company via his bank account after a fix time period say 30 days or 40 days one time or in instalments. SBI, PNB, YES bank, HDFC, ICICI, and many other banks offer credit cards to their customers. SBI is offering card with zero annual fees. credit cards moreover give overdraft facility and client can buy over and over the sum accessible in his account and in this way respected as true transactional device.

Gift cards: No credit or instalment facility on these cards. And as its name suggests these cards are given for gift purpose. These cards also called gift cards.

Store cards: These are similar in concept to credit card model, in that idea is to purchase something in store and be billed fir it at the end of the month. These cards can be charged at very high interest rate and can be limited in places they can be used.

Global card: It is also like a credit card and is used in abroad for shopping purpose. It provides the facility of not cash or foreign currency.

Affinity card: These are often called charity credit cards. This card is linked to any NPO. A certain percentage is transferred to the NPO on the usages of the card.

Co-branded cards: Co- branded credit cards are the product of a mutual partnership between a particular merchant and a credit card issuer. The credit card company ties up with various brands. IF the holder buys from a linked brand they earn reward points, the holder gets discount to shop more the

linked brands.

Advantages:

On the basis of above literature, it was found that plastic money is gaining popularity due to the various merits coming along with it.

1. Plastic money is much safer than paper money. There is no fear of losing cash or being stolen.
2. Plastic money is very easy to carry as it is very light in weight.
3. Plastic money is portable. It can be easily held while travelling.
4. Plastic money is very easy to use. Every transaction can be done easily by mere swiping it in the machine.
5. Plastic money ensures quick payment.
6. Plastic money reduces corruption because payments are made electronically.

Disadvantages:

1. Plastic money is more prone to cyber- crime.
2. Plastic money is not 100 percent safe. Especially when doing online shopping, we are exchanging the details related to our cards over the internet which is not a safe place.
3. It involves high transaction costs, the company charges annual fees for the cards and each transaction involves some charges.
4. Poor banking infrastructure and machinery can also be an issue with the plastic money.
5. These cards too can get damaged.

Conclusion: The modern day, people like to make payment through debit or credit cards rather than cash. It increased the use of plastic money. The plastic money is on rising trend, secured payment gateways introduced by government and the offers made by the card issuing companies have encouraged people to use plastic money. More secure payment gateways can further increase the usages of plastic money. The day will come when people start keeping bunch of cards in their pockets instead of currency. At last it is concluded that plastic money has a bright future in coming years because of the increasing trends of e - commerce.

Reference:

1. P. Rooplata, Dr. Sathya R. (2016), <A progressive Transition: Plastic money, Volume: 5, issue: 2, February 2016, ISSN- 2250-1991.
2. Mukaria Bhawna (2018), "PLASTIC MONEY: PROSPECTIVES AND CHALLENGES" volume 5, issue 2, ISSN: 2454- 1907.
3. www. Ugcjournal.com
4. manivannan, P. (2013). Plastic money a way for cash less payment system. Global Research Analysis, 2(!).
5. Sharma, A. (2012). Plastic cards frauds and countermeasures: Towards a safer payment mechanism. International journal of research in commerce, It & Management, 2(4)
6. Jaishu Anthony (2018), "A study on the Impact of plastic money on consumer spending patterns, Global journal, 18(3) (1.0)
7. Neelavathi k. and chavali Ramaya (2017), "A study on the impact of usage of plastic money in India, IOSR Journals, vol.6, www. Iosrjournal.org
8. http://www.sayingtruth.com/plastic -money

Arti Rani D/0 Sh.Ramesh wadhwa

House no 58/12, Holly Mohalla,

Near Fashion plaza, Allawadi chowk,

Gohana, Sonipat,

pin code-131301

Contact-7015570235

78

संत दादूदयाल की लोक सांस्कृतिक चेतना

डॉ0 अनिल कुमार

सारांश

सामाजिक शब्द समाज शब्द में 'इक' प्रत्यय लगने से बना है जिसका अर्थ है समाज का, समाज के लिए, समाज द्वारा, समाज से संबंध रखने वाला या समाज का सोशल अथवा समाज में क्या व्यवस्था रही है या क्या व्यवस्था है?सामाजिकता कहलाती है। इसी प्रकार लोक सांस्कृतिक चेतना से तात्पर्य लोक सांस्कृतिक जागरूकता से है।

संत दादू दयाल का भारतीय समाज तथा सन्त साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान है। सारे देश में लोक सांस्कृतिक चेतना का बल प्रदान करने वाले सन्तों में दादू दयाल की विशिष्ट भूमिका रही है। मध्यकाल में भारत में अनेक समस्याएं अपनी जड़ जमा चुकी थी। धार्मिक रूढियाँ, अंधविश्वास, ऊँच–नीच की भावना, वर्ण–व्यवस्था, हिन्दू–मुस्लिम झगड़े, अपनी चरम सीमा पर थे। ऐसे समय में दादू दयाल का जन्म हुआ।

भारतीय सन्तों की यह अति विनम्रता ही रही है कि वे अपने बारे में कुछ जानकारी देने का प्रयत्न नहीं करते थे। प्रायः सभी सन्तों के जीवन के बारे में सभी एकमत नहीं है उनके जन्म, जन्म स्थान, माता–पिता, वैवाहिक जीवन आदि के बारे में स्पष्ट रूप से कम ही लिखा है। उनकी वाणियों में ऐसी जानकारी आ भी जाती है तो प्रसंगवश ही, अनायास ही सायास नहीं।

संत दादूदयाल के जीवन परिचय को पाने के लिए हमें उनके शिष्यों एवं ग्रंथों, लोक प्रचलित मान्यताओं पर निर्भर रहना पड़ता है। अन्तः साक्ष्य और बहि साक्ष्य से प्राप्त प्रमाणों के आधार पर कहा जा सकता है कि दादू दयाल का जन्म फाल्गुन सुदी अष्टमी दिन बृहस्पतिवार संवत् 1601 अर्थात् 1544 ई. में हुआ था। दादू वाणी और सन्त साहित्य में सभी शोधक इसी तिथि की पुष्टि करते है।

सन्त दादू दयाल के जन्म स्थान के बारे में तीन मत है। पंडित सुधाकर द्विवेदी दादू दयाल का जन्म स्थान जौनपुर मानते है।[1] डॉ. मोती लाल मेनारिया सांभर बताते है।[2] जबकि अधिकांश शोधक दादू का जन्म स्थान अहमदाबाद स्वीकारते है। दादू के शिष्य जनगोपाल ने भी दादू का जन्म स्थान अहमदाबाद ही स्वीकार किया है।

पश्छिम दिशा अहमदाबाद
ती ठा साध, परगटै दादू।[3]

समाज, राष्ट्र एवं साहित्य में उनकी छवि क्रमशः समाज सुधारक, धार्मिक एवं रहस्यवादी कवि के रूप में प्रसिद्ध है। मध्यकालीन निर्गुण सन्त साधकों में दादू प्रतिभा सम्पन्न कवि और प्रभावशाली व्यक्तित्व वाले सन्त पुरुष थे। उनको संत साहित्य का देदीप्यमान नक्षत्र कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं है। वे अपने समय के महान् सन्त तथा निराभिमानी साधक थे।

संत दादू दयाल के समय में धर्म अपने संकुचित रूप में था । सर्वत्र आडम्बर अंधविश्वास धर्म के अंग बनते जा रहे थे। सामाजिक जीवन बाह्य आडम्बरों द्वारा अधोगति की तरफ जा रहा था तत्कालीन सन्त कवियों ने इसके उत्थान के लिए आवाज उठाई। उन्होंने कहा कि मनुष्य का ह्रदय शुद्ध होने पर ही वह भव सागर में पार उतर सकता है। यद्यपि दादू दयाल कबीर की परम्परा में आते है तथापि उनकी वाणी में कबीर जितनी आक्रामकता नहीं दिखाई देती। शायद इनका कारण यह था कि कबीर द्वारा प्रवर्तित निर्गुणवाद समाज में काफी लोकप्रिय हो गया था और उसने समाज में विरोध का भाव कम कर दिया था। सन्तों का काव्य लौकिक भावभूमि पर प्रसारित और पल्लवित हुआ है। उनके काव्य का ताना बाना तो अध्यात्म का है, यह प्रभाव लोकरंगी है। डिजाइन समाज की है पर उस पर अध्यात्म की रेखाएं है। सन्तों की वाणी में लोकत्तत्व समाया हुआ है और उनके काव्य में लोक सांस्कृतिक चेतना का पूर्ण विकास दिखाई पड़ता है। दादू दयाल घुम्मकड प्रवृति के थे। अतः उन्होंने लोक जीवन को बहुत देखा और परखा है। व्यावहारिक ज्ञान के प्रति उनकी दृष्टि सचेत रही है। उन्होंने मानव के उन रूपों और पक्षों को चित्रित किया जो अपने सम्पूर्ण जीवन की अभिव्यक्ति लोक मानस के स्तर पर करता है। कर्मकाण्ड को नकारते हुए दादू दयाल जी का कथन है, श्जब लोक का वास्तविक ज्ञान हो, तब इनका क्या महत्व दादू सहजानुभूति को ही भक्ति में आवश्यक मानते है। निर्गुण उपन्यास में इनका विश्वास रहा है।

भाई रे ऐसा पन्थ हमारा
द्वै पखरहित पंथ गह पूरा अवरन एक अधारा
बद–विवाद काहु सो नाहि, मैं हूँ जग थै न्यारा।।[4]

दादू का मत है कि परमात्मा एक है और सभी जीव उसके अंश है। परमपिता परमेश्वर स्वयं अमर है अतः उसके अंश जीव भी अमर है। वह परम चेतन शक्ति है। अतः उसके अंश समस्त जीव चौतन्य है। दादू का कथन है

दादू पक्षी जलधर कीट पतंग राम
दादू परमेश्वर के पेट का सब जीव अंश अवतार।।[5]

जैसा परमात्मा स्वयं अमर अजर है इसलिए उसका नाम भी अमर है और जो उसका नाम लेता है वह समर तत्व को प्राप्त करता है। दादू ने माया के बारे में अपनी कलम चलाई है। माया को दादू ने मिथ्या स्वीकारा है। यह माया कई रूप धारण करके उगती है। यह अस्थिर ही रहती है बल्कि छाया और धूप में यह प्रत्येक पल स्थिर नहीं रहती। कवि की वाणी से–

उपजे विनसे गुण घरै, यहु माया का रूप
दादू देखत घिर नाहीं, खिण छाहि खिण धूप।।[6]

दादू इस जगत की सभी वस्तुओं को माया जन्म मानते है तथा इस संसार को मिथ्या मानते है जो वस्तु अदृश्यमान है अर्थात् जिसका

अस्तित्व नहीं है वह उपज सकती है और जिसका अस्तित्व है वह कदापि नहीं उपज सकती।

जेनहिं सौ ऊपजे सौ ऊपजै नाहिं
अलख आदि अनादि है उपजे माया माहिं।[7]

दादू जी ने बाह्याडम्बरों का खण्डन करते हुए कहा है–

दादू माया कारण मुंड मुडांया, यह तो जोगन होई
पारब्रहम, सूं परचा नाहीं कपटन सीझै कोई।।
जोगी जंगम सेवड़े, बौध सन्यासी सेख।
षट् दर्शन दादू राम बिन सबै कपट के भेष।।[8]

दादू जी के दाम्पत्य भाव पर कथीट की छाया स्पष्टतः परिलक्षित होती है–

जे था सन्त कबीर का सोई बर बरिहूँ।
मनसा, वाचा, कर्मना, मै और न करिहूँ।[9]

दादू दयाल जी ने सुहागिनी के लक्षण और कर्त्तव्य भी स्पष्ट किये है सुन्दरी को अंग में वधू को चेतावनी देते हुए कहते है–

दादू ऊँच नीच कुल सुन्दरी सेवा सारी होइ
सोइ सुहागिनि कीजिये, रूप न पीजे धोइ।।
नदिया नीर उलंधि करि दरिया पैली पार
दादू सुन्दरि सो भली जाई मिले भर्तार।।[10]

परमात्मा से दादू के अनेक रिश्ते है। माता–पिता, पति, स्वामी, भाई, प्रिय के अनेकानेक रूप। विवाह, गौना, मंगलगीत, विदाई, पिया मिलन, लज्जाभाव सभी लोक जीवन से जुड़े तथ्य है।

माता नारी पुरिख की. पुरिख नारी का पूत
दादू ग्यान बिचारि करि छाडि गए अवधूत।।[11]

इस प्रकार लौकिक भावभूमि पर आध्यात्मिक आलम्बन की विविध रूपों में दादू ने कल्पना की है। लोकमानस अपने जीवन के प्रत्यक्ष आधार पर ही सम्बन्धों की कल्पना करने में समर्थ होता है।

दादू का ब्रह्म सर्वव्यापक है। जिस प्रकार तिल से तेल, दही में घी, काठ में आग, फल में बीज स्थित है। उसी प्रकार जगत में ब्रह्म सर्व व्याप्त है। लेकिन माया का पर्दा आते ही यह भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। दादू कहते है कि कांच के महल में बन्द कुत्ता अपना प्रतिबिम्ब देखकर भौंकता है चिड़िया चाँच मारती है–

दादू मंदिर कांच का मर्कट सुनहां जाइ।
दादू एक अनेक है, आप आपको खाइ।।[12]

संसार की असारता के लिए दादू ने लोक जीवन से प्रतीक चुने है। दीपक और पतंग के उपमान द्वारा धुन और काठ द्वारा, हिरण और नाद द्वारा अनेक भाव स्पष्ट किये है। देखिए–

भंवरा लुबधी बास का, मोहा नाद कुरंग
दादू का मन राम सूँ, दीपक ज्योति पतंग।।
ज्यों धुन लागे काठ कौ, लोहे लागे काट
काम किया घट जाजरा, दादू बारह बाट।।[13]

दादू जी ने लोकजीवन में प्रचलित विविध व्यवसायों और जीविका के माध्यम से आध्यात्मिक सन्दर्भों को स्पष्ट किया है। दर्जी, धोबी, मनिहार, कुम्हार, हलवाई, पनिहारी इत्यादि के कार्यों के उल्लेख द्वारा अलौकिक अर्थों को स्पष्ट किया है निम्न पंक्तियों में अनाज पीसने वाली का उल्लेख है–

मन–मन मैदा पीसि करि, छाणि छाणि ल्याँ लाई
याँ मन दादू जीव का कबहूँ साल न जाई।।[14]

इसी प्रकार घरों में ग्रामीण महिलाएं अन्न को कूटके, पीसने, पछोरने, दलने की क्रियाएं करती है। सूप लेकर थोथे को उड़ा देती है। गन्ने के कोल्हू में गन्ने का रस आध्यात्मिक संदर्भों में अमृत रस का प्रतीक है। कृषि के संदर्भ में खेत, खेती, पशुपालन, वृक्ष इत्यदि का उल्लेख, दादू जी ने स्थान–स्थान पर किया है। एक पके फल से बीज गिरने पर कैसे वृक्ष का जन्म होता है। दादू जी ने लिखा है–

फल, पाका बेली तजी, छिटकाया मुख मांहि।
साई अपणा करि लिया, सो फिर ऊगे नाँहि।।[15]

पेड़–पौधों को भी दादू ने प्रतीक रूप में आध्यात्मिकता से जोड़ा है।

साहिब का दर छोडि करि, सेवग कहीं न जाइ।
दादू बैठा भूल गहि डाली फिर बलाई।।
सब आया उस एक में डाल पान फल फूल।
दादू पीछे क्या रह्या, जब निज पकडया मूल।।[16]

विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों के वर्णन में भी दादू ने प्रतीक रूप में चर्चा की है। 'साध को अंग' में दादू चन्दन का उल्लेख इस प्रकार करते है।

दादू चन्दन कदि कहया, अपना प्रेम प्रकास
दह दिसि परगट हुयी रहया, सीतल गन्ध सुवास।।[17]

संत दादू ने चमत्कार और करामात इत्यादि कार्यों को भी समाज के लिए कलंक माना है। इस प्रकार के सभी पाखण्डों को, गर्व को, अज्ञानता और अभिमान को छोड़ना ही अपने जीवन का ध्येय समझते थे।

झूठा गर्व गुमान तजि, तजि आया अभिमान।
दादू दीन गरीब हवै माया पद निर्वाणी।।[18]

मनुष्य अपनी विषय वासना रूपी रस्सी के द्वारा नारी को बांधना चाहता है परंतु नारी अपने हाथ में कटारी लेकर पुरूष को मारकर भक्षण करना चाहती है।

पुरूष पासी हाथि करि, कामणि के गति बारि
कामणी कटारि कर गई मारि पुरुष को खाई।[19]

नारी और पुरूष दोनों की शत्रुता है। दोनों एक दूसरे को मारना चाहते है।

नारी बैरिण पुरूष की, पुरुषा बैरी नारी।
अंतकाल दौन्यु मुये दादू देखी विचारि।।[20]

नारी और पुरुष दोनों झगडकर मर जाते है उनके हाथ कुछ नहीं लगता है। नारी और पुरूष अविद्या के कारण माया के दो रूप है। दोनो ही कीड़ा में व्यस्त है। ये दोनों अभिन्न है। नारी कभी माता का रूप धारण करती है तो पुरूष कभी पुत्र रूप में भी आता है। इसका मूल उद्देश्य यह है कि माता ही पुरूष की नारी होती है और

पुरुष ही नारी का पुत्र होता है।
माता नारी पुरुष की, पुरूष नारी का पूत।
दादू ज्ञान विचारि करि छाड़ि गए अवधूत।।[21]

दादू जी भक्ति के मार्ग में वर्ग–भावना अथवा जातीय उच्चता एवं नीचता पर विश्वास नहीं करते। ऊँच और नीच, हिन्दु और मुस्लिम सभी को भक्ति का पूर्ण अधिकार है। वह तो इस भेद भाव को समाप्त करके मानव मात्र की एकता चाहते है। दार्शनिक वाद–विवाद और मतभेद का भी उन्होंने खण्डन किया है।

दादू न हम हिन्दु होहिंगे, न हम मुसलमान।
षट् दर्शन में हम नहीं, हमराते रहिमान।।[22]

दादू जी ने जीवन–मरण के आवागमन को स्पष्ट करने के लिए ऋतुओं का कालचक्र दिखलाया है। दादू ने इसे कुछ अलग ढंग से प्रस्तुत किया है। आषाढ़ में बादल गरजते है वसुधा तपती है और श्रावण में रिमझिम वर्षा होती है। यहाँ पावस का आलम्बन रूप में चित्र खींचा है–

वसुधा सब फूलै फलै पिरथी अन्नत अपार।
गगन गरजि जल–थल भरे, दादू जे–जे कार।।
हरे पटंबर पहिरि करि, धरती करै सिंगार
पुहुप प्रेम बरिस सदा, हरिजन खेले फाग।।
ऐसा कॉलिंग देखिये, दादू मोटे भाग।
तेज पुंज की सुन्दरी तेज पुंज का कंत।।
तेज पुंज की सेज परि, दादू बन्या वसन्त।[23]

दादू जी ने सत्संगति के बारे में भी समाज को बताया और कहा है कि इस प्रवाह जगत का उद्धार सत्संग दवारा ही संभव है। सत्संग दवारा ही अच्छे विचार उत्पन्न होते है। आत्म–विचार और आत्म चिंतन व मनन सत्संग से ही संभव है।

संसार विचार जात है, वहिय लहरि तरंग।
मेरे बैठा ऊबरे, सन्त साधु के संग।।[24]

निष्कर्षः

सत्संग से ही ज्ञान दिन–प्रतिदिन बढ़ता रहता है तथा साधक साधना पर चलता रहता है तथा साधक साधना कर रहने से मन की चंचलता समाप्त हो जाती है। मन विषय विकारों से हटकर सद्विचारों को प्राप्त करता है। अतः उपरोक्त तथ्यों के आधार पर हम कह सकते है कि दादू दयाल जी वास्तव में लोक सांस्कृतिक चेतना के संवाह है। उन्होंने लौकिक प्रतीकों को चुनकर अपने काव्य में आध्यात्मिक संकेत दिये है। दादू जी का काव्य उस विशा वाटिका के समान है जिसमें भाँति–भाँति के मनोहर सुन्दर पुष्प खिले है। जिनकी रूप और गंध से वनस्थली सुवासिक है। निः संदेह सन्त दादूदयाल की लोक सांस्कृतिक चेतना यथार्थपरक थी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दादु लयाल के शब्द भूमिका पृ. 1
2. राजस्थान का पिंगल साहित्य, पृ. 11
3. दादू जन्म लीला परची, पृ. 2
4. डॉ. बलदेव वंशी, संत कवि दादूदयाल, पृ. 20
5. दादुदयाल ग्रन्थावली, पृ. 40
6. वही, पृ. 101
7. वही, पृ. 625
8. दादू चाणी मंगल दास, पृ. 113
9. वही, पृ. 103
10. वही, पृ. 112
11. डॉ. बलदेव वंशी, संत कवि दादूदयाल, पृ. 20
12. वही, पृ. 50
13. दादूदयाल ग्रन्थावाली, पृ. 60–
14. वही, पृ. 18
15. डॉ बलदेव वंशी, संत कवि दादू दयाल, पृ. 63
16. वही, पृ. 33
17. वही, पृ. 53
18. लेख युग प्रर्वतक महात्मा दादू श्री. राम देव चौखानी, दादू चतुः शताब्दी निबन्धमाला से उद्धृत, पृ. 22
19. दादूदयाल ग्रन्थावली, पृ. 156
20. वही, पृ. 156
21. वही, पृ. 141
22. दादू वाणी, मंगलदास, मधि को अंग, पृ. 317
23. डॉ बलदेव वंशी, संत कवि दादू दयाल, पृ. 34
24. दादूदयाल ग्रन्थावली, पृ. 179

डॉ0 अनिल कुमार
गांव व डाकखाना जुड्डी
तहसील कोसली, जिला रोहतक – 123302
(हरियाणा)

'मुर्दहिया' में चित्रित दलित स्त्री और सामाजिक परिवेश

बूटा सिंह

सारांश

स्त्री और पुरुष सृष्टि के दो आधार स्तम्भ हैं। जिन पर सभ्यता और संस्कृति का पूरा भवन खड़ा होता है। सभ्यता और संस्कृति में पुरुष के समान ही भूमिका निभाने वाली स्त्री को अति प्राचीन काल से ही पराश्रित बनाकर रखा गया है। भारतीय संस्कृति का इससे क्रूर सत्य नहीं हो सकता। भारतीय संस्कृति में स्त्री का स्वतन्त्र अस्तित्व समझा ही नहीं गया।

डॉ0 तुलसीराम ने अपनी आत्मकथा 'मुर्दहिया' में स्त्री जीवन का मार्मिक चित्रण किया है। इस आत्मकथा में जहाँ एक और उत्पीड़ित स्त्री जीवन के चिन्न मिलते हैं वहीं दूसरी और विद्रोही स्त्री के भी दर्शन होते हैं।

'मुर्दहिया' स्त्रियों के पक्ष समझने का प्रयास करती है। ग्रामीण संसार की महिलाएं सुबह से रात तक जी तोड़ मेहनत करती हैं इनके जीने का एक हिस्सा घर के लिए रसोई पकाते पकाते बीत जाता है। चाहे घर के काम हो, या पशुओं के या खेती–बाड़ी के, जहाँ शारीरिक श्रम की सबसे अधिक जरूरत होती है, वहाँ इन्हें खपना होता है। दूसरी तरफ शिक्षित होकर सेवाओं में आगमन ज्यों–ज्यों बढ़ा है इन पर दोहरा दबाव आया है। 'मुर्दहिया' की अनेक स्त्रियां हमारे सामने आती हैं, जो अपने–अपने व्यवहारों से हमारा निर्देशन करती हैं और जीवन की सच्चाई से अवगत कराती हैं। दलित साहित्य संघर्ष से ऊपजा साहित्य है। दलित साहित्य के केन्द्र में मानव है जो शोषित है, दमित है, पीड़ित है। दलित आत्मकथाओं में व्यक्त हुआ क्रोध, साहित्य का सहज भाव है। मुर्दहिया में चित्रित दलित स्त्री की बात करें तो सबसे पहले लेखक की दादी का जिक्र आता है। लेखक ने अपनी दादी का जिक्र एक नायिका की तरह किया है। जो प्यार ममता और समझदारी की मूर्ति है।

'मेरी दादी का मुझसे अटूट लगाव दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था। मैं अब भारी भरकम संयुक्त परिवार का सबसे छोटा सदस्य था। दादी रात को भी मुझे अपने पास सुलाती और हमेशा मेरे मुँह पर हाथ फेरते हुए चमारिया माई की विनती करती रहती। मैं जैसे–जैसे बड़ा होता गया, वैसे–वैसे मेरा अपशकुन और अपमान भी बृहद होता गया, विशेष रूप से परिवार के अन्दर। बाद में थोड़ा समझदार होने पर दादी ने बताया कि चेचक निकलने से पहले घर में सबसे छोटा होने के कारण परिवार के सभी सदस्यों में मुझे गोद में लेकर खेलने की होड़ लगी रहती थी, किन्तु चेचक के बाद सब कुछ बदल गया।"[1]

'मुर्दहिया' स्त्रियों के पक्ष समझने का प्रयास करती है। ग्रामीण संसार की महिलाएँ सुबह से रात तक जी तोड़ मेहनत करती हैं। लेखक की दादी अच्छी वैद्य भी है। वह अच्छी कथा वाचिका हैं, व भविष्य के बारे में सोचने वाली हैं "मुर्दहिया के पलाश के टेसू जब मुरझाकर जमीन पर गिरने लगते तो उनकी जगह सेम की चिपटी फलियों की जैसी फ्लाश की भी छह–सात इंच लम्बी–चिपटी फलियां जिन्हें दादी टेसुल कहती थी, निकलने लगती। कुछ दिन बात ये टेसुल सूखकर गिर जाती थी। मेरी दादी इन टेसुलों को मुझसे घर पर लाने के लिए कहती। वह टेसुलों को फाड़कर उसी तांबे के बड़े सिक्कों डब्बल की तरह दिखाई देने वाले बीजों को निकालकर एक बड़ी सींग में रखती। जब किसी बच्चे के पेट में केंचुआ या अन्य कीड़े पैदा हो जाते तो दादी सींग से पलाश के कुछ बीज निकालकर देती और सिल लोढ़े थोड़े पानी के साथ उसका रख यानी घोल बनाकर निकलाने को कहती जिससे सभी कीड़े मरकर बाहर निकल आते थे।"[2]

इसके अलावा दादी एक ऐसी जुझारू दलित औरत के रूप में सामने आती है, जो अपने अधिकारों के लिए लड़ मरती है। तुलसीराम जी के बीमार पड़ने पर दादी तुलसीराम को ठीक करने के लिए जितने जतन हो सकते हैं, वह सब करती है। बालक तुलसीराम को भी दादी से इतना ही लगाव है। दादी के बीमार पड़ने पर उसके मरने की आशंका से बालक इतना डर जाता है कि वह कहने लगता है–

"हे चमरियां माई, मैं भले ही मर जाऊं पर दादी न मरे"[3]

तुलसीदाम के ज्ञान विस्तृत करने में दलित समाज के समाजशास्त्रीय अध्ययन की जिज्ञासा में दादी मुसिडिया का गहरा योगदान रहा। दादी ने बालक तुलसीराम को दलितों द्वारा मरे जानवर का माँस खाना और उसके संग्रहण के तरीके बताए। दादी के पेट में अनेक कहानियाँ छिपी हैं। जब तुलसीदास जी को चेचक निकली तो दादी "उधर मेरी बुढ़िया दादी जय चमारिया माई, जय चमारिया माई की बार–बार रट लगाते हुए अंगियारी करती रहती थी। दादी मेरी माँ से ज्यादा रोती थी।"[4]

'मुर्दहिया में दादी का हितना विशद वर्णन है उसके मुकाबले लेखक ने अपनी माँ का चित्रण थोड़ा कम किया है। लेखक की माँ अत्यन्त मेहनती, घर के काम में जुटे रहने वाली दलित महिला है। मुर्दहिया में लेखक डॉ0 तुलसीदास के पैदा हरेने पर माँ–बाप द्वारा एक कुशल मछवारा बनने के लिए पैदा होत समय चारपाई के नीचे जिंदा मछली डालने पर कहा "एक दलित खेत मजदूर और मजदूरनी की आकांक्षा इससे ज्यादा और क्या हो सकती थी। "मेरी माँ ने मुझे बताया कि जिस चारपाई पर मैं पैदा हुआ, उसके नीचे तुरन्त पिता जी ने गांव स्थित पोखरी से एक जिन्दा मछली पकड़कर डाल दिया। यह एक प्रकार पर टोटका था, जिसके अनुसार उनका विश्वास था कि मुझे भी बड़ा होने पर 'मछरमखा' के रूप में पौराणिक ख्याति मिल सकेगी। सम्भवतः मेरे मां–बाप की सर्वोच्य आकांक्षाओं की पहुँच मुझे एक सिद्धहस्त 'मछरमखा' के रूप में देखने तक ही सिमट कर रह गई थी।"[5]

'मुर्दहिया' में लेखक ने बताया है कि लेखक के पैदा होने से पहले

उसके कई भाई बहन थोड़े बड़े होकर मर गए थे। अतः लेखक के पैदा होने पर अनेक अन्धविश्वास भरे कर्मकाण्ड उसकी माँ व दादी द्वारा किये गए थे। गाँव में चेचक की बीमारी फैलने पर लेखक की एक आँख खराब होने पर और घर के कुछ सदस्यों का लेखक के प्रति क्रुर व्यवहार होने पर माँ के बहुत आहत को जाने की बात लेखक ने लिखी है।

"पिता जी के बीच वाले भाई जो वीयता क्रम में तीसरे नम्बर पर थे, अत्यन्त क्रोधी एवम् क्रूर पुरुष थ। अकारण कोई भी व्यक्ति उनकी भद्दी–भद्दी गालियों का शिकार बन जाता। उनके दो बेटे एकदम उन्हीं जैसे क्रूर थे। वे सभी मुझे अक्सर 'कनवा–कनवा' कहकर पुकारते थे। घर में कई अन्य भी कभी–कभी ऐसा ही कहते थे, इसके अलावा यह कि कभी भी कोई वैसा कहने से मना नहीं कर पाता। यहाँ तक कि मेरी मां भी सिसकियां भरते हुए चुप रह जाया करती थी, जिसका कारण था उन व्यक्तियों का क्रूर व्यवहार"[6] लेखक की माँ अन्य दलित स्त्रियों की तरह अपने पति के काम में मदद करके अपने घर की दरिद्रता भगाने की पूरी कोशिश करती है।

"दीवाली का त्यौहार आने पर मेरी मां परम्परा के अनुसार अनाज पछोरने वाले सूप को एक लकड़ी से भद–भद पीटते हुए रात की अन्तिम घड़ी में घर के एक–एक कोने में जाती और साथ में जोर–जोर से अर्द्ध–गायन शैली में 'सूप पीटो दरिद्दर खेदो' का जाप करती रहती।"[7]

पुरुष हमेशा से ही स्त्री के चरित्र को संशय के नजरिये से देखना रहता है। एक पति अपनी पत्नी का किसी अन्य पुरुष के साथ खुलकर बातें करना बिल्कुल बर्दाश्त नहीं कर सकता है। इसका यथार्थ चित्रण डॉ0 तुलसीराम ने अपनी आत्मकथा में किया है। वे पुरुष की शंकित मानसिकता को उजागर करते हुए लिखते हैं "इसी बीच हमारे घर में भी एक विचित्र स्थिति पैदा हो गई। मेरी माँ बस्ती के किसी भी व्यक्ति से बात करती, पिता जी तुरन्त उसके चरित्र पर उँगली उठाना शुरू कर देते थे। वे माँ को बहुत ही भड़ी–भड़ी गालियाँ देने लगते थे। उनकी गालियों से पता चला कि मेरे नाना का नाम सरजू था। वे हमेशा गाली में 'सरजुआ की बेटी' का इस्तेमाल करते थे। माँ के चरित्र की शिकायत वे उसी गुस्सैल नग्गर चाचा से भी करते। किन्तु नग्गर चाचा हमेशा पिता जी को बुरी तरह से डॉट देते थे और कहते थे कि उनका आरोप झूठा है।"[8] पुरुष वर्चस्ववादी समाज रचना में औरत घरेलू हिंसा का शिकार होती है। उसे शारीरिक अत्याचार, हिंसा और उत्पीड़न को सहन करना पड़ता है। उसकी आजादी पर पति का अधिकार होता है। पुरुष प्रधान व्यवस्था में स्त्री जीवन वेदना, संवेदना और संघर्ष को प्रस्तुत करते हैं। भारतीय पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था में स्त्री सबसे ज्यादा पीड़ित, शोषित और उपेक्षित रही है। दलित स्त्री की स्थिति तो और भी अधिक सोचनीय है। वह दोहरे अभिशाप को झेल रही है।

'मुर्दहिया' में दादी और माँ के अलावा कई और दलित स्त्रीया हैं जिनमें सुभगिया और किसुनी भौजी हैं जो लेखक से.. ..... पढ़वाती और लिखवाती है।

गाँव की एक लड़की बारात में दूल्हा बनकर आये नचनिया को साथ भाग जाती है। दूसरी लड़की वह है जिसकी शादी उस नचनिया के साथ होने वाली थी। पंचायत में यह फैसला होता है कि इस लड़की की शादी किसी और के साथ कर दी जाएगी। डॉ0 तुलसीराम ने समाज की स्त्री विरोधी मानसिकता के बारे में लिखा है "इस घटना के बाद मठिया की अन्य एक लड़की श्यामा, जो हमारे ही स्कूल सातवें दर्जे में पड़ती थी, कि शामत आ गई। लोग व उसके घर वाले कहते सिर खोलकर स्कूल जाती है, बेशवा हो गई है। अतः उसकी पढ़ाई छुड़ा दी गई।"[9] दलित औरतों में किसनी भोजी का वाकया भी बार–बार आता है ज बवह अकाल के समय लेखक से चिट्ठी लिखवाती है। लेखक इन दलित स्त्रियों की वर्णन शैली से कई बार इतना प्रभावित हो जाता है कि वह इनके दुख में डूबता उतरता है – "मैं तो स्वयं अपने दुःख में डूबता उतरता फिरता था, किन्तु गाँव की रोती हुई मशीनों जैसी महिलाओं से मैं अत्यन्त विचलित हो जाता था। अनेक बार उनके आंसुओं में मेरे आंसू भी दाखिल हो जाते थे। इन रोती मशीनों में एक थी किसुनी भौजी"[10]

गाँव की स्त्रियों में शिक्षा का काफी अभाव रहा है। परिणाम स्वरूप उनमें अंधविश्वास का प्रतिशत बहुत ज्यादा पाया जाता है। गाँव की स्त्रियाँ अज्ञान के कारण बहुत जल्दी अन्धविश्वासी मान्यताओं में फंस जाती हैं और भूत–प्रेत की धारणाओं से प्रभावित हो जाती हैं। इस आत्मकथा में 'दुलरिया' नामक रही है जो अंधविश्वास का शिकार बन गयी थी। वह तुलसीराम के घर की भाभी थी, जिसका विवाह गौकुल भैया के साथ हुआ था। उसके बारे में लेखक लिखते हैं – अंध विश्वासों की कड़ी में हमारे घर की एक भाभी दुलरिया, जो पहलवानी सिखाने वाले गोकुल भैया की पत्नी थी, एक तरह से मनोरोग से पीड़ित हो गई थी। उनका अक्सर पेट में दर्द करता और वह तुरन्त औझेती वाली भयूत माँगने लगती। इस समय पास के ही एक चतुरपुरा गाँव की औरत ओझैती करती थी। उसे लोग 'चमैनिया' के नाम से पुकारने लगे थे। लगभग हर रोज वह भयूत लाने को कहती।"[11]

ऐसे ही एक दलित महिला है सोमरिया। जो लेखक की निगाह में एक अनोखी औरत है।

समाजिक परिवेश की बात करें तो डॉ0 तुलसीराम ने अपनी आत्मकथा 'मुर्दहिया' में एक साथ दो पीड़ाओं की अभिव्यक्ति की है। इनमें से एक तो जातिगत भेदभाव जनित पीड़ा है जो उन्हें समाज में झेलनी पड़ी। वहीं दूसरी पीड़ा उनके एक आख के चले जाने के बाद झैलनी पड़ी। खास यह कि यह पीड़ा देने वालों में उनका अपना परिवार भी शामिल रहा जो उन्हें 'कनवा' कहकर सम्बोधित करता था। भारतीय ग्रामीण समाज में अन्धविश्वास इतना अधिक है कि बीमारियों का सम्बन्ध भूत–प्रेत और देवी–प्रक्रोप से जोड़ा जाता है और उसके इलाज के लिए झाड़–फूंक, गंडे–ताबीज, पूजा–पाठ का सहारा लिया जाता है। मुर्दहिया के प्रारम्भ में ही लेखक ने कहा है

"मूर्खता मेरी जन्मजात विरासत थी"।[12]

आत्मकथाकार ने ग्रामीण जीवन में दलित समाज के प्रति व्याप्त विकृत, घृणित और क्रूर व्यवहारों के छिलके उतारते हुए अपने द्वारा भोगे हुए जीवन की झाकियाँ प्रस्तुत की हैं। जिस पृष्ठभूमि में लेखक ने इस दुनिया को देखा–समझा और विचार किया वह कदम–कदम पर अपमानित करने वाली थी। उससे होकर ही भविष्य का पथ बनना था। इसके निर्माण के लिए लेखक उन सभी झाड़–झंखाड़ों और शूलों से अपने–आप को लहूलुहान करते–कराते अपने मिशन में सफल रहा। लेखक का बुद्ध सम्बन्धी ज्ञान आत्मकथा के बार–बार प्रस्तुत हुआ है जहाँ वे किसी गम्भीर विषय का सरलीकरण करते हुए उसे सामान्य ढंग से पेश करते हैं।

निष्कर्ष:

ग्रामीण समाज में परम्परागत पेशों के प्रति एक खास तरह का सम्मान अभिव्यक्त हुआ है और जातिगत पेशों को बनाए रखने के लिए उन पर धर्म का मुलम्मा चढ़ाया जाता रहा है। लेखक के दादा–परदादा ब्राह्मण जमींदार के ..... बंधुआ मजदूर थे। इसी विरासत को उनकी पिताजी ने ..... क्योंकि अन्य भाई अलग कार्यो में लगने से बंधुआ मजदूरी से मुक्त हो गए थे।

संदर्भ सूची

1. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 12
2. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 49
3. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 28
4. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 12
5. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 10
6. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 13
7. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 63
8. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 126
9. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 137
10. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 89
11. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 117
12. डॉ0 तुलसीराम, मुर्दहिया, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, 2018, पृ0 9

बूटा सिंह
शोधार्थी
गुरु काशी युनिवर्सिटी
तलबण्डी साबो,
डी0 एस0 पी0
तलवण्डी साबो
मोबाईल – 7719777976
(पंजाब)

80

POSITIVE YOUTH DEVELOPMENT

Poonam Devi

Abstract:

As an academic field of study, Positive Youth Development (PYD) has been emerging over the last two decades. Youth development in its broadest sense refers to the stages that all children go through to acquire the attitudes, competencies, values, and social skills they need to become successful adults. Youth development is a discipline in the field of youth work, founded on the belief that young people are best able to move through their developmental stages when they are supported across all sectors of the community—by individuals, family, schools, youth agencies, faith organizations, community governance, business, and more. PYD is about providing opportunities for youth to believe in themselves and their abilities to influence their lives and the world around them. It is an intentional, pro-social approach that engages youth within their communities, schools, organizations, peer groups, and families in a manner that is productive & constructive. It enhances young people's strengths, promotes positive outcomes by providing opportunities, fostering positive relationships, and furnishing the support needed to build on their leadership strengths. In the present study, we described the 5Cs of PYD i.e.

Competence, Confidence, Character, Connection, and Caring and the influence of these C's on the wellbeing of adolescents. These five developmental outcomes can only be achieved with significant support from the entire community—family, friends, schools, and other community institutions. Yet, this support is often missing from the lives of many young people, especially those whose environments are unhealthy, unsafe, or lacking opportunities. Research has consistently shown that good youth development will have a direct positive impact on a child's long-term health outcomes & will improve future opportunities, school attainment and even earning potential.

Key Words: Adolescents, Competence, Confidence, Character, Connection, Caring, Positive Youth Development

INTRODUCTION

As an academic field of study, Positive Youth Development (PYD) has been emerging over the last two decades. Youth development in its broadest sense refers to the stages that all children go through to acquire the attitudes, competencies, values, and social skills they need to become successful adults. There has been growing interest in positive youth development (PYD) as an approach to promoting the health and welfare of young people. This interest derives from the realization that there is more to understand regarding healthy development than there is from concerns about reducing risky behaviour or mental illness, both of which increase during adolescence and draw most of the attention of parents, policymakers, and the general public. PYD is about providing opportunities for youth to believe in themselves and their abilities to influence their lives and the world around them. It is an intentional, pro-social approach that engages youth within their communities, schools, organizations, peer groups, and families in a manner that is productive & constructive. It enhances young people's strengths, promotes positive outcomes by providing opportunities, fostering positive relationships, and furnishing the support needed to build on their leadership strengths.

Positive Youth Development (PYD) exists in dynamic environments that build upon the strengths of and recognize risk behaviors in adolescents. These environments include systems of support, such as peer or social networks, school, family, and community. The contexts are all a part of an ecological framework that PYD programs incorporate into their programming and that adolescents continually interact with.

Features of Positive Youth Development (PYD)

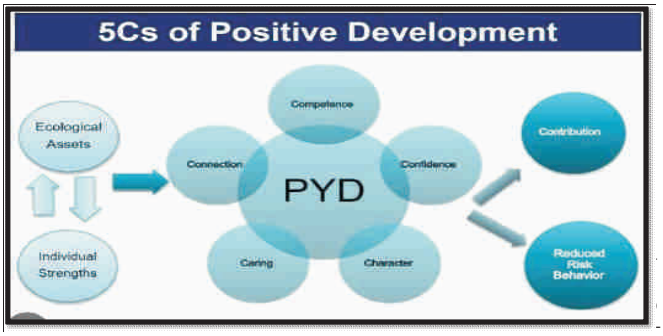

n,+and+Caring

1) Confidence: A sense of self-worth and mastery; having a belief in one's capacity to succeed.

2) Character: Taking responsibility; a sense of independence

and individuality; connection to principles and values.

3) Caring: A sense of sympathy and empathy for others, a commitment to social justice.

Thus, the 5'Cs model describes a thriving youth in terms of these five aspects. It has been widely studied and the 5'Cs are viewed as indicators of thriving (King et. al., 2005). It is used as a theoretical model to design a programme or as outcomes to be achieved (e.g., Mercier et. al., 2019).

Positive Youth Development (PYD) is the entire system of support (school, home, community) that builds upon the strengths of youth and recognizes the risky behavior they may exhibit. PYD involves youth as active agents – adults and youth work in partnership. Civic involvement is a big component of PYD and works best when every element of the community in involved (school, home, community). Zarret and Lerner, developmental scientists, have suggested that positive youth development encompasses psychological, behavioral, and social characteristics that reflect what they call the "Five Cs." Youth are capable of contributing vast expertise and creative solutions related to their own lives, the services they receive and their communities. It is also true that being taught skills and new behaviors is one of the essential ingredients to successful youth adult partnerships. Youth rely on adults for guidance and help in learning "how to do" new things in order to navigate the world around them. Having youth as partners means that a host of opportunities must be available for them to try out, experience, reflect upon and gain new information and realizations through their successes and challenges.

Positive youth development is a comprehensive framework outlining the supports all young people need to be successful. Runaway and homeless youth programs that embrace this developmental model provide ongoing and intentional opportunities for young people to participate in meaningful activities. A variety of opportunities, that have real life application, are available for youth to design, implement and evaluate the types of services they receive to best meet their needs. The program environment is caring and supportive, has high expectations and offers youth the chance to develop positive relationships and connection with adults, peers and the larger community. Positive youth development views young people as "resources" who have much to offer rather than as "problems" that need to be treated or fixed. Given that not all young people have the same needs, some youth may require additional, complementary supports and services to fully benefit from common elements of positive youth development processes. For example, trauma informed approaches and evidence-based interventions can strengthen the role of positive youth development settings in the lives of especially vulnerable young people. When connecting youth to positive experiences, programs should include the following principles:

- PYD is an intentional process. It is about being proactive to promote protective factors in young people.
- PYD complements efforts to prevent risky behaviors and attitudes in youth and supports efforts that work to address negative behaviors.
- PYD acknowledges and further develops (or strengthens) youth assets. All youth have the capacity for positive growth and development.
- PYD enables youth to thrive and flourish and prepares them for a healthy, happy, and safe adulthood.
- PYD involves youth as active agents. Youth are valued and encouraged to participate in design, delivery, and evaluation of the services. Adults and youth work in partnership.
- PYD instills leadership qualities in youth, but youth are not required to lead. Youth can attend, actively participate, contribute, and/or lead through PYD activities.
- PYD involves civic involvement and civic engagement; youth contribute to their schools and broader communities through service.
- PYD involves and engages every element of the community — schools, homes, community members, and others. Young people, family members, and community partners are valued through this process. PYD is an investment that the community makes in young people. Youth and adults work together to frame the solutions. Learn more about engaging youth as active participants and partners.

Poonam Devi
Research Scholar, Dept. of Education
B.M.U.
Rohtak